सुलभ साहित्य-माला

तेरहवाँ-चौदहवाँ पुष्प

शरत्-साहित्य

(तेरहवाँ-चौदहवाँ भाग)

अधिकार

अनुवादकर्त्ता

धन्यकुमार जैन

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई नं० ४

दूसरी बार
दिसम्बर, १९४६

मुद्रक—
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
६, केलेवाड़ी, गिरगाँव बम्बई.

निवेदन

(पहली आवृत्तिसे)

शरत् बाबूका यह अत्यन्त विख्यात उपन्यास 'पथेर दावी' इस समय दुर्लभ वस्तु है। यह अबसे लगभग पन्द्रह वर्ष पहले 'बंग-वाणी' में प्रकाशित हुआ था और उसके बाद ही पुस्तकाकार निकलनेपर बंगाल-सरकार-द्वारा ज़ब्त कर लिया गया था। एक तो ज़ब्तशुदा पुस्तक और दूसरे इतना अधिक समय हो गया, फिर उसकी प्राप्ति कैसे हो? लगातार दो वर्ष तक प्रयत्न करनेके बाद जब हम एक तरहसे निराश हो गये थे, तब अनुवादक महाशयको एक सज्जनकी कृपासे 'बंग-वाणी' के फाइल मिल गये और आखिर उन्हीं परसे किया हुआ यह अनुवाद हम अपने पाठकोंके सम्मुख उपस्थित कर सके।

अभी अभी मालूम हुआ कि बंगाल-सरकारने लोकमतका आदर करके इस पुस्तकपरसे ज़ब्ती उठा ली है और आशा की जाती है कि अब मूल पुस्तक भी जल्दी ही प्रकाशित होकर सुलभ हो जायगी।

मूल पुस्तकमें 'श्रीकान्त' के समान पर्व या भाग नहीं हैं और अपनी इच्छासे इसके दो भाग करना उचित नहीं मालूम हुआ, इसलिए इसे एकत्र ही प्रकाशित किया जाता है।

पुस्तककी पृष्ठसंख्या ३५० हो गई है। नियमानुसार इसमें ३०० पृष्ठ ही दिये जा सकते थे; परंतु शेष ५० पेज आगेके और एक भागके लिए रख छोड़ना ठीक नहीं मालूम हुआ, इसलिए उन्हें अधिक ही रहने दिया है। फिर भी कीमत नहीं बढ़ाई गई है।

फरवरी, १९३९ —प्रकाशक

नया नाम

बंगला 'पथेर दावी' के इस अनुवादका नामकरण 'पथके दावेदार' मैंने ही किया था जो अनुवाद-कर्त्ता महाशयको पसन्द न आया और उन्होंने बहुत ही असन्तोष प्रकट किया। परन्तु, चूँकि पुस्तक छप चुकी थी और उसके प्रत्येक पत्रपर उक्त नाम भी छप गया था, इसलिए उस समय बदला न जा सका और कुछ ही समयके बाद पुस्तक ज़ब्त भी हो गई।

अब, चूँकि बम्बईकी कॉंग्रेस सरकारने इस परसे ज़ब्ती उठा ली है, इस लिए यह फिर प्रकाशित की जा रही है और अब इसे अनुवाद-कर्त्ताकी इच्छाके अनुसार 'अधिकार' नाम दिया जा रहा है।

—प्रकाशक

अधिकार

१

अपूर्व और उसके मित्रोंमें अकसर इस ढँगसे तर्क-वितर्क हुआ करता था—मित्र कहते, "भई, तुम्हारे भाई तो कुछ मानते-वानते नहीं, मगर तुम ऐसे हो कि संसारमें ऐसी कोई बात ही नहीं जिसे मानते या सुनते न हो।"

अपूर्व कहता, "है क्यों नहीं। जैसे इसी बातको ले लो; मैं अपने भाइयोंका दृष्टान्त नहीं मानता और तुम लोगोंका परामर्श नहीं सुनता।"

मित्र-मंडली पुराने मज़ाकको दोहराते हुए कहती "तुमने कालेजमें पढ़कर एम० एस-सी० पास किया है, और फिर भी तुम्हारे सिरपर चोटी ज्योंकी त्यों मौजूद है! इस चोटीके मीडियमसे क्या तुम्हारे दिमागमें बिजलीका संचार हुआ करता है?"

अपूर्व जवाब देता, "एम० एस-सी० की पाठ्य-पुस्तकोंमें चोटीके विरुद्ध कहीं भी कोई आन्दोलन नहीं है। लिहाजा ऐसी धारणा मैं नहीं कर सका हूँ कि चोटी रखना अन्याय है। रही बिजलीकी बात, सो बिजली-संचारका पूरा हाल अभी तक आविष्कृत नहीं हुआ है। विश्वास न हो, तो जो लोग एम०

इसपर यार लोग नाराज हो जाते, कहते, "तुम्हारे साथ तो तर्क करना ही व्यर्थ है।"

अपूर्व हँसकर कहता, "तुम लोगोंकी यह बात अभ्रान्त सत्य है। मगर फिर भी तो तुम लोगोंको होश नहीं आता।"

असलमें बात यह है कि डिपुटी-मजिस्ट्रेट पिताके वचन और व्यवहारसे अपूर्वके और सब भाई उत्साहित होकर जब प्रकट रूपसे मुर्गी और होटलोंकी रोटी खाने लगे थे, और नहानेके पहले जनेऊको खूँटीपर टाँगकर अकसर भूल जाया करते थे,—यहाँ तक कि उसे धोबीसे धुलवाकर इस्त्री करानेके लाभालाभपर विचार करते हुए हँसा करते थे,—तब अपूर्वका जनेऊ नहीं हुआ था। परन्तु सबसे छोटा होनेपर भी अपूर्वने अपनी माकी गहरी वेदना और नीरव अश्रुपातका बहुत दिनोंतक अनुभव किया था। उसकी मा कुछ कहती न थीं क्योंकि एक तो कहनेपर भी लड़के उनकी कुछ सुनते नहीं थे, दूसरे ऊपरसे पतिके साथ निरर्थक कलह हो जाया करती थी; जिसमे वे श्वशुर-कुलके पौरोहित्य-व्यवसायके प्रति निष्ठुर इशारा करके कहते, "लड़के अगर अपने मामा जैसे न बनकर बापके समान ही बनते हैं तो इसका क्या किया जाय? सिरपर चोटीके बदले अगर वे हैट पहनते हैं तो उनका सिर ही काट लेना चाहिए, ऐसा तो मैं ठीक नहीं समझता।"

इसीसे करुणामयीने अपने लड़कोंके सम्बन्धमें बिलकुल चुपकी साध ली थी। वे सिर्फ अपने ही आचार-विचारका, बिना किसी आडम्बरके, चुपचाप पालन किया करतीं। फिर, जब पतिकी मृत्यु हो गई तब विधवा होकर तो वे घरमें रहते हुए भी एक तरहसे घरसे बिलकुल अलग हो गई। ऊपरके जिस कमरेमें वे रहती हैं, उसीके बरामदेमें थोड़ी-सी जगह घेरकर, उसीमें बनाती खाती हैं। बहुओंके हाथकी भी रसोई खाना नहीं चाहतीं। इसी तरह उनके दिन कट रहे हैं।

इधर अपूर्व सिरपर चोटी रखाये था; और उधर कालेजमें वजीफा और मेडल पाकर परीक्षायें पास करता जाता था। साथ ही वह घरमें एकादशी-पूर्णिमा-संध्या पूजा आदि धर्म-पालनमें भी तत्पर रहता था। एक ओर मैदानमें फूटबॉल-क्रिकेट-हाकी खेलनेमें उसे खूब उत्साह था, दूसरी ओर माके साथ गंगा-स्नान करनेके लिए भी उसे कभी समयाभाव न होता था। उसकी इस

प्रवृत्तिको ज्यादती समझकर उसकी भाभियाँ मज़ाकमें कहा करतीं, "लालाजी, पढ़ना-लिखना तो तुम्हारा खतम हो चुका, अब कोपीन-चीमटा धारण करके साधु-संन्यासी बननेकी और कसर है। आचार-विचारमें तुमने तो ब्राह्मण विधवाको भी मात कर दिया!"

अपूर्व हँसकर जवाब देता "मात क्या यों ही करना पड़ा है भाभी? माके कोई लड़की-वड़की तो है नहीं, और उमर भी हो चुकी है, अचानक किसी-दिन हाथ-पाँवसे लाचार हो गई तो कमसे-कम उन्हें मुट्ठी-भर हविष्य राँधकर तो खिला दूँगा! और रहा कोपीन-चिमटा, सो वह कहीं भागा थोड़े ही जाता है!—तुम लोगोंकी गृहस्थीमें हूँ, सो किसी न किसी दिन तो उस पूँजीसे जिन्दगी बसर करनी ही पड़ेगी!"

बड़ी बहू मुँहको उदास करके कहतीं, "क्या करें लालाजी, हम लोगोंकी तकदीर ही ऐसी है!"

"सो तो है ही!"—कहकर अपूर्व अपने कामसे चला जाता और मासे जाकर कहता, "मा, यह तुम्हारी बड़ी जबरदस्ती है, भइया सब चाहे जो भी करते हों, पर भाभियाँ तो कोई मुर्गी नहीं खातीं और न होटलोंमें जाकर डिनर ही उड़ाती हैं,—जिन्दगी-भर क्या तुम अपने ही हाथसे बनाती खाती रहोगी?"

मा कहतीं, "एक छाक मुट्ठी-भर दाल-भात राँधनेमें मुझे तकलीफ ही क्या होती है, बेटा। और जब बिलकुल हाथ-पाँव नहीं चलेंगे, तब तेरी बहू आ जायगी।"

अपूर्व कहता, "सो अभी ही क्यों नहीं बुलवा लेतीं मा, किसी ब्राह्मण पण्डितके घरसे? उसे खिलाने-पिलानेका सामर्थ्य मुझमें नहीं है, पर तुम्हारा कष्ट देखकर तो सोचता हूँ कि न होगा तो भाइयोंके टुकड़ोंपर ही पड़ा रहूँगा।"

मातृ-गर्वसे माकी आँखें दीप्त हो उठतीं, वे कहतीं, "ऐसी बात मुँहसे भी न निकालना बेटा! तेरा सामर्थ्य नहीं एक बहूको खिलाने-पिलानेका? तू चाहे तो घर भरको बिठाकर खिला सकता है।"

"तुम भी मा, ऐसी बात कह दिया करती हो! तुम समझती हो, तुम्हारे इस बेटेके बराबर दुनियामें और कोई है ही नहीं।"—यह कहकर वह अपने उमड़ते हुए आँसुओंको किसी कदर रोकता हुआ वहाँसे उठकर चल देता।

मगर अपनी शक्ति और सामर्थ्यके विषयमें अपूर्व खुद चाहे जो भी कहता रहे, पर कन्या-भार-ग्रस्त पिताओंका दल निश्चेष्ट नहीं था। उन लोगोंने आकर विनोदबाबूपर ठौर कुठौर ऐसा आक्रमण करना शुरू किया कि उनका जीवन दूभर हो गया। विनोद आकर मासे कहते, "मा, यदि कहीं कोई निष्ठावती जप-तप करनेवाली लड़की हो, तो ढूँढ़-ढाँढ़कर अपने लड़केका ब्याह कर-कराकर झंझट चुका डालो, अन्यथा मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि इन लोगोंके मारे घर छोड़कर भाग जाना पड़ेगा। बापका बड़ा लड़का ठहरा, इसलिए बाहर-वाले तो यही समझते हैं कि मैं ही घरका मालिक हूँ।"

लड़केकी कठोर बातसे करुणामयी मन ही मन अत्यन्त क्रुद्ध होतीं, पर फिर भी वे अपनेको किसी तरह विचलित नहीं होने देतीं। मृदु किन्तु दृढ़ स्वरमें कहतीं, "लोग कोई झूठा थोड़े ही समझते हैं, बेटा। उनकी अनुपस्थितिमें तुम तो हो ही घरके मालिक। पर अपूके बारेमें अभी तुम किसीको कुछ वचन मत देना। मैं रूप नहीं चाहती, रुपये-पैसे भी नहीं चाहती,—पर बेटा, इस सम्बन्धको मैं ही देख-भालकर ठीक कर लूँगी।"

"अच्छा ही तो है मा, तुम्हीं ठीक कर देना। पर जो कुछ करना हो, मेहरबानी करके जरा जल्दी करो। लाल इन्द्रायण फलको सामने लटकाये रख-कर लोगोंको ललचा ललचाकर मत मारो।" यह कहकर विनोद नाराज होकर चले जाते।

करुणामयीके मनमें एक संकल्प था। नहानेके घाटपर कुछ दिनोंसे एक बहुत ही सुलक्षणा लड़कीको वे देखा करती हैं। वह लड़की अपनी माके साथ अकसर नहाने आया करती है। वे उन्हींकी जातिकी हैं, इस बातका पता करुणामयीने गुप्त रूपसे लगा लिया है। स्नानके बाद वह लड़की शिव-पूजा करती है। उससे कहीं कोई गलती तो नहीं होती है, यह वे छिपे छिपे देखा करती हैं। इसके सिवा उसके बारेमें उन्हें और भी कुछ जानना बाकी है, और उसके लिए उनका प्रयत्न जारी है। उनकी इच्छा है कि सब बातें अगर उनके अनुकूल हुईं, तो वे इसी बैसाखमें लड़केका ब्याह कर देंगी।

इतनेमें अपूर्वने एक दिन आकर कहा, "मा, मुझे एक बहुत अच्छी नौकरी मिल गई है।"

माँने खुश होकर कहा, "कह क्या रहा है तू, अभी उस दिन तो तैंने परीक्षा पास की है, इतनेमें ही तुझे नौकरी किसने दे दी?"

अपूर्व हँसता हुआ बोला, "जिसको गरज थी" और यह कहकर उसने सारा किस्सा कह सुनाया, "कालेजके प्रिन्सिपल साहबने ही सब ठीक-ठाक कर दिया है। बोथा कम्पनीने बर्माके रंगून शहरमें एक नया आफिस खोला है, वह किसी विद्वान्, बुद्धिमान् और सच्चरित्र बंगाली युवकको पूरा भार देकर वहाँ भेजना चाहती है। मकान-किरायेके अलावा चार-सौ रुपये महीने तनखा, —और कोशिश करनेपर भी अगर कम्पनीको फेल न कर सका तो, छै महीने बाद दो सौ रुपये और भी।" इतना कहकर वह हँसने लगा।

लेकिन, बर्मा मुल्कका नाम सुनकर माका चेहरा म्लान हो गया। उन्होंने निरुत्सुक कंठसे कहा, "तू तो पागल हो गया है अप्पू, उस देशमें क्या कोई आदमी जाता है! जहाँ जात, जन्म, आचार-विचार कुछ भी नहीं, वहाँ मैं तुझे भेज दूँगी? ऐसे रुपयोंकी मुझे जरूरत नहीं।"

जननीके विरोधसे अपूर्व डर गया, बोला, "तुम्हें जरूरत नहीं, पर मुझे तो जरूरत है मा? यों तो तुम्हारी आज्ञासे मैं भिखारी होकर भी रह सकता हूँ; पर फिर जिन्दगी-भर ऐसा मौका नहीं मिलनेका। तुम्हारे लड़के जैसी विद्या-बुद्धि आजकल शहरोंमें घर घर मौजूद है, उसके लिए बोथा कम्पनीका काम तो रुक नहीं सकता; पर प्रिन्सिपल साहबने जो मेरी तरफसे पक्का वचन दे दिया है, उनको ऐसा लज्जित होना पड़ेगा कि जिसकी हद नहीं। इसके सिवा घरकी भीतरी हालत भी तुमसे छिपी नहीं है।"

माने कहा, "पर वह तो, सुना है, कि एकदम ही मलेच्छ देश है!"

अपूर्वने कहा, "किसीने तुमसे बढ़ा-चढ़ाके कह दिया है। लेकिन यह तो तुम्हारा म्लेच्छ देश नहीं है; फिर भी, जो म्लेच्छ होना चाहते हैं उनके लिए कोई रुकावट यहाँ भी नहीं है मा।"

मा कुछ देर स्थिर रहकर बोली, "लेकिन इसी बैसाखमें तेरे ब्याहका जो निश्चय कर लिया है!"

अपूर्वने कहा, "एकदम निश्चय करके बैठी हो मा? खैर कोई बात नहीं, दो एक महीने आगे बढ़ा दो, फिर जिस दिन तुम बुलाओगी, उसी दिन आकर तुम्हारी आज्ञाका पालन कर दूँगा।"

करुणामयीकी बाहरी दृष्टि यद्यपि पुराने जमानेकी थी, फिर भी वे अत्यन्त बुद्धिमती थीं। कुछ देर चुप रहकर, सोच-समझकर अन्तमें धीरेसे बोलीं, " जब तुझे जाना ही है, तो फिर और चारा ही क्या है! पर अपने भाइयोंकी राय तो ले ले। "

इस बर्मा-यात्राके सम्बन्धमें अपने दोनों बड़े लड़कोंका उल्लेख करते हुए करुणामयीकी अतीत और वर्तमानकी सम्पूर्ण दबी हुई वेदना मानो एक क्षणमें ही आन्दोलित हो उठी, पर उस दुःखको उन्होंने प्रकट नहीं होने दिया। उनका पितृ-कुल गोकुलदिग्घीका सुप्रसिद्ध बन्द्योपाध्याय वंश है, और वे वंश-परम्परासे अत्यन्त आचार-परायण और निष्ठावान् हैं। बचपनसे ही जो संस्कार उनके हृदयमें जमकर बैठ गये थे, अन्तमें पति और पुत्रोंके हाथसे वे यत्परोनास्ति आहत और लांछित हुए हैं। सिर्फ इस अपूर्वको लेकर ही किसी कदर सब सहती हुई अब भी वे घर-गृहस्थीमें रह रही हैं। यह लड़का भी आज उनकी दृष्टिसे परे न जाने किस अनजाने देशको चला जा रहा है, इस बातका खयाल करके उनके भय और चिन्ताका कोई ठिकाना न रहा। फिर भी मुँहसे वे इतना ही बोलीं, " जो भी थोड़े-बहुत दिन मेरी जिन्दगी है अप्पू, तू मुझे दुःख मत देना। " और उन्होंने आँचलसे आँसू पोंछ डाले।

अपूर्वकी आँखें भी भर आईं। उसने प्रत्युत्तरमें कहा, " मा, आज तुम इस लोकमें हो, पर, एक न एक दिन तुम्हारा स्वर्गसे बुलावा आयेगा ही और उस दिन तुम्हें अपने अप्पूको छोड़कर जाना पड़ेगा।—अगर मैं तुम्हें एक दिनके लिए भी ठीकसे पहचान सका होऊँ, तो मुझे विश्वास है कि वहाँ रहते हुए भी कभी तुम्हें अपने इस लड़केके लिए आँसू न ढालने पड़ेंगे, यह तुम निश्चित जानना। "—इतना कहकर वह जल्दीसे अन्यत्र चला गया।

उस दिन शामको करुणामयी अपनी नियमित संध्या-पूजा और माला फेरनेमें पूरा मन न लगा सकीं। उद्वेग और वेदनाके भारसे उनकी दोनों आँखोंसे आँसुओंकी धार बहने लगी और क्या करनेसे क्या होगा, इस बातका किसी भी तरह निर्णय न कर सकनेपर अन्तमें वे अपने बड़े लड़केके कमरेके दरवाजेके सामने चुपचाप जा खड़ी हुईं। विनोदकुमार कचहरीसे लौटकर, जलपान करके अब सांध्य-पोशाक पहनकर क्लब जानेकी तैयारी कर रहे थे। सहसा माको

देखकर वे एकदम चौंक पड़े। वास्तवमें यह घटना ऐसी गैर-भरोसेकी थी कि सहसा विनोदके मुँहसे कोई बात ही नहीं निकली।

करुणामयीने कहा, "तुमसे एक बात पूछने आई थी, बेटा!"

"क्या मा?"

मा अपनी आँखोंके आँसू यहाँ आनेके पहले ही अच्छी तरहसे पोंछ आई थीं; मगर फिर भी उनका भीगा हुआ गला छिपा न रहा। उन्होंने पहलेकी समस्त घटनाओंका सिलसिलेवार वर्णन करके, अन्तमें अपूर्वके मासिक वेतनका उल्लेख करके, जब निरानन्द-मुखसे कहा, "सो ही सोच रही हूँ बेटा, कि इन थोड़ेसे रुपयोंके लोभसे उसे वहाँ भेजूँ या न भेजूँ।" तब विनोद धीरज खो बैठा। उसने रूखे स्वरसे कहा, "मा, तुम्हारे अपूर्वके समान बेटा दुनियामें और नहीं है, इस बातको हम सब मानते हैं, मगर, दुनियामें रह कर इस बातको भी माने बिना नहीं रह सकते कि पहले चार सौ और फिर छै महीने बाद छैसौ रुपये तुम्हारे इस बेटेसे भी बढ़कर हैं।"

माने क्षुण्ण होकर कहा, "लेकिन, सुनती हूँ, वह जो एकदम ही म्लेच्छ देश है!"

विनोदने कहा, "मा, दुनियामें तुम्हारी सुनी और जानी हुई बात ही सिर्फ ठीक हो, इसके कोई मानी नहीं।"

लड़केकी अन्तिम बातसे दुःखित होकर माने कहा, "बेटा, तुम लोगोंके होश सम्हालनेसे लेकर आज तक यह एक ही बात सुनते सुनते भी जब मुझे होश नहीं आया, तो अन्तिम दशामें अब यह शिक्षा मुझे मत दो। अपूर्वकी कीमत क्या है, यह जाननेके लिए मैं तुम्हारे पास नहीं आई,—मैं सिर्फ यह जानने आई थी कि उसे इतनी दूर भेजना ठीक है या नहीं?"

विनोदने झुककर जल्दीसे दाहने हाथसे माके पाँव छूकर कहा, "मा, तुम्हें कष्ट देनेके लिए मैंने यह बात नहीं कही। बाबूजीके साथ हमारा मेल खाता था, यह ठीक है, और रुपया दुनियामें कीमती और जरूरी चीज है, यह भी हमने उन्हींसे सीखा है। पर इस मामलेमें मैं तुम्हें वह लोभ नहीं दिखा रहा हूँ। तुम्हारे इस विनोदके हैट-कोटके भीतरका मन शायद आज भी इतना ज्यादा साहब नहीं बन गया है जो छोटे भाईको खिलाने पिलानेके डरसे उसे बिना विचारे ठौर-कुठौर भेजनेको तैयार हो जाय। मगर फिर भी

मैं कहता हूँ कि उसे जाने दो। देशमें जैसी कुछ हवा वह रही है मां, उसे देखते हुए अगर वह देश छोड़कर और कहीं जाकर काम-धन्धेमें लग सके तो उसका अपना भला तो है ही, साथ ही हम लोग भी शायद बच जायँगे। तुम तो जानती हो मा, उस आन्दोलनके जमानेमें जब कि उसके मुँहसे दूधकी महक तक नहीं गई थी, उसकी बदौलत बाबूजीकी नौकरी छूटनेकी नौबत आ गई थी।"

करुणामयीने शंकित होकर कहा, "नहीं नहीं, सो सब अब वह नहीं करता। सात-आठ बरस पहले उसकी उमर ही क्या थी, सिर्फ उस दलमें मिल जानेसे जो कुछ—"

विनोदने सिर हिलाकर जरा हँसके कहा, "हो सकता है कि तुम्हारी ही बात ठीक हो कि अब वह कुछ नहीं करता; पर, सभी देशोंमें ऐसे कुछ लोग हुआ करते हैं मा, जिनकी जात ही कुछ और होती है। तुम्हारा छोटा बेटा उसी जातका है। देशकी मिट्टी इनकी देहका मांस है, देशका पानी इनकी नसोंका खून है!—सिर्फ देशकी मिट्टी-पानी ही नहीं, देशके पहाड़-पर्वत, वन-जंगल, चन्द्र-सूर्य, नदी-नाले, छाया-प्रकाश जो भी कुछ हैं, सबको मानो अपने सब अंगोंसे ये लोग सोख लेना चाहते हैं। शायद इन्हींमेंके किसीने किसी सत्ययुगमें पहले-पहल 'जननी जन्मभूमि' शब्दका आविष्कार किया था। देशके मामलोंमें इनका कभी विश्वास मत करना मा, धोखा खाओगी। इनके जिन्दा रहने और प्राण देनेमें यह देखो, सिर्फ इतना-सा फर्क है।"—यह कहकर उसने अपनी तर्जनीके अग्रभागको अँगूठेसे चिह्नित करके दिखाया और फिर कहा, "बल्कि इस मामलेमें तुम अपने इस म्लेच्छाचारी विनुआको उस चोटी धारी गीता पढ़नेवाले एम०-एस-सी० पास अपूर्वकुमारसे कहीं ज्यादा अपना समझना!"

लड़केकी बात सुनकर माने ठीक उसपर विश्वास ही कर लिया हो, सो बात नहीं; लेकिन, किसी समय उन्हें इन्हीं सब बातोंसे काफी घबराहट और परेशानी उठानी पड़ी थी, इसीसे वे मन ही मन कुछ चिन्तित-सी हो गई। देशके पश्चिम दिगन्तमें मेघके लक्षण दिखाई दे रहे हैं इस बातको वे जानती थीं। उनके मनमें तुरंत ही यह बात दौड़ गई कि तब अपूर्वके पिता जीवित थे, और अब वे परलोकमें हैं।

विनोद माके चेहरेकी तरफ देखकर समझ गया, पर उसे बाहर जानेकी जल्दी थी, बोला, "अच्छी बात है मा, वह कोई कल ही तो जा नहीं रहा है। सब एक साथ बैठके, जैसा होगा, तय कर लेंगे।"

इतना कहकर वह जल्दी जल्दी कदम बढ़ाता हुआ बाहर चला गया।

२

जहाजके कई दिन अपूर्वने चिउड़ा चबाकर, 'सन्देस' और नारियलका पानी पीकर, सर्वाङ्गीण ब्राह्मणत्वकी रक्षा करते हुए बिताये, और अधमरा-सा होकर वह किसी तरह रंगूनके घाटपर जा उतरा। नई स्थापित बोथा कम्पनीके दो दरबान और एक मद्रासी कर्मचारी जेटीपर मौजूद थे। मैनेजरका उन लोगोंने स्वागत किया और उन्होंने इस संवादके देनेमें भी विलम्ब नहीं किया कि तीस रुपये किरायेपर आफिसके खरचेसे एक मकान ले लिया गया है और उसे यथायोग्य चीज-वस्तोंसे सजा दिया है।

फागुन महीना खत्म होनेको है। गरमी भी पड़ने लगी है। समुद्र-पथकी प्राण-लेऊ परेशानी उठानेके बाद अपूर्वको इस कल्पनासे काफी सन्तोष हुआ कि वह एकान्त घरमें सुसज्जित शय्यापर हाथ-पैर पसारकर जरा सो सकेगा। रसोइया ब्राह्मण साथ आया था। हालदार-परिवारमें बहुत दिन नौकरी करते रहनेसे उसका निर्दोष शुद्धाचार करुणामयीके आगे प्रमाणित हो चुका है, इसीसे, घरमें काफी असुविधाएँ होनेपर भी, उसे साथ भेजकर करुणामयीको बहुत-कुछ सान्त्वना मिली थी। और सिर्फ रसोईया ही नहीं, रसोइके कामकी और भी बहुत-सी चीजें,—चावल, दाल, घी, तेल, पिसे हुए मसाले—आलू, परवल तक—वे साथमें रखना नहीं भूली थीं। लिहाजा यह आशा भी उसके मनमें बिजलीकी तरह चमक उठी कि गरमागरम दाल-भात-तरकारीसे शीघ्र ही वह अपने मुँहका स्वाद बदल सकेगा। किरायेपर गाड़ी तय करके कर्मचारी अपने घर चला गया, और असबाब वगैरह लेकर आफिसका दरबान उसके साथ चला। लगातारकी लम्बी जलयात्रासे छुटकारा पाकर और ठोस जमीनपर गाड़ीमें बैठके अपूर्वको भी आराम मालूम हुआ।

मगर दसेक मिनट बाद गाड़ी जब उसके रहनेके मकानके सामने जाकर खड़ी हुई, और दरबानने जोरसे पुकार-पुकारकर दर्जन-भर ब्रह्मदेशीय कुली

बुलाके चीज-वस्त सब ऊपर पहुँचानेकी तैयारी की, तब अपने लिए तीस रुपये किरायेपर ठीक किये हुए उस मकानकी सूरत शकल देखकर अपूर्व हतबुद्धि सा हो गया।—मकानमें न कोई खूबसूरती, न छत, न दरवाजे; न बाहर, न भीतर। आँगनके नाम सिर्फ निकलनेके रास्तेके सिवा और कहीं भी कोई जगह नहीं। एक लकड़ीकी सकरी सीढ़ी सीधी रास्तेसे लेकर तिमंजले तक चली गई है,—एकदम खड़ी और अन्धकारमय। वह भी किसीकी बपौती नहीं,—कमसे कम छह किरायेदारोंके चढ़ने उतरनेका पब्लिक रास्ता है। इस चढ़ने उतरनेमें अचानक अगर पैर फिसल जाय, तो पहले पत्थरकी बनी पक्की सड़क, फिर अस्पताल और,—फिर तीसरी दशा न विचारना ही अच्छा है। इस दुरारोह दारुमय सोपान-श्रेणीके साथ परिचित होनेमें कुछ लम्बा समय लगता है। अपूर्व नया आदमी ठहरा, इसीसे वह अन्यन्त सावधानीके साथ पैर रखता हुआ दरबानके ठीक पीछे-पीछे चढ़ने लगा। दरबानने दूसरी मंजिल तक चढ़कर सीढ़ीके पासका एक दरवाजा खोलकर जतलाया, "साहब, यही आपका कमरा है।"

अपने दरवाजेके बाईं तरफका बन्द दरवाजा दिखाते हुए अपूर्वने पूछा, "इसमें कौन रहता है?"

दरबानने कहा, "सुना है, कोई चीना साहब रहते हैं।"

अपूर्वने यह पूछनेपर कि उसके ऊपरके कमरेमें कौन रहता है, दरबानने जवाब दिया, "एक काले साहबको देखा है उसमें। मद्रासका रहनेवाला मालूम होता है।"

अपूर्व चुप रहा। इन कुछ मिनटोंमें आते आते ही अपने ऊपर और बगलमें इन दो अति घनिष्ठ पड़ोसियोंका परिचय प्राप्त करके उसके मुँहसे सिर्फ एक दीर्घ निःश्वास निकल गया। अपने कमरेमें घुसकर उसका मन और भी खराब हो गया। लकड़ीकी दीवारवाली छोटी-बड़ी तीन कोठरियाँ हैं। एकमें पानीका नल, नहानेकी जगह, रसोईघर आदि अत्यावश्यकीय व्यवस्था है; बीचमें सीढ़ीके पासकी अँधेरी कोठरी है, जिसे गौरवमें बैठक भी कह सकते हैं और सड़ककी तरफ तीसरी कोठरी है, जिसे शयन-मंदिर भी कहा जा सकता है,—यह अपेक्षाकृत साफ, सुथरी और हवादार है। आफिसके खर्चेसे इसी कमरेको खाट, टेबिल और दो-चार कुरसियोंसे सजा दिया गया है। सड़ककी

तरफ जरा-सा बरंडा है, समय बिताना मुश्किल होनेपर वहाँ खड़े होकर राह चलतोंको देखा जा सकता है। कमरोंमें हवा नहीं, उजाला नहीं, एकमेंसे होकर दूसरेमें जाना पड़ता है,—और सबके सब लकड़ीके बने हुए हैं। दीवारें लकड़ीकी, फर्श लकड़ीका, छत लकड़ीकी और सीढ़ियाँ भी लकड़ीकी। आगकी बात याद आते ही सन्देह हुआ कि इतना बड़ा सर्वाङ्ग-सुन्दर लाक्षागृह शायद राजा दुर्योधन भी अपने पाण्डव-भाइयोंके लिए न बनवा सके होंगे। इसीके अन्दर,—इस सुदूर देशमें घर-द्वार, बन्धु-बान्धव और आत्मीय स्वजनोंको छोड़कर,—भाभियोंको छोड़कर, माको छोड़कर,—रहना पड़ेगा, इस बातकी याद आते ही क्षण-भरमें उसकी आँखोंमें आँसू छलक आये। अपनेको सम्हालकर वह कुछ देर इधर-उधर कर रहा था कि एक चीज़ देखकर उसे तसल्ली हुई—नलमें अब भी पानी आ रहा है। नहाना और खाना दोनों ही हो सकते हैं। दरबानने साहस देते हुए जताया कि फजूल खर्च न किया जाय तो इस शहरमें पानीकी कमी नहीं पड़ती, क्योंकि हर दो किरायेदारोंके लिए मकानमें ऊपर एक एक बड़ा पानीका हौज है। उसमेंसे दिन रात पानी आता रहता है। भरोसा पाकर अपूर्वने रसोइयासे कहा, "महाराज, माने तो सब-कुछ साथ रख दिया है, तुम नहा-धोकर कुछ बनानेकी तैयारी करो, मैं तब तक दरबानको लेकर ढंगके साथ सब चीज-वस्त सजाये लेता हूँ।"

रसोईघरमें कोयले मौजूद थे; पर चूल्हा पक्का ईंटोंका बना था,—पुता हुआ साफ न था। परीक्षा करनेपर मालूम हुआ कि उसमें कहीं कहीं कालिख लगी हुई है। कौन जाने यहाँ कौन रहा होगा, कौन जात था, क्या पकाता रहा होगा? —इस पिछली बातका खयाल आते ही उसे अत्यन्त घृणा मालूम हुई। महाराजसे बोला, "इसपर तो रसोई नहीं बनाई जा सकती तिवारी, कोई और इन्तजाम करना होगा। कोई सिगड़ी मिल जाती तो उसमें कमसे कम आजके लिए थोड़ा-सा दाल-चावल बाहरके कमरेमें बना लेते, लेकिन इस अभागे देशमें वह भी मिलेगी?"

दरबानने कहा कि यहाँ उसकी कोई कमी नहीं, दाम मिलते ही वह दस मिनटके भीतर लाकर हाजिर कर सकता है। अतएव, वह रुपया लेकर चल दिया। इस बीचमें तिवारी-महाराज रसोईका सामान जुटाने लगे और अपूर्व स्वयं ट्रंक बॉक्स वगैरह खींच-खाँचकर घर सजानेमें लग गया। लकड़ीकी

अलगनीपर कपड़े-लत्ते सूट वगैरह लटका दिये, बिस्तर खोलकर ढंगसे खाटपर बिछा दिये, ट्रंकमेंसे एक नया ऑयेल क्लाथ निकालकर टेबिलपर बिछाके उसपर किताबें और लिखनेका सामान सजा दिया। उत्तरकी खुली खिड़कीके दोनों पल्ले अन्त तक पसार कर, उनके दोनों कोनोंमें दो कागजके टुकड़े ठूँसकर सोनेके कमरेको और भी ज्यादा आलोकित और नयनाभिराम हुआ मानकर उसने अपनी सद्य-रचित शय्यापर चित पड़के एक दीर्घ निःश्वास ले ली। कुछ देर बाद दरबानने जब लोहेकी सिगड़ी लाकर हाजिर की तब उसपर खिचड़ी और जो कुछ तरकारी-अरकारी बन सके, जल्दीसे बना डालनेकी महाराजको आज्ञा देकर, अपूर्व एक बार फिर बिस्तरपर पड़ रहनेके लिए जा ही रहा था कि इतनेमें सहसा उसे याद आ गया कि माने अपने सरकी कसम देकर कहा था कि जहाजसे उतरते ही फौरन वह पहुँचका तार दे दे। अतएव, वह जल्दीसे कुड़ता पहनकर अपने प्रवासके एकमात्र कर्णधार दरबानको साथ लेकर पोस्ट आफिसकी तरफ चल दिया और उसीके कहे मुताबिक तिवारी महाराजको आश्वासन दे गया कि लौटनेमें उसे एक घंटेसे ज्यादा देर न होगी। इस बीचमें सब कुछ तैयार हो जाना चाहिए।

आज किसी ईसाई त्यौहारकी छुट्टी थी। अपूर्व सड़कके दोनों किनारे देखता हुआ कुछ दूर आगे जाते ही समझ गया कि यह देशी और विदेशी साहब-मेमोंका मुहल्ला है। हर मकानमें विलायती उत्सवके कुछ न कुछ चिह्न दिखाई दे रहे थे। अपूर्वने दरबानसे पूछा, "क्यों भई, यहाँ बंगाली लोग भी तो बहुत हैं, जानते हो वे किस मुहल्लेमें रहते हैं ?"

प्रत्युत्तरमें उसने कहा कि यहाँ मुहल्ला कहनेको कुछ नहीं है, जो, जहाँ चाहे रह सकता है। मगर हाँ, 'अफसर' लोग ज्यादातर इसी गलीमें रहना पसन्द करते हैं। अपूर्व खुद भी एक 'अफसर' है, क्योंकि वह भी एक बड़ी नौकरी करने इस देशमें आया है, और कट्टर हिन्दू होनेपर भी किसी धर्मके विरुद्ध विद्वेष नहीं रखता। मगर फिर भी इस तरह ऊपर-नीचे, दाहने बायें, घर और बाहर, चारों ही ओरसे अपनेको ईसाई पड़ोसियोंद्वारा घिरा देखकर उसे बहुत ही विरक्ति मालूम हुई। उसने पूछा, "और क्या कहीं मकान नहीं मिल सकता, दरबान ?"

दरबानको इस विषयमें काफी वाकफीयत न थी। उसने विचार कर जैसा

उचित समझा, वैसा ही जवाब दे दिया। बोला, "ढूँढ़नेपर मिल सकता है, मगर इतने किरायेपर ऐसा मकान मिलना मुश्किल है।"

अपूर्वने फिर कोई बात नहीं की, दरबानके पीछे पीछे कुछ दूर चलकर वह एक ब्राञ्च पोस्ट आफिसमें पहुँचा। मद्रासी तार-बाबू उस समय टिफिनके लिए गये थे। घंटे-भर बैठनेके बाद जब उनके दर्शन हुए तब घड़ीकी ओर देखकर उन्होंने फरमाया, "आज छुट्टीका दिन है, ऑफिस तो दो ही बजे बन्द हो चुका, अब तो दो बजके पन्द्रह मिनट हो रहे हैं।"

अपूर्वने अत्यन्त नाराजीके साथ कहा, "यह कसूर आपका है, मेरा नहीं। मैं घंटे-भरसे इन्तजार कर रहा हूँ।"

उस आदमीने अपूर्वके चेहरेकी तरफ देखकर बिना किसी संकोचके कहा, "नहीं, मैं सिर्फ दस मिनट यहाँ नहीं था।"

अपूर्वने उसके साथ काफी झगड़ा किया, झूठा कहके उसका तिरस्कार किया, रिपोर्ट करनेका डर दिखाया, मगर कुछ नहीं हुआ। वह निर्विकार चित्तसे अपना रजिस्टर और कागजात दुरुस्त करने लगा। उसने जवाब तक देनेकी जरूरत नहीं समझी। अब समय नष्ट करना व्यर्थ समझकर अपूर्व भूख-प्यास, और क्रोधसे जलता-भुनता बड़े टेलिग्राफ आफिसमें पहुँचा। वहाँ भीड़मेंसे किसी कदर भीतर घुसकर जब बहुत देर बाद अपने निर्विघ्न पहुँचनेका समाचार माको भेज सका, तब दिन छुपनेमें ज्यादा देर न थी।

दुःखके साथी दरबानने अर्ज की, "साहब, मुझे भी बहुत दूर जाना है।"

अपूर्व बहुत ही परेशान और अन्यमनस्क हो रहा था,—छुट्टी देनेमें उसने कोई आपत्ति नहीं की। उसे भरोसा था कि नम्बर-वाली सड़कें सीधी और समान होनेसे मकान ढूँढ़ लेनेमें कोई दिक्कत न होगी। दरबान अन्यत्र चला गया, और वह पैदल चलता हुआ तथा अपनी सड़कका हिसाब लगाता हुआ अन्तमें अपने मकानके सामने आ पहुँचा।

सीढ़ीपर कदम रखते ही उसने देखा कि दुमँजलेमें अपने दरवाजेपर खड़े हुए तिवारी-महाराज अपनी लाठी ठोंक रहे हैं और अनर्गल बक रहे हैं; उधर तिमँजलेसे प्रतिपक्षका एक व्यक्ति पतलून पहने खुले बदन अपने कोठेकी खिड़कीके सामने खड़ा हुआ हिन्दी और अँगरेजीमें उसका जवाब दे रहा है, और बीच-बीचमें घोड़ेके चाबुकसे साँय-साँय आवाज़ कर रहा है। तिवारी

उसे नीचे बुला रहा है और वह तिवारीका ऊपर आह्वान कर रहा है। इस सौजन्यका अदान-प्रदान जिस भाषामें चल रहा था, उसे न कहना ही अच्छा है।

ज़ीनेकी पहली सीढ़ीपर कदम रक्खे अपूर्व उसी तरह खड़ा रहा। इतने थोड़े अरसेके अन्दर क्या बात हो गई और किस तरह तिवारीजीने इतनी जल्दी पड़ोसी साहबके साथ इतनी घनिष्ठता स्थपित कर ली, इसका वह कुछ अन्दाज न लगा सका। लेकिन, अचानक ही शायद दोनोंकी निगाह उसपर पड़ गई। तिवारीने अपने मालिकको देखते ही और एक बार जोरसे लाठी ठोंककर न जाने क्या एक मधुर सम्भाषण किया और साहबने उसका जवाब देते हुए बड़े जोरसे चाबुक चलाया। लेकिन दुबारा युद्ध-घोषित होनेके पहले ही अपूर्वने जल्दीसे ऊपर जाकर लाठी-शुदा तिवारीका हाथ थामकर कहा, "तुम्हारा क्या दिमाग खराब हो गया है?" यह कहकर और प्रतिवाद करनेका मौका बगैर दिये ही वह उसे जबरदस्ती ढकेलता हुआ भीतर ले गया। भीतर जाकर तिवारीको मारे क्रोध, दुःख और क्षोभके रुलाई-सी आ गई, बोला, "यह देखिए, हरामजादे साहबकी करतूत देखिए!"

वास्तवमें करतूत देखकर अपूर्वकी थकावट और नींद, भूख और प्यास,—सब एक साथ गायब हो गई। गरम गरम खिचड़ी अब तक बटलोईमेंसे अपनी भाफ और मसालेकी सुगन्ध फैला रही थी। दूसरे कमरेमें जाकर देखा उसका सद्य-रचित दूध-सा सफेद बिछौना मैले काले पानीसे तर हो रहा था। कुरसी-पर पानी, टेबलपर पानी, किताबोंपर पानी, बॉक्स-ट्रंकोंपर पानी, —सभी तरफ पानी ही पानी पड़ा है।—यहाँ तक कि एक कोनेमें पड़ी हुई कपड़ोंकी अलगनी भी नहीं बची। उसके कीमती नये सूटपर भी मैले पानीके दाग लग गये हैं।

अपूर्वने अपनी साँस रोककर पूछा, "कैसे हुआ?"

तिवारीने उँगलीसे ऊपरकी छत दिखाते हुए कहा, "उसी साले साहबका काम है। वह देखिए—"

वास्तवमें तख्तोंकी छतकी सेंधोंमेंसे अब तक जगह जगह मैला पानी टपक रहा था। तिवारीने इस दुर्घटनाका जो वर्णन किया, उसका संक्षिप्त रूप इस प्रकार है—

अपूर्वके बाहर जानेके कुछ ही मिनटों बाद साहब मकानमें आया। आज ईसाइयोंका त्योहारका दिन है। और जहाँ तक सम्भव हो उत्सवको घोर बनानेके उद्देश्यसे वह 'घोर' होकर आया था। पहले गीत और फिर नृत्य शुरू हुआ और फिर शीघ्र ही दोनोंके संयोगसे 'शास्त्रोक्त संगीत' ऐसा प्रचण्ड हो उठा कि तिवारीको आशंका होने लगी कि तख्तोंकी छत शायद साहबका इतना भारी आनन्द न सम्हाल सकेगी और सब-शुदा उसके सरपर आ टूटेगी। इतना तक तो उसने सह लिया; पर रसोईके पास ही जब ऊपरसे पानी गिरने लगा तब सब चीज बिगड़नेके डरसे तिवारीने बाहर निकलकर इसका प्रतिवाद किया। मगर साहब, फिर चाहे वह काला हो या धौला, देशी आदमीकी इस हिमाकतको सहन न कर सका, उत्तेजित हो उठा, और क्षण-भरमें वह उत्तेजना ऐसे प्रचण्ड क्रोधमें परिणत हो गई कि उसने अपने कमरेमें जाकर बाल्टी भर-भरके पानी ढोलना शुरू कर दिया। इसके बाद जो कुछ हुआ उसे कहनेकी जरूरत नहीं। और अपूर्वने खुद भी उसे थोड़ा-बहुत अपनी आँखों देख लिया है।

अपूर्व कुछ देर तक स्तब्ध खड़ा रहा और फिर बोला, "साहबके कमरेमें क्या और कोई नहीं है?"

"क्या मालूम, कोई होगा शायद। कोई एक मतवाला उस सालेसे हाथापाई करके लड़ रहा था।" कहकर तिवारी खिचड़ीकी बटलोईकी तरफ करुण दृष्टिसे देखने लगा। अपूर्व इसके मानी समझ गया। अर्थात् और किसीने जी-जानसे उसे रोकनेकी कोशिश की जरूर थी, पर वह हमारे दुर्भाग्यको रंचमात्र भी घटा नहीं सका।

अपूर्व चुपचाप बैठ रहा। जो होना था सो हो चुका था, और कोई नया उपद्रव अब न था। उत्सवके आनन्दसे विह्वल साहबके नये ऊधमका कोई लक्षण दिखाई न दिया, शायद अब उसने जमीन अख्तियार कर ली होगी। सिर्फ नेटिव तिवारी अब तक उसको माफ नहीं कर सका था। उसीका अस्फुट उच्छ्वास बीच-बीचमें सुनाई दे जाता था।

अपूर्वने हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "तिवारी, जब भगवान विरुद्ध होते हैं तब इसी तरह मुँहका कौर छिन जाता है। आओ, हम लोग समझ लें कि आज भी जहाजपर ही हैं। चिडड़ा मुड़की-सन्देस जो थोड़े-बहुत बचे हों उनसे रात किसी कदर कट ही जायगी। क्यों?—"

सिर हिलाकर समर्थन कर और उस बटलोईकी तरफ फिर एक बार सतृष्ण दृष्टिसे देखकर तिवारी चिउड़ा-मुड़की*के लिए उठा। सौभाग्य इस बातका था कि खाने-पीनेका बॉक्स घरमें घुसते ही रसोईघरके एक कोनेमें रख दिया गया था और वहाँसे हटाया नहीं गया था,—ईसाईका पानी कमसे कम उस चीजकी जात न बिगाड़ सका था।

फलाहारका सामान जुटाते हुए तिवारीने रसोईघरमेंसे कहा, "बाबूजी, यहाँ रहना तो नहीं हो सकता।"

अपूर्वने अन्यमनस्क भावसे कहा, "शायद नहीं।"

तिवारी हालदार-परिवारका पुराना रसोइया था; चलते वक्त माने उसे हाथ पकड़कर जो बातें कह दी थीं, उन बातोंकी याद करके वह उद्विग्न कंठसे कह उठा, "नहीं बाबूजी, इस घरमें अब एक दिन भी नहीं। गुस्सेमें आकर मैंने अच्छा काम नहीं किया, साहबसे मैं नाहक गाली-गलौज कर बैठा।"

अपूर्वने कहा, "हाँ, गाली-गलौज न करके उसे मारना चाहिए था।"

तिवारीके दिमागमें क्रोधके बदले सुबुद्धिका उदय हो रहा था, उसने उसी वक्त प्रतिवाद करते हुए कहा, "नहीं बाबू, ये लोग कैसे भी हों, साहब ठहरे। हम लोग आखिर हिन्दुस्तानी हैं!"

अपूर्व चुप रहा। तिवारीने हिम्मत पाकर पूछा, "आफिसके दरबानसे कहकर कल सबेरे ही यहाँसे और कहीं नहीं जाया जा सकता? मेरी समझसे तो चला जाना ही अच्छा है।"

अपूर्वने कहा, "अच्छी बात है, कह देखना।" पर उसने मन ही मन समझ लिया कि तिवारीके अन्दर साहबके प्रति देशी आदमीकी कर्तव्य-बुद्धि इतनेहीमें जाग्रत हो उठी है। दुर्जनके विरुद्ध अब उसे कोई शिकायत नहीं रही है, बल्कि समय बरबाद न करके चुपचाप चल देना ही उसने अपना कर्तव्य निश्चित कर लिया है। उसने कहा, "सो ही होगा, तुम खानेका इन्तजाम करो।"

"अभी करता हूँ, बाबू।" कहकर वह कुछ कुछ निश्चिन्त होकर अपने काममें लग गया, परन्तु उसी एक बातके सूत्रसे उस ऊपरवाले फिरंगीके दुर्व्यवहारकी

*मुड़की=गुड़में पगी हुई खीलें।

याद आ जानेसे अकस्मात् अपूर्वका सम्पूर्ण चित्त मारे क्रोधके जल उठा। उसने सोचा : यह तो सिर्फ मेरे और शराबीके बीचका ही प्रश्न नहीं है। सभी-कोई हमेशा इस तरहकी लांछना सह लिया करते हैं, इसीसे तो इनकी स्पर्धा दिनपर दिन पुष्ट और पुंजीभूत होकर आज ऐसी अभ्रभेदी हो उठी है कि हमारे प्रति होनेवाले अन्यायका धिक्कार उस ऊँचे शिखर तक पहुँच ही नहीं पाता ! चुपचाप और बिना विचारे सह लेनेको ही हम लोग कर्तव्य समझ बैठे हैं। इसीसे तो उनका चोट पहुँचानेका अधिकार इतना दृढ़ और उग्र हो उठा है ! इसीसे तो आज मेरा नौकर मुझे जल्दीसे भागकर आत्म-रक्षा करनेका उपदेश दे रहा है ! हाय, लाज-शरमका प्रश्न तक उसके मनमें न उठा !

मगर महाराज बेचारा रसोईघरमें बैठा बड़े जतनसे मालिकके लिए चिउड़ा-मुड़कीका फलाहार बना रहा था। वह जान भी न पाया कि कब उसका मालिक लट्ठ उठाकर दबे-पाँव सीढ़ीसे ऊपर चढ़ गया।

दुमँजलेपर साहबका दरवाज़ा बन्द था। उस बन्द दरवाजेपर वह बार बार धक्का देने लगा। कुछ क्षण बाद एक भयभीत नारी-कण्ठसे अँगरेजीमें जवाब आया, " कौन ? "

अपूर्वने कहा, " मैं हूँ नीचे रहनेवाला। उस आदमीको एक बार देखना चाहता हूँ। "

" क्यों ? "

" उसे दिखाना चाहता हूँ, उसने मेरा कितना नुकसान किया है ! उसकी तकदीर अच्छी थी जो मैं था नहीं। "

" वे सो गये हैं। "

अपूर्वने अत्यन्त परुष कण्ठसे कहा, " उठा दीजिए। यह सोनेका वक्त नहीं है। रातको सोवे, मैं तंग करने नहीं आऊँगा। लेकिन, अभी उसके मुँहका जवाब वगैर सुने मैं यहाँसे एक कदम भी नहीं हिलूँगा। " इतना कहकर इच्छा न होनेपर वह अपने हाथकी लाठीको सीढ़ीपर मारकर जोरसे आवाज कर बैठा।

मगर न तो दरवाजा ही खुला और न कोई जवाब ही आया। दो-एक मिनट और ठहरकर अपूर्व फिर चिल्लाया, " मैं जा हरगिज नहीं सकता,—कहिए उससे बाहर निकलनेके लिए। "

भीतरसे जो बात कर रही थी वह अब दरवाजेके बहुत ही पास आकर नम्र और अत्यन्त मृदु कण्ठसे बोली, " मैं उनकी लड़की हूँ। पिताजीकी तरफसे आपसे क्षमा माँगती हूँ। उन्होंने जो कुछ किया है, अपने होश-हवासमें नहीं किया। पर आप विश्वास रखिए, आपका जितना नुकसान हुआ है, कल हम लोग उसकी यथासाध्य पूर्ति कर देंगे।"

लड़कीके कोमल स्वरसे अपूर्व नरम पड़ गया, लेकिन उसका गुस्सा कम न हुआ। बोला, " उन्होंने जंगलीकी तरह मेरा काफी नुकसान किया है। मैं परदेशी जरूर हूँ, मगर आशा करता हूँ कि कल सबेरे वे खुद मुझसे मिलकर इसका फैसला करनेकी कोशिश करेंगे।"

लड़कीने कहा, " अच्छा।" फिर कुछ देर चुप रहकर बोली, " आपकी तरह हम लोग भी यहाँ नये हैं। कल शामहीको हम लोग मौलमिनसे यहा आये हैं।"

अपूर्व आगे कुछ न कहकर आहिस्तेसे नीचे उतर गया। घर जाकर देखा अब तक तिवारी भोजनके उद्योगमें ही लगा हुआ है। इतनी बात हो गई, उसे इसका कुछ पता ही नहीं चला।

थोड़ा-सा खाकर अपूर्व अपने सोनेके कमरेमें आकर भीगी तोशक और तकिया आदिको नीचे फेंककर रात-भरके लिए किसी तरहसे बिस्तर करके पड़ रहा। जबसे विदेशकी धरती पर उसने पैर रक्खा है तबसे उसकी हानि, हैरानी और विरक्तिकी सीमा नहीं। मालूम नहीं, इस यात्रामें उसपर कैसी बीतेगी, कहाँ जाकर क्या परिणाम निकलेगा। इस सुख-शान्तिहीन उद्विग्न चिन्ताके साथ साथ एक बातकी और भी उसे याद आ रही थी : वह अपरिचित युवती कौन है? वह सामने नहीं आई,—देखनेमें कैसी है, क्या उम्र है, कैसे स्वभावकी है,—कुछ भी अनुमान नहीं कर सका। सिर्फ इतना ही जान सका है कि उसका अंग्रेजी उच्चार अँग्रेजों जैसा नहीं है। या तो मद्रासी होगी, नहीं तो गोआनीज़ या और कोई। परन्तु, चाहे जो हो, वह अपनेको क्रिश्चियन-धर्मावलम्बी राजाकी जात समझनेवाले अपने पिताकी तरह उद्धत और अत्यन्त दर्पिता नहीं है। अपने पिताके अन्यायके लिए लज्जित है,—उसके भीत, विनीत कण्ठकी क्षमा-प्रार्थना अपूर्वके परुष-तीव्र अभियोगके साथ अब मानो बेसुरी बजने लगी। स्वभावतः वह उग्र प्रकृतिका नहीं है, किसीको भी कड़ी बात कहनेमें उसे संकोच

होता है,—खासकर तिवारीके वर्णनसे सामंजस्य मिलाकर जब उसे मालूम हुआ कि शायद इस लड़कीने ही अपने शराबी और दुराचारी पिताको रोकनेकी चुपचाप जी-जानसे कोशिश की होगी, तब उसे पश्चात्तापके साथ ऐसा लगा कि आज-भरके लिए चुप रह जाना ही अच्छा था। जो होना था सो तो हो ही चुका, क्रोधके आवेशमें ऊपर जाकर ये बातें न कहता तो ठीक होता।

दूसरी कोठरीसे तिवारीके बर्तन माँजनेकी आवाज़ सुनाई दे रही थी। सहसा वह थम गई और दूसरे ही क्षण उसकी आवाज सुनाई दी—"कौन?"

अपूर्व चौंक पड़ा, पर उसे जवाब सुनाई नहीं दिया। बल्कि उसके बदले तिवारीका प्रबल कण्ठस्वर ही उसके कानमें पड़ा। वह अपनी भाषामें कह रहा था, "नहीं नहीं, मेम साहब, ये सब तुम ले जाओ। बाबूजीका खाना-पीना हो चुका। ये सब हम लोग नहीं छूते।"

अपूर्व उठके बैठ गया और कान खड़े करके उसने उस ईसाई लड़कीका कंठ-स्वर पहचान लिया, पर बात नहीं समझ सका। लेकिन तिवारीने उसे समझा दिया, उसने कहा "किसने कहा कि हम लोगोंका खाना नहीं हुआ? हो चुका। ये सब तुम ले जाओ, बाबू सुनेंगे तो गुस्सा होंगे।"

अपूर्व चुपचाप उठके सामने आ खड़ा हुआ, बोला, "क्या हुआ तिवारी?"

लड़की चौखटके इधर खड़ी थी, उसी वक्त हट गई। अभी तुरत शाम हुई थी, बत्ती नहीं जली थी, सीढ़ीकी तरफसे अन्धकारकी एक छाया भीतर आ पड़ी थी जिससे लड़की बिलकुल साफ न दीखनेपर भी पहचान ली गई। उसका रंग अँग्रेजोंकी तरह सफेद नहीं, पर है खूब गोरी। उम्र उन्नीस-बीस या और भी कुछ ज्यादा हो सकती है; और जरा कुछ लम्बी होनेसे ही शायद कुछ दुबली-सी दिखाई दी। ऊपरके ओठके नीचे सामनेके दो दाँत जरा ऊँचे न मालूम होते तो चेहरा शायद अच्छा ही लगता। पाँवोंमें स्लीपर थे और बदनपर बढ़िया मद्रासी साड़ी,—शायद त्योहार होनेसे,—लेकिन ढंग कुछ बंगाली और पारसियों जैसा था। एक जापानी फलदानीमें कुछ सेब, नासपाती, दो बेदाने और अंगूरोंका एक गुच्छा सामने जमीनपर रक्खा था। अपूर्वने कहा, "यह सब क्यों?"

लड़कीने बाहरसे अँग्रेजीमें अहिस्तेसे जवाब दिया, "आज हम लोगोंका

त्योहारका दिन है, माने भेजा है। इसके सिवा आज आप लोगोंका खाना-पीना भी नहीं हुआ।"

अपूर्वने कहा, "अपनी माको आप मेरी ओरसे धन्यवाद दीजिए।—लेकिन हम लोगोंका खाना-पीना हो चुका है।"

लड़की चुप रही। अपूर्वने पूछा, "हम लोगोंका खाना-पीना नहीं हुआ, यह बात उनसे किसने कही?"

लड़कीने लज्जित स्वरसे कहा, "इसी बातपर पहले झगड़ा हुआ था। इसके सिवा मुझे मालूम है।"

अपूर्वने सिर हिलाकर कहा, "उन्हें हजारों धन्यवाद, लेकिन सचमुच ही हम लोग खा-पी चुके हैं।"

लड़की एक क्षण मौन रहकर बोली, "सो तो ठीक है, पर अच्छी तरह नहीं हुआ। और ये तो बाजारके फल हैं,—इनमें कोई दोष नहीं।"

अपूर्व समझ गया कि उसे शान्त करनेके लिए इस अपरिचित महिलाके उद्वेगका ठिकाना नहीं। थोड़ी देर पहले वह लाठी और गलेकी आवाज़से अपने मिजाजका जैसा परिचय दे आया है, उससे कल सबेरे क्या होगा, यह सोचकर ही उसे प्रसन्न करनेके लिए भेंट लेकर उपस्थित हुई है। इसीसे उसने सदयकण्ठसे कहा, "नहीं, इसमें कोई दोष नहीं।" और तिवारीसे बोली, "बाजारके फल हैं, इनके लेनेमें क्या दोष है महाराज?"

तिवारी महाराज खुश न हुए, बोले, "बाजारके फल हैं, तो बाजारसे ले आनेसे ही काम चल जायगा। आज रातको हम लोगोंको जरूरत भी नहीं, और माने मुझे इन सब बातोंके लिए बार बार मनाई कर दी है। मेम-साहब, ये सब तुम ले जाओ,—हमें जरूरत नहीं है।"

माने मनाई की है, या कर सकती हैं,—इसमें असम्भव कुछ नहीं। और यह भी ठीक है कि वे बहुत दिनोंके अपने पुराने और विश्वस्त नौकर तिवारी महाराजको इन सब बातोंमें विदेशके लिए उसका अभिभावक नियुक्त कर सकती हैं, परन्तु, उस दिन चलते समय वह माको जो वचन दे आया है उसका स्मरण करके उसने मन ही मन कहा—सिर्फ माकी ही आज्ञा तो नहीं है, मैं भी तो इस सत्यको पालनेकी प्रतिज्ञा कर आया हूँ। परन्तु, फिर भी इस संकुचित, लज्जित और अपरिचित तरुणीकी, जो उसे प्रसन्न करनेके लिए डरती हुई उसके

दरवाजेपर आई थी, उपहारकी इन मामूली चीजोंको अस्पृश्य समझकर अपमानित कर वापस भेजना भी उसे ' सत्य ' नहीं मालूम हुआ। मगर यह बात वह मुँह खोलकर कह न सका, मौन ही रहा। तिवारीने कहा, " ये सब हम लोग नहीं छूएँगे, मेम साहब। आप ले जाइए, मैं जगह धो डालूँ। "

लड़की कुछ देर तक चुपचाप खड़ी रही, फिर हाथ बढ़ाके डाली उठाकर धीरेसे चली गई।

अपूर्वने दबे हुए रूखे स्वरसे कहा, " ले तो लेता भले आदमी, खाता चाहे नहीं। लेकर पीछे चुपकेसे फेंक भी तो दे सकता था! "

तिवारीने आश्चर्यचकित होकर कहा, " लेकर फेंक देता? यों ही बिगाड़नेमें क्या फायदा था, बाबू? "

" क्या फायदा था बाबू! मूर्ख, गँवार कहींका! "—यह कहकर अपूर्व सोने चला गया। बिस्तरपर पड़ते ही पहले तो तिवारीपर इतना गुस्सा आया कि उसकी सारी देह जलने लगी; परन्तु जैसे-जैसे वह इसकी छान बीन करने लगा वैसे वैसे उसे मालूम होने लगा कि ऐसा मैं नहीं कर सकता था। लेकिन शायद यह अच्छा ही हुआ कि उसने साफ कहके लौटा दिया। सहसा उसे अपने बड़े मामाकी बात याद आ गई। उस सदाचारी निष्ठावान् ब्राह्मण पण्डितने एक दिन उसके घर भोजन करना अस्वीकार कर दिया था। उनसे स्वीकार करानेका कोई उपाय नहीं, करुणामयी इस बातको जानती थीं, फिर भी पतिके लिए उन्होंने एक तरकीब निकालनी चाही। परन्तु उस गरीब ब्राह्मणने उसपर जरा मुसकराकर कहा, " नहीं जीजी, सो नहीं हो सकता। हालदार साहब गुस्सैल आदमी हैं, इस अपमानको वे सह नहीं सकेंगे,—हो सकता है कि तुम्हें भी कुछ हिस्सा लेना पड़े।—मेरे गुरुदेव तो यह कहा करते थे कि मुरारी, सत्य पालन करनेमें दुःख है। उसे कष्ट और आघातोंमेंसे तो किसी न किसी दिन पाया भी जा सकता है, पर वंचना या प्रतारणाके मीठे रास्तेसे वह कभी नहीं चलता-फिरता। इससे यही अच्छा है बहन, कि मैं बगैर खाये ही चला जाऊँ। " करुणामयीपरसे बहुत बार ऐसे ऐसे बहुतसे दुःख गुजर चुके हैं, परन्तु कभी किसी दिन भइयाको उन्होंने दोष नहीं दिया। उस बातकी याद करके अपूर्व मन ही मन बार-बार कहने लगा—यह अच्छा ही हुआ,—तिवारीने ठीक ही किया।

३

अपूर्वके मनमें आई कि सबेरे सबेरे एक बार बाजार घूम आवे। वहाँके म्लेच्छाचारकी बदनामी समुद्र पार करके माके कानोंतक जा पहुँची है, इसलिए उसे अस्वीकार करनेसे काम नहीं चल सकता,—मानना ही पड़ेगा। परन्तु हिन्दुत्वकी ध्वजा बाँधे वही अकेला तो कालापानी पार होकर आया नहीं! सच्चे हिन्दू और भी तो यहाँ रहते होंगे जो नौकरीकी गरज और शास्त्रके अनुशासन इन दोनोंके बीचका मार्ग उसके पहले ही आविष्कार करके धर्म और अर्थके विरोधको मेटते हुए वास कर रहे हैं। उस सुगम मार्गकी खोजके लिए उनसे परिचित होना अत्यावश्यक है, और विदेशमें घनिष्ठता स्थापित करनेके लिए बाजारके सिवा इतना बड़ा सुयोग और कहाँ मिल सकता है? वास्तवमें अपने कानोंसे सुनकर और आँखोंसे देखकर इस बातका निर्णय करना आवश्यक है कि माकी आज्ञाके विरुद्ध आचरण न करते हुए भी इस देशमें सचमुच रहा जा सकता है या नहीं। लेकिन वह बाहर न निकल सका, क्योंकि ऊपरका साहब कब क्षमा माँगने आयेगा, इसका कोई ठीक नहीं। वह आयेगा ही, इसमें तो कोई सन्देह नहीं। एक तो, उपद्रव उसने होश-हवासमें नहीं किया; और दूसरे, आज जब उसका नशा छूटेगा तो स्त्री और कन्या उसे किसी भी तरह छोड़ेंगी नहीं, क्योंकि उनके मुँहका अनुच्चारित इशारा वह कल ही वसूल कर लाया है। लड़कीकी उसे सोतेसे उठनेपर कई बार याद आई है। निद्रित अवस्थामें भी उसकी भद्रता, उसकी सज्जनता, उसका विनम्र कण्ठ-स्वर मानो अपूर्वके कानोंमें एक अज्ञात स्वरकी लहर पैदा करता रहा है। शराबी पिताके दुराचारसे जैसे उस लड़कीकी शरमकी कोई हद न रही थी वैसे ही तिवारीकी रूक्षतासे अपूर्व खुद भी शर्मिन्दा हुए बगैर न रह सका था। दूसरोंके अपराधसे अपराधी होकर इन दो अपरिचित मनोंमें शायद यही एक तरहकी समवेदनाका सूक्ष्म सूत्र था जिसे बिना कहे अस्वीकार करनेमें अपूर्वका मन गवाही न देता था। सहसा सिरके ऊपरके पड़ोसियोंके जागनेका शब्द नीचे आ पहुँचा और प्रत्येक स-बूट पदक्षेपमें वह आशा करने लगा कि अब साहब उतरकर उसके दरवाजेपर आ खड़ा होगा! क्षमा वह करेगा, यह तय बात है; परन्तु फिक्र उसे इस बातकी है कि कलकी बीभत्सता क्या करनेसे सहज और साधारण हो जायगी और मनोमालिन्यका

दाग पोंछा जा सकेगा। लेकिन माफी माँगनेका समय निकल जाने लगा। ऊपर छोटे-मोटे कदमोंकी आहटके साथ साहबके जूतोंका शब्द क्रमशः साफ सुनाई देने लगा। उससे उसके पैरोंके अर्ज और शरीरके भारका तो परिचय मिला पर दीनताका कोई लक्षण नहीं प्रकट हुआ। इस तरह आशा और उद्वेगसे प्रतीक्षा करते-करते घड़ीमें जब नौ बज गये और नये आफिसके लिए जानेकी तैयारी करनेका समय जब करीब आ पहुँचा, तब सुनाई दिया कि साहबने नीचे उतरना शुरू किया है। उसके पीछे और भी दो जनोंके कदमोंकी आवाज अपूर्वने कान लगाकर सुनी। इसके बाद बगैर देर किये जल्दी ही उसके दरवाजेका कुंडा जोरसे झनझना उठा और रसोईघरसे दौड़कर तिवारीने खबर दी, "बाबूजी, कलका साहब सुसरा आके कुंडा खटखटा रहा है।" उसकी आवाज़से भीतरकी उत्तेजना छिपी नहीं रही।

अपूर्वने कहा, "दरवाजा खोलके उसे भीतर आनेको कह दे।"

तिवारीके दरवाजा खोलते ही अपूर्वको अत्यन्त गंभीर कंठकी आवाज सुनाई दी, "एइ, तुम्हारा साहब किदर?"

उत्तरमें तिवारीने क्या कहा, ठीकसे सुनाई नहीं दिया। जहाँ तक सम्भव है, सम्मानके साथ स्वागत किया होगा। मगर प्रत्युत्तरमें साहबकी आवाज सीढ़ीके तख्तोंकी पीठसे टकराकर मानो हुंकार दे उठी, "बुलाओ!"

कमरेके भीतर अपूर्व चौंक पड़ा। बापरे! यह क्या अनुतापका स्वर है! एक बार उसने सोचा कि साहबने सुबह उठते ही शराब पी है, इसलिए इस समय जाना चाहिए या नहीं, पर, कुछ और सोचनेके पहले ही फिर हुक्म आया, "बुलाओ जल्दी!"

अपूर्व धीरे धीरे पास जाकर खड़ा हो गया। साहबने क्षण-भर उसे नीचेसे ऊपर तक एक नजर देखकर अँग्रेजीमें पूछा, "अँग्रेजी जानते हो?"

"जानता हूँ।"

"मेरे सो जानेके बाद कल तुम मेरे यहाँ ऊपर गये थे?"

"हाँ।"

साहबने कहा, "ठीक है। लाठी ठोंकी थी? अनिधिकार प्रवेश करनेके लिए दरवाजा तोड़नेकी कोशिश की थी?"

अपूर्व मारे आश्चर्यके दंग रह गया।

साहबने कहा, "दुर्भाग्यवश दरवाजा अगर खुला होता तो तुम मेरे घरमें घुसकर मेरी स्त्री या लड़कीपर हमला करते! इसीसे मेरे जागते समय तुम नहीं गये!"

अपूर्वने आहिस्तेसे कहा, "तुम तो सो रहे थे, तुमने ये सब बातें सुनी कैसे?"

साहबने कहा, "लड़कीसे मैंने सब सुन लिया है। उससे तुमने गाली-गलौज की है।"—इतना कहकर उसने पास खड़ी हुई लड़कीकी तरफ उँगलीसे इशारा किया। यह वही लड़की है जो कल रातको फल देने आई थी। पर कल अपूर्व इसे अच्छी तरह देख नहीं सका था, और आज भी साहबकी विशाल देहकी ओटमें उसे साड़ीकी किनारीके सिवा और कुछ दिखाई न दिया। उसने गर्दन हिलाकर समर्थन किया या नहीं, सो भी समझमें नहीं आया; पर इतना साफ समझमें आ गया कि ये लोग साधारण आदमी नहीं। सारी घटनाको जान-बूझकर विकृत और बिलकुल उलटी बना देनेकी कोशिश कर रहे हैं। इसलिए, अत्यन्त सावधान होनेकी जरूरत है।

साहबने कहा, "मैं जागता होता तो तुम्हें लात मारकर सड़कपर फेंक देता, और मुँहमें एक भी दाँत साबुत न रहने देता! पर वह मौका जब हाथसे निकल गया, तो पुलिसके हाथसे जितना हो सके उसीसे अब सन्तुष्ट होना पड़ेगा। हम लोग जा रहे हैं, तुम इसके लिए तैयार रहना।"

अपूर्वने सिर हिलाकर कहा, "अच्छा।" लेकिन उसका चेहरा बिलकुल फक पड़ गया।

साहबने लड़कीका हाथ पकड़कर कहा, "चलो।" और उतरते उतरते कहा, "कावर्ड! अरक्षित स्त्रियोंपर हमला करनेकी कोशिश! मैं तुम्हें ऐसा सबक सिखाऊँगा कि जिन्दगी-भर न भूलोगे।"

तिवारी बगलसे खड़ा हुआ सब सुन रहा था। उन लोगोंके चले जाते ही रोनी-सी सूरत बनाकर बोला, "अब क्या होगा छोटे बाबू?"

अपूर्वने मामलेको तुच्छता देते हुए कहा, "होगा क्या!"

मगर उसके चेहरेने दूसरी ही बात कही, तिवारी उसे समझ गया। बोला, "मैंने तो तभी कहा था बाबू, जो होना था सो हो चुका, अब इन्हें छेड़नेकी जरूरत नहीं। ये लोग सब साहब-मेम ठहरे!"

अपूर्वने कहा "साहब-मेम हैं तो क्या हुआ ?"

तिवारीने कहा, "थानेमें गये हैं जो ?"

अपूर्वने कहा, "गये हैं तो क्या !"

तिवारीने व्याकुल होकर कहा, "बड़े बाबूको एक तार कर दें छोटे बाबू, न हो तो वे ही आ जायँ !"

"तू पागल तो नहीं हो गया तिवारी ! जा देख जाकर, उधर सब जल-जुलकर राख हो गया होगा। साढ़े दस बजे मुझे आफिस जाना होगा।"

इतना कहकर वह अपने कमरेमें चला गया। तिवारी भी रसोईघरमें चला गया, लेकिन रसोई बनाने-परोसनेसे लेकर बाबूका आफिस जाना तक सब कुछ उसे बिलकुल अर्थशून्य लगने लगा। और, जितना ही वह मन ही मन अपनेको सब आफतोंकी जड़ समझकर धिक्कारने लगा उतना ही उसका उद्भ्रान्त चित्त इस देशकी म्लेच्छतापर, ग्रह-नक्षत्रोंकी बुरी दृष्टिपर, पुरोहितके साइत सोधनेपर और सबसे बढ़कर करुणामयीकी अर्थ-लालसापर दोष देकर किसी कदर जरा सान्त्वना ढूँढ़नेकी कोशिश करने लगा।

इस तरहके मनको लिये हुए ही उसे रसोईका काम खत्म करना पड़ा। करुणामयीके हाथका बना हुआ आदमी ठहरा वह, अतएव मन उसका चाहे कितना ही दुश्चिन्ताग्रस्त क्यों न हो, हाथके काममें कहीं भी जरा भूल-चूक नहीं हुई। यथासमय भोजनपर बैठकर अपूर्वने उसे हिम्मत देनेके अभिप्रायसे रसोईकी कुछ ज्यादा तारीफ की। एक बार अन्न-व्यंजनकी सूरत-शकलका यश गाया, और दो एक कौर मुँहमें देकर कहा, "आज रसोई क्या बनी है, अमृत है, तिवारी ! कई दिनसे खाया नहीं, समझा था कि सब जला-जुला डालेगा। कितना डरपोक आदमी है तू,—बड़े अच्छे आदमीको छाँटकर माने साथ भेजा है !

तिवारीने कहा, "हूँ !"

अपूर्वने उसकी तरफ देखकर हँसते हुए कहा, "चेहरा तो बिलकुल हँड़िया-सा बना रखा है तैंने !" और फिर सिर्फ तिवारीके मनसे ही नहीं, अपने मनसे भी सारीकी सारी घटनाको हलकी करके उड़ा देनेकी कोशिश करते हुए मजाकमें कहा, "हरामजादे फिरंगीका धमकी देनेका ढंग देखा ? थानेमें जायगा !—अरे, जाता क्यों नहीं ? जाकर करेगा क्या मेरा ?—तेरा गवाह कौन है ?—"

तिवारीने सिर्फ इतना ही कहा, "साहब-मेमोंके लिए गवाहकी जरूरत नहीं पड़ती बाबू, उनका तो कहने-भरसे काम चल जाता है।"

अपूर्वने कहा, "कहनेसे ही हो गया! कानून-कायदे जैसे कुछ हैं ही नहीं! इसके सिवा ये लोग साहब-मेम कैसे? रंग तो बिलकुल बार्निश-दार जूता है! सुसरा जैसे दुधमुँहे बच्चोंको हौआका डर दिखा रहा हो! बदमाश, पाजी, हरामजादा!

तिवारी चुप रहा। परोक्षमें भी गाली-गलौज करने लायक तेज उसमें नहीं रहा था।

अपूर्व कुछ देर तक चुपचाप खाता रहा, फिर सहसा मुँह उठाकर बोला, "और वह लड़की कितनी बदमाश है, तिवारी! कल ऐसी आई जैसे भीगी बिल्ली। और ऊपर जाकर कितनी सब झूठी बातें भिड़ाई हैं। पहचानना मुश्किल है।"

तिवारीने कहा, "ईसाई जो है!"

"और क्या!"—अपूर्वको उसी वक्त खयाल आया: इनको भक्ष्य-अभक्ष्यका ज्ञान नहीं, सकरा-जूठा मानते नहीं, सामाजिक भलाई बुराईका कुछ खयाल नहीं। बोला, "अभागे बदमाश हैं सुसरे। जानता है तू, जो असली साहब हैं वे इन लोगोंसे कितनी नफरत करते हैं!—एक टेबिलपर बैठके खाते तक नहीं इनके साथ। चाहे जितना हैट-कोट पहनते रहें और चाहे जितनी बार गिरजेकी धूल फाँकते रहें,—वहाँ कोई नहीं पूछता इन्हें। जो लोग अपना धरम दे देते हैं, तू समझता है वे क्या कभी अच्छे हो सकते हैं?"

तिवारीने ऐसा कभी नहीं समझा; परन्तु, स्वयं इस आसन्न सर्वनाशके सामने खड़े होकर कौन अच्छा है और कौन बुरा, इस बातपर विचार करनेकी उसकी प्रवृत्ति ही नहीं हुई। छोटे बाबूका आफिस जानेका समय हुआ जा रहा है, नहीं जानता कि उनके चले जानेपर वह अकेला इस घरमें कैसे समय काटेगा। साहब थानेमें खबर देने गया है, वहाँसे लौटकर शायद वह दरवाजा तोड़ डाले! हो सकता है कि साथमें पुलिस ले आवे और सिपाही उसे बाँधके ले जावें! क्या होगा और क्या नहीं, सब अनिश्चित है। ऐसी हालतमें, असली और नकली साहबमें कितना भेद है, एककी टेबिलपर दूसरा खाता है या नहीं, और न खानेसे दूसरे पक्षकी लांछना

और वेदना कितनी बढ़ती है,—इन सब बातोंमें उसे रंच मात्र भी दिलचस्पी नहीं रही। भोजनादि करके अपूर्व कपड़े पहन रहा था कि तिवारीने कमरेके परदेको जरा-सा हटाकर भीतरको मुँह करके कहा, "जरा ठहरकर देखते जाते तो ठीक होता न?"

"क्या देखते जाते?"

"उनके लौट आने तक—"

अपूर्वने कहा, "ऐसा भी कहीं होता है! आज मेरी नौकरीका पहला दिन है,—क्या सोचेंगे वे लोग, बता तो?"

तिवारी चुप रह गया। अपूर्वने कहा, "तू दरवाजा बन्द करके चुपचाप बैठा रह,—मैं जितनी जल्दी हो सकेगा, आ जाऊँगा,—दरवाजा तो तोड़ नहीं सकता,—क्या करेगा वह हरामी!"

तिवारीने कहा, "अच्छा।" पर उसने एक दीर्घ-निःश्वास दबानेकी कोशिश की, इस बातको अपूर्व साफ ताड़ गया। अपूर्वके बाहर जाते समय दरवाजा बन्द करनेके पहले तिवारीने धीमे गलेसे कहा, "आज पैदल न जाइएगा छोटे बाबू, रास्तेसे एक गाड़ी कर लीजिएगा।"

"अच्छा, देखा जायगा।" कहकर अपूर्व नये बूटोंकी मच-मच आवाज करता हुआ सीढ़ियोंसे नीचे उतर गया। उसके चलनेका ढंग देखकर मालूम नहीं हुआ कि उसके मनमें नई नौकरीका आनन्द जरा भी बाकी रह गया है।

बोथा कम्पनीके साझीदार पूर्व प्रान्तके मैनेजर रोजेन साहब फिलहाल बर्मामें ही थे। रंगूनका आफिस उन्हींने स्थापित किया था। अपूर्वको उन्होंने काफी सहृदयताके साथ ग्रहण किया और उसकी सूरत-शकल, बातचीत और विश्वविद्यालयकी डिग्री आदि देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। समस्त कर्मचारियोंको बुलाकर उन्होंने अपूर्वका परिचय करा दिया और इधर जबसे वे यहाँ आये हैं तबसे अबतकका दो-तीन महीनेका व्यापारिक रहस्य उसे सिखा देंगे, ऐसी आशा दी। बातचीत, आलाप-परिचय और नये उत्साहमें उसके भीतरकी ग्लानि थोड़ी देरके लिए दूर हो गई। एक आदमीने उसे विशेष रूपसे आकृष्ट किया, वह था आफिसका एकाउण्टेण्ट। दक्षिणी ब्राह्मण है, नाम है रामदास तलवरकर। उमर सम्भवतः उसीके बराबर होगी, शायद कुछ ज्यादा भी हो सकती है। दीर्घ आकृति, बलिष्ठ गोरा बदन,—सुपुरुष कहनेमें अत्युक्ति न होगी। पहनावमें पाजामा था और लम्बा कोट, सिरपर पगड़ी,

ललाटपर रक्त चन्दनका टीका। अँग्रेजी बातचीत उसकी बहुत अच्छी और शुद्ध थी मगर अपूर्वके साथ उसने शुरूसे ही हिन्दीमें बातचीत करना शुरू किया। अपूर्व हिन्दी अच्छी न जानता था, मगर जब देखा कि वह हिन्दीके सिवा और किसी भी भाषामें जवाब नहीं देता, तब उसने भी हिन्दीमें बोलना शुरू किया। अपूर्वने कहा। "मैं हिन्दी अच्छी नहीं जानता, बहुत गलतियाँ होंगीं।"

रामदासने कहा, "गलती मुझसे भी होती है, हममेंसे किसीकी भी यह मातृ-भाषा नहीं है।"

अपूर्वने कहा, "अगर औरोंकी भाषामें ही बोलना हो, तो अँग्रेजीने क्या बिगाड़ा है?"

रामदासने कहा, "अँग्रेजी मेरी और भी गलत होती है।" फिर जरा हँसकर कहा, "आप न हो तो अँग्रेजीमें ही बोलिएगा, पर मैं हिन्दीमें जवाब दूँ तो मुझे माफ करना होगा।"

अपूर्वने कहा, "मैं भी हिन्दी ही बोलनेकी कोशिश करूँगा, पर गलती होनेपर मुझे भी माफ करना पड़ेगा।"

इस बातचीतके बीचमें रोजेन साहब खुद ही मैनेजरके कमरेमें आ पहुँचे। उमर पचासके लगभग होगी: हॉलैण्डके रहनेवाले हैं, वेश-भूषामें तड़क भड़क नहीं है, चेहरेपर काफी दाढ़ी-मूँछें हैं, अँग्रेजी उच्चारण टूटा-फूटा-सा, पक्के व्यवसायी आदमी हैं।—इन्हीं कुछ दिनोंमें उन्होंने बर्माके नाना स्थानोंमें घूम-फिरकर, सब तरहके लोगोंसे तथ्य संग्रह करके काम-काजका एक कच्चा लेखा तैयार कर लिया है। उस कागजको वे अपूर्वकी टेबलपर रखकर बोले, "इसके बारेमें आपकी राय जानना चाहता हूँ।" फिर तलवरकरसे बोले, "आपकी टेबिलपर भी एक कापी भिजवा दी है।—नहीं नहीं, अभी रहने दीजिए, —आज मैनेजरके सम्मानमें आफिसकी दो बजे छुट्टी होगी। देखिए, मैं तो जल्दी ही चला जाऊँगा, फिर, आप ही दोनोंपर सब काम-काजका भार रहेगा। मैं इंग्लिशमैन नहीं हूँ,—यद्यपि यह राज्य किसी दिन हम ही लोगोंके हाथमें आनेवाला था, तो भी उन लोगोंके समान हम लोग इण्डियनोंको छोटा नहीं समझते, अपने समकक्ष ही मानते हैं,—सिर्फ फर्मकी ही नहीं, हम लोगोंकी अपनी तरक्की भी हमारे अपने कर्तव्य-ज्ञानपर निर्भर है—अच्छा, गुड डे,—आफिस दो बजे बन्द होना

चाहिए—" इत्यादि कहते हुए वे जैसी तेजीके साथ आये थे, वैसी ही तेजीसे वापस चले गये और इसके कुछ ही क्षण बाद उनकी मोटरका शब्द बाहरके दरवाजेके पास सुनाई दिया।

दो बजे दोनों एक साथ आफिससे निकले। तलवरकर शहरमें नहीं रहते, करीब दस मील पश्चिमकी ओर इनसिन नामक स्थानमें उनका घर है। घरमें उनकी स्त्री आर एक छोटी लड़की है। घरके साथ थोड़ी-सी जमीन है जिसमें साग-सब्जी आसानीसे पैदा की जा सकती है। मजेकी खुली जमीन है, शहरका शोर नहीं,—काफी ट्रेनें छूटती हैं, जाने-आनेमें कोई दिक्कत नहीं होती। बोले, "हालदार बाबू, आफिसके बाद मेरे यहाँ आपका चायका निमंत्रण रहा।"

अपूर्वने कहा, "मैं चाय नहीं पीता, बाबू साहब!"

"नहीं पीते? मैं भी पहले नहीं पीता था, मेरी स्त्री अब भी नाराज होती है,—अच्छा, न हो तो फल वगैरह,—शरबत या,—हम लोग तो आप ही जैसे ब्राह्मण हैं—"

अपूर्वने कहा, "ब्राह्मण तो हैं ही। लेकिन आप लोग अगर हमारे हाथका खा सकें, तभी मैं आपकी स्त्रीके हाथका खा सकूँगा।"

रामदासने कहा, "मैं तो खा सकता हूँ। पर मेरी स्त्रीकी बात यह है कि,—अच्छा, सो उनसे पूछकर बताऊँगा। हमारे यहाँकी औरतें बड़ी,—अच्छा, आपका घर तो पास ही है, चलिए, आपको पहुँचा दूँ। मेरी गाड़ी तो वही पाँच बजे है।"

अपूर्वने कुछ ध्यान नहीं दिया। अब तक वह सब-कुछ भूला हुआ था, घरका जिक्र आते ही लहमे-भरमें वहाँके तमाम बखेड़ों और सारी कदर्यताने चिनगारीकी तरह चमककर उसके चेहरेकी सरसताको मानो पोंछकर मिटा दिया। यहाँ पाँव रखते ही वह ऐसी लज्जाजनक गन्दगीमें सन गया है, इस बातको जानने देनेमें उसका सिर-सा कट गया। अब तक वहाँ क्या हुआ होगा, उसे कुछ भी नहीं मालूम। मालूम नहीं क्या क्या हुआ होगा, अकेले ही उसके बीच जाकर खड़ा होना होगा। परन्तु, सद्य-परिचयके इस प्रारम्भ-कालमें ही उसका साथी सहसा क्या समझ बैठेगा, इस बातको सोचकर अपूर्व अत्यन्त संकुचित हो उठा। बोला, "देखिए, सब कुछ अभी बेसिलसिले—"

बात वह पूरी न कर सका। उसके संकोच और लज्जाको महसूस करके रामदास हँसता हुआ बोला "एक ही रातमें सब सिलसिलेकी उम्मीद तो मैं नहीं करता, बाबू साहब। मुझे भी एक दिन नया घर बसाना पड़ा था, मेरी तो स्त्री थी, आपके सो भी साथ नहीं। आप आज शर्म कर रहे हैं, मगर उन्हें बगैर लाये एक साल बाद भी आपकी यह शर्म न मिटेगी, कहे देता हूँ। चलिए, देखूँ मैं क्या कर सकता हूँ,—ऐसी गड़बड़ीमें ही तो मित्रकी जरूरत है।"

अपूर्व चुप रहा। वह स्वभावतः मजाक-पसन्द आदमी है, और कोई समय होता तो वह मजाकमें कह सकता था कि अपनी स्त्रीके साथ मेरी जबर्दस्त अनबन है! मगर अभी हँसी-मजाककी बात उसके मनमें भी न आई। इस निर्बान्धव देशमें आज उसे मित्रकी अत्यन्त आवश्यकता है, लेकिन, सद्य-परिचित इस विदेशी मित्रको उस जरूरतके लिए बुलाने या ले जानेमें उसका सिर कटने लगा। रामदासकी बात उसने ठीक मंजूर कर ली हो, सो, बात नहीं; पर दोनों चलते चलते जब उसके मकानके सामने जा पहुँचे तब अपूर्व तलवरकरजीको अपने घर आमंत्रित किये बगैर न रह सका। ऊपर चढ़ते वक्त देखा कि वह ईसाई लड़की भी ठीक उसी समय सीढ़ीसे उतर रही है। बाप उसके साथ नहीं है, वह अकेली है। दोनों एक किनारे हटकर खड़े हो गये। लड़कीने किसीकी तरफ देखा नहीं, धीरेसे उतरकर जब वह कुछ दूर रास्तेपर चली गई, तब रामदासने पूछा, "ये लोग तिमँजलेपर रहते होंगे शायद?"

अपूर्वने कहा, "हाँ।"

"आपके बंगाली ही हैं?"

अपूर्वने कहा, "नहीं, देशी क्रिस्तान हैं। जहाँ तक सम्भव है मद्रासी होंगे या गोआनीज, या और कहींके, बंगाली नहीं हैं।"

रामदासने कहा, "मगर यह तो कपड़े और ढंग देखकर ठीक आप ही लोगों जैसी मालूम हुई?"

अपूर्वने कुछ आश्चर्यान्वित होकर प्रश्न किया, "हम लोगोंका ढंग है, अपने जाना कैसे?"

रामदासने कहा, "मैने बम्बईमें, पूनामें, सिमलामें बहुत-सी बंगाली महिलाओंको देखा है। ऐसा सुन्दर पहनाव हिन्दुस्तानमें और किसी भी प्रान्तमें नहीं है।"

"सो, हो सकता है"—कहकर अपूर्व अपने घरके बन्द दरवाजेपर पहुँचकर बार बार मुक्के मारने लगा। बहुत देर बाद भीतरसे सतर्क कण्ठकी आवाज आई, "कौन?"

"मैं हूँ मैं, दरवाजा खोल, डरकी कोई बात नहीं।"—कहकर अपूर्व हँस दिया। कारण, इस बीचमें विशेष भयानक कोई बात नहीं हुई और तिवारी बेखटके घरमें ही मौजूद है,—यह जानकर उसपरसे जैसे बड़ा-भारी बोझ-सा उतर गया।

भीतर पहुँचकर रामदास इधर उधर कमरोंमें घूम फिरकर खुश हुए। बोले, "मुझे जिस बातका डर था, सो बात नहीं है। आपका नौकर अच्छा है, सब कुछ एक तरहसे जँचा दिया है। यह असबाब वगैरह मैंने ही पसन्द करके खरीदा था। आपको और भी क्या क्या चीजें चाहिए सो कह दीजिएगा, मैं खरीदकर भिजवा दूँगा,—रोजेन साहबने हुक्म दे रक्खा है।"

तिवारीने धीमे गलेसे कहा, "और असबाबकी जरूरत नही है बाबूजी, भलेभलेमें यहाँसे निकल जायँ, तो बहुत समझिए।"

उसके मन्तव्यपर किसीने ध्यान नहीं दिया, लेकिन बात अपूर्वके कानोंने सुन ली।

उसने मौका पाकर एकान्तमें पूछा, "और कुछ हुआ था क्या?"

"नहीं।"

"तो फिर ऐसा क्यों कहा?"

तिवारीने जवाब दिया, "कही क्या सेंत? दोपहर-भर साहब ऐसी घुड़-दौड़ मचाता रहा है कि कोई आदमी टिक सकता है यहाँ?"

अपूर्वने सोचा—बात शायद वास्तवमें इतनी गम्भीर नहीं है, कमसे कम, एक नीच आदमीके छोटेसे तुच्छ उपद्रवको बड़ा करके हरवक्त तिवारीके साथ मिलकर अशान्तिकी जेर खींचे चलना भी अत्यन्त दुःखकी बात है;—और इसीलिए उसने कुछ उपेक्षाके साथ कहा, "सो, तू कहना क्या चाहता है,—वह क्या चले फिरे भी नहीं? तख्तोंकी छतमें आवाज़ तो कुछ ज्यादा होती ही है।"

तिवारी जरा नाखुश होकर बोला, "एक ही जगहपर खड़े होकर घोड़ेकी तरह पैर पटकना क्या चलना है?"

अपूर्वने कहा, "तो शायद फिर शराब पी होगी—"

तिवारीने जवाब दिया, "सो हो सकता है। मुँह सूँघके तो मैंने देखा नहीं।" इतना कहकर वह अप्रसन्न चेहरेसे रसोईघरमें चला गया और कहता गया, "चाहे जो भी हो, इस घरमें रहना अब पुसायेगा नहीं।"

तिवारीकी शिकायत अनुचित भी नहीं और अप्रत्याशित भी नहीं। दुर्जनका असमाप्त अत्याचार एक ही दिनमें समाप्त हो जायगा, इसका भी उसे भरोसा नहीं; फिर भी अनिश्चित आशंकासे मन उसका अत्यन्त विषण्ण हो उठा। प्रवासका प्रथम प्रभात कुहरेमें आरम्भ हुआ था, बीचमें सिर्फ आफिसके मामलेमें जरा-सा प्रकाशका आभास दिखाई दिया था, परन्तु दिनान्त करीब पहुँचनेपर फिर उसे मेघाच्छन्न आकाश ही दिखाई दिया।

गाड़ीका वक्त होते ही रामदास बिदा होने लगे। मालूम नहीं, तिवारीकी शिकायत और उसके मालिकके चेहरेसे उन्होंने कुछ अनुमान किया या नहीं। जाते समय वे सहसा पूछ बैठे, "बाबू साहब, इस मकानमें आपको क्या आराम नहीं मिल रहा है?"

अपूर्वने जरा हँसकर कहा, "नहीं।" और फिर जब देखा कि रामदास जिज्ञासु भावसे उसकी ओर देख ही रहे हैं, तब बोला, "ऊपर जो रहते हैं, वे हमारे साथ बहुत सदय व्यवहार नहीं कर रहे हैं।"

रामदासने विस्मयके साथ कहा, "वह महिला?"

"हाँ,—उसका बाप तो जरूर ही।" यह कहते हुए उसने कल शामकी और आज सबेरेकी सारी घटना कह सुनाई। रामदास कुछ देर चुप रहकर बोले, "मैं होता तो इसका इतिहास कुछ और ही होता। माफी बगैर माँगे वह इस दरवाजेसे एक कदम भी नीचे न उतर सकता था!"

अपूर्वने कहा, "माफी नहीं माँगता तो आप क्या करते?"

रामदासने कहा,—"कह न दिया,—उतरने नहीं देता।"

अपूर्वने उनकी बातपर विश्वास नहीं किया हो, सो बात नहीं; फिर भी हिम्मतकी बातसे उसकी जरा हिम्मत बँधी। हँसकर बोला, "मगर अभी तो हम लोग उतरें, चलिए आपकी गाड़ीका वक्त हुआ जा रहा है।" इतना कहकर वह मित्रका हाथ पकड़कर सीढ़ीसे नीचे उतरने लगा। मगर आश्चर्य है कि जैसा चढ़ते वक्त हुआ था, उतरते वक्त भी ठीक वैसे ही सीढ़ीके सामने उस

लड़कीसे भेंट हो गई। उसके हाथमें कागजमें लिपटी हुई कोई चीज थी, शायद कुछ खरीद कर वापस आ रही थी। उसे रास्ता छोड़ देनेके लिए अपूर्व एक किनारे हटकर खड़ा हो गया, परन्तु सहसा दंग रहकर उसने देखा: रामदास रास्ता न छोड़कर उसे एक बारगी पूरी तरहसे रोकके खड़े हो गये हैं। अँग्रेजीमें वे बोले, " मुझे एक मिनटके लिए जरा माफ करना होगा, मैं इन बाबू साहबका मित्र हूँ। इनके साथ बिना कारण दुर्व्यवहारके लिए आप लोगोंको पश्चात्ताप करना चाहिए।"

लड़कीने आँख उठाकर क्रुद्ध स्वरमें कहा, " तबीयत हो तो आप यह सब बात मेरा पितासे कह सकते हैं।"

" आपके पिता घरपर हैं ?"

" नहीं।"

" तो बाट देखनेका मेरे पास वक्त नहीं है। मेरी तरफसे उनसे कह दीजिएगा कि उनकी ऊधमबाजीके मारे इनसे यहाँ रहा नहीं जा रहा है।"

लड़कीने उसी तरह तीखे गलेसे उत्तर दिया, " उनकी तरफसे मैं ही जवाब दे रही हूँ कि तबीयत हो तो ये यहाँसे चले जा सकते हैं।"

रामदास जरा हँसे, बोले, " हिन्दुस्तानी क्रिश्चियन बुलीओं (=bullies)को मैं पहचानता हूँ। उनके मुँहसे इससे बड़े जवाबकी मैं उम्मीद भी नहीं करता। मगर इससे उन्हें आराम न मिलेगा, कारण, इनकी जगह मैं आऊँगा। मेरा नाम है रामदास तलवारकर,—दक्खिनी ब्राह्मण हूँ मैं। 'तलवार' शब्दके क्या मानी होते हैं, सो अपने पितासे जान लेनेके लिए कह दीजिएगा। गुड ईवनिंग।—चलिए बाबू साहब,—" इतना कहकर वे अपूर्वका हाथ पकड़के एकदम सड़कपर जा पहुँचे।

उस लड़कीके मुँहकी चेष्टाको अपूर्वने कनखियोंसे देख लिया था। अन्तमें वह कितना कठोर हो गया था, इस बातका खयाल करके कुछ देर तक उससे कुछ कहा न गया। उसके बाद धीरेसे बोला, " यह क्या हुआ तलवरकर ?"

तलवरकरने उत्तरमें कहा, ' यही हुआ कि आपके चले जानेपर मुझे आना पड़ेगा। फ़क़त खबर मिल जानी चाहिए।"

अपूर्वने कहा, " यानी, दोपहरको आपकी स्त्री यहाँ अकेली रहेगी ?"

रामदासने कहा, " नहीं, अकेली नहीं, मेरे दो सालकी एक लड़की भी है।"

" यानी, आप मज़ाक़ कर रहे हैं।"

" नहीं, मैं सच कह रहा हूँ। मज़ाक़ करना मैं जानता ही नहीं।"

अपूर्वने अपने साथीके मुँहकी ओर एक बार गौरसे देखा, फिर धीरेसे कहा, " तो यह मकान छोड़ा नहीं जा सकता?"—उसके मुँहकी बात खत्म होनेसे पहले ही रामदासने अकस्मात् अपने बलिष्ठ हाथोंसे उसके दोनों हाथ पकड़कर बड़े जोरसे झकझोरते हुए कहा, " यही तो मैं चाहता हूँ बाबूजी, यही तो चाहता हूँ। अत्याचारके डरसे हम लोग बहुत भागते-छुपते रहे हैं, मगर,—बस!"

एक हाथ उन्होंने छोड़ दिया लेकिन दूसरा हाथ वे आखिर तक थामे ही रहे। सिर्फ ट्रेन छूटनेपर उस हाथको फिरसे एक बार जोरसे हिलाकर उन्होने अपने दोनों हाथोंको एक साथ जोड़के नमस्कार किया। स्टेशनके इस तरफ़के प्लेट-फार्मपर मुसाफिरोंकी ज्यादा भीड़ नहीं थी। यहीं अपूर्व टहलने लगा। सहसा उसे मालूम हुआ: कलसे आज तक,—इस एक ही दिनके व्यवधानमें उसका जीवन न जाने कहाँसे और कैसे एकबारगी वर्षों लम्बा हो गया है। खेल-कूद और इसी तरहके तुच्छ कामोंमें वह मालूम नहीं कब थककर सो गया था, आज अकस्मात् जहाँ उसकी नींद उचटी, वहाँ सारी दुनियाका कर्म-स्रोत सिर्फ काम-काजके वेगसे ही मानो पागल हो उठा है। विश्राम नहीं, विरति नहीं, आनन्द नहीं, अवसर नहीं,—मनुष्योंके परस्पर संघर्षका मध्याह्न सूर्य जैसे दोनों हाथोंसे मुट्ठी भर-भरकर आग बरसाता जा रहा हो। यहाँ मा नहीं, भाभियाँ भी नहीं,—स्नेह-छाया कहीं कुछ भी नहीं,—कर्म-शालाके असंख्य चक्र दाहने-बायें, सिरपर, पैरों-तले, सर्वत्र अन्ध वेगसे घूमते ही जा रहे हैं। जरा-सी असावधानी होनेकी कहीं भी कोई राह नहीं,—सारीकी सारी राहें एकदम निष्ठुर भावसे बन्द हैं। उसकी आँखोंके किनारे भीग गये,—पास ही एक लकड़ीकी बेञ्च थी, उसपर जाकर वह बैठ गया। बैठते ही आँखें पोंछ रहा था कि सहसा पीछेसे जोरका धक्का खाकर एकबारगी औंधा होकर जमीन-पर गिर पड़ा। जल्दीसे किसी कदर उठकर खड़ा हुआ तो देखता है: पाँच-छै फिरंगी छोकरे,—किसीके मुँहमें सिगरेट थी तो कोई कागजका चेहरा पहने हुए था,—दाँत निकालकर हँस रहे हैं। शायद जिसने धक्का मारा था उसीने बेञ्चपर लिखी हुई इबारतकी ओर इशारा करके कहा, " साला, ये साहब लोकके वास्ते हाय, टुमरा वास्ते नहीं हाय।—"

लज्जा, क्रोध और अपमानसे अपूर्वकी सजल आँखें सुर्ख हो उठीं, ओंठ काँपने लगे। उसने जवाबमें क्या कहा, समझमें नहीं आया। उसकी हालत देखकर फिरंगी छोकरोंने खूब मजे लिये। एकने कहा, " साला दूधवाला आँख लाल करता,—फाटकमें जायगा ? " सब ठहाका मारकर हँस दिये,—एकने उसके मुँहके सामने एक खास अश्लील इशारा करके सीटी बजाई।

अपूर्वका हिताहित-ज्ञान लगभग लुप्त होता जा रहा था, शायद क्षण-भर बाद वह इनपर झपटकर हमला कर बैठता; लेकिन कुछ हिन्दुस्तानी रेल्वे-कर्मचारी पास ही बैठे बत्तियाँ साफ कर रहे थे, उन लोगोंने बीचमें पड़कर अपूर्वको खींच-खाँचकर प्लेट फार्मके बाहर कर दिया। इतनेमें एक फिरंगी छोकरा दौड़ा आया और भीड़मेंसे पैर बढ़ाकर उसके सफेद कुरतेपर अपने बूटका पद-चिह्न अंकित कर गया! इस हिंदुस्तानी दलके हाथसे छुटकारा पानेके लिए वह खींचातानी कर रहा था, इतनेमें उसे धकेलकर एकने व्यंग करते हुए कहा, "अरे बंगाली बाबू, साहब लोगका बदन छुएगा तो यहाँ एक साल ज़ेलमें रहना पड़ेगा,—जाओ,—भागो—" दूसरेने कहा, " अरे बाबू हैं,—धक्का मत दो—" और तब उसने लोहेके तारका गेट बन्द कर दिया। बाहर उसे घेरकर भीड़ जमा होने लगी। जिन लोगोंने देखा नहीं था वे कारण पूछने लगे। जिन्होंने देखा था, वे तरह तरहके मन्तव्य प्रकट करने लगे। एक हिन्दीभाषी चना-मटर बेच रहा था, उसने कलकत्तेमें रहकर थोड़ी-सी बंगला सीखी थी, उसने बंगला भाषामें समझा दिया कि यहाँ चटगाँवके बहुतसे आदमी दूधका रोज़गार करते हैं जो इसी तरहका कुरता पहना करते हैं और जूते भी। अपूर्व आफिसकी पोशाक बदलकर साधारण बंगालियोंकी पोशाक पहने स्टेशन आया था, लिहाजा,—साहब लोगोंने उसे दूधवाला समझकर मारा है; क्लर्क बाबू हैं, सो नहीं पहचाना। उसकी कैफियत, साथ और सहानुभूतिकी बलासे बचकर अपूर्व स्टेशनमें पता लगाता हुआ स्टेशन-मास्टरके कमरेमें पहुँचा। वे भी साहब थे,—काम कर रहे थे, मुँह उठाकर देखने लगे। अपूर्वने पीठपर जूतेका दाग दिखा कर सारी घटना कह सुनाई। स्टेशन-मास्टरने विरक्ति और अवज्ञाके भावसे थोड़ा-सा सुनकर कहा, " युरोपियनोंकी बेञ्चपर तुम बैठे क्यों जाकर ? "

अपूर्वने उत्तेजनाके साथ कहा, " मैं जानता न था—"

" तुम्हें जानना चाहिए था। "

" मगर इससे क्या किसी शरीफ आदमीके ऊपर हाथ उठाना चाहिए ? "

साहबने दरवाजेकी तरफ हाथ उठाकर कहा, " गो—गो—गो—चपरासी, इसको बाहर निकाल दो—" कहकर वे अपने काममें लग गये।

उसके बाद अपूर्व कैसे घर तक लौट आया, उसे ठीक नहीं मालूम। दो घंटे पहले रामदासके साथ इसी रास्तेसे एकत्र स्टेशन जाते समय सबसे बड़ी दुश्चिन्ता जो उसके मनमें चुभ रही थी वह थी उनकी अकारण मध्यस्थता। इसलिए कि पहले तो उससे उपद्रव और अशान्तिकी मात्रा घटती नहीं, बल्कि बढ़ती ही; दूसरे उस क्रिश्चियन लड़कीने कितना ही अपराध क्यों न किया हो, फिर भी वह औरत थी और इसलिए पुरुषको अपने मुँहसे ऐसी कठोर बात निकालना उचित नहीं था,—और तब जब कि वह अकेली थी। इससे अपूर्वका शिक्षित और भद्र अन्तःकरण रामदासकी बातोंसे क्षुब्ध ही हुआ था,—मगर अब लौटते समय उसका वह क्षोभ न जाने कहाँ बिला गया, कुछ पता नहीं। जब उसकी याद आई, तो औरतके रूपमें उसका खयाल ही नहीं आया,—खयाल आया : वह क्रिश्चियन औरत है, साहबकी लड़की है,—यह उन्हींकी बहन है जिन छोकरोंने अभी अभी उसके अपमानकी हद कर दी है,—जिनकी कुशिक्षा, नीचता और बर्बरताका कोई हद्दो-हिसाब नहीं, यह उन्हींकी बहन है,—जिस साहबने उसे अत्यन्त अन्यायके साथ कमरेसे निकाल दिया था,—मनुष्यका मामूली अधिकार भी उसने उसे नहीं दिया, यह उसीकी कोई होगी।

तिवारीने आकर कहा, " छोटे बाबू, रसोई तैयार है। "

अपूर्वने कहा, " आता हूँ—"

दस-पंद्रह मिनट बाद उसने फिर आकर कहा, " रसोई ठंडी हुई जा रही है बाबू—"

अपूर्वने गुस्सा होकर कहा, " क्यों तंग कर रहा है तिवारी, मैं नहीं खाऊँगा,—भूख नहीं है मुझे। "

आँखोंमें उसकी नींद नहीं आई,—ज्यों ज्यों रात होने लगी, त्यों त्यों सारे बिछौने उसे कंटक-शय्या-से मालूम होने लगे। एक तरहकी मर्मान्तिक वेदना

उसके सारे अंगोंमें चुभने लगी और उसीमें पड़े पड़े बीच-बीचमें उसे खयाल आने लगा स्टेशनके उन हिन्दुस्तानी आदमियोंका जिन लोगोंने दल-बल-सहित मौजूद रहते हुए भी उसकी लाञ्छना या बेइज्जतीमेंसे कुछ भी हिस्सा नहीं बाँटा, बल्कि, उसके अपमानकी मात्रा बढ़ानेमें ही मदद की। देशके आदमीके विरुद्ध देशवासियोंकी इतनी बड़ी लज्जाकी,—इतनी बड़ी ग्लानिकी बात संसारके और किस देशमें होगी ? क्यों ऐसा हुआ ? कैसे यह संभव हुआ ?

४

दो तीन दिन बिना किसी उपद्रवके कट गये। ऊपर-तल्लेसे साहबका अत्याचार जब नये नये रूपोंमें प्रकट नहीं हुआ, तब अपूर्वने समझ लिया कि उस क्रिश्चियन लड़कीने उस दिनकी बात अपने पितासे नहीं कही। और उसकी उस दिनकी फल-फलारी लेकर आनेकी घटनासे इस बातको मिलाकर उसे यह 'न कहने' की बात सम्भव ही नहीं बल्कि सच ही मालूम हुई। बहुत तरहके काले-धौले साहबोंका दल ऊपर जाने-आने लगा, लड़कीके साथ भी सीढ़ीमें चढ़ते-उतरते एक वक्त सामना हुआ और उसने मुँह फेर लिया, परन्तु, उसके दुःशासन पितासे उसका एक दिन भी सामना नहीं हुआ। सिर्फ उसके भारी बूटोंके शब्दसे यह मालूम होता रहा कि वह घरपर ही है। उस दिन तिवारीने अपने छोटे बाबूसे थाली परोसते हुए कहा, "साहबने मालूम होता है नालिश-फरियाद कुछ की नहीं।"

अपूर्वने कहा, "नहीं। जितना गरजता है, उतना बरसता नहीं।"

तिवारीने कहा, "हम लोगोंको लेकिन ज्यादा दिन इस मकानमें रहना नहीं चाहिए। साला मतवाला होकर फिर किसी दिन फसाद कर बैठेगा।"

अपूर्वने कहा, "न,—उसका कोई डर नहीं।"

तिवारीने कहा, "सो न सही, सिरपर मलेच्छ क्रिस्तान रहेगा,—जो जो भखता है, याद आते ही—"

"ओह, तुम चुप रहो तिवारी।"—वह खुद उस समय खा रहा था, क्रिश्चियनके खाने-पीनेकी चीजोंके इशारेसे उसके रोएँ खड़े हो गये। बोला, "इस महीनेके बाद उठना तो पड़ेगा ही,—पर एक अच्छा-सा मकान भी देखना है।"

इस समय इन सब बातोंकी चर्चा न करनी चाहिए, इस बातका खयाल आते ही तिवारी मन ही मन लज्जित होकर चुप हो गया।

उस दिन तीसरे पहर आफिससे लौटकर अपूर्वने जो तिवारीकी तरफ देखा, तो दंग रह गया। मानो वह एक ही छाकमें सूखकर आधा हो गया है। उसने पूछा, "क्या हुआ तिवारी?"

उत्तरमें उसने अलपीनसे टँके हुए कई छपे हुए पीले रंगके कागज अपूर्वके हाथमें दे दिये। फौजदारी अदालतके समन्स थे: वादी जे० डी० जोज़फ और प्रतिवादी तीन नम्बर कमरेके रहनेवाले अपूर्व और उनका नौकर। धारा एक नहीं, चार चार! दोपहरको कोर्टका पियादा समन्स जारी कर गया है, और कल सबेरे फिर एक जारी करने आयगा। साथमें वही साहब सुसरा था। हाजिर होनेकी तारीख पड़ी है परसों। अपूर्वने आद्योपान्त पढ़कर जब सब कागज़ उसीके हाथमें लौटा दिये, बोला, "सो क्या हुआ, कोर्टमें हाजिर होना पड़ेगा।"

तिवारीने रोनी-सी सूरत बनाकर कहा, "कभी तो कठघरेमें खड़े नहीं हुए बाबू!"

अपूर्वने झुँझलाकर कहा, "खड़ा हो जायगा तो क्या? सभी बातोंमें रोने लगता है, तो परदेसमें आया ही क्यों?"

"मैं तो कुछ जानता नहीं छोटे बाबू!"

"जानता नहीं तो लाठी लेकर निकल क्यों पड़ा था? घरमें चुपचाप बैठे रहनेसे भी तो काम चल जाता!" इतना कहकर अपूर्व अपने कमरेमें कपड़े बदलने चला गया।

दूसरे दिन उसका अपना परवाना आ गया और उसके दूसरे दिन तिवारीको साथ लेकर यथासमय वह अदालतमें हाजिर हुआ। नालिश-मुकद्दमेके बारेमें उसे कोई भी अनुभव नहीं था; उसपर यह परदेश ठहरा, किसीसे जान-पहचान नहीं,—किससे मदद ली जाय, कैसे पैरवी की जाय, कुछ भी पता नहीं। फिर भी उसे किसी तरहका डर नहीं मालूम हुआ। सहसा कैसे उसका मन इतना कड़ा हो गया, वह खुद भी न समझ सका। इस मामलेमें रामदाससे कुछ कहने और किसी तरहकी सहायता लेनेमें उसे शर्म मालूम हुई। सिर्फ जरूरी कामके बहाने साहबसे वह एक दिनकी छुट्टी ले आया था।

यथासमय पुकार हुई। डिप्टी कमिश्नरने अपनी ही फाइलमें यह मुकद्दमा

रख लिया था। वादी जोज़फ साहब झूठ-सच जैसा मनमें आया, इज़हार दे गया, और प्रतिवादीकी तरफ कोई वकील नहीं था, अपूर्वने अपने जवाबमें न एक बात छिपाई, और न एक भी शब्द बढ़ाकर कहा। वादीकी गवाह उसीकी लड़की थी। अदालतमें उस लड़कीका नाम और उसका विवरण सुनकर अपूर्व दंग रह गया। वह किसी एक स्वर्गीय राजकुमार भट्टाचार्यकी कन्या है। पहले बरीसाल रहती थी, अब बंगलोर रहती है। अब उसका नाम है मेरी भारती। पिता भट्टाचार्य महाशय अपनी इच्छासे 'अन्धकार'से 'प्रकाश'में आये थे। उनकी मृत्युके बाद उसकी मा किसी एक मिशनरी-दुहिताकी दासी बनकर बंगलोर पहुँची, और वहाँ जोज़फ साहबके रूपपर मुग्ध होकर उसने उनसे ब्याह कर लिया। भारतीने पैतुक भट्टाचार्य नामको भद्दा समझ कर छोड़ दिया है और अब अपने नामके आगे वह जोज़फ लगाती है,— उसका पूरा नाम है 'मिस मेरी भारती जोज़फ।' हाकिमके पूछनेपर उसने फल फलारी लेकर नीचे पहुँचनेकी बात नामंजूर की; पर उसके कण्ठस्वर और चेहरेसे झूठ बोलनेकी विडम्बना ऐसी स्पष्ट हो उठी कि सिर्फ हाकिम ही नहीं, उनके पियादोंकी आँखसे भी वह उसे छिपा नहीं सकी। किसी भी तरफ वकील नहीं था, लिहाजा जिरहके पेचमें पड़कर तुच्छ और मामूली बात बहुत बड़ी न हो सकी। न्याय एक ही दिनमें हो गया: तिवारी छूट गया, पर अपूर्वपर बीस रुपये जुरमाना हो गया। जीवनके इस प्रभात-कालमें राज-द्वारमे बिना अपराधके दण्डित होनेसे उसका चेहरा मलिन हो गया। जुरमानेके रुपये गिनकर वह बाहर निकल ही रहा था, देखा कि दरवाजेके सामने रामदास खड़ा है। अपूर्वके मुँहसे अनायास ही निकल पड़ा, "बीस रुपये जुरमाना हुआ रामदास, क्या किया जाय? अपील?"

आवेग और उत्तेजनासे उसकी आवाजका आखिरी हिस्सा सहसा काँप-सा उठा। रामदासने उसका दाहिना हाथ अपने हाथमें खींचते हुए कहा, "यानी बीस रुपयेके बदले आप दो हजार रुपये नुकसान करना चाहते हैं?"

"सो होने दो,—मगर यह जो फाइन है! सजा है! राजदण्ड है!"

रामदासने कहा, "कैसी सजा? जिसने झूठा मामला चलाया, झूठी गवाही दिलवाई,—और जिसने उन लोगोंको प्रश्रय दिया, उन्हीं लोगोंकी दी हुई सजा तो? परन्तु इन सबके ऊपर भी एक और अदालत है जिसके न्यायाधीश

गलती नहीं करते,—वहाँ आप बेकसूर छूट गये हैं,—मैं कहे देता हूँ।"

अपूर्वने कहा, "मगर आदमी तो नहीं समझेंगे रामदास! उनके आगे तो मेरी यह बदनामी हमेशाके लिए बनी रहेगी?"

रामदासने स्नेहके साथ अपूर्वका हाथ मसलकर कहा, "चलिए, हम लोग नदी-किनारे घूम आवें।"

चलते चलते कहा, "अपूर्व बाबू, मैं आफिसके काममें आपसे छोटा होनेपर भी उम्रमें बड़ा हूँ। अगर दो एक बात कह भी दूँ, तो बुरा न मानिएगा।" अपूर्व चुप रहा, रामदास कहने लगा—"इस मुकदमेकी बात मैं पहलेसे ही जानता था, और क्या फैसला होगा, उसमें भी मुझे सन्देह न था। और, आदमियोंकी बात जो आप कह रहे हैं, सो जो आदमी हैं, वे ठीक समझ लेंगे कि हालदारके साथ जोज़फका मामला होनेपर अँगरेजी अदालतमें उसका क्या फैसला होगा! रही बीस रुपये जुरमानेकी बात—"

"मगर बिला-कसूरके जो रामदास!"

रामदासने कहा, "हाँ हाँ, बिला कसूरके ही तो! ऐसे ही बिला-कसूर मैं भी दो सालकी सजा भुगत आया हूँ।"

"सजा भुगत आये हैं? दो सालकी?"

"हाँ, दो सालकी, और," इतना कहकर उसने फिर जरा हँसकर अपूर्वका हाथ अपनी पीठपर रखकर कहा, "इस कोटको अगर खोल दूँ, तो देखोगे कि यहाँ बेतोंके निशानोंके मारे तिल-भर भी जगह नहीं बची है।"

"बेतोंकी मार खाई है रामदास?"

रामदासने हँसते और गर्दन हिलाते हुए कहा, "हाँ, और ऐसे ही बिला-कुसूर। फिर भी इतना निर्लज्ज हूँ मैं, कि लोगोंके सामने मुँह दिखाता हूँ। और, आप बीस रुपये जुरमानेकी चोट नहीं सह सकेंगे बाबू साहब?"

अपूर्व उसके चेहरेको तरफ देखकर दंग रह गया। इसी समय जिस लैम्प-पोस्टके नीचे वे दोनों खड़े थे, उसकी बत्ती जलानेवाला आ पहुँचा। शाम हो गई देखकर रामदास चौंककर बोला, "चलिए, आपको पहुँचाकर मैं भी घर जाऊँ।"

अपूर्वने आवेगके साथ कहा, "अभी चले जायँगे आप? अभी तो बहुत-सी बातें जाननेको थीं?"

रामदासने हँसकर कहा, "सब आज ही जान लेंगे? सो नहीं होगा। शायद

मुझे बहुत दिनों तक कहना पड़ेगा।" इस 'बहुत दिनों' शब्दपर उसने इतना जोर दिया कि अपूर्वसे उसके चेहरेकी तरफ़ देखे बगैर न रहा गया। परन्तु उस सहास्य प्रशान्त चेहरेपर कोई भी प्रकट रहस्य नहीं झलका।

रामदास गलीमें नहीं घुसा, बड़ी सड़कसे ही अपूर्वसे विदा लेकर स्टेशनकी तरफ चल दिया।

अपूर्वने अपने कमरेके सामने जाकर बन्द दरवाजा खटखटाया, आर तिवारीने जब मालिककी आवाज पहचान ली, तब कहीं दरवाजा खोला। वह पहलेहीसे आकर घरके काममें जुट गया था। उसके चेहरेपर जैसी गम्भीरता थी वैसी ही विषण्णता, उसने कहा, "जाते वक्त जल्दीमें आप दो नोट भूल गये थे।"

अपूर्वने आश्चर्यके साथ पूछा, "कहाँ भूल गया था?"

"यहींपर", और उसने पैरसे दरवाजेके नीचे इशारा किया। बोला, "आपके तकियेके नीचे रख दिये हैं। जेबसे कहीं रास्तेमें नहीं गिरे, यही गनीमत है।"

नोट कैसे गिर पड़े थे, यह सोचता हुआ अपूर्व अपने सोनेके कमरेमें चला गया।

५

रातको भोजनादि कर चुकनेपर तिवारीने हाथ जोड़कर और आँखोंमें आँसू भरकर कहा, "अब नहीं छोटे बाबू, इस बूढ़ेकी बात मान जाइए। चलिए, कल सबेरे ही हम लोग और कहीं, जहाँ हो, चले चलें।"

अपूर्वने कहा, "कल सबेरे ही? आखिर कहाँ, सुनूँ भी? तुम क्या धरमशालामें जाकर रहनेको कहते हो?"

तिवारीने कहा, "इससे तो वह भी अच्छी। मुकद्दमा जीत गया है, अब किसी दिन आकर, घरमें घुसके, हम लोगोंको मार जायगा"

अपूर्वसे सहा नहीं गया, गुस्सा होकर बोला, "तुमको क्या माने इसीलिए मेरे साथ भेजा था कि कटे घावपर नमक छिड़कते रहना? तुम्हारी अब मुझे जरूरत नहीं,—कल जहाज जायगा, तुम घर चले जाओ,—मेरी तकदीरमें जो होगा सो होता रहेगा।"

तिवारीने फिर कोई तर्क नहीं किया, वह धीरे-से जाकर सो गया। तिवारीकी

बातोंने उसे बहुत अपमानित किया, इसीसे उसने इतना कड़ा जवाब दिया, परन्तु साथ ही वह मन ही मन इस बातको भी अस्वीकार न कर सका कि उसने ऐसी कोई असंगत बात नहीं कही थी। कुछ भी हो, दूसरे दिन सबेरेसे ही नये मकानकी खोज होने लगी और सिर्फ एक तलवरकरके सिवा और सबोंसे उसने नये मकानकी खोजके लिए अनुरोध कर रक्खा। उसके बाद फिर तिवारीने भी कोई शिकायत पेश नहीं की। मगर मालिक और नौकर दोनोंके ही दिन सशंकित भावसे कटने लगे। आफिससे लौटते समय अपूर्वको रोज ही डर रहता कि आज घर जाकर न जाने क्या सुनना पड़े! मगर किसी भी दिन कुछ सुनना नहीं पड़ा। मुकद्दमा विजयी जोज़फ-परिवारकी तरफसे तरह तरहके विचित्र उपद्रव नित्य नये नये रूपमें प्रकट होंगे, यही स्वभाविक था, पर उपद्रवकी बात तो दूर रही, कभी कभी तो इस बातपर सन्देह होने लगा कि ऊपर कोई रहता भी है या नहीं! परन्तु इस विषयमें कोई भी किसीसे कोई बात नहीं कहता। बिना उपद्रवके दिन कटने लगे,—यह अच्छा ही है। लगभग एक हफ्ते बाद एक दिन आफिससे लौटते समय तिवारीने प्रसन्न मुखसे मनके आनन्दको यथासाध्य संयत करते हुए कहा, "और सुना है छोटे बाबू?"

अपूर्वने कहा, "क्या?"

"साहबकी टाँग ही टूट गई, अस्पतालमें पड़ा है। बचेगा कि नहीं, कुछ ठीक नहीं। आज छै दिन हो गये,—ठीक उसके दूसरे ही दिन!"

अपूर्वने विस्मित होकर पूछा, "तुमको कैसे मालूम हुआ?"

तिवारीने कहा, "मकान-मालिकका गुमाश्ता हमारे जिलेका आदमी है न, उसके साथ आज जान-पहचान हो गई। किराया वसूल करने आया था। किराया यहाँ कौन देता? साहब तो शराब पीकर मार-पीट करते करते जेटीसे नीचे गिरकर अस्पतालमें सड़ रहा है।"

"हो सकता है।" कहकर अपूर्व कपड़े बदलने अपने कमरेमें चला गया। कलकत्ता छोड़नेके बाद आज पहले पहल तिवारीका मन सच्ची प्रसन्नतासे भर उठा था। उसकी बड़ी अभिलाषा थी कि इस बातको लेकर मालिकसे आज वह जरा बातचीत करे, पर मालिकने उसे जरा भी उत्साह नहीं दिया। न दें, फिर भी उसने बाहरसे, बहुत तरकीबोंसे, सुना दिया कि इस बातको वह पहलेहीसे जानता था। एक न दिन ऐसा होगा। तिवारीने संध्या-पूजा करना नहीं

सीखा, पर गायत्री उसे मुँहजबानी याद थी। उस गायत्रीको उसने जुरमाना होनेके दिनसे रोज शाम-सबेरे एक-सौ आठके हिसाबसे दो सौ सोलह बार जपा है। साहबकी टाँग टूटनेका असली कारण क्या था सो छोकरे मालिककी समझमें आया या नहीं, सन्देह है; पर उस मंत्रकी असाधारण शक्तिपर तिवारीका विश्वास हजार गुना बढ़ गया।—म्लेच्छ होकर ब्राह्मणके सिरपर जिसने घोड़ेकी तरह पैर फटकारे हैं, उसके पैर टूटेंगे नहीं तो क्या होगा?

दूसरे दिन अपने आफिसके अरदलीसे खबर पाकर अपूर्वने तिवारीको बुलाकर कहा, "एक मकानका पता लगा है, जाकर देख तो आओ कि ठीक रहेगा या नहीं?"

तिवारीने जरा हँसकर कहा, "अब शायद जरूरत न होगी बाबू, मैंने सब ठीक कर लिया है। अगली पहली तारीखको जिनको जाना है वे ही जायँगे। मकान बदलनेमें तो काफी झंझट है छोटे बाबू!"

झंझट कम नहीं, यह बात अपूर्व खुद भी जानता था; परन्तु साहबकी गैर हाजिरीमें जो उपद्रव बन्द है, उसके आ जानेके बाद वह बन्द ही रहेगा, इस बातपर उसे विश्वास न हुआ। मकान उसे बदलना ही होगा; मगर आफिस जानेके पहले तिवारीने जब उससे छुट्टी माँगी कि आज दोपहरको वह बर्मी लोगोंके फयार मन्दिरमें तमाशा देखने जायगा, तो अपूर्वसे बगैर हँसे न रहा गया। उसने कुतूहलके साथ पूछा, "अरे तुझे तमाशा देखनेका शौक कैसे हो गया तिवारी?"

तिवारीने कहा, "परदेसमें जो कुछ हो, देख लेना अच्छा है छोटे बाबू!"

अपूर्वने कहा, "सो तो ठीक है। लँगड़ा साहब अस्पतालमें पड़ा है, अब रास्तेमें भी कोई डर नहीं। खैर, चले जाना, पर जरा जल्दी ही लौट आना। साथ तो कोई जायगा न?"

तिवारीका देशवासी गुमाश्तेसे, जिससे कल उसकी जान-पहचान हुई थी, तय हुआ था कि वही आज उसे तमाशा दिखा लायगा। साहबकी टाँग टूटनेकी खबरसे तिवारी इतना खुश हुआ था कि चटसे उसके साथ तमाशा देखनेकी बातपर राजी हो गया।

तिवारीको बाहर जानेका हुक्म देकर अपूर्व ठीक वक्तपर अपने आफिसके लिए रवाना हो गया, और इसके घंटे-भर बाद तिवारीके देशका आदमी आकर

उसे अपने साथ बार्मियोंका तमाशा दिखाने ले गया। तालेकी एक चाबी अपूर्वके पास रहती थी, इसलिए तिवारीने सोचा कि लौटनेमें देर भी हो गई तो छोटेबाबूको कोई दिक्कत न होगी। वह निष्कंटक होकर बाहर गया, आज उसकी स्फूर्तिका पारावार न था।

तीसरे पहर अपूर्व घर लौटा तो देखाः ताला बन्द है और तिवारी अभी तक लौटा नहीं। जेबमेंसे ताली निकालकर जो उसने तालेमें लगाई तो वह तालेमें लगी नहीं, उसमें कोई दूसरा ही ताला लगा हुआ था! अपूर्व उससे परिचित नहीं, वह उसका ताला ही नहीं। तिवारीको यह मिल कहाँसे गया, और लगाया भी तो चाबी कहाँ रख गया, कैसे वह घरमें घुसे,—उसकी कुछ समझमें न आया। कोई दो तीन मिनट वह इसी तरह खड़ा रहा होगा कि इतनेमें तिमँजिलेकी उस क्रिश्चियन लड़कीने जीनेसे झाँककर कहा, "ठहरिए, मैं खोले देती हूँ।" जब वह नीचे उतर आई और बिना किसी संकोचके पास आकर खड़ी हो गई, तो अपूर्व मारे आश्चर्य और शर्मके हतबुद्धि-सा हो गया। तिवारी नहीं है, उसका क्या हुआ, और किस लिए किस तरह उसके घरकी चाबी साहबकी लड़कीके हाथ पड़ी,—उसकी कुछ समझमें ही न आया। कम उजालेवाली उस सँकरी सीढ़ीपर दोनोंके खड़े होने लायक काफी जगह नहीं थी, लिहाजा अपूर्व एक सीढ़ी नीचे उतरकर दूसरी ओर देखने लगा। अनात्मीय युवती रमणीके साथ एकान्तमें पास पास खड़े होकर बातचीत करनेका वह आदी न था, इसीसे लड़कीने जब उससे कहा कि 'मा कह रही थीं कि ताला लगाकर मैंने अच्छा नहीं किया, इसमें विपत्ति भी आ सकती है,' तब अपूर्वके मुँहसे सहसा कोई जवाब ही नहीं निकला। भारतीने किवाड़ खोलकर कहा, "मेरी मा बड़ी डरपोक हैं, वे तभीसे मुझपर नाराज हो रही हैं कि अगर आपने विश्वास नहीं किया तो मुझे जेल जाना पड़ेगा। मगर मुझे इसका जरा भी डर नहीं।"

अपूर्व कुछ समझ न सका, पूछा, "क्या हुआ है?"

भारतीने कहा, "भीतर जाकर देखिए न, क्या हुआ है!" और वह रास्ता छोड़कर एक तरफ खड़ी हो गई। अपूर्वने भीतर जाकर जो कुछ देखा उससे उसकी आँखें कपारपर चढ़ गईं। दोनों ट्रंकोंके ढक्कन टूटे पड़े हैं। किताबें, कागज, बिछौने, तकिये, कपड़े लत्ते सब जमीनपर बिखरे हुए हैं। उसके मुँहसे सिर्फ इतना ही निकला, "यह कैसे हुआ? किसने किया?"

भारतीने जरा मुसकराकर कहा, " और चाहे जिसने भी हो, मैंने नहीं किया—यह बात दुश्मन होनेपर भी आपको विश्वास करनी पड़ेगी।" इतना कहकर उसने दुर्घटनाका जो वर्णन सुनाया, उसका सार यह है—

दोपहरको तिवारी जब अपने सद्य-परिचित मित्रके साथ तमाशा देखने चला गया तब भारतीकी माने उन्हें बरामदेसे देखा था। थोड़ी देर बाद ही नीचेके घरमें एक तरहकी सन्देह-जनक आवाज सुनकर उन्होंने भारतीको नीचे देखनेके लिए भेजा। भारतीके घरके फर्शमें एक तरफ एक छेद है, उसमेंसे अपूर्वके घरका सब कुछ दिखाई देता है। उस छेदमेंसे भारतीने जो नीचेका दृश्य देखा, तो वह चिल्लाने लगी। जो लोग बॉक्स तोड़ रहे थे, जल्दीसे भाग खड़े हुए। तब फिर नीचे उतरकर उसने दरवाजेमें अपना ताला लगा दिया और खुद पहरा देने लगी, कि कहीं फिर वे दुबारा न आ जायँ। अब अपूर्वको देखकर वह घर खोल देनेके लिए आई है।

विवर्ण, सफेद फक चेहरेसे अपूर्व धप-से अपनी खाटपर बैठकर भौंचक्का-सा देखता रह गया। भारतीने दरवाजेसे मुँह निकालकर कहा, "इस कमरेमें आपकी कोई खानेकी चीज है क्या? मैं भीतर आकर जरा देख सकती हूँ?"

अपूर्वने गर्दन हिलाकर सिर्फ इतना ही कहा, "आइए।"

उसके भीतर आ जानेपर अपूर्वने विमूढ़की तरह पूछा, "अब क्या किया जाय?"

भारतीने कहा, "किया तो बहुत कुछ जा सकता है, पर सबसे पहले यह देखना चाहिए कि क्या क्या चोरी गया है?"

अपूर्वने कहा, "अच्छी बात है, सो ही देखिए, क्या क्या चोरी गया है।"

भारती हँस दी, बोली, "घरसे चलते वक्त न तो मैंने आपका ट्रंक ही सम्हाल लिया था और न मैंने चोरी ही की है,—लिहाजा क्या था, क्या नहीं, सो मैं किस तरह जानूँगी?"

अपूर्व शर्मिन्दा हो गया, बोला, "सो तो ठीक बात है। तो फिर तिवारीको आने दीजिए, शायद उसे सब मालूम होगा।"—इतना कहकर वह इधर उधर बिखरी पड़ी चीजोंकी ओर करुण दृष्टिसे देखने लगा।

उसका निरुपाय-सा चेहरा देखकर भारतीको बड़ा अच्छा लगा। हँसती हुई बोली, "वह जान सकता है और आप नहीं जान सकते? अच्छा, कैसे जाना

जाता है, मैं आपको सिखाये देती हूँ।" यह कहकर वह चटसे फर्शपर बैठ गई और सामनेके टूटे ट्रंकको अपने तरफ खींचकर बोली, "अच्छा, पहले सब कपड़े-लत्ते सम्हालकर रख दूँ। इन सबको ले जानेके लिए शायद उन्हें फुरसत नहीं थी।" फिर इधर उधर छितरे पड़े हुए कपड़ोंको तह करके रखने लगी। उसके शिक्षित हाथोंकी निपुणता कुछ ही क्षणोंमें अपूर्वकी नजरमें आ गई।

"यह क्या? मुर्शिदाबादी सिल्कका सूट है शायद? ऐसे सूट कितने थे, बताइए तो?"

अपूर्वने कहा, "दो।"

"ठीक है, वह रहा एक।" कहते हुए उसने दोनों सूट उठाकर बॉक्समें रख दिये।

"ढकाई धोती—एक, दो, तीन; चादर—एक, दो, तीन,—शायद तीन तीन ही होंगी, ठीक है न?"

अपूर्वने कहा, "हाँ, मुझे याद है, तीन ही तीन थीं।"

"यह क्या है, अलपकेका कोट? कहाँ, इसके साथका वेस्ट कोट और पैण्ट तो नहीं दिखाई देता? अच्छा—नहीं, बन्द गलेका है। इसका सूट नहीं था न?"

अपूर्वने कहा, "नहीं, सिर्फ कोट ही था; सूट नहीं था।"

उन सबको रखकर भारतीने और एक कपड़ा हाथमें उठाकर कहा, "यह तो फ़्लानेलका सूट मालूम होता है,—आप वहाँ टेनिस खेला करते थे शायद? तो—एक, दो, तीन, और उस अलगनीपर एक, एक आप पहने हुए हैं,—तो सूट कुल पाँच थे न?"

अपूर्व खुश होकर बोला, "ठीक है, पाँच ही थे।"

कपड़ेकी तहमें कोई चमकीली चीज दिखाई दी, उसे निकालकर वह बोली, "यह तो सोनेकी चेन है, घड़ी कहाँ गई इसकी?"

अपूर्व खुश होकर बोला, "खैर, गनीमत समझो। चेनपर उसकी नजर नहीं पड़ी। यह मेरे पिताकी दी हुई है,—उनकी याददास्त—"

"मगर घड़ी?"

"यह रही!" कहकर अपूर्वने अपने कोटकी जेबमेंसे घड़ी निकाल-कर दिखाई।

भारतीने कहा, " चेन और घड़ी मिल गई। अब बताइए कि अँगूठी आपकी कितनी थीं ? हाथमें तो एक भी नहीं दिख रही है। "

अपूर्वने कहा, हाथमें भी नहीं, बॉक्समें भी नहीं थी। अँगूठी ही मेरे पास नहीं है। "

"अच्छी बात है। सोनेके बटन ? सो शायद आपकी कमीजमें लगे होंगे ?"

अपूर्वने घबराहटके साथ कहा, " नहीं तो। एक गरदके कुरतेमें लगे हुए थे, ऊपर ही रक्खा था वह कुरता। "

भारतीने अलगनीकी तरफ देखा,—जो कपड़े अब तक उठाकर नहीं रक्खे गये थे, एक तरफ पड़े थे, उनमें ढूँढ़ा, उसके बाद जरा मुस्कराकर कहा, " कुरता समेत बटन गये मालूम होते हैं। और बटन तो नहीं थे ? "

अपूर्वने सिर हिलाकर कहा, " नहीं थे। " भारतीने पूछा, " ट्रंकमें रुपये-पैसे थे ? " अपूर्वने 'थे' कहकर समर्थन किया, तो भारतीने उद्विग्न चेहरेसे कहा, " तो वे भी गये। कितने थे, मालूम नहीं न ? सो मैं पहलेहीसे जानती थी। आपके पास मनीबेग है, मुझे मालूम है। जरा निकालकर दीजिए तो मुझे—"

अपूर्वने जेबमेंसे अपना छोटा-सा चमड़ेका बेग निकालकर भारतीके हाथमें थमा दिया। उसने सब जमीनपर उँड़ेलकर, गिनकर देखा तो दो सौ पचास आठ आने थे।

"घरसे कितने रुपये लेकर आये थे, याद है ? "

अपूर्वने कहा, " याद क्यों नहीं ! छै सौ रुपये। "

भारती टेबिलपरसे कागजका एक टुकड़ा और पेन्सिल उठाकर लिखने लगी—" जहाजका टिकट, घोड़ा-गाड़ीका किराया, कुली-खर्च,—घरपर पहुँचका तार तो किया ही होगा ?—अच्छा, उसका भी एक रुपया, उसके बाद इधर दस दिनोंका घर-खर्च ?—"

अपूर्व बीचहीमें बोल उठा, " सो तो तिवारीसे बगैर पूछे नहीं मालूम हो सकता। "

भारतीने गर्दन हिलाकर कहा, " सो हो सकता है, दो-एक रुपयेका फर्क पड़ेगा, ज्यादा नहीं। "

जिस छेदसे आज उसने चोरी होते देखी थी, उसी छेदसे वह इस घरकी सब बातें देखा करती थी। तिवारीके साग लानेसे लेकर खाने-पीनेकी तैयारी तक कुछ

भी उससे छिपा न था। पर यह बात उसने बताई नहीं, और अपने मनसे खाने-पीनेका हिसाब जोड़कर सहसा मुँह उठाकर पूछ उठी, "इसके सिवा और तो कोई फालतू खर्च नहीं हुआ?"

"नहीं।"

भारतीने कागजपर हिसाब लगा लेनेके बाद कहा, "तो दो सौ अस्सी रुपये चोरी गये हैं।"

अपूर्वने कहा, "नहीं, दो सौ साठ रूपये।"

भारतीने कहा, "नहीं, दो सौ अस्सी।"

अपूर्वने फिर कोई बहस नहीं की। इस लड़कीकी प्रखर बुद्धि और सब तरफ अद्भुत तीक्ष्ण दृष्टि रखनेकी शक्ति देखकर अपूर्व आश्चर्य-चकित हो गया था; फिर भी इस सीधे विषयको न समझनेकी ओर उसकी ऐसी जिद देखकर उसके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। फैसलेमें न्याय-अन्याय जो भी हुआ हो, रुपये खर्च हो जानेपर वे हाथमें नहीं रहते, इस सीधी-सी बातको जो नहीं समझना चाहती, उससे वह क्या कहे?

भारतीने बाकीके कपड़े सम्हालकर रख दिये और उठके खड़ी हो गई। अपूर्वने पूछा, "थानेमें खबर देना क्या आप उचित समझती हैं?"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, "क्यों नहीं! उचित इस तरहसे हो सकता है कि फिर मेरी खींचातानीका अन्त न रहेगा। और नहीं तो पुलिस आकर आपके रुपयोंका किनारा कर जायगी, इतनी उम्मीद तो आप भी न करते होंगे?"

अपूर्व चुप हो रहा। भारतीने कहा, "नुकसान तो जो कुछ होना था सो हो चुका। इसपर फिर अगर पुलिस आई, तो अपमान शुरू होगा।"

"मगर, कानून तो है—"

अपूर्वकी बात खत्म न हो पाई कि भारती असहिष्णु हो उठी; बोली, "कानून है सो रहने दीजिए; यह काम मैं आपको हरगिज न करने दूँगी। कानून तो उस दिन भी था जब आप जुरमाना दे आये थे? इतनेमें ही भूल गये क्या?"

अपूर्वने कहा, "लोग अगर झूठ कहें, झूठा मामला बनावें, तो क्या यह कानूनका दोष है?"

भारतीके चेहरेसे यह नहीं मालूम हुआ कि वह जरा भी लज्जित हुई हो। उसने कहा, "लोग झूठ न बोलें, झूठे मामले न बनावें, तो कानून निर्दोष

हो जायगा—आपकी यही राय है क्या ? ऐसा होता तो अच्छा हीं था, मगर दुनियामें ऐसा होता नहीं, और होनेमें शायद काफ़ी देरी भी है।" यह कहकर वह जरा हँसी, पर अपूर्व चुप रहा, उसने बहसमें भाग नहीं लिया। उस दिन पहले पहल इस लड़कीके कंठ-स्वरसे, उसके मीठे सलज्ज व्यवहारसे, खासकर उसकी सकरुण सहानुभूतिसे अपूर्वके मनमें जो थोड़ा मोह-सा उत्पन्न हुआ था, वह उसके बादके आचरणसे लगभग दूर हो गया था। भारतीका यह छिपानेका आग्रह सहसा उसे बड़ा खराब-सा मालूम हुआ। इन सब अयाचित सहायताओंको मानो वह प्रसन्न चित्तसे ग्रहण न कर सका, और न जाने कैसी एक अज्ञात शठताकी आशंकासे उसका सारा अन्तःकरण देखते देखते काला हो गया। उस दिनका उसका वह भय और संकोचके साथ गुप्त रूपसे फल देने आना, और दूसरे ही क्षण अपने घर जाकर सम्पूर्ण घटनाको विकृत बनाकर झूठ कहना, उसके बाद अदालतमें झूठी गवाही देना,—क्षणभरमें सारा इतिहास बिजलीकी तरह उसके मनमें एक लकीर-सी खींच गया जिससे उसका चेहरा गम्भीर और कंठ क्षणभरमें भारी हो उठा। यह सब अभिनय है, सब धोखेबाजी है ! उसके चेहरेके इस आकस्मिक परिवर्तनको भारती ताड़ गई पर कारण न समझ सकी; बोली, "मेरी बातका आपने जवाब नहीं दिया !"

अपूर्वने कहा, "इसका जवाब क्या दूँ ? चोरको शह नहीं दी जा सकती,—थानेमें खबर तो देनी ही पड़ेगी।"

भारतीने डरकर कहा, "यह कैसी बात करते हैं ! चोर भी न पकड़ा जायगा और रुपये भी नहीं मिल सकते,—बीचमें मुझे घिसिटना पड़ेगा। मैंने देखा है, ताला बन्द किया है, सब कुछ उठाके रक्खा है,—मैं तो आफतमें पड़ जाऊँगी !"

अपूर्वने कहा, "जैसा हुआ है, वैसा ही कहिएगा।"

भारतीने व्याकुल होकर कहा, "कहनेसे क्या होगा ? अभी उस दिन आपसे जबरदस्त मामला हो गया, एक दूसरेका मुँह तक नहीं देखते थे, बोल-चाल तक बन्द,—सहसा आपके लिए मेरी इतनी हमदर्दी !—पुलिस इसपर विश्वास कैसे करेगी ?"

अपूर्वका मन सन्देहसे और भी ज्यादा कठोर हो गया, वह बोला, "आपकी शुरूसे आखिर तक सरासर झूठी बातपर वह विश्वास कर सकी और इस सच्ची बातपर विश्वास न करेगी ? रुपये तो थोड़े ही गये हैं, पर चोरको सजा दिलवाये बगैर मैं छोड़ूँगा नहीं।"

भारती उसके चेहरेकी तरफ हत-बुद्धिकी भाँति देखती रह गई; बोली, "आप कह क्या रहे हैं अपूर्व बाबू ? मेरे बाबूजी अच्छे आदमी नहीं, उन्होंने बेमतलब आपपर बहुत ही जबर्दस्त अन्याय किया है, और मैंने भी उन्हें जो सहायता की है, उसे मैं जानती हूँ। पर इसका क्या यह मतलब है कि मैं ताला और बॉक्स तोड़कर आपके रुपये चुराऊँगी ? आप इस बातको सोच सकें, पर मैं नहीं सोच सकती। इस बदनामीके बाद मैं जीऊँगी कैसे ?" यह कहते कहते उसके ओठ फूलकर काँप उठे, और दाँतोंसे जबर्दस्ती ओठोंको दबाती हुई वह मानों आँधीकी तरह ज़ोरसे कमरेसे बाहर निकल गई।

६

दूसरे दिन सबेरे क्या सोचकर अपूर्वने थानेकी तरफ कदम बढ़ा दिये, यह बताना कठिन है। यह उसे मालूम था कि चोरीके मामलेमें पुलिसको खबर देनेसे कुछ फल नहीं होता। रुपये नहीं मिल सकते और सम्भवतः चोर भी न पकड़ा जायगा, इतना विश्वास भी उसे था। पर उस क्रिश्चियन म्लेच्छ लड़कीपर उसके क्रोध और विद्वेषकी सीमा न रही थी। भारतीने खुद चोरी की है या चोरी करनेमें मदद दी है, इस विषयमें तिवारीकी तरह निःसंशय वह अभी तक नहीं हो पाया था; परन्तु उसकी शठता और छलनाने उसे एकबारगी पागल बना दिया था। जोज़फ साहबको और चाहे जो दोष दिया जाय, पर उसने अपनेको स्पष्ट करनेके विषयमें शुरूसे अब तक कोई बात उठा नहीं रक्खी। उसकी शैतानी अत्यन्त व्यक्त थी, उसके चाबुकका उछलना दुबिधा-शून्य था,—उसमें लगालेश न था। पड़ोसीके प्रति उसके मनोभावमें कहीं भी किसी तरहकी पहेली-सी नहीं थी; उसका कंठ निःसंकोच, वक्तव्य सरल और प्रांजल था। उसके मदमत्त पद-क्षेपको जाननेके लिए कान खड़े करनेकी जरूरत नहीं थी। संक्षेप यह कि उसको समझा जा सकता है। परन्तु इस लड़कीकी बात और क्रियामें कोई उद्देश्य ही ढूँढ़े नहीं मिलता। नुकसान उसने जो किया है, उसके लिए भी उसे दुःख नहीं; परन्तु शुरूसे ही उसका विचित्र आचरण तो मानो क्षण क्षणमें अपूर्वकी बुद्धिका मज़ाक ही उड़ाता आया है। गुस्सेमें थानेमें घुसकर उससे शुरूसे अन्त तक सारी कहानी पुलिसके सामने कही जाती या नहीं, इसमें सन्देह था; किन्तु मामला उतनी दूर गया नहीं। पीछेसे किसीने पुकारा, "अरे, अपूर्व भइया, यहाँ कैसे ?"

अपूर्वने मुड़कर देखा कि साधारण शरीफ बंगालीकी पोशाकमें उसके परिचित निमाई बाबू हैं। ये बंगालके एक पुलिस-कर्मचारी हैं। अपूर्वके पिताने इनकी नौकरी लगा दी थी और वे ही इनके मुरब्बी थे। निमाई बाबू उनसे बड़े-भइया कहते थे, और इसी नाते अपूर्व वगैरह इनको चाचा कहा करते हैं। स्वदेशी आन्दोलनके समय अपूर्वने गिरफ्तार होकर सजा नहीं पाई, सो इन्हींकी कृपासे। रास्तेहीमें अपूर्वने उन्हें प्रणाम करके अपनी नौकरीका समाचार सुनाते हुए पूछा, "मगर आप इस दूर देशमें कैसे?"

निमाई बाबूने आशीर्वाद देकर कहा, "बेटा, तुम अभी बच्चे ठहरे, तुम तकको जब इतनी दूर घर-द्वार मा-बहन सब छोड़ छाड़कर आना पड़ा, तब मुझे नहीं आना पड़ेगा?" फिर जेबमेंसे घड़ी निकालकर देखते हुए कहा, "अब वक्त नहीं रहा, पर तुम्हें तो आफिस जानेमें अभी बहुत देर है। साथ साथ चलो न बेटा, रास्तेमें चलते चलते कुछ बातें तो मालूम कर लूँ। न मालूम कितने दिनोंसे तुम लोगोंकी खबर नहीं मिली।—मा अच्छी तरह हैं? भइया सब?"

"सब अच्छी तरह हैं," कहकर अपूर्वने फिर पूछा, "आप अभी कहाँ जा रहे हैं?"

"जहाज-घाटपर। चलो न मेरे साथ।"

"चलिए। आपको क्या और भी कहीं जाना है?"

निमाई बाबूने हँसकर कहा, "हाँ जाना भी पड़ सकता है। जिस महापुरुषको स्वागतके साथ यहाँसे ले जानेके लिए देश छोड़कर इतनी दूर आना पड़ा है, उसीकी मरजीपर मेरा आना-जाना निर्भर है। उसका फोटो भी है, हुलिया भी दी हुई है, पर यहाँकी पुलिसके बापकी ताकत नहीं कि उसकी देहपर हाथ लगा सके। मैं भी लगा सकूँगा कि नहीं, सोच रहा हूँ।"

अपूर्व 'महापुरुष' का इशारा समझ गया। कुतूहलसे उसने पूछा, "वह महापुरुष कौन है चाचाजी? जब आप आये हैं तो बंगाली तो जरूर ही होगा, खूनी आसामी है न?"

निमाई बाबूने कहा, "सो नहीं बता सकता। वे हजरत कौन हैं कौन नहीं, यह बात ठीक तौरसे कोई नहीं जानता। और उनके विरुद्ध निर्दिष्ट कोई चार्ज भी नहीं है, फिर भी उन्हें आँखों ही आँखोंमें रखनेके लिए इतनी बड़ी सरकार तकको इतनी व्यग्रता है कि कुछ पूछो नहीं।"

अपूर्वने पूछा, "कोई पॉलिटिकल आसामी है?"

निमाई बाबूने गर्दन हिलाते हुए कहा, "अरे बेटा, पॉलिटिकल आसामी तो तुम लोग भी किसी समय कहाते थे। मगर 'पॉलिटिकल' कहनेसे उसका बोध ही नहीं हो सकता। यह है राजविद्रोही! राजाका शत्रु!—हाँ, 'शत्रु' कहलाने लायक आदमी जरूर है। बलिहारी है उसकी प्रतिभाकी, जिसने इसका नाम रक्खा था सव्यसाची। महाभारतके मतानुसार तो उनके दोनों ही हाथ समान रूपसे चलते थे, मगर प्रबल प्रतापशाली सरकार-बहादुरके सुगुप्त इतिहासके मतानुसार सुनते हैं कि इस आदमीकी दसों इन्द्रियाँ समान वेगसे चलती हैं। बन्दूक-पिस्तौलका उसका अचूक निशाना है, पद्मा नदी तैरकर वह पार कर जाता है, कोई खटका नहीं। फिलहाल अनुमान किया है कि चटगाँवके रास्ते पहाड़ लाँघकर हजरत बर्मामें पधार रहे हैं, या रेलसे आ रहे हैं—कोई ठीक समाचार नहीं। पर आप रवाना हो चुके हैं, यह बात पक्की है। उनके उद्देश्यके बारेमें कोई सन्देह या तर्क नहीं है,—शत्रु-मित्र सभीके मनमें उनके विषयमें स्थिर सिद्धान्त बना हुआ है, और इस बातको भी सब जानते हैं कि उनकी नश्वर देह जब तक पंचभूतोंके जिम्मे नहीं सौंपी जाती तब तक इस जन्ममें उनमें कोई परिवर्तन भी नहीं हो सकता। देखना बेटा, ये सब बातें कहीं प्रकट नहीं कर बैठना! नहीं तो इस बुढ़ापेमें सत्ताईस सालकी पेन्शन तो मारी ही जायगी, साथ ही कुछ ऊपरी इनाम भी मिल सकता है!"

अपूर्वने उत्साह और उत्तेजनासे चञ्चल होकर कहा, "इतने दिनोंसे कहाँ क्या कर रहे थे ये? 'सव्यसाची' नाम तो कभी सुननेमें आया नहीं?"

निमाई बाबूने हँसते हुए कहा, "अरे बेटा, इन सब बड़े आदमियोंका एक ही नामसे काम थोड़े ही चलता है! अर्जुनकी तरह इनके देश विदेशमें न जाने कितने नाम प्रचलित होंगे। उस जमानेमें शायद सुना भी हो, पर अब तुम्हें स्मरण नहीं रहा। और इतने दिनोंसे क्या कर रहे थे, उससे मैं वाकिफ नहीं, पर पूनामें एक बार तीन महीनेकी और सिंगापुरमें एक बार तीन सालकी सजा भुगत आये हैं, इतना जानता हूँ। दस-बारह भाषा इस सफाईके साथ बोल सकते हैं कि किसी विदेशी आदमीके लिए पहचानना मुश्किल है कि कहाँके रहनेवाले हैं। जर्मनीमें कहीं डाक्टरी पास की है, फ्रान्समें इंजीनियरी पास की है, अमेरिकामें क्या पास किया है मालूम नहीं,—पर वहाँ जब रहे

हैं तो जरूर कुछ न कुछ पास किया ही होगा।—ये सब तो शायद इनके लिए ताश-पाँसा खेलनेके,--रिक्रियेशनके बराबर हैं,—लेकिन कोई भी डिगरी किसी काम नहीं आई बेटा! उनकी नस-नसमें भगवानने ऐसी आग जला दी है कि उन्हें चाहे जेलमें ठूँस दो, चाहे शूलीपर चढ़ा दो,—कह न दिया कि पंचभूतोंको सौंपनेके सिवा और कोई सजा ही लागू नहीं होती। न तो इनमें दया माया है, न धर्म कर्म ही मानते हैं, न घर द्वार है,—बापरे बाप! हम लोग भी तो इसी देशमें पनपे हैं,पर ये कहाँसे आकर बंगालमें पैदा हुए, कुछ समझमें ही नहीं आता।"

अपूर्व सहसा कुछ बोल न सका,—उसकी नसोंमेंसे भी जैसे आग-सी निकलने लगी। कुछ देर चुपचाप चलनेके बाद आहिस्तेसे बोला, "इनको क्या आज आप अरेस्ट करेंगे?"

निमाई बाबूने कहा, "पहले मिलें भी तो!"

अपूर्वने कहा, "मान लीजिए, मिल ही गये?"

"नहीं बेटा, इतना आसान नहीं उनका मिलना। मेरा तो निश्चय विश्वास है कि वे अन्तमें जाकर जरूर और किसी रास्तेसे कहीं दूसरी जगह खिसक गये होंगे।"

"और अगर वे आ ही गये तो?"

निमाई बाबूने जरा सोचकर कहा, "हुक्म तो उनको आँखों ही आँखोंमें रखनेका है। देखूँ दो दिन।"

उनकी बातपर अपूर्व पूरा विश्वास न कर सका, फिर भी उसके मुँहसे एक तसल्लीकी साँस निकल गई। बोला, "उम्र क्या होगी?"

निमाई बाबूने कहा, "ज्यादा नहीं, शायद तीस-बत्तीसके भीतर ही होगी।"

"देखनेमें कैसे हैं?"

"यही तो भारी आश्चर्य है बेटा! इतने बड़े भयंकर आदमीमें कोई विशेषता नहीं, बिलकुल ही मामूली आदमी है। इसलिए पहचानना भी कठिन है, पकड़ना भी मुश्किल है।--हमारी रिपोर्टमें यही बात खास तौरसे लिखी हुई है।"

अपूर्वने कहा, "मगर पकड़े जानेके डरसे ही तो ये पैदल रास्तेसे पहाड़ लाँघकर आते हैं?"

निमाई बाबूने कहा, "ऐसा न भी हो। हो सकता है कि और कोई अभिप्राय हो, हो सकता है कि सिर्फ रास्ता देख रखना ही उद्देश्य हो,—कुछ कहा नहीं जा सकता अपूर्व! ये लोग जिस पथके पथिक हैं, उसके साथ

स्वाभाविक मनुष्यके स्वाभाविक हिसाबका मेल नहीं खा सकता। आज तो सिर्फ इस बातकी परीक्षा होगी कि हमारी भूल है या उनकी। ऐसा भी हो सकता है कि हमारी सारी दौड़-धूप ही फिजूल हो।"

अपूर्वने अबकी बार हँसकर कहा, "सो ही हो, मैं भगवानसे सर्वान्तःकरणसे यही प्रार्थना करता हूँ चाचाजी।"

निमाई बाबू खुद भी हँस दिये, बोले, "बेवकूफ लड़के, पुलिसके सामने ऐसी बात कहनी चाहिए कभी? अपने घरका नम्बर कितना बताया?—तीस? कल सबेरे हो सका तो एक बार जाकर देख आऊँगा।—इसी सामनेकी जेटीपर शायद स्टीमर लगेगा,—अच्छा, तुम्हारे आफिसका भी समय हो गया—नई नौकरी ठहरी, देरी करना अच्छा नहीं।" इतना कहकर वे जरा जल्दी ही निकल जाना चाहते थे, पर अपूर्वने कहा, "देरीकी क्या बात है, आज गैर हाजिर भी होना पड़े, तो भी आपको नहीं छोड़नेका। मैं नहीं चाहता कि वे आपके पंजेमें आकर फँस जायँ, मगर फिर भी अगर ऐसी दुर्घटना हो जाय, तो कमसे कम एक बार उन्हें आँखोंसे तो देख लूँगा। चलिए।"

इच्छा न होनेपर भी निमाई बाबूने कोई आपत्ति नहीं की, सिर्फ जरा सावधान कर दिया, "देखनेका लोभ होना तो ठीक ही है, इसे मैं मानता हूँ, पर ऐसे आदमियोंसे किसी तरहकी बातचीत या परिचयकी इच्छा करना खतरनाक है, सो कहे देता हूँ। अब तुम बच्चे नहीं हो, और अब पिताजी भी नहीं रहे,—भविष्य विचारकर काम करनेकी जिम्मेदारी अब तुम्हींपर है।"

अपूर्वने हँसकर कहा, "आलाप-परिचयका मौका क्या आप लोग किसीको कभी देते हैं चाचाजी? अपराध नहीं किया, कोई मुकद्दमा भी नहीं, फिर भी उन्हें जालमें फँसानेके लिए इतनी दूर दौड़े आये हैं आप!"

इसके उत्तरमें निमाई बाबू सिर्फ जरा मुसकरा दिये, बोले, "कर्तव्य है।"

इस छोटी-सी बातकी ओटमें न जाने संसारकी कितनी भलाई कितनी बुराई संचित हो रही है, यह सोचकर अपूर्वने फिर कोई प्रश्न नहीं किया। दोनोंने जब जेटीमें प्रवेश किया तब ईरावती नदीका जहाज किनारे लगनेकी कोशिश कर रहा था। पाँच-सात पुलिस कर्मचारी पहलेहीसे सादी पोशाकमें खड़े थे: निमाई बाबूके प्रति उनकी आँखोंका एक तरहका इशारा देखकर अपूर्वने उन्हें पहचान लिया। ये सभी भारतवासी हैं,—भारतके कल्याणके लिए सुदूर बर्मामें विद्रोहीका

शिकार करने आये हैं! वह शिकार लगभग उनकी मुट्ठीमें आ रहा है : सफलताके आनन्द और उत्तेजनाकी प्रच्छन्न दीप्ति उनके चेहरे और आँखोंमें झलक रही थी जिसे अपूर्वने साफ देख लिया। लज्जा और दुःखसे मुँह फेरकर खड़े होते ही अकस्मात् क्षणमात्रमें ही उसका सम्पूर्ण चित्त व्यथित हो मानो किसी एक अदृष्टपूर्व अपरिचित अभागेके पैरों-तले औंधा होकर जा पड़ा और उसने उसका रास्ता रोक लिया। जहाजके खलासी जहाजके रस्से जेटीपर फेंक रहे थे, कितने ही आदमी उद्‌ग्रीव होकर देख रहे थे,—डेकपर व्यग्रता, शोर-गुल और दौड़-धूपकी हद न थी,—शायद, इन्हीं लोगोंके बीचमें खड़ा हुआ एक आदमी उत्सुक दृष्टिसे किनारेकी प्रतीक्षा कर रहा होगा। पर, अपूर्वकी आँखोंके आगे साराका सारा दृश्य ही आँसुओंसे एक-बारगी धुंधला होकर एकाकार हो गया। ऊपर, नीचे, जलमें, स्थलमें इतने स्त्री-पुरुष खड़े हैं, किसीपर भी कोई शंका, कोई अपराध नहीं; सिर्फ है तो उसी आदमीपर जिसने अपने तरुण हृदयके सारे सुखको, सम्पूर्ण स्वार्थको, —सारी आशाओंको अपनी इच्छासे तिलांजलि दे दी है। कारागार और मृत्युका मार्ग क्या सिर्फ उसीके लिए मुँह फाड़े खड़ा है?

जहाज जेटीसे आकर लगा, लकड़ीकी सीढ़ी नीचे उतार दी गई, निमाई बाबू अपने दल-बलके साथ रास्तेके दोनों तरफ पंक्तिवार खड़े हो गये; पर अपूर्व नहीं हिला। वह जहाँ था वहीं निश्चल पत्थरकी मूर्तिकी तरह खड़ा खड़ा एकाग्र चित्तसे कहने लगा—'एक ही क्षण बाद तुम्हारे हाथमें हथ-कड़ियाँ पड़ जायँगीं,—कौतुकप्रिय नर-नारी तुम्हारी लांछना और अपमान अपनी आँखोंसे देखेंगे। वे जान भी न पायँगे कि उन्हींके लिए तुमने सर्वस्व त्याग किया है, और इसीलिए उनके बीच अब तुम्हारा रहना नहीं हो सकता!'

उसकी आँखोंसे टप-टप आँसू गिरने लगे, और जिसे उसने कभी नहीं देखा था, उसको सम्बोधन करके वह मन ही मन कहने लगा,—'तुम तो हम लोगोंके समान सीधे आदमी नहीं हो,—तुमने देशके लिए अपना सब कुछ दिया है, इसीसे तो देशकी सेवा-नाव तुम्हें पार नहीं कर सकती,—पद्मा नदी तुम्हें तैरकर पार करनी पड़ती है! इसीलिए तो देशके राज-मार्ग तुम्हारे लिए बन्द हैं,—दुर्गम पहाड़-पर्वत तुम्हें लाँघने पड़ते हैं! मालूम नहीं, किस विस्मृत अतीतमें तुम्हारे लिए पहले-पहल हथकड़ी और बेड़ी बनी थी! कारागार भी तो पहले पहल

तुम्हारी ही याद करके बना था,—यही तो तुम्हारा गौरव है! तुम्हारी लापरवाही कर सके, इतनी मजाल है किसमें? यह जो अगणित पहरेदार और विपुल सेनाका भार है सो सब तुम्हारे ही लिए तो है! दुःखका दुःसह गुरु-भार ढो सकते हो, इसीलिए तो भगवानने इतना भारी बोझ तुम्हारे ही कंधेपर लादा है। मुक्तिमार्गके अग्रदूत! पराधीन देशके हे राजद्रोही! तुम्हें सौ सौ करोड़ नमस्कार हैं।'—इतने आदमियोंकी भीड़ है, इतने आदमियोंका आना-जाना हो रहा है, इतने आदमियोंकी नजर मुझपर पड़ती होगी, इन सब बातोंका उसे जरा भी खयाल न था। अपने उच्छ्वसित आवेगसे निकलती हुई अविच्छिन्न अश्रु-धारासे उसके गाल, ठोड़ी, कंठ सब भीगने लगे। समय कितना बीत गया, इसका भी उसे कुछ होश न रहा। सहसा निमाई बाबूकी आवाज़से चौंककर चटपट उसने आँसू पोंछकर जरा हँसनेकी कोशिश की। उसके तद्गत विह्वल भावको देखकर निमाई बाबू आश्चर्य-चकित हो गये, परन्तु उन्होंने कुछ पूछा नहीं, कहा, "जिस बातका डर था, वही हुआ! सफा भाग गया!"

"कैसे भागा?"

निमाई बाबूने कहा, "यही अगर मालूम हो जाता, तो फिर भागता ही कैसे? लगभग तीन सौ यात्री थे जिनमें बीस-पचीस फिरंगी साहब होंगे, उड़िया-मद्राजी-पंजाबी होंगे डेढ़ सौ, बाकीके बर्मी हैं,—वह किस पोशाकमें कौन-सी भाषा बोलता हुआ निकल गया, सो देवाः न जानन्ति,—देवता तक नहीं जानते, समझे बेटाजी,—फिर हम तो पुलिसके हैं! पहचान नहीं सकते कि बंगाली है या विलायती है! सिर्फ जगदीश बाबू सन्देह करके पाँच-छह बंगालियोंको थानेमें घसीट ले गये हैं, एक आदमीका चेहरा कुछ मिलता-जुलता-सा भी मालूम होता है, पर मालूम होने तक ही है,—असलमें वह नहीं है। चलोगे क्या? वहाँ भी एक बार उसे देख तो आवें आँखोंसे!"

अपूर्वकी छातीके भीतर धक-से हो गया, बोला, "उन्हें अगर मारें-पीटें,—तो मैं नहीं जाना चाहता।"

निमाई बाबूने हँसकर कहा, "इतने आदमियोंको चुपचाप छोड़ दिया, और इन बेचारोंपर क्या सिर्फ बंगाली होनेके कारण ही मैं बंगाली होकर अत्याचार करूँगा? अरे बेटा, बाहरसे तुम लोग पुलिसवालोंको जितना बुरा समझते हो, उतने बुरे वे सब नहीं होते। भले-बुरे सब जगह होते हैं; लेकिन मुँह बन्द करके

जितने दुःख हमें सहने पड़ते हैं, उन्हें अगर जानते होते तो तुम अपने इस दारोगा चाचासे इतनी घृणा नहीं कर सकते अपूर्व।"

अपूर्व लज्जित होकर बोला, "आप अपना कर्तव्य करते हैं, इसके लिए मैं आपसे घृणा क्यों करने लगा चाचाजी!"—इतना कहकर वह झुका और पाँव-छूकर उसने अपना हाथ माथेसे लगाया। निमाई बाबूने खुश होकर आशीर्वाद दिया, बोले, "बस बस, हो गया। चलो जरा जल्दी चले चलें, लोग बेचारे भूख-प्याससे तंग आ गये होंगे, जरा देख-भालकर छोड़ दिया जाय।" यह कहकर वे अपूर्वका हाथ पकड़कर जल्दीसे उसे बाहर ले आये।

पुलिस-स्टेशनमें जाकर देखा कि सामनेके हॉलमें छह बंगाली अपना बोरिया-बसना लिये बैठे हैं। जगदीश बाबूने उनके टीनके बाक्स और पोटलियोंकी तलाशी लेनी शुरू कर दी है। सिर्फ एक आदमी, जिसपर उनका बहुत ज्यादा सन्देह है, एक दूसरे कमरेमें रोक रक्खा गया है। ये सभी उत्तर-बर्माकी बर्मा-ऑयेल कम्पनीमें मिस्त्रीका काम करते थे, वहाँकी आब-हवा अनुकूल न होनेसे नौकरीकी तलाशमें रंगून चले आये हैं। उनका नाम धाम और ब्योरा लिख लिया गया और चीज-वस्तकी परीक्षा करके उन्हें छोड़ दिया गया। इसके बाद पॉलिटिकल ससपेक्ट (राजनीतिक सन्दिग्ध) सव्यसाची मल्लिकको निमाई बाबूके सामने हाजिर किया गया। वह खाँसते खाँसते सामने आया। उम्र तीस बत्तीससे ज्यादा न होगी, दुबल-पतला कमजोर आदमी था। जरासे खाँसीके परिश्रमसे ही वह हाँपने लगा। देखनेसे यह नहीं मालूम होता था कि उसकी संसारकी मियाद ज्यादा दिन बाकी है,—भीतरके किसी एक दुर्निवार रोगसे जैसे उसका सारा शरीर तेजीसे क्षयकी तरफ दौड़ रहा है। आश्चर्य सिर्फ इतना है कि उसकी आँखोंकी दृष्टि अद्भुत है। उसकी आँखें छोटी हैं या बड़ी, खिंची हुई हैं या गोल, दीप्ति-प्रभाहीन हैं या तेज,—इन सब बातोंका वर्णन करना व्यर्थ है। अत्यन्त गहरे पानीकी तरह न जाने उसके भीतर क्या है! —डर लगता है,—वहाँ खिलवाड़ नहीं चल सकता। सावधानीके साथ दूर खड़ा रहना ही ठीक है। न जाने किस अतल तलेमें उसकी क्षीण प्राण-शक्ति छिपी हुई है, मृत्यु भी जहाँ प्रवेश करनेका साहस नहीं करती!—शायद इसीलिए वह अब तक जीवित है। अपूर्व मुग्ध होकर उसकी तरफ देख रहा था कि सहसा निमाई बाबूने उसकी वेश-भूषाकी बहार और बनाव-ठनावपर अपूर्वकी दृष्टि आकर्षित

करके हँसते हुए कहा, "बाबू साहबका स्वास्थ्य तो हमेशाके लिए चला गया, पर यह बात माननी पड़ेगी कि शौक सोलह आने मौजूद है। क्यों अपूर्व?"

इतनी देर बाद अपूर्वने उसकी पोशाककी तरफ गौर किया और मुँह फेरकर बड़ी मुश्किलसे हँसी दबाई। उसके माथेपर सामनेकी ओर बड़े बड़े बाल थे पर गर्दनके ऊपर और कनपटियोंपर नहींके बराबर समझिए,—बहुत ही बारीक छँटे हुए। बीचमें माँग है जो छिकी हुई है। और खूब तेलसे तर, कड़े-कड़े बाल हैं और उनमेंसे संतरेके तेलकी जोरकी बू निकल रही है। बदनपर जापानी पंचरंगी सिल्कका चूड़ीदार कुरता है, जिसकी ऊपरकी जेबमेंसे शेरकी तस्वीरवाले रूमाल-का कुछ हिस्सा बाहर निकला हुआ है। चद्दर-अद्दरकी कोई बला नहीं। विलायती मिलकी काली मखमली किनारीकी जनानी धोती, पैरोंमें घुटनोंके ऊपर तक चढ़े और लाल फीतेसे बँधे हुए हरे रंगके फुल मोजे, बार्निशदार पम्प शू जिनके नीचे मजबूतीके लिए लोहेके नाल लगे हुए हैं, और हाथमें हरिणके सींगकी मूठ-शुदा बेतकी छड़ी। कई दिनके जहाजके सफरसे सब कुछ गंदा हो गया है। उसको आपाद-मस्तक गौरसे देखकर अपूर्वने कहा, "चाचाजी, इस आदमीको आप बगैर कुछ पूछे-ताछे ही छोड़ दीजिए। जिसे आप ढूँढ़ रहे हैं, यह वह आदमी नहीं है, इसका मैं जामिन हो सकता हूँ।"

निमाई बाबू चुप रहे, अपूर्वने कहा, "और बातोंको चाहे जाने दीजिए, पर जिसे आप खोज रहे हैं उसके कल्चरका तो जरा खयाल कीजिए।"

निमाई बाबूने हँसते हुए गर्दन हिलाकर कहा, "तुम्हारा नाम क्या है जी?"

"जी, गिरीश महापात्र।"

"एकदम महापात्र! तुम क्या तेलकी खानमें काम करते थे? अब रंगूनमें ही रहोगे? तुम्हारा बॉक्स बिस्तर बगैरह तो देख लिया गया, अब देखूँ जरा तुम्हारी अंटीमें क्या है?"

उसकी अंटीमें एक रुपया और छै-एक आने पैसे थे। जेबसे एक लोहेका कम्पास, मापनेकी चीड़की एक फुट-रूल, कई बीड़ियाँ, एक दिआसलाई और एक गाँजेकी चिलम निकल पड़ी।

निमाई बाबूने कहा, "तुम गाँजा पीते हो?"

उसने बिना संकोचके जवाब दिया, "जी, नहीं।"

"तो यह चिलम जेबमें कैसे?"

" जी, रास्तेमें पड़ी मिल गई थी, किसीके काम आ जायगी, इस खयालसे उठाकर रख ली है। "

इतनेमें जगदीश बाबू भीतर आ पहुँचे। निमाई बाबूने उनसे हँसते हुए कहा, " देखो जगदीश, कैसे परोपकारी आदमी हैं आप! किसीके काम आ जाय, इसलिए आपने गाँजेकी चिलम उठाकर जेबमें रख ली है।—देखूँ, जरा अपना हाथ तो दिखाओ। " यह कहकर उस प्रवीण सुदक्ष पुलिस-कर्मचारीने महापात्रके दाहने हाथके अँगूठेकी बहुत देरतक परीक्षा करके हँसते हुए कहा, " मुद्दतों गाँजा तयार करनेकी निशानी यहाँ मौजूद है हज़रत, कह ही देते कि पीता हूँ! पर अब कितने दिन जीओगे, तुम्हारी देहकी तो यह हालत है,—बूढ़े आदमीका कहना मानो,—अब मत पीना। "

महापात्रने सिर हिलाकर अस्वीकार करते हुए कहा, " नहीं हजूर, कसमसे, मैं नहीं पीता। पर यार-दोस्त कोई कहता है तो बना देता हूँ—बस। नहीं तो मैं नहीं छूता। "

जगदीश बाबू खफा होकर बोले, " दयाके सागर हैं आप! दूसरोंको बनाकर पिलाते हैं, आप नहीं पीते! झूठे कहींके! "

अपूर्वने कहा, " अबेर हो गई, अब मैं चलूँ चाचाजी! "

निमाई बाबू उठके खड़े हो गये, बोले, " अच्छा, अब तुम जा सकते हो महापात्र!—क्यों जगदीश, जा सकता है? "

जगदीशके सम्मति देनेपर फिर बोले, "लेकिन निश्चयसे कुछ कहा नहीं जा सकता भाई साहब। मेरी समझसे इस शहरमें और भी कुछ दिन निगाह रखनेकी जरूरत है। रातकी मेल ट्रेनपर नजर रखना। यह सच है कि वह बर्मामें आ गया है। "

जगदीशने कहा, " सो हो सकता है, पर इस जानवरपर वाच (=निगरानी) रखनेकी जरूरत नहीं बड़े बाबू! संतरेके तेलकी बदबूसे नालायकने थाने-भरके सिरमें दर्द पैदा कर दिया। "

बड़े बाबू हँसने लगे। अपूर्व पुलिस स्टेशनसे बाहर निकल आया और लगभग उसके साथ ही साथ महापात्र भी अपने टीनके टूटे बॉक्स और चटाईमें लिपटे मैले-गन्दे बिछौनेका बंडल बगलमें दबाये धीर मन्थर गतिसे उत्तर-तरफकी सड़कसे सीधा चलता बना।

७

आश्चर्य यह है कि इतना बड़ा सव्यसाची पकड़ा नहीं गया और कोई दुर्घटना भी नहीं हुई, फिर भी इतने बड़े सौभाग्यकी अपूर्वके मनने मानों परवाह ही नहीं की। घर आकर, हजामत बनानेसे लेकर संध्या-आह्निक, स्नानाहार, पोशाक पहनकर आफिस जाना आदि दैनिक काम उसने सब किये, पर वह ठीक क्या सोचने लगा सो उसे खुद भी मालूम नहीं: और मजा यह कि आँख, कान और बुद्धि उसकी सांसारिक सभी बातोंसे बिलकुल विच्छिन्न-सी होकर किसी एक अदृश्य अज्ञात राज-विद्रोहीकी चिन्तामें मग्न हो रही। इस अत्यन्त अन्यमनस्कताको लक्ष्य करके तलवरकरने चिन्तित चेहरेसे पूछा, "आज घरसे कोई चिट्ठी आई है क्या?

"नहीं तो?"

"घरकी खबर तो सब ठीक है?"

अपूर्वने कुछ आश्चर्यान्वित होकर कहा, "जहाँ तक मालूम है, सब ठीक ही है।"

रामदासने और कोई प्रश्न नहीं किया। टिफिनके वक्त दोनों एक साथ बैठकर जल-पान करते थे। रामदासकी स्त्रीने अपूर्वसे एक दिन साग्रह अनुरोध किया था कि जब तक उसकी मा या घरकी और कोई आत्मीया यहाँ आकर उसकी ठीक ठीक व्यवस्था न करें, तब तक इस छोटी बहनके हाथकी बनी थोड़ी-सी मिठाई रोज उसे स्वीकार करनी ही पड़ेगी। अपूर्व राजी हो गया था। आफिसका एक ब्राह्मण पियादा यह सब लाता था। आज भी वह जब बगलवाले निराले कमरेमें खानेकी चीजें परोस गया, तब खाते समय अपूर्वने खुद ही बात छेड़ी—"कल मेरे घरमें चोरी हो गई, सब कुछ चला-जाता, सिर्फ ऊपरकी क्रिश्चियन लड़कीकी कृपासे रुपये-पैसेके सिवा और सब चीजें बच गईं। उसने चोरको भगाकर मेरे दरवाजेपर अपना ताला लगा दिया था। मेरे पहुँचनेपर घरका ताला खोलकर बगैर बुलाये ही कमरेमें घुसकर उसने चीज-वस्त सब सम्हालकर दी, सबकी एक लिस्ट बना दी कि क्या चोरी हुई और क्या नहीं, और सबका ऐसा सही हिसाब लगा दिया कि उसको देख शायद तुम जैसे पास-शुदा एकाउण्टेण्टको भी आश्चर्य हो। वास्तवमें, ऐसी तत्पर, ऐसी कार्य-कुशल लड़की और कोई है कि नहीं, सन्देह है। इसके सिवा अपनी हितचिन्तक मित्र!"

रामदासने कहा, "यह कैसे हुआ ?"

अपूर्वने कहा, "तिवारी घरपर न था, बर्मियोंका नाच देखने फयार चला गया था, उसी बीचमें यह घटना हो गई। उसका तो कहना है कि यह काम उन्हीं लोगोंका है। मेरा भी अनुमान कुछ कुछ ऐसा ही है। चोरी न की हो,—मदद पहुचाई हो।"

"फिर?"

"फिर सबेरे थाने पहुँचा खबर देने। लेकिन पुलिसने ऐसा काण्ड किया,—ऐसा तमाशा दिखाया कि उस बातकी फिर याद ही नहीं रही। अब सोचता हूँ कि जो गया सो जाने दो, उन्न लोगोंको चोर पकड़नेकी अब जरूरत नहीं, इसी तरह विद्रोही पकड़ते फिरें।" इतना कहकर गिरीश महापात्र और उसकी पोशाककी बहार याद करके मारे हँसीके उसका दम फूलने लगा। हँसी रुकनेपर उसने विज्ञान और चिकित्सा शास्त्रमें असाधारण पारदर्शी, विलायतके डाक्टर-उपाधिधारी; राज-शत्रु महापात्रके स्वास्थ्य, उसकी शिक्षा और रुचि, उसके बल-वीर्य, उसके पञ्चरङ्ग कुरते, हरे मोजे और लोहेके नालदार पम्पशू, संतरेके तेलकी बू, और सबसे बढ़कर परोपकारार्थ गाँजेकी चिलम उठानेके इतिहासका सविस्तर वर्णन कर डाला, और अपनी हँसीको किसी कदर रोककर अन्तमें कहा, "तलवरकर, महा होशियार पुलिसको आज ऐसा बेवकूफ अहमक बनते शायद कभी किसीने न देखा होगा। और मजा यह कि गवर्नमेण्टके न जाने कितने रुपये ये लोग इन जंगली बतकोंके पीछे दौड़-धूप करके बरबाद करते होंगे!"

रामदासने हँसकर कहा, "मगर जंगली बतकोंको पकड़ना ही तो इन लोगोंका काम है, आपके चोर पकड़नेके लिए ये नहीं हैं। अच्छा, यह क्या आपके बंगालकी पुलिस थी?"

अपूर्वने कहा, "हाँ। इसके सिवा मेरे लिए बड़े शर्मकी बात यह है कि इनके जो बड़े बाबू हैं वे मेरे अपने ही आदमी हैं,—पिताजीके मित्र। पिताजीने ही इनको नौकरी दिलाई थी।"

रामदासने कहा, "तो शायद आपको ही किसी दिन इसका प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।" पर बात कह डालनेके बाद वह जरा-कुछ सहम-सा गया और चुप हो गया। उसके निजी आदमीके बारेमें ऐसा मन्तव्य प्रकट करना शायद उचित नहीं हुआ। अपूर्व उसके चेहरेकी तरफ देखकर इसके मानी समझ

गया, परन्तु यह धारणा सच नहीं, यही जोरके साथ व्यक्त करनेके लिए बोला, "मैं उनसे चाचा कहता हूँ, मेरे वे आत्मीय हैं, शुभाकांक्षी हैं, मगर इसके मानी यह नहीं कि वे मेरे देशसे भी बढ़कर अपने हैं। बल्कि, जिनका वे देशके रुपयेसे,—देशके लोगोंकी सहायतासे शिकारकी तरह पीछा कर रहे हैं, वे कहीं ज्यादा मेरे अपने हैं।"

रामदासने मुसकराते हुए कहा, "बाबू साहब, इन सब बातोंके कहनेसे दुःख भोगना पड़ता है।"

अपूर्वने कहा, "भले ही भोगना पड़े, मंजूर है। मगर तलवरकर, सिर्फ हमारे देशमें नहीं, संसारके किसी देशमें, किसी भी युगमें जिस किसीने अपनी जन्म-भूमिको स्वाधीन करनेकी कोशिश की है, उसे अपना नहीं कहने लायक सामर्थ्य और चाहे जिसमें हो, मुझमें तो नहीं है।" यह कहते कहते उसका स्वर तीक्ष्ण और आँखोंकी दृष्टि प्रखर हो उठी। मन ही मन वह समझ गया कि मैं कहाँसे कहाँ पहुँच गया हूँ, पर अपनेको वह सम्हाल नहीं सका, बोला, "तुम सरीखा साहस नहीं है मुझमें, मैं डरपोक हूँ, मगर इसका मतलब यह नहीं रामदास, कि किसीका अन्यायकृत दण्ड भोगना मुझे कम खटकता हो। बगैर कसूरके फिरंगी छोकरोंने मुझे जब लात मारकर प्लेटफार्मसे ढकेलकर निकाल दिया और उस अन्यायका प्रतिवाद करने जब मैं स्टेशन-मास्टरके पास पहुँचा, तब उसने मुझे सिर्फ देशी आदमी होनेकी वजहसे ही कुत्तेकी तरह स्टेशनसे निकाल दिया: उस बेइज्जतीकी बात इस काले चमड़ेके नीचे कुछ कम नहीं जल रही है तलवरकर! ऐसा तो रोजमर्रा हुआ ही करता है।—मेरी माको,—मेरे भाई-बहनोंको जो लोग इन हजारों अत्याचारोंसे बचाना चाहते हैं, उन्हें 'अपना' कहनेमें चाहे जैसा भी दुःख हो, मैं अबसे उसे सिर-माथे मंजूर करूँगा।"

रामदासका सुन्दर गोरा चेहरा क्षण-भरके लिए सुर्ख हो उठा, बोला, "कहाँ, यह घटना तो तुमने मुझे बताई नहीं?"

अपूर्वने कहा, "बताना क्या आसान है रामदास? हिन्दुस्तानके आदमी वहाँ क्या कम थे? मगर, मेरा अपमान किसीको मालूम ही नहीं हुआ! ऐसी ही उनकी आदत पड़ गई है। इसीको गनीमत समझकर वे खुश हो गये कि लातोंकी चोटसे मेरी हड्डी-पसली नहीं टूटी। तुमसे कहता क्या, याद आते ही मारे दुःख, लज्जा और घृणासे मेरी तो ऐसी तबीयत हो जाती है कि मिट्टीमें मिल जाऊँ।"

रामदास चुप रहा पर आँखें उसकी डबडबा आईं। सामनेकी घड़ीमें तीन बज जानेसे वह उठ खड़ा हुआ। शायद कुछ कहना चाहता था, पर बगैर कुछ कहे सहसा हाथ बढ़ाकर अपूर्वका दाहना हाथ अपनी तरफ खींचकर और उसे दबाकर, चुपचाप अपने कमरेमें चला गया।

उस दिन शामको आफिसकी छुट्टीके कुछ पहले बड़ा साहब एक लम्बा टेलिग्राम हाथमें लिये अपूर्वके कमरेमें आया और बोला, "हमारे भामोके आफिसमें कोई ठीक सिलसिला ही नहीं बैठता। माण्डले, शोएबो, मिकथिला और इधर प्रोम, इन सभी आफिसोंमें गड़बड़ी हो रही है। मेरी इच्छा है कि तुम एक बार सबको देख भाल आओ। मेरी अनुपस्थितिमें तो सबका भार तुम्हींपर रहेगा,—सबसे परिचय होना भी जरूरी है,—लिहाजा ज्यादह देरी न करके कल-परसों तक अगर—"

अपूर्व उसी वक्त सहमत होकर बोला, "मैं कल ही रवाना हो सकता हूँ।"

असलमें, कितने ही कारणोंसे रंगूनमें उसे एक क्षणके लिए भी मन नहीं लग रहा था। दूसरे, इसी बहाने यह देश भी वह एक बार देख आयेगा। इसलिए उसने जाना ही तय कर लिया, और दूसरे ही दिन तीसरे पहर सुदूर भामो शहरके लिए वह रेलमें सवार हो गया। साथमें गया एक अरदली और एक हिंदुस्तानी ब्राह्मण पियादा। तिवारी खबरदारीके लिए घरपर ही रहा। लँगड़ा साहब अस्पतालमें पड़ा था, लिहाजा उतना डर भी नहीं था; और खास तौरसे इस म्लेच्छ देशका रंगून शहर तो उसे कुछ सुहा भी गया था, पर और किसी अनजान जगहमें कदम बढ़ानेके लिए उसकी प्रवृत्ति नहीं हुई। दूसरे तलवलकरने तिवारीकी पीठ ठोंककर हिम्मत देते हुए कह दिया, "तुम कुछ फिकर मत करो महाराज, कोई बात हो तो आफिसमें आकर मुझे खबर दे देना।"

गाड़ी छूटनेमें तब शायद पाँचेक मिनट बाकी थे, अपूर्व सहसा चौंककर बोल उठा, "अरे वह रहा!"

तलवरकर गरदन फेरते ही समझ गया कि यही है वह गिरीश महापात्र। वही बहारदार कुरता, वही हरे रंगकी जुर्राब, वही पम्प-शू और छड़ी, फर्क सिर्फ इतना था कि वह शेर छापका रूमाल जेबसे निकलकर गलेमें लिपटा था। महापात्र उन्हींकी तरफ आ रहा था। सामने आते ही अपूर्वने उसे बुलाकर कहा, "क्यों जी गिरीश, मुझे पहचाना? कहाँ जा रहे हो?"

गिरीशने हड़बड़ाकर एक लम्बा नमस्कार किया, फिर कहा, "जी, पहचानूँगा क्यों नहीं बाबूजी सा'ब। कहाँको आगमन हो रहे हैं?"

अपूर्वने हँसते हुए कहा, "फिलहाल भामो जा रहा हूँ। तुम कहाँ चले?"

गिरीशने कहा, "जी, एनाजांगसे दो दोस्त आदमियोंके आनेकी बात थी,—मुझे लेकिन बाबूजी, यह झूठमूठको तंग करना है।—हाँ लाते जरूर हैं कोई कोई अफीम भाँग वगैरा छिपा कर, लेकिन मैं बाबूजी, बहुत धरमसे चलता हूँ। आखिर जरूरत क्या है जाल-जुआचोरी करनेकी,—कहा भी है न कि परधर्मो भयावह। मुकद्दरका लिखा कोई मेंट थोड़े ही सकता है!"

अपूर्वने हँसकर कहा, "मेरी भी यही धारणा है। लेकिन तुम्हारी भाई, एक गलती हुई, मैं पुलिसका आदमी नहीं हूँ। अफीम-भाँगका भी मुझसे कुछ सरोकार नहीं,—उस दिन तो सिर्फ तमाशा देखने पहुँच गया था।"

तलवरकर तीक्ष्ण दृष्टिसे उसे देख रहा था, वह बोला, "मैंने तुमको कहीं न कहीं जरूर देखा है—"

गिरीशने कहा, "कोई ताज्जुब नहीं बाबू सा'ब, नौकरीके लिए कहाँ कहाँ घूमना पड़ा है, कोई ठीक थोड़े है!"

अपूर्वसे बोला, "लेकिन मुझ गरीबपर झूठा शक न कीजिएगा बाबू सा'ब, आप लोगोंकी नजर पड़नेसे नौकरी भी नहीं मिलेगी। ब्राह्मणका लड़का हूँ, थोड़ा बहुत पढ़ा भी है, शास्तरपास्तर सब कुछ सीखा था, लेकिन ऐसा मुकद्दर कि,—बाबू सा'ब आप लोग—"

अपूर्वने कहा, "मैं ब्राह्मण हूँ।"

"जी, तो नमस्कार। अब हुकम मिले,—बाबू सा'ब राम राम"—कहता हुआ गिरीश महापात्र जोरकी एक खाँसीको किसी कदर सम्हालता हुआ जल्दी जल्दी आगेकी ओर चला गया।

अपूर्वने कहा, "इसी सव्यसाचीके पीछे मेरे चाचा साहब मय दल-बलके देशपरदेश दौड़-धूप कर रहे हैं तलवरकर!" और वह हँसने लगा।

मगर इस हँसीमें तलवरकरने साथ नहीं दिया। दूसरे ही क्षण सीटी बज जानेसे गाड़ी छूटने लगी, तो उसने हाथ बढ़ाकर मित्रसे हाथ मिलाया; मगर तब भी मुँहसे उसके बात नहीं निकली। नाना कारणोंसे अपूर्व इस तरफ ध्यान न दे सका, अगर देता तो देखता कि इस एक ही क्षणके भीतर रामदासके

प्रशस्त उज्ज्वल ललाटपर जैसे किसी अदृश्य मेघकी छाया आ पड़ी है, और सुदूर दुर्निरीक्ष्य लोकमें उसका सम्पूर्ण मनश्चक्षु बिलकुल बिला गया है।

अपूर्व प्रथम श्रेणीका यात्री था, उसके कमरेमें और कोई यात्री न था। शाम होनेपर उसने कुरतेके भीतरसे जनेऊ निकालकर बिना जलके ही संध्या सम्पन्न की और जो सब खानेकी चीजें शास्त्रानुसार किसीके छूनेसे खराब नहीं होतीं उन्हें एक पीतलके कटोरदानसे निकालकर वह खाने लगा। पानी और पान ब्राह्मण अरदली पहलेसे ही रख गया था, और बिस्तर भी बिछा गया था। लिहाजा खा-पीकर वह मुँह-हाथ धोकर परितृप्त स्वस्थ-चित्तसे बिस्तरपर लेट गया। उसे विश्वास था कि सबेरे तक उसकी नींदमें कोई विघ्न न आयगा, पर यह उसका कितना बड़ा भ्रम था, सो एक ही स्टेशन आगे चलकर मालूम हो गया। उस रातको तीन बार उसकी नींद छुटाकर पुलिसके आदमी उसका नाम-धाम और ठिकाना लिख ले गये। एक बार उसने तंग आकर प्रतिवाद किया तो बर्माके सब इन्स्पेक्टर साहबने कड़वी जबानसे जवाब दिया, "तुम तो युरोपियन नहीं हो!"

अपूर्वने कहा, "नहीं। मगर मैं हूँ फर्स्टक्लास पैसेञ्जर,—रातको तुम मुझे सोतेसे नहीं जगा सकते।"

उसने हँसकर कहा, "वह कानून रेल्वे कर्मचारियोंके लिए है,—मैं पुलिसका आदमी हूँ; चाहूँ तो तुम्हें खींचकर नीचे उतार ले सकता हूँ।"

इसके बाद अपूर्वने कोई जवाब नहीं दिया। पर रातके अन्तिम तीन चार घंटे उसके बिना किसी उपद्रवके कट गये। सबेरे जब नींद खुली तो पिछली रातकी ग्लानिकी बात उसे याद नहीं रही। एक बड़े पहाड़के पाससे गाड़ी मन्थर गतिसे जा रही थी। सम्भवतः यह चढ़ाईका रास्ता है। खिड़कीसे बाहर मुँह निकालकर जो देखा, तो अकस्मात् मारे आश्चर्यके वह दंग हो गया। लहमे-भरमें वह समझ गया, पृथिवीपर इतनी बड़ी सौन्दर्य-सम्पदा उसने पहले कभी देखी ही नहीं। पर्वतमाला अर्द्धचन्द्राकार होकर मानो पीछे और सामनेका रास्ता रोके खड़ी है। उसके ऊपर सर्वत्र-व्याप्त घना जंगल है और गगन-स्पर्शी विपुलकाय वृक्षोंकी पंक्ति उसके सुविस्तीर्ण पाद-मूलको घेरे खड़ी है। शायद अभी हाल ही सूर्योदय हुआ है,—बाईं तरफके शिखरको लाँघकर रथ आकाशमें अभी तक दिखाई नहीं दिया, परन्तु, अग्रवर्ती किरणच्छटाने

ऊपरके नील अरण्यपर सोना-सा पोत दिया है जो उसके आनेका संवाद चारों ओर दे रहा है। नालेमें शिखरसे निकली जलधारा वह रही है, वनकी छायाके नीचे उसका शान्त प्रवाह अश्रु-रेखाकी तरह सकरुण हो उठा है। अपूर्व मुग्ध हो गया। कैसा आश्चर्यजनक सुन्दर देश है! यहाँ जो लोग युग-युगान्तरसे रहते आ रहे हैं उनके सौभाग्यकी क्या कोई सीमा है? परन्तु चूँकि सीमा न होनेसे सिर्फ एक अनिर्दिष्ट आनन्दका आभास मात्र पाकर मानव-हृदय पूर्ण तृप्ति नहीं मान सकता, इसीलिए वह इसको मूर्ति देकर,—रूप देकर मन ही मन हजारों प्रकारके रस और रंगसे पल्लवित करके कोसपर कोस पार करने लगा। इस तरह उसका भावुक चित्त जब भीतर-बाहरसे आच्छन्न और अभिभूत हो रहा था, तब वह सहसा मानो एक कठोर धक्केसे चौंक पड़ा, देखा कि उसकी कल्पनाके रथ-चक्रको मेदिनी ग्रास कर रही है। उसे रामदास तलवरकरकी बातें याद आगई। यहाँ आनेके बादसे वह ब्रह्मदेशकी अनेक गुप्त और व्यक्त कहानियाँ संग्रह कर रहा था और इसी प्रसंगमें वह एक दिन कह रहा था, "बाबूजी, सिर्फ शोभा-सौन्दर्य ही नहीं, प्रकृति माताकी दी हुई इतनी बड़ी सम्पदा भी बहुत कम देशोंमें है। इसके जंगल और अरण्योंकी कोई सीमा नहीं,—जमीनके अन्दर यहाँ न निबटनेवाले तेलके स्रोत हैं, यहाँकी महामूल्य रत्नोंकी खानोंका अभी मूल्य नहीं आँका गया; और वह जो आकाशचुम्बी महाद्रुमोंकी पंक्ति है, दुनियामें उसकी तुलना कहाँ है? यह ज्यादा दिनकी बात नहीं, समाचार पाते ही एक दिन अँगरेज वणिकोंकी लुब्ध दृष्टि इसपर ऐसी पड़ी कि जहाँकी तहाँ अटकी रह गई! उसका अनिवार्य परिणाम अत्यंत संक्षिप्त और सीधा है। झगड़ा खड़ा हुआ, मनुआरी जहाज आये, बन्दूकें-तोपें आईं, सेना आई, लड़ाई हुई, युद्धमें हारकर कमजोर अक्षम राजा निर्वासित हुए और उनकी रानियोंके बदनके गहने बेचकर लड़ाईका खर्च पूरा किया गया। उसके बाद, देश और देशवासियोंके हितके लिए, मानवताके उद्धारके लिए, सभ्यता और न्याय-धर्मकी प्रतिष्ठाके लिए अँगरेज राजशक्ति विजित देशका शासन-भार ग्रहण करके मन-वचन-कायसे उसका भला करने लगी!" इसीसे तो आज यहाँ सतर्कताकी हद नहीं, इसीसे तो विजित देशका पुलिस-कर्मचारी अपने ही जैसे एक दूसरे पराधीन देशके निरीह व्यक्तिकी बार बार नींद छुड़ाकर निःसंकोच भावसे कह सका कि तुम तो साहब नहीं हो जो तुम्हारा अपमान करनेमें कोई खटका हो? अपूर्व मन ही मन कहने लगा:

ठीक है ! ठीक है ! इससे ज्यादा मुझसे वह और कह ही क्या सकता था ? और इससे ज्यादा मैं उससे उम्मीद ही क्या कर सकता था ?

अरण्य-शिखरपर फैली हुई प्रभात-सूर्यकी कनक-प्रभा अब तक ज्योंकी त्यों विद्यमान् थी, पर उसकी आँखोंको वह अत्यन्त म्लान और कान्तिहीन मालूम होने लगी : समुन्नत पर्वतमाला उसके निकट साधारण और वृक्ष-समूहकी जिस विपुलताको देखकर वह क्षण-एक पहले विस्मय-मुग्ध हो गया था, वही उसकी दृष्टिमें अब अत्यन्त साधारण और विशेषता-शून्य मालूम होने लगी। अपनी नदी-मातृक शस्य-शामल जन्मभूमिकी याद करके उसकी आँखोंमें आँसू भर गये। उसका प्रवास-पीड़ित चित्त छातीके भीतर मानो आर्त्तनाद करके बार बार कहने लगा : ओ अभागे देशके शक्तिहीन आदमियो ! इस अशेष ऐश्वर्यशालिनी जन्मभूमिपर तुम लोगोंका दावा किस बातका है ? जिसका भार, जिसका गौरव तुम लोग सम्हाल नहीं सकते, उसपर तुम्हारा यह व्यर्थका लोभ किस लिए ? स्वाधीनताका जन्मगत अधिकार है सिर्फ मनुष्यत्वको, केवल मनुष्यको नहीं, इस बातको कौन अस्वीकार करेगा ? भगवान् भी तो इसे छीन नहीं सकते ! तुम लोग अपने इन क्षुद्र और तुच्छ हाथ-पैरोंको ही तो मनुष्य समझे हुए बैठे हो ? गलत है गलत; इससे बढ़कर आत्म-घाती गलती और कोई हो ही नहीं सकती।—इसी तरह न मालूम क्या क्या वह अपने ही आपको कहता रहा और कितना समय बीत गया, कुछ पता नहीं। अकस्मात् गाड़ीकी रफ्तार घट जानेसे उसे होश आया। झटपट आँखें पोंछकर उसने बाहरकी ओर जो देखा : गाड़ी स्टेशनमें घुस रही है।

८

बचपनहीसे लड़कियोंके प्रति अपूर्वकी श्रद्धा न थी; बल्कि, एक तरहकी कुछ नफरत-सी थी। भाभियाँ उससे मजाककी कोई बात कह देतीं तो वह नाराज हो जाता और घनिष्ठता जोड़ने आतीं तो अलग हट जाता। माके सिवा और किसीकी भी सेवा या लाड़-प्यार उसे अच्छा ही नहीं लगता था। यदि किसी लड़कीको कालेजमें एक्जामिनेशन पास करते सुनता तो उसे खुशी नहीं होती, और जब कभी अखबारोंमें यह पढ़ लेता कि विलायतमें लोग कमर बाँधकर स्त्रियोंके राजनीतिक अधिकारके लिए लड़ रहे हैं तो उसका सारा बदन

गया। सुना कि दामादोंमेंसे एक मद्रासी चूलिया मुसलमान है, एक चट-गाँवका पोर्तुगीज है, एक ऐंग्लो-इंडियन साहब है और सबसे छोटे दामाद साहब चीनदेशके हैं जो कई पीढ़ियोंसे इसी शहरमें रहते और चमड़ेका रोज़गार करते हैं। इस तरह संसार-भरकी जातियोंका ससुर होनेका गौरव अन्यत्र दुर्लभ होनेपर भी यहाँ अत्यन्त सुलभ है। और मजा यह कि प्रत्येक सम्बन्धके बारेमें पिता बेचारेने डरते डरते प्रतिवाद किया था, पर लड़कियोंकी अप्रतिहत स्वाधीनताने उसपर ध्यान तो दूर रहा, कान तक नहीं दिया। एक एक लड़की घर लौटती आई,—और उनके साथमें आते गये ये विचित्र दामाद-पुंगव। उनकी भाषा अलग, भाव अलग, धर्म अलग, मिजाज अलग,—शिक्षा, संस्कार सब अलग अलग,—किसीके साथ किसीका मेल नहीं। ब्रह्मदेशमें भारतके 'हिन्दू-मुसलमान' प्रश्नकी तरह, धीरे धीरे यह जो एक कठिन समस्या खड़ी होती जा रही है, इसका समाधान आखिर कैसे होगा!

क्षोभ, दुःख, क्रोध और विरक्तिसे वह मन ही मन उफनने लगा, और लड़कियोंकी सामाजिक स्वाधीनताको सौ सौ बार बुरा कहने लगा: ऐसा हो ही नहीं सकता, ऐसा हरगिज नहीं होना चाहिए। बर्मा नष्ट हो रहा है, योरोप रसातलको जा रहा है और यदि यह उधार ली हुई सभ्यता हमारे देशमें चल पड़ी तो हम भी समूल नष्ट हो जायँगे,—मर जायँगे। हमारे समाजको जिन्होंने गढ़ा था, नारीको वे पहचानते थे; इसीसे वे इतनी सावधानीके साथ विधि-निषेध बना गये हैं। ये कठोर भले ही हों, पर कल्याणसे पूर्ण हैं। इस बुरे जमानेमें अगर हम इन्हें बिना किसी संशयके ठीक तौरसे थामे न रह सके, तो हमारी मौत निश्चित है, हमें कोई नहीं बचा सकता। इसी तरहकी कितनी ही बातें वह एकान्त अन्धेरेमें बैठा हुआ अपने मन ही मन कहता चला गया। मगर हाय, यह सीधी-सी बात उसके मनमें एक बार भी उदित न हुई कि जिस मुक्ति मंत्रको उसने इस जीवनका एकमात्र व्रत समझा है और जिसे वह मन-वचन-कायसे ग्रहण करना चाहता है, उसीकी ही एक दूसरी मूर्तिको दोनों हाथोंसे ढकेलकर मुक्तिके सत्य देवताको ही असम्मानके साथ दूर किये दे रहा है। मुक्ति क्या इतनी छोटी जरा-सी चीज है? उसे क्या तुम आरामसे नहानेका हौज़ समझ बैठे हो? नहीं, वह समुद्र है। उसमें भय तो है ही,—उत्ताल तरंगें तो उसमें होंगी ही और मगर मच्छ आदि भी होंगे, नावें वहीं डूबती

हैं,— फिर भी वहीं जगतके प्राण है,—उसीमें है संपूर्ण शक्ति, समस्त सम्पदा और सम्पूर्ण सार्थकता। निरापद तालाबके भरोसे सिर्फ प्राण धारण किया जा सकता है,—जीवित नहीं रहा जा सकता

"बाबूजी, आपका खाना तैयार है।"

अपूर्वने चौंककर कहा, "रामशरण, एक बत्ती ले आ। कल सबेरेकी गाड़ीसे ही हम लोग मिकथिला चलेंगे। मैनेजरको खबर भेज दे।"

अरदलीने कहा, "लेकिन, आपने तो परसों जानेको कहा था?"

"नहीं, परसों नहीं, कल ही,—एक बत्ती ले आ।"—कहकर अपूर्वने इस बातको यहीं खत्म कर दिया। उसका मन लड़कियोंकी स्वाधीनताकी यह नई दिशा देखकर उद्भ्रान्त हो उठा था; परन्तु इसकी और भी जो एक दिशा है, जिसका रंग और प्रकाश सारे आकाशको उद्भासित कर दे सकता है, उसकी वह कल्पना भी न कर सका।

दूसरे दिन यथासमय वह मिकथिलाके लिए रवाना हो गया। पर वहाँ उसका मन न लगा। वहाँ देशी और विलायती पल्टनकी छावनी है,—मजेका खासा शहर है। नये आदमीके लिए देखने लायक वहाँ काफी चीजें हैं, पर उसे कुछ भी अच्छा न लगा। मन उसका बार बार रंगूनके लिए छटपटाने लगा। भामोमें उसे रिडायरेक्ट किया हुआ माका एक पत्र मिल गया था, रामदासने भी दो चिट्ठियाँ दी थीं,—करीब दस-बारह दिन हो गये। रामदासने लिखा था कि उसके वापस आनेतक घर बदलनेकी कोई जरूरत नहीं आर वह खुद जाकर देख-भाल आया है, तिवारी अच्छी तरह शान्तिसे रह रहा है। पर इधर दस-बारह दिनसे कोई खबर नहीं मिली कि वह कैसे है, उसकी 'अच्छी तरह' और 'शान्ति' कायम है या नहीं। सम्भवतः सब ठीक ही होगा, कोई गड़बड़ी नहीं हुई होगी, मगर फिर भी सहसा एक दिन भामोकी तरह ही चीज-वस्त बँधवाई और स्टेशनके लिए गाड़ी बुलानेका हुक्म दे दिया। इस स्थानको याद रखने लायक कोई विशेष घटना नहीं हुई,—थोड़े-बहुत काम-धन्धेमें विशेषता कुछ थी नहीं; परन्तु मिकथिला छोड़नेके लगभग पंद्रह मिनट पहले स्टेशनपर आकर एक ऐसी बात हो गई, जो फिलहाल साधारण और मामूली होनेपर भी, भविष्यमें बहुत दिनोंतक उसे याद रखनी पड़ी: एक मतवाले बंगालीको

रेलके आदमियोंने गाड़ीसे उतार दिया है: मैला-कुचैला फटा हुआ हैट और कोट-पटलून पहने है: साथमें सिर्फ एक टूटा हुआ बेहालेका बॉक्स है: न तो बिस्तर है, और न कुछ और सामान। टिकटके दामोंसे उसने शराब पी ली है, और यही उसका कुसूर है। बंगाली है, पुलिस पकड़े लिये जा रही थी,—अपूर्वने उसका किराया चुका दिया, और भी पाँच रुपये उसके हाथमें देकर वह जल्दीसे चला आना चाहता था, पर सहसा उस शराबीने हाथ जोड़कर कहा, "महाशय, मेरा यह बेहाला आप लेते जाइए। इसे बेचकर अपने रुपये काटकर बाकी दाम मुझे वापस कर दीजिएगा।" उसके कंठमें जड़ता थी, फिर भी यह साफ समझमें आता था कि वह होशमें बात कर रहा है।

अपूर्वने कहा, "कहाँ वापस कर दूँगा?"

उसने कहा, "आप अपना पता लिखा दीजिए, मैं आपको चिट्ठीसे खबर दे दूँगा।"

अपूर्वने कहा, "तुम अपना बेहाला अपने ही पास रक्खो भइया, यह मेरे बूते नहीं बिक सकेगा। मेरा नाम अपूर्व हालदार है, रंगूनकी बोथा कम्पनीमें काम करता हूँ, अगर कभी तुम्हें सहूलियत हो तो रुपये भेज देना।"

उसने गर्दन हिलाकर कहा, "अच्छा महाशयजी, नमस्कार!—मैं जरूर भेज दूँगा। निकलनेका रास्ता यही है न? बहुत बड़ा शहर है न? शायद यहाँ सभी चीजें मिलती होंगी। वास्तवमें महाशयजी, मैं आपको कभी भूल नहीं सकता।" इतना कहकर उसने फिर एक बार नमस्कार किया और वह बेहालेका बॉक्स बगलमें दबाकर चल दिया। अपूर्वने उसका चेहरा अबकी बार गौरसे देखा। उम्र ज्यादा नहीं है; पर ठीक कितनी है, बताना कठिन है। शायद तरह तरहके नशोंके माहात्म्यने दस सालका व्यवधान मिटा दिया है। चेहरा गोरा है, पर घामसे जलकर ताँबे-सा हो गया है। सिरके रूखे लम्बे बाल कपारतक लटक रहे हैं, आँखोंकी दृष्टि बहती हुई-सी, नाक तलवारकी तरह खड़ी और नुकीली, शरीर छरहरा, हाथकी उँगलियाँ लम्बी और पतलीं-पतलीं—सारे शरीरपर मानो भूख और अत्याचारके चिह्न अंकित हैं। उसके चले जानेपर अपूर्वको एक तरहका दुःख-सा होने लगा। उसे ज्यादा रुपये देना व्यर्थ है,—यहाँ तक कि अन्याय भी, यह बात वह समझ गया था; पर और कोई उपकार करना अगर सम्भव होता! मगर इस विषयकी

चिन्ता करनेको ज्यादा समय नहीं था, उसे टिकट खरीदकर गाड़ीके लिए तैयार हो जाना पड़ा।

दूसरे दिन जब वह रंगून पहुँचा, तब दिनके करीब बारह बजे थे। जैसी कड़ी धूप थी, वैसी ही उमसकी गरमी। उसपर आफत यह कि जल्दी और असावधानीमें उसके खाने पीनेका कटोरदान मुसलमान कुलीने छू दिया था। नहाना नहीं, खाना नहीं,–मारे भूख प्यास और थकावटके उसकी देह गिरी पड़ती थी।—किसी कदर घर जाकर नहा-धोकर सो रहता तो जान बचती। घोड़ा-गाड़ी लाने और उसपर सामान लादकर घर पहुँचनेमें दसेक मिनट और भी लग गये। पर ऊपरकी ओर देखकर उसके क्रोधकी सीमा न रही। तिवारीको कोई परवाह ही नहीं, सड़ककी तरफके किवाड़ तक नहीं खोले हैं। गाड़ीकी आवाज सुनकर एक बार उतर कर आया भी नहीं! जल्दी जल्दी ऊपर जाकर दरवाजेपर जोरका धक्का मारकर पुकारने लगा, "तिवारी! ओ तिवारी!" थोड़ी देर बाद आहिस्तेसे, अत्यन्त सावधानीके साथ किसीने किवाड़ खोल दिये।

क्रुद्ध अपूर्व घरमें पैर रखना ही चाहता था कि मारे आश्चर्यके वह अवाक् और हतबुद्धि हो गया। सामने भारती खड़ी थी। उसकी यह कैसी मूर्ति है! पाँवमें जूते नहीं, एक काले रंगकी साड़ी पहने हुए, बाल सूखे-रूखे बिखरे हुए, और चेहरेपर शान्त गम्भीर विषादकी छाया। जैसे कोई बहुत दूरका यात्री धूपसे जलकर, पानीसे भीगा, अनाहार और अनिद्रामें रात-दिन चलता ही चला आ रहा हो और जो किसी भी क्षण रास्तेमें पड़कर मर सकता हो! उसपर कोई कहीं गुस्सा हो सकता है, अपूर्व इस बातकी कल्पना ही नहीं कर सका। भारतीने मस्तक नवाकर आहिस्तेसे कहा, "आप आ गये,—अब तिवारी बच जायगा!"

मारे डरके अपूर्वका स्वर विकृत हो गया, बोला, "क्या हुआ उसे?"

भारतीने उसी तरह मृदु कंठसे कहा, "इधर बहुतोंको चेचक हो रही है, उसके भी हुई है। मगर आप अभी इतने परिश्रमके बाद इस कमरेमें नहीं घुस सकते। ऊपरके कमरेमें चलिए, वहाँ नहा-धोकर जरा आराम करके नीचे आइएगा। इसके सिवा वह सो रहा है, जगनेपर मैं आपको खबर कर दूँगी।"

अपूर्वने आश्चर्यके साथ कहा "ऊपरके कमरेमें?"

भारतीने कहा, "हाँ। ऊपरका कमरा अभी मेरे ही जिम्मे है, पर मैं खाली कर चुकी हूँ। बिलकुल साफ-सुथरा पड़ा है, नलमें पानी है, और कोई है नहीं,

आपको तकलीफ न होगी, चलिए। लेकिन आपके साथके आदमी कहाँ हैं ? असबाब ऊपरके कमरेमें ही ले आवें।"

"उन्हें तो मैंने स्टेशनसे ही छोड़ दिया है। वे भी तो मेरी ही तरह थके हुए थे।"

भारतीने कहा, "सो तो ठीक है, पर इस समय क्या कुली मिल जायँगे ? अच्छा, देखूँ।"

"आपको देखनेकी जरूरत नहीं, मैं जाता हूँ। दो चार चीजें हैं, सो मैं खुद ही ले आ सकता हूँ।" यह कहकर वह नीचे जा रहा था कि गाड़ीवानने ऊपरको मुँह करके भाड़ा माँगा। भारतीने उसे इशारेसे ऊपर बुलाकर कहा, "अभी तो आदमी मिलेंगे नहीं, तुम अगर जरा तकलीफ करके सब सामान ऊपर पहुँचा दो, तो तुम्हें पैसे दे दिये जायँगे।"

उसकी मीठी जबानसे खुश होकर गाड़ीवान सामान ऊपर पहुँचा गया।

सामान आ जानेपर भारतीने सड़ककी तरफके कमरेमें अपने हाथसे अच्छी तरह बिस्तर बिछा दिये। बोली, "अब आप नहा आइए।"

अपूर्वने जिद नहीं की। कुछ देर बाद जब वह नहा-धोकर आया तो भारतीने जरा हँसकर कहा, "आप अपना यह गिलास उठा लीजिए, खिड़कीके ऊपर कागजमें वह चीनी रक्खी है, लेकर मेरे साथ नलके पास चलिए। कैसे शरबत बनाया जाता है, मैं सिखा दूँ, चलिए।"

ज्यादा कहनेकी जरूरत नहीं थी, प्यासके मारे उसकी छाती फटी जा रही थी, वह इशारेके माफिक शरबत बनाकर पी गया; और खुद ही बोला, "जरा नीबूका रस होता तो अच्छा रहता।"

भारतीने कहा, "आपको अभी मुझे और भी जरा कष्ट देना होगा।" और यह कहकर वह उसके चेहरेकी तरफ देखने लगी।

अपूर्वको चोरीके दिनकी उसकी बातचीत और काम-काजके ढंगकी याद आ गई जिससे उसकी भी बातें मानो कुछ स्वाभाविक-सी हो गईं; उसने पूछा, "कैसा कष्ट ?"

भारतीने कहा, "नीचेसे मैंने कोयले लाकर रख दिये हैं, तार पाकर सामनेके मकानके उड़िया लड़केको बुलाकर उससे आपकी सिगड़ी मँजवा-धुलवाकर तैयार रखवा दी है। चावल हैं, दाल है, आलू, परवल, घी, नमक,

तेल, सब मौजूद है,—पीतलकी बटलोई लाये देती हूँ, आप जरा उसे पानीसे धोकर चूल्हेपर चढ़ा दीजिए।" इतना कहकर वह अपूर्वके चेहरेकी तरफ देखकर उसके मनके भावका अन्दाजा लगाकर बोली, "सच कहती हूँ, कोई मुश्किल काम नहीं है। मैं सब बताती जाऊँगी, आप सिर्फ चढ़ाइएगा और उतार लीजिएगा। आज-भरके लिए इतनी तकलीफ कीजिए, कलसे दूसरा इन्तजाम हो जायगा।"

उसके कंठ-स्वरकी तीव्र व्याकुलताने अपूर्वको मानो एक धक्का-सा मारा। उसने कुछ देर मौन रहकर पूछा, "लेकिन आपके खानेका इन्तजाम कैसे होता है? घर कब जाया करती हैं?"

भारतीने कहा, "घर नहीं भी गई तो क्या, हम लोगोंको खानेकी क्या फिक्र?"—इतना कहकर उसने बात उड़ा दी, और जरूरी सामान लेने जल्दीसे नीचे उतर गई।

कुछ देर बाद अपूर्व जब रसोई बनाने बैठा, तो वह चौखटके बाहर खड़ी होकर बोली, "यहाँ खड़े होनेमें कोई दोष नहीं, इतना तो जानते हैं न?"

अपूर्वने कहा, "जानता हूँ; क्यों कि यदि होता तो आप खड़ी नहीं होतीं।"

जिन्दगीमें वह आज ही पहले पहल रसोई करने बैठा है। उसके अपटु हाथोंकी हजारों त्रुटियोंसे बीच-बीचमें भारतीका धीरज छूटने लगा; और अन्तमें जब उसने बनी हुई दाल उँड़ेलते हुए कटोरेके बाहर सब जगह बहा दी, तब तो उससे सहा नहीं गया। वह गुस्सेमें आकर सहसा कह बैठी, "अच्छा, आप जैसे निकम्मे आदमियोंको क्या भगवानने हम लोगोंको परेशान करनेके लिए ही पैदा किया है! अब खायँगे किस चीज़से, बताइए तो?"

अपूर्व खुद ही शर्मिन्दा हो रहा था, बोला, "दाल बटलोईके इधरसे न गिरकर उधरसे गिर जायगी, यह मैं कैसे जान सकता हूँ बताइए? अच्छा, ऊपर-ऊपरसे थोड़ी-सी उठा लूँ तो?"

भारती हँस दी, बोली, "जरूर! नहीं तो आपका आचार-विचार कैसे चलेगा! चलिए उठिए, पानीसे इसे धो-धाकर साफ कर डालिए और आलू-परवल तेल-पानीमें उबाल लीजिए। पिसा हुआ मसाला उस शीशीमें रक्खा है, नमक डालते वक्त मैं अन्दाजा बता दूँगी,—तरकारीके नामसे इसीको आज खाना

पड़ेगा। भातका माड़ तो भातहीमें है, खानेमें बुरा नहीं लगेगा। आह ! खड़े-खड़े आपकी रसोई देखनेकी अपेक्षा तो नरक भुगतना अच्छा। "

इसके डेढ़-एक घंटे बाद अपूर्व जब खा-पी चुका, तब उसने कृतज्ञताके आवेगको दबाते हुए शान्त मृद कंठसे कहा, "आपको क्या कहा करूँ, समझमें नहीं आता; खैर अब आप घर जाइए। अब तो मैं भी देख-भाल कर सकता हूँ,—आपको शायद इतनी तकलीफ न उठानी पड़ेगी।"

भारती चुप रही। अपूर्व खुद भी कुछ देर मौन रहकर कहने लगा, "पर बात क्या है, आप जरा खुलासा करके बताइए। इधर और भी लोगोंको चेचक हो रही है, तिवारीको भी हुई है,—यहाँ तक तो सीधी बात है। मगर इस मकानसे आप लोगोंका चला जाना, और फिर इस निर्बान्धव देशमें और उससे भी बढ़कर इस बन्धुहीन नगरीमें आपका अकेले ही यहाँ प्राण देने रह जाना, यह तो समझमें नहीं आता। जोज़फ साहबने क्या कुछ आपत्ति नहीं की ?"

भारतीने कहा, "वे जिन्दे नहीं हैं, अस्पतालमें ही मर गये।"

"मर गये ?"—अपूर्व बहुत देरतक स्थिर होकर बैठा रहा, फिर बोला "आपके काले कपड़े देखकर मुझे ऐसी ही किसी भयंकर दुर्घटनाकी आ-शंकाका अनुमान कर लेना चाहिए था।"

भारतीने कहा, "उससे भी बड़ी एक और दुर्घटना हो गई, अचानक माके प्राण निकल गये—"

"मा भी मर गई ?"—अपूर्व सन्न जड़वत् बैठाका बैठ रह गया। अपनी मॉकी याद करके उसके छातीके भीतर न जाने कैसा होने लगा। ऐसा उसने पहले कभी अनुभव नहीं किया। भारती खुद भी खिड़कीके बाहरकी तरफ दो-तीन मिनट तक चुपचाप देखती रही, और किसी कदर अपने आँसू रोके रही। मुँह फेरकर जो उसने अपूर्वकी तरफ देखा, तो देखती है कि अपूर्व आँखोंमें आँसू भरे एकदम उसकी तरफ देख रहा है। तब उसे फिर खिड़कीके बाहरकी तरफ निगाह करके चुपचाप बैठा रहना पड़ा, किसीके भी सामने आँसू बहाते उसे शर्म आती थी। पर अपनेको शान्त कर लेनेमें भी उसे देर न लगती थी। दो-तीन मिनट बाद उसने धीरेसे कहा, "तिवारी बहुत अच्छा आदमी है। मेरी मा बहुत दिनोंसे बीमार पड़ी थीं; किसी भी वक्त उनके प्राण निकल सकते हैं, यह बात हम सबको मालूम थी। उस समय तिवारीने

इन लोगोंकी बहुत मदद की। मेरे यहाँसे चले जाते वक्त वह रोने लगा था, पर इतना किराया मैं कहाँसे देती?"

अपूर्व चुपचाप सुनने लगा। भारती सहसा कह उठी, "आपका चोर पकड़ा गया है,— रुपये, बटन, थानेमें जमा हैं,—आपको मालूम है?"

"नहीं तो!"

"हाँ हाँ, पकड़ा गया है। तिवारीको जो तमाशा दिखाने ले गया था, उसीके आदमी थे सब। और भी कई जगह चोरी की थी;—अन्तमें बँटवारा होते होते आपसमें लड़ाई हो गई और एकने सब भण्डा-फोड़ कर दिया। किसी चेट्टीकी दूकानपर सब कुछ जमा था, पुलिस सब उठा लाई है। मैं भी एक गवाह हूँ,—पुलिस मेरे यहाँ, तदारुकके लिए पहुँची थी,—यही खबर तो देने आई थी यहाँ, पर देखा तो तिवारीका यह हाल है! कब मुकद्मेकी तारीख पड़ी है, मालूम नहीं, पर सब वापस मिल जायगा ऐसा सुना है।"

ये अन्तिम शब्द वह न कहती तो अच्छा था, कारण मारे शर्मके अपूर्वका चेहरा ही सिर्फ सुर्ख नहीं हुआ, बल्कि इस मामलेमें अपने उन व्यक्त और अव्यक्त इंगितोंकी याद करके भी उसके रोएँ खड़े हो गये जो उसने चोरी होनेके दिन किये थे। परन्तु भारतीने उस तरफ ध्यान नहीं दिया। कहने लगी, "भीतरसे दरवाजा बन्द था, बहुत पुकारनेपर भी किसीने जवाब नहीं दिया। ऊपरके कमरेकी चाबी मेरे पास थी, खोल कर मैं भीतर गई। ऊपर फर्शमें एक जगह एक छेद है," कहते हुए शर्मके मारे उसे जो हँसी-सी आगई, उसे छिपाते हुए उसने कहा, "उसमेंसे आपके घरका सब दिखाई देता है। देखा: खिड़कियाँ भी सब बन्द, अँधेरेमें कोई आदमी ऊपरसे नीचे तक कुछ ओढ़े पड़ा है। तिवारी-सा ही मालूम हुआ। उस छेदमेंसे चिल्लाकर सौ सौ बार पुकारा तब कहीं बीसेक मिनट बाद, तिवारीने घुटनोंके बल चलकर बड़ी मुश्किलसे दरवाजा खोला। उसका चेहरा देखकर फिर कुछ पूछनेको रहा नहीं। तीन-चार दिन पहले सामनेके मकानसे नीचेकी कोठरियोंमें रहनेवाले तेलगू कुलियोंको इसी चेचककी वजहसे पुलिस अस्पताल ले गई थी,—उनका रोना-बिलखना तिवारीने अपनी आँखोंसे देखा था,—भीतर पहुँचते ही वह मेरे पैरों पड़कर फूट-फूटकर रोने लगा और कहने लगा, 'माजी, मुझको प्लेग-अस्पतालमें मत भिजवाइएगा, नहीं तो मैं बचूँगा नहीं।' बात बिलकुल झूठी नहीं थी, क्योंकि वहाँसे लौटते तो किसीको देखा

नहीं। उसी डरसे वह किवाड़ खिड़की झड़की सब बन्द किये चुपचाप पड़ा था, कहीं मुहल्लेमें किसीको मालूम पड़ जाय तो उसका बचना मुश्किल हो जाय!"

अपूर्व स्वप्न-मुग्धकी तरह उसके चेहरेकी तरफ देख रहा था, बोला, "और तबसे आप रात-दिन यहाँ अकेली पड़ी हुई हैं!—मुझे खबर ही कर दी होती! मेरे आफिसके तलवरकर बाबूको तो आप जानती हैं, उन्हें क्यों नहीं खबर भिजवा दी?"

भारतीने कहा, "कौन जाता? आदमी कहाँ था? सोचती थी कि शायद वे स्वयं खबर लेने आवेंगे, मगर नहीं आये। और वे जानते ही कैसे कि ऐसी आफत आ पड़ी है? इसके सिवा चारों तरफ खबर फैल जानेका भी डर था।"

"सो तो ठीक है," कहकर अपूर्व एक गहरी साँस लेकर स्तब्ध होकर बैठा रहा। बहुत देर बाद बोला, "आपका अपना चेहरा कैसा हो गया है, देखा है?"

भारती जरा हँसी, बोली, "यानी इससे पहले बहुत अच्छा था?"

अपूर्वको सहसा इसका कुछ जवाब नहीं सूझा, परन्तु उसकी दोनों आँखोंकी मुग्ध दृष्टिने श्रद्धा और कृतज्ञताके गंगा-जलसे मानो उस तरुणीके सर्वाङ्गकी संपूर्ण ग्लानि, संपूर्ण क्लान्ति धोकर साफ कर देनी चाही। बहुत देर बाद बोला, "आदमी जो कर नहीं सकता, सो आपने किया; लेकिन अब आपको छुट्टी है। तिवारी सिर्फ नौकर ही नहीं मेरा मित्र भी है,—अपना आदमी है,—उसकी गोदमें खेलकर ही मैं इतना बड़ा हुआ हूँ। अब उसकी तीमारदारी मैं ही करूँगा,—उसके लिए मैं आपको कष्ट नहीं दे सकता। अभी तक आपका नहाना-खाना नहीं हुआ है, आप घर जाइए। आपका घर क्या यहाँसे बहुत दूर है?"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, "अच्छी बात है। घर मेरा तेलके कारखानेके पास है, नदीके किनारे। मैं कल फिर आऊँगी।"

दोनों नीचे उतर आये और ताला खोलकर कमरेमें दाखिल हुए। तिवारी कुछ बोलता-चालता नहीं, नींद खुल जानेपर भी वह प्रायः बेहोश-सा पड़ा रहता है। अपूर्व जाकर उसके बिस्तरके पास बैठ गया और भारती दो-चार गन्दे बरतन, जो अब तक माँज-धोकर रक्खे नहीं गये थे, उठाकर नलवाले घरमें चली गई। उसकी इच्छा थी कि जानेके पहले वह रोगीके बारेमें कुछ खास जरूरी बातें बताकर इस खतरनाक रोगसे अपनेको बचाये रखनेकी आवश्यकता

अपूर्वको स्मरण दिलाती जाय। हाथका काम खत्म करके वह इन्हीं बातोंको मन ही मन दुहराती हुई वापस आकर देखती है तो अपूर्व बेहोश तिवारीके विकृत चेहरेकी तरफ एकटक देखता हुआ पत्थरकी मूर्ति-सा बना बैठा है और उसका चेहरा बिलकुल फक पड़ गया है। चेचककी बीमारी शायद उसने अपने जीवनमें कभी देखी नहीं, उसकी भीषणता उसकी कल्पनाके परे है। भारतीके पास जाकर खड़े होनेपर उसने मुँह उठाकर देखा। उसकी आँखें भर आई, और उन्हीं आँखों, बगैर पलक मारे, बिलकुल बच्चे जैसे व्याकुल कंठसे वह कह उठा, "मैं नहीं कर सकूँगा!"

९

भारतीने क्षण-भर मौन रहकर सिर्फ इतना कहा, "तीमारदारी नहीं कर सकेंगे, तब फिर?"

उसके स्वरमें कुछ विस्मयके आभासके सिवा और कुछ न था; पर यह क्या जवाब हुआ? उसने क्या उससे इतनी ही आशा की थी? सहसा मानो मार खाकर अपूर्वकी तन्द्रा दूर हो गई।

भारतीने कहा, "तो खबर देकर उसे अस्पताल ही भिजवा दिया जाय।" उसकी बातमें न तो कोई श्लेष था और न तीखापन; पर मारे शर्मके अपूर्वका सिर नीचा हो गया। शर्म उसे सिर्फ अपने कुछ न कर सकनेके लिए नहीं थी—जो कर सकेगी उसीको कर सकनेके लिए कहनेका जो उसका छिपा हुआ इशारा और उसमें भी छिपा हुआ जो दावा था, वह जब भारतीकी शान्त अस्वीकृतिसे कठोर तिरस्कारके रूपमें लौटकर उसपर पड़ा, तब सिर नीचा करके अत्यन्त पश्चात्तापके साथ उसे और एक बार मानना पड़ा कि इस लड़कीको वास्तवमें वह पहचान ही नहीं सका। दुःख या दुश्चिन्ता कुछ नहीं थी,—बात सिर्फ इतनी-सी ही थी कि जो कितनी ही दीप-मालायें और कितनी ही बत्तियाँ जल रही थीं, मानो किसीने एक फूँकसे एक साथ उन सबको बुझाकर असमात नाटकके बीचमें जवनिका डाल दी। फिर उस घोर अन्धकारमें रह गया वह खुद और उसका अपरित्याज्य मरणोन्मुख अचेतन तिवारी।

भारतीने कहा, "दिन रहते ही कुछ कर लेना चाहिए। कहिए तो मैं घर जाते वक्त अस्पतालको टेलिफोन करती जाऊँ, गाड़ी आकर इसे ले जायगी।"

अपूर्वने अपने आच्छन्न भावको जबर्दस्ती दूर कर मुँह उठाकर पूछा, "मगर आप ही तो कह रही थीं कि वहाँ जानेसे कोई बचता नहीं ?"

भारतीने कहा, "कोई बचता ही नहीं, ऐसा तो नहीं कहा ?"

अपूर्वने अत्यन्त म्लान मुखसे कहा, "ज्यादातर तो मर ही जाते हैं ?"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, सो तो मर ही जाते हैं। इसीलिए होश रहते कोई वहाँ जाना नहीं चाहता।"

अपूर्व कुछ देर तक चुप बैठा रहा, फिर उसने पूछा, "अच्छा, तिवारीको क्या कुछ भी होश नहीं है ?"

भारतीने कहा, "कुछ है क्यों नहीं ! हर वक्त होश न रहनेपर भी, कभी कभी तो आ ही जाता है।"

इतनेमें तिवारी सहसा एक प्रकारका आर्त्तनाद कर उठा, उससे अपूर्व ऐसा चौंका कि भारतीने स्पष्ट देख लिया। उसने पास आकर रोगीके मुँहपर झुककर स्नेहके साथ पूछा, "क्या चाहिए तिवारी ?"

तिवारीने ओठ हिलाकर जो कुछ कहा, अपूर्व उसका कुछ भी अर्थ न समझ सका। परन्तु भारतीने सावधानीसे उसका करवट बदलकर लोटेसे थोड़ा-सा पानी पिला दिया और फिर उसके कानमें कहा, "तुम्हारे बाबू आ गये हैं !"

जवाबमें तिवारीने एक अव्यक्त ध्वनि की और दाहिना हाथ उठानेकी कोशिश की, मगर उठा न सका। दूसरे ही क्षण देखा गया कि उसकी आँखोंके किनारेसे आँसू निकल रहे हैं। अपूर्वकी आँखोंमें भी आँसू भर आये, धोतीके छोरसे उसने उन्हें झटपट पोंछ तो लिया, पर रोक न सका,—बार-बार उसकी भीगी आँखें जोरकी अश्रु-धारा बहानेकी कोशिश करने लगीं। दो-तीन मिनट तक किसीसे कुछ बोला नहीं गया। घर-भरमें दुःख और शोकके काले बादल-से छा गये।

पहले भारती ही बोली। जरा हटकर वह चुपके-से बोली, "क्या किया जाय, अस्पताल ही भेज दीजिए।"

अपूर्व अपनी आँखोंपरसे अबतक परदा नहीं हटा पाया, सिर हिलाकर बोला, "नहीं।"

भारतीने उसी तरह आहिस्तेसे कहा, "तो मैं अभी जाती हूँ। अगर वक्त मिला, तो एक बार आऊँगी।"

अब भी अपूर्व आँख नहीं खोल सका, सन्न होकर बैठा रहा। जानेके पहले भारतीने कहा, " सब कुछ है, सिर्फ मोमबत्ती निबट गई है,—मैं नीचेसे एक बण्डल खरीदकर दिये जाती हूँ।" यह कहकर वह धीरेसे किवाड़ खोलकर बाहर चली गई। कई मिनट बाद मोमबत्ती लेकर जब वह वापस आई, तब तक अपूर्वने अपनेको बहुत-कुछ सम्हाल लिया था। आँखें पोंछ डाली थीं, भीगे पलकोंके नीचे वे सुर्ख हो उठी थीं। भारतीके भीतर घुसते ही उसने दूसरी तरफ मुँह फेर लिया। हाथका बण्डल पास रखकर वह कुछ कहना चाहती थी; पर दूसरेने जब कि कुछ बात न करके मुँह फेर लिया तो वह भी बगैर कुछ बोले-चाले घर जानेके लिए तैयार हो गई। ज्यों ही उसने जानेके लिए किवाड़ खोले त्यों ही अपूर्व अकस्मात् पूछ उठा, " तिवारी अगर पानी माँगे तो ?"

भारती घूमकर खड़ी हो गई, बोली, " पानी पिला दीजिएगा।"

अपूर्वने कहा, " और अगर करवट लेना चाहे ?"

भारतीने कहा, " करवट बदल दीजिएगा।"

" कहना तो आसान है। और मैं सोऊँगा कहाँ, बताइए तो ?" अपूर्वके कंठ-स्वरका क्रोध छिपा न रहा, बोला " बिछौने तो मेरे ऊपर ही पड़े हैं!"

भारतीने क्या सोचा, उसके चेहरेसे नहीं मालूम हुआ। क्षण-भर स्थिर रहकर वैसे ही शान्त मृदु कंठसे उसने कहा, " और एक बिस्तर है तो सही आपकी खाटपर, उसपर आसानीसे सो सकते हैं।"

अपूर्वने कहा, " आप तो कहेंगी ही ऐसी बात! और मेरे खाने-पीनेका क्या इन्तजाम होगा ?"

भारती चुप रही। पर इस असंगत और बेढंगे प्रश्नसे उसकी गुप्त हँसीका आवेग इतना बढ़ गया कि उसके पलक काँपने लगे। बहुत देर बाद परम गम्भीरताके साथ उसने कहा, " आपके सोने और खाने-पीनेका भार क्या मेरे ऊपर है ?"

" मैं क्या यह कह रहा हूँ ?"

" यही तो आपने कहा। और सो भी अच्छी तरह नहीं, गुस्सेसे।"

अपूर्वको कुछ जवाब ढूढ़े न मिला। उसके मलिन और विपन्न मुखड़ेकी तरफ देखकर भारतीने धीरेसे कहा, " आपको कहना चाहिए था, कृपा करके मेरे लिए इन सबका इन्तजाम कर दीजिए।"

अपूर्वने किसी तरफ बिना देखे ही कहा, "यह कहनेमें ऐसी कौन-सी कठिनाई है?"

भारतीने कहा, "अच्छी बात है, कहिए।"

"सो ही तो कह रहा हूँ", कहकर अपूर्व मुँह भारी करके दूसरी तरफ देखने लगा।

भारतीने पूछा, "आपने कभी किसी बीमारीमें किसीकी सेवा-टहल की है?"

"नहीं।"

"कभी परदेश भी नहीं गये?"

"नहीं। मा मुझे कहीं जाने ही नहीं देती थीं।"

"तो अबकी बार आपको कैसे छोड़ दिया?"

अपूर्व चुप रहा। कैसे और किस वजहसे उसका विदेश जाना माको मंजूर करना पड़ा है, इस बातको वह दूसरेके सामने कहना नहीं चाहता था। भारतीने कहा, "इतनी बड़ी नौकरी ठहरी,—बगैर छोड़े नहीं चल सकता था, क्यों? पर वे साथ क्यों नहीं आईं?"

उसके इस तरह तीक्ष्ण मन्तव्य प्रकट करनेपर अपूर्वने क्षुण्ण होकर कहा, "मेरी माको आपने देखा नहीं है, नहीं तो ऐसी बात आप नहीं कहतीं। उन्होंने बड़े दुःखसे मुझे यहाँ भेजा है।—वे विधवा ठहरीं, इस म्लेच्छ देशमें कैसे आ सकती थीं?"

भारती क्षण-भर स्थिर रहकर बोली, "म्लेच्छोंसे आपको बहुत घृणा है! मगर रोग तो सिर्फ म्लेच्छों या गरीबोंके लिए नहीं बना, आपको भी तो हो सकता है? और अभी हो सकता है,—तो फिर क्या मा नहीं आयेंगी?"

अपूर्वका चेहरा फक पड़ गया, बोला, "आप इस तरह डरावेंगी तो मैं अकेला कैसे रहूँगा?"

भारतीने कहा, "डर बिना दिखाये भी आप अकेले नहीं रह सकते। आप बहुत ही डरपोक आदमी हैं।"

अपूर्व प्रतिवाद करनेकी हिम्मत न कर सका, चुपचाप बैठा रहा।

भारती सहसा कह उठी, "एक बात मैं पूछती हूँ आपसे। मेरे हाथका पानी पीनेसे तिवारीकी जात तो मारी गई, अब वह अच्छा होकर भी क्या करेगा?"

अपूर्वको इसकी शास्त्रोक्त विधि नहीं मालूम थी। जरा सोचकर बोला, "उसने

अपने होशमें तो पीया नहीं, मरणासन्न रोगमें पीया है, न पीनेसे मर जाता। इससे शायद जात नहीं जाती, प्रायश्चित्त करनेसे ही काम चल जाता है।"

भारती भौंहें चढ़ाकर बोली, "हूँ! इसका खर्च शायद आपको बर्दाश्त करना पड़ेगा,—नहीं तो, आप फिर उसके हाथका खायेंगे-पीयेंगे कैसे?"

अपूर्वने उसी वक्त उसका समर्थन करते हुए कहा, "मैं तो खर्च दूँगा ही, जरूर दूँगा। भगवान करें उसे जल्दीसे आराम हो जाय।"

भारतीने कहा, "और मैं ही तीमारदारी करके उसे अच्छा करूँ, क्यों?"

उसके शान्त कठिन स्वरपर अपूर्वने ध्यान नहीं दिया, कृतज्ञतासे भरपूर होकर जवाब दिया, "सो आपकी कृपा है। तिवारी जी जाय,—आपने ही तो उसकी जान बचाई है!"

भारती जरा हँसी। बोली, "म्लेच्छके जान बचानेमें कोई दोष नहीं, मुँहमें पानी देनेमें ही प्रायश्चित्तकी जरूरत होती है, क्यों?" इतना कहकर वह फिर जरा हँसकर बोली, "अच्छा, अभी मैं चलती हूँ। कल अगर वक्त मिला तो एक दफे आकर देख जाऊँगी।" यह कहकर वह जानेको तैयार हुई, पर तुरंत ही मुड़कर बोली, "और अगर न आ सकी, तो तिवारीके अच्छे हो जानेपर उससे कहिएगा कि आप न आ जाते तो मैं उसे छोड़कर नहीं जाती। म्लेच्छोंका भी एक समाज है। आपके साथ अकेले एक घरमें रात बितानेको, वह भी अच्छा नहीं कहेगा। कल सबेरे जब आपका पियादा आये तो उसके हाथ तलवरकरको खबर भिजवा दीजिएगा। वे अनुभवी आदमी हैं, सब इन्तजाम कर देंगे। अच्छा, नमस्कार।"

अपूर्वने कहा, "करवट बदलनेसे इसे तकलीफ नहीं होगी?"

भारतीने कहा, "नहीं।"

"यदि रातको बिछौना बदल देनेकी जरूरत पड़े तो कैसे क्या करना होगा?"

भारतीने कहा, "सावधानीसे बदल दीजिएगा।" घर जानेके लिए ज्यों ही भारतीने दरवाजा खोला, अपूर्व चटसे डरकर बोल उठा, "और अगर अचानक उठकर बैठ जाय? अगर रोने लगे?"

भारतीने इन सब प्रश्नोंके उत्तर देनेकी कोशिश न करके धीरेसे बाहर निकलकर सावधानीसे किवाड़ बन्द कर दिये। उसके पैरोंकी मन्द मन्द आहट जब तक सीढ़ियोंपर सुनाई दी, तब तक वह काठकी मूर्तिकी तरह चुपचाप

बैठा रहा। परन्तु आवाज थमते ही मानो उसकी आँखोंके आगे कहींसे एक काला जाल-सा उतर आया और उससे उसका सारा शरीर ऐसा हो उठा कि वैसा उसने अपने जीवनमें कभी अनुभव ही नहीं किया। मारे डरके लपककर उसने बरामदेकी तरफके किवाड़ खोल दिये, और नीचे सड़ककी तरफ देखा, तो भारती जल्दी जल्दी जाती दिखाई दी। 'मिस जोज़फ' नाम वह मुँहसे निकाल ही न सका, जोरसे पुकार उठा "भारती!"

भारतीने मुँह उठाकर उसकी तरफ देखा। अपूर्वने दोनों हाथ जोड़कर कहा, "जरा एक दफे आइए"—आगे उसके मुँहसे कुछ बात ही नहीं निकली। भारती लौट आई। दो मिनट बाद दरवाजा खोलकर भीतर आकर उसने देखा, अपूर्व नहीं है, और तिवारी अकेला पड़ा है। जरा और आगे बढ़कर झाँककर देखा, बरामदेमें भी नहीं है, कहीं भी नहीं है। चारों तरफ देखने लगी। देखा तो, नहान-घरका दरवाजा खुला हुआ है। आखिर पाँच छह मिनट ठहरनेपर भी जब कोई नहीं आया, तब वह उठी, और नहान-घरके भीतर झाँककर जो कुछ उसने देखा, उससे उसके डरका ठिकाना न रहा। अपूर्व जमीनपर औंधा पड़ा है,—दोपहरको जो कुछ खाया था, सो सब उलट दिया है; उसकी आँखें बन्द हैं और सारे शरीरसे पसीना छूट रहा है। पास जाकर पुकारा, "अपूर्व बाबू!"

पहली ही आवाजसे अपूर्वने आँख खोल दी, किन्तु दूसरे ही क्षण फिर जैसाका तैसा बेहोश-सा हो गया। भारती क्षण-भरके लिए दुविधामें पड़ गई, उसके बाद अपूर्वके पास बैठकर सिरपर हाथ फेरती हुई धीरेसे बोली, "उठके बैठना होगा जरा। सिर और मुँहपर पानी बगैर दिये तो तबीयत सुधरेगी नहीं अपूर्व बाबू!"

अपूर्व उठकर बैठ गया, भारती हाथ पकड़कर उसे नलके पास ले गई और नल खोल दिया। अपूर्वने मुँह धो डाला। फिर भारतीने उसे धीरे-से उठा ले जाकर खाटपर लिटा दिया, और अँगौछेके अभावमें अपने आँचलसे ही उसके हाथ-पैर पोंछ दिये। इसके बाद वह कहींसे एक पंखा लाकर उससे उसके माथेपर हवा करती हुई बोली, "अब जरा सोनेकी कोशिश कीजिए; आपकी तबीयत ठीक न होने तक मैं नहीं जाऊँगी।"

अपूर्वने लज्जित मृदु कंठसे कहा, " लेकिन आपका तो अभी खाना नहीं हुआ ? "

भारतीने कहा, " खाने आपने दिया कहाँ ? आप सो जाइए। "

" सो जानेसे आप चली तो नहीं जायँगी ? "

" नहीं, आपकी नींद खुलनेतक मैं यहीं बनी रहूँगी। "

अपूर्व कुछ देरतक चुप रहकर अचानक पूछ उठा, " अच्छा, मिस भारती कहनेसे क्या आप नाखुश होंगी ? "

" जरूर हूँगी और सिर्फ भारती कहनेसे नहीं हूँगी। "

" पर और सबोंके सामने ? "

भारतीने जरा हँसकर कहा, " सबके सामने भी सही, क्या हर्ज है। मगर आप चुपचाप जरा सो जाइए,—मुझे बहुत काम करना है। "

अपूर्वने कहा, " सोनेमें मुझे डर लगता है, कहीं आप धोखा देकर चली न जायँ ? "

" लेकिन जागते रहनेपर भी अगर जाऊँ, तो आप रोक कैसे सकते हैं ? "

अपूर्व चुप होकर उसकी तरफ देखता रहा। भारतीने कहा, " हमारे म्लेच्छ समाजमें क्या सुनाम बदनाम नामकी कोई चीज ही नहीं है ? मुझे क्या उससे डरकर नहीं चलना पड़ता ? "

अपूर्वकी बुद्धि ठीक प्रकृतिस्थ नहीं थी। प्रत्युत्तरमें वह एक विचित्र ही प्रश्न कर बैठा। बोला, " मेरी मा यहाँ नहीं है, मैं बीमार हो जाऊँ तो आप क्या करेंगी ? तब आपको ही रहना पड़ेगा। "

भारतीने कहा, " मुझको ही रहना पड़ेगा ? आपके मित्र तलवरकर साहबको खबर देनेसे काम नहीं चलेगा ? "

अपूर्व जोरसे सिर हिलाकर कहने लगा, " नहीं, सो हरगिज नहीं हो सकता। या तो मेरी मा, या आप,—दोनोंमेंसे एकको बगैर देखे मैं हरगिज न जीऊँगा। कलको अगर मुझे चेचक निकल आई,—इस बातको आप हरगिज न भूल जाइएगा ! "

उसके अनुरोधका अन्तिम भाग न जाने कैसा सुनाई दिया कि भारती सहसा अपनेको भूल गई। बिस्तरके एक किनारेपर चटसे बैठकर अपूर्वके शरीरपर अपना हाथ फेरते हुए उसने रुँधे हुए गलेसे कहा, " नहीं नहीं,

भूलूँगी नहीं। यह क्या मैं कभी भूल सकती हूँ ?"—परन्तु बात कह चुकनेके बाद तुरंत ही वह अपनी गलती समझ गई, और उसी क्षण उठकर खड़ी हो गई। जबर्दस्ती जरा हँसकर बोली "पर अच्छे होनेके बाद भी कम आफत नहीं भुगतनी पड़ेगी अपूर्व बाबू! धूमधामके साथ फिर प्रायश्चित्त भी तो करना पड़ेगा ? लेकिन डरकी कोई बात नहीं, उसकी जरूरत न होगी। अच्छा अब जरा चुप होकर सो तो जाइए। सचमुच मेरा बहुत काम पड़ा हुआ है।"

"क्या काम है ?"

भारतीने कहा, "क्या काम है ? खाना-पीना दूर रहा, अभी तक तो नहानेको भी वक्त नहीं मिला।"

"लेकिन शामके वक्त नहानेसे तबीयत खराब नहीं होगी ?"

भारतीने कहा, "हो भी सकती है, कोई असम्भव नहीं। नहान-घरमें आपने जो कुछ कर रक्खा है, उसे साफ करनेके बाद बगैर नहाये और कोई चारा भी तो नहीं। उसके बाद दो-एक गस्सा पेटमें भी डालना है।"

अपूर्वने अत्यन्त लज्जित होकर कहा, "उसे मैं साफ कर दूँगा,—आप जाइएगा नहीं।"—इतना कहकर वह झटपट उठने लगा। परन्तु भारतीने गुस्सा होकर कहा, "अब बहादुरी दिखानेकी जरूरत तहीं। जरा सोनेकी कोशिश कीजिए। मुझे तो इस बातका ताज्जुब है कि ऐसे बहमी लड़केको माने परदेश भेज कैसे दिया। सच कहती हूँ, उठिएगा नहीं। मा यहाँ नहीं हैं,—इस लिए अगर यहाँ मेरी बात न सुनी, तो बड़ी खराबी होगी—कहे देती हूँ।" यह कहकर कृत्रिम क्रोधसे हुक्म जारी करके वह जल्दीसे उठकर चल दी।

उद्विग्न, श्रान्त और बिलकुल निर्जीवकी भाँति अपूर्व कब सो गया, उसे मालूम भी न हुआ। भारतीके पुकारनेपर उसकी नींद खुली। आँखें मीड़ता हुआ उठकर बैठ गया; सामनेकी घड़ीपर नजर पड़ी तो देखा रातके बारह बजे हैं। भारती पास ही खड़ी है। अपूर्वकी पहली नजर पड़ी उसके बालोंके फैलाव और लम्बाईपर। सद्य-स्नानसे घने बाल भीगकर काले स्याह हो गये थे और नीचे लटक कर जमीन छूना चाहते थे। साबुनकी भीनी-भीनी खुशबूसे कमरेकी रुकी हुई हवा सहसा मानो पुलकित हो उठी थी। वह एक काली किनारीकी सूती साड़ी पहने थी,—बदनपर कुरती न होनेसे बाँहोंका बहुत-सा हिस्सा दिखाई दे रहा था,—भारतीकी यह मानो एक और ही नई मूर्ति थी;

अपूर्वने पहले कभी देखी ही नहीं। उसके मुँहसे पहले यही निकल पड़ा, " इतने भीगे बाल सूखेंगे कैसे ? "

भारतीने कहा, " सूखेंगे नहीं। लेकिन इसके लिए फिक्र करनेकी जरूरत नहीं। आप आइए तो मेरे साथ जरा। "

" तिवारी कैसा है ? "

" अच्छा है। कमसे कम आज रातके लिए आपको चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। आइए। "

उसके साथ साथ नहान-घरमें जाकर अपूर्वने देखा, छोटी-सी एक टोकरीमें कुछ फल-फलारी, हँसिया और पासमें थाली, गिलास वगैरह रक्खा हुआ है। भारतीने उन्हें दिखाते हुए कहा, " इससे ज्यादा तो और कुछ कर नहीं सकती थी। नलके पानीसे सब धो डालिए—हँसिया, थाली, गिलास वगैरह। गिलासमें पानी ले लीजिए, लेकर उस कमरेमें चलिए, आसन बिछा रक्खा है। "

अपूर्वने पूछा, " यह सब आप कब ले आईं ? "

भारतीने कहा, " आपके सो जानेपर। पास ही एक फलकी दूकान है, दूर नहीं जाना पड़ा। और टोकरी आपके यहाँ थी ही। " यह कहकर वह अन्यत्र चली गई, सिर्फ सावधान करती गई—" हँसियेसे हाथ मत काट लीजिएगा ! "

कुछ देर बाद, आसनपर बैठकर अपूर्व फल बनार रहा था, और भारती पास ही बैठी हँस रही थी। अपूर्वने कहा, " आप हँसती हैं, इसमें कोई हर्ज नहीं। मर्द हँसियेसे कुछ बनार नहीं सकते, यह सभी जानते हैं। लेकिन आपने मेरे खानेके लिए जो इतना जतन किया, इसके लिए आपको सहस्र धन्यवाद। माके सिवा और कोई इतना नहीं करता। "

उसके आखिरी शब्दोंपर भारतीने ध्यान ही नहीं दिया। शुरूकी बातका उत्तर देते हुए कहा, " हँसती क्या ऐसे ही हूँ अपूर्व बाबू ! माना कि मर्द हँसियेसे नहीं बनार सकते यह सब जानते हैं, पर, जितना कि आप जानते हैं, क्या उतना ही सब जानते हैं ? तिवारी अच्छा हो जाय, तो मैं जरूर माको चिट्ठी दूँगी : या तो वे यहाँ आ जायँ, नहीं तो अपने लड़केको यहाँसे वापस बुला लें। ऐसे आदमीको परदेशमें नहीं छोड़ा जा सकता। "

अपूर्वने कहा, " मा अपने लड़केको अच्छी तरह जानती हैं। मगर,

देखिए, मैं न होकर अगर मेरे भाइयोंमेंसे कोई होता, तो आप इतनी बातें नहीं कह सकतीं। आपसे वे सब काम करा लेते।"

भारती कुछ समझ न सकी। अपूर्वने कहा, "भइया मेरे सब ऐसे हैं कि उनसे ऐसी कोई चीज नहीं बची, जिसे वे छूते या खाते न हों। मुर्गी और होटलोंकी डिनरके बगैर तो उनका काम ही नहीं चलता।"

भारती आश्चर्य-चकित होकर बोली, "कहते क्या हैं!"

अपूर्वने कहा, "ठीक कहता हूँ। पिताजी तो आधे ईसाई कहे जा सकते थे। माको इस बारेमें क्या कुछ कम तकलीफें उठानी पड़ी हैं!"

भारतीने उत्सुक होकर पूछा, "सच? मा शायद बड़ी कट्टर हिन्दू हैं?"

अपूर्वने कहा, "कट्टरकी इसमें कोई बात नहीं, हिन्दू-घरकी स्त्रियोंको वास्तवमें जैसा होना चाहिए, वैसी ही वे हैं।"—माकी बात कहते-कहते अपूर्वका स्वर करुण और स्निग्ध हो उठा, बोला, "घरमें दो बहुएँ हैं, फिर भी माको अपने हाथसे बनाकर खाना पड़ता है। पर ऐसी मा हैं कि कभी किसीपर जोर-जबर्दस्ती नहीं करतीं, किसीसे इसके लिए शिकायत भी नहीं करतीं। कहती हैं, मैं भी तो अपने आचार-विचारको छोड़कर अपने पतिकी रायमें अपनी राय नहीं मिला सकी, अब, ये लोग भी मेरी रायमें राय नहीं मिलातीं, तो इसमें शिकायत करना क्या ठीक है? मेरी बुद्धि और मेरे संस्कारोंको मानकर ही बहुओंको चलना होगा, इसके क्या मानी हैं?"

भारती भक्ति और श्रद्धासे नम्र होकर बोली "मा पुराने जमानेकी ठहरीं, मगर धीरज तो खूब है उनमें।"

अपूर्व उद्दीप्त होकर कहने लगा, "धीरज? माके धीरजका क्या कोई पारावार है? आपने उन्हें देखा नहीं, मगर देखेंगी तो मैं कहे देता हूँ कि एकबारगी आश्चर्यचकित हो जायँगी।"

भारती प्रसन्न मुखसे एकटक उसकी ओर देखती रही। अपूर्व फल बनारना बन्द करके कहने लगा, "सच पूछो तो मा मेरी सारी जिन्दगी दुःख ही दुःख पाती रही हैं; जिन्दगी-भर पति और पुत्रोंके म्लेच्छाचारमें ही चुपचाप दिन काटती आई हैं। उनको सिर्फ एक भरोसा है, मेरा। हारी-बीमारीमें सिर्फ मैं ही कुछ बना बुनूँकर उनके मुँहमें डाल दिया करता हूँ।"

भारतीने कहा, "तो, अभी तो उन्हें तकलीफ हो रही होगी?"

अपूर्वने कहा, " सो तो होगी ही। इसीसे तो वे पहले मुझे यहाँ भेजनेको राजी नहीं हुई थीं। मगर हमेशा तो मैं घर बैठा नहीं रह सकता। उन्हें सिर्फ एक आशा है कि मेरी बहूके आ जानेपर फिर उन्हें अपने हाथसे बनाकर न खाना पड़ेगा। "

भारतीने जरा-सा हँसकर कहा, " उनकी उस आशाको पूरी करके ही क्यों नहीं चले वहाँसे ? उचित तो यही था। "

अपूर्वने उसी वक्त अनुमोदन करते हुए कहा, " सो तो था ही। उन्होंने खुद लड़की पसन्द कर-कराके सब ठीक कर लिया था, इतनेमें ही मुझे यहाँ चला आना पड़ा, वक्त ही नहीं मिला। मगर मैं कह आया हूँ कि मा, जब तुम चिट्ठी लिखोगी, तभी आकर तुम्हारी आज्ञा पालूँगा। "

भारतीने कहा, " चाहिए तो यही। "

अपूर्वने मातृ-स्नेहसे पिघलकर कहा, " अवश्य। वह व्रत-उपवास करेगी, आचार-विचार समझेगी, ब्राह्मण पंडितके घरकी लड़की होगी,—माको कभी तकलीफ न देगी,—यही तो मैं चाहता हूँ। जरूरत क्या है मुझे गाना-बजाना जाननेवाली कालेजकी पढ़ी लिखी विदुषी स्त्रीकी ? "

भारतीने कहा, " हाँ, क्या जरूरत है ! "

अपूर्व खुद ही किसी दिन इस बातका विरोधी था और भाभियोंके पक्षमें लड़कर गुस्सेमें उसने मासे कहा था, किसी ब्राह्मण-पण्डितके घरसे जैसी भी हो एक लड़की लाकर झगड़ा चुका देनेके लिए। उस बातको आज वह बिलकुल भूल गया। कहने लगा, " देखिए, आप न मेरी जातकी हैं, न समाजकी; आपका पानी तक नहीं पिया जाता हमारे यहाँ, छू जानेसे कपड़े तक बदल डालने पड़ते हैं,—इतना फर्क है; फिर भी आप जितना समझती हैं, मेरे भइया या भाभी उतना नहीं समझतीं। जिसका जो धर्म है, उसको वही तो मानकर चलना चाहिए ? घर-भर आदमियोंमें रहती हुई भी मा मेरी अकेली हैं, इससे बढ़कर दुर्भाग्य और क्या होगा ? इसीलिए भगवानसे मैं सिर्फ इतनी ही प्रार्थना करता हूँ कि मेरे किसी भी आचरणसे माको कभी कष्ट न हो। " कहते कहते उसका गला भारी हो आया और आँखें डबडबा आईं।

इसी समय सोते हुए तिवारीने कुछ आवाज-सी दी, भारती चटसे उठके चली गई। अपूर्व उल्टी हथेलीसे आँखें पोंछकर फिर फल बनारनेमें लग गया। मासे उसको बहुत ज्यादा स्नेह है। घरमें रहते हुए वह माकी तुष्टिके लिए चोटी

रखनेसे लेकर एकादशीके दिन भातके बदले पूड़ी खाने तकके सब नियम पालन करता था। और वास्तवमें ब्राह्मण-सन्तानकी आचार-भ्रष्टताकी वह निन्दा ही करता था। और प्रवासमें आकर आचार-विचारके प्रति उसके ऐसे दृढ़ अनुरागके विषयमें शायद उसकी मा सन्देह न कर सकती थी। असल बात यह है कि आज उसका शरीर और मन भय और चिन्ताके मारे अत्यन्त विकल हो रहा था। माको अपने पास पानेकी एक अन्ध आकुलताने उसके भीतर ही भीतर एक आँधी-सी उठा दी थी। उसके भीतरकी सम्पूर्ण भाव-धारा विकृत होकर आतिशय्यमें ऐसी रूपान्तरित हो रही थी, कि अन्तर्यामीसे वह अगोचर न रही। परन्तु भारतीकी छातीके भीतर अपमानकी वेदनासे फोड़ासा फदकने लगा।

उसने थोड़ी देर बाद लौटकर देखा कि अपूर्व किसी तरह फल बनार-बुनूरकर चुपचाप बैठा है। उसने कहा, " बैठे हैं जो, खाया नहीं ? "

अपूर्वने कहा, " नहीं, आपके लिए बैठा हूँ। "

" क्यों ? "

" आप नहीं खायेंगी ? "

" नहीं। जरूरत होगी तो, मेरे लिए अलग रक्खा हुआ है। "

अपूर्वने फलकी तश्तरी हाथसे जरा अलग करते हुए कहा, " वाह, ऐसा भी होता है कहीं ! आपने सबेरेसे कुछ खाया नहीं है, और—" उसकी बात खत्म भी न हो पाई थी कि इतनेमें अत्यन्त शुष्क दबे स्वरमें जवाब आया, " उँह, आप बहुत परेशान करते हैं। भूख हो, तो खाइए; न हो, खिड़कीमेंसे बाहर फेंक दीजिए। " इतना कहकर वह उसी क्षण दूसरे कमरेमें चली गई। वास्तवमें, एक क्षण-भर ही अपूर्वने उसका चेहरा देखा था, पर उस एक ही क्षणने उसके हृदयपर जिन्दगी-भरके लिए एक छाप मार दी। इस चेहरेको वह भूला नहीं। उस आनेके दिनसे आजतक उसका बहुत बार उससे साक्षात् हुआ है; झगड़ेमें, मेलमें, शत्रुतामें, मित्रतामें सम्पद और विपदमें कितनी बार उसने उसे देखा है; पर उस देखनेके साथ इसका कोई सादृश्य ही नहीं। यह तो कुछ और ही है।

भारती चली गई, फलकी तश्तरी उसी तरह पड़ी रही और अपूर्व जैसा था, वैसे ही चुपचाप निष्पन्द पत्थरकी तरह बैठा रहा। कैसे क्या हुआ, उसके समझहीमें न आया।

घंटे-भर बाद उसने दूसरे कमरेमें जाकर देखा कि तिवारीके पास भारती एक चटाई बिछाकर बाँहपर सिर रक्खे सो रही है। वह जैसे चुपचाप गया था, वैसे ही चुपचाप वापस आकर अपनी खाटपर पड़ रहा। पड़ते ही उसकी थकी हुई आँखें अपने आप मुँद गईं। जब वह जागा, तब भोर हो चुका था।

भारतीने कहा, "मैं जाती हूँ।"

अपूर्व हड़बड़ाकर उठ बैठा; पर अच्छी तरह होश आनेसे पहले ही उसने देखा कि भारती चली गई है।

१०

उस घटनाको हुए आज एक महीना बीत चुका। तिवारीको आराम हो गया है, पर अभी तक पहले जैसी ताकत नहीं आई है। अपूर्व अपने साथ जिसे भामो ले गया था, वही रसोई बनाता है। तिवारीकी जिन्दगी बचानेके लिए लगभग आफिस-भरके लोगोंने काफी परिश्रम किया है, रामदास खुद कितने ही दिन अपने घर तक नहीं जा सका है। शहरके एक बड़े डाक्टरने उसका इलाज किया और उन्हींकी सिफारिशसे उसे चेचक-अस्पताल नहीं जाना पड़ा। यह बर्मा देश तिवारीको कभी अच्छा नहीं लगा, अपूर्वने उसे छुट्टी दे दी है, तय हुआ है कि जरा और ताकत आ जानेपर वह घर चला जायगा। आगामी सप्ताहमें शायद उसका जाना नहीं हो सकेगा, तिवारी खुद ऐसी आशा करता है।

भारती जो गई, सो फिर लौटकर आई ही नहीं। और मजा यह कि इतनी बड़ी आश्चर्यजनक घटनाके विषयमें आपसमें कोई चर्चा तक नहीं करता। इसमें तिवारीका विशेष अपराध न था; बल्कि वह तो मानो डरता-सा रहता था कि कहीं कोई उसका नाम न ले दे। भारती शत्रु-पक्षकी है; यहाँ आनेके बादसे उसने इन लोगोंको बहुत तरहसे सताया है, झूठी गवाही देकर अपूर्वको जेल भेजनेकी कोशिश तक की थी। वह मालिकके परोक्षमें, ऐसी औरतको बुलानेकी शरम और संकोच दोनों अनुभव कर रहा था। मगर वह कब और कैसे चली गई है, तिवारीको नहीं मालूम। जाननेके लिए वह भीतरसे छटपटाता था,—उसके उद्वेग और आशंकाकी सीमा न थी; पर कैसे जाना जा सकता है, यह उसकी समझमें नहीं आता था। कभी सोचता, भारती चालाक लड़की है, अपूर्वके आनेका

समाचार पाते ही वह छिपकर भाग गई है। कभी सोचता अपूर्वने आकर शायद उसे अपमानित करके निकाल दिया है। मगर इन दोनोंमेंसे कोई भी बात क्यों न हुई हो, भारती अब अपनी तबीयतसे उसे देखनेके लिए इस मकानमें न आयेगी, इस विषयमें वह निश्चिन्त था।

अपूर्व खुद कुछ कहता नहीं, और उससे पूछनेमें तिवारीको सबसे ज्यादा डर इस बातका है कि पूछ-ताछ करनेसे कहीं पिछला सब भेद न खुल जाय। लड़ाई झगड़ेकी बात चूल्हेमें गई, पर उसने जो उसके हाथका पानी पीया है, उसका बनाया हुआ दूध-सागू और बार्ली खाई है,—हो सकता है कि इससे ऐसे भयंकर रूपसे जात मारी गई हो कि जिसका कोई प्रायश्चित्त ही न हो। तिवारीने तय कर रक्खा था कि किसी तरह यहाँसे कलकत्ता जाकर वह सीधा घर चला जायगा और वहाँ गंगा-स्नान करके, छिपी तौरसे गोबर आदि खाकर किसी बहानेसे ब्राह्मण-भोजन कराके, अपनी देहको काम-चलाऊ शुद्ध कर लेगा। लेकिन छेड़-छाड़ करनेसे कहीं किसी तरह बात अगर माजीके कान तक पहुँच गई, तो क्या होगा, कोई ठीक नहीं। हालदार-घरकी नौकरी तो जायगी ही, साथ ही उसके गाँवके समाज तकको मालूम हो जाय तो आश्चर्य नहीं।

मगर तिवारीकी पूरी बात इतनी ही नहीं है। इस स्वार्थ और भयकी दिशाको छोड़कर उसके हृदयकी एक और दिशा भी है। वह जितनी मधुर है, उतनी ही वेदना-पूर्ण। अपूर्वके आफिस चले जानेपर रोज वह एक बेतका मोंढ़ा लेकर बरामदेमें जा बैठता है। कमजोर शरीरको दीवारके सहारे टेककर, सामनेकी गली जहाँ बड़ी सड़कसे जा मिली है, उसी तरफ एकटक देखता रहता है। ऐसा नहीं हो सकता कि इस रास्ते आनेकी भारतीको कभी जरूरत ही न हो, इस गलीके सामनेसे गुजरते वक्त अभ्यासवश वह इधर झाँककर देखे भी नहीं। अपूर्वके भामो चले जानेपर भारतीसे उसका घनिष्ठ परिचय हुआ था। जिस दिन दोपहरके वक्त सहसा उसकी मा मर गई थी और तिवारीने तब तक खाया भी न था, वह रोती-बिलखती हुई उसके दरवाजेपर आई थी। दो दिन पहले जोज़फ साहब मर चुका था, इसलिए उसे कोई डर न था। दरवाजा खोलते ही भारती घरमें आकर उसके दोनों हाथ पकड़के फूट फूटकर रोने लगी। हाय उसका वह रोना! कौन कहेगा कि वह म्लेच्छ है, कौन कहेगा कि वह ईसाईकी लड़की है! तिवारीका बना बनाया दाल-भात बटलोईमें ही पड़ा रहा और दिन-भर उसे उसकी चिट्ठियाँ लिये-लिये न जाने कहाँ-कहाँ दौड़ना पड़ा।

दूसरे दिन लोग जब अरथीको ले जाने लगे, तो बरामदेमें खड़ा-खड़ा वह ऐसा रोया कि आँसू रोके न रुके। तभीसे वह भारतीको कभी बिटिया और कभी लल्ली कहने लगा था; और जबर्दस्ती उसने उसे चार-पाँच दिन तक खाना नहीं बनाने दिया था, खुद ही बनाकर खिलाया था। उसके बाद, भारती जिस दिन अपनी चीज-वस्त लेकर दूसरे मकानमें जाने लगी, उस दिन उसकी शाम कटनी मुश्किल हो गई। उसकी चेचककी बीमारीमें भारतीने उसके लिए क्या क्या किया था, सो वह अच्छी तरह जानता भी न था और न सोचता ही था। उस वक्तकी याद आते ही उसे अपनी जात जानेका खयाल आ जाता। परन्तु इसके साथ ही वह एक बात और सोचनेकी कोशिश करता। रोज सबेरे वह नहा-धोकर अपने लम्बे काले भीगे बालोंका भार पीठपर डाले हुए उसकी खबर-सुध लेने आया करती थी। न तो रसोई-घरमें घुसती थी और न कोई चीज छूती थी, चौखटके बाहर जमीनपर बैठकर पूछ लिया करती—आज क्या क्या बनाया, देखूँ तिवारी?

तिवारी कहता, "लल्ली, एक आसन बिछा दूँ।"

भारती कहती, "नहीं, रहने दो। फिर धोना भी तो पड़ेगा!"

तिवारी कहता, "वाह, आसनमें भी कहीं छूत लगती है?"

भारती कहती, "लगती क्यों नहीं? तुम्हारे बाबू तो समझते हैं, मेरे रहनेसे सारा मकानका मकान अशुद्ध हो गया। कहीं उनका मकान होता, तो शायद वे आग लगाकर इसे भी शुद्ध कर लेते! ठीक है न तिवारी?"

तिवारी हँसकर कहता, "तुम्हें तो बस यही सूझा करता है। तुमसे खुद देखा नहीं जाता, सो तुम सभीको वैसा ही समझती हो। लेकिन हमारे बाबूको अगर एक बार अच्छी तरह समझ लोगी, तो कहोगी कि ऐसा आदमी दुनियामें और है ही नहीं।"

भारती कहती, "नहीं है, यह तो मैं भी कहती हूँ। नहीं तो जिसने चोरी बचाई, उसीको चोर बताकर गिरफ्तार करवाने जाते?"

इस विषयमें अपना कसूर याद करके तिवारी मर्माहत हो जाता। बातको दबाकर वह जल्दीसे कहने लगता, "लेकिन तुमने भी तो कुछ कम नहीं किया लल्ली! सब कुछ झूठा जानते हुए भी बाबूपर बीस रुपया जुरमाना करवा दिया!"

भारती कुछ लज्जित-सी होकर कहती, "पर जुर्माना भी तो अपनी ही तरफसे दे दिया, तुम्हारे बाबूको तो नहीं देना पड़ा ?"

"वाह ! देना कैसे नहीं पड़ा ? मैने अपनी आँखोंसे देखा है, दो नोट जमा कराके तब वे अदालतसे बाहर निकले थे।"

"मैंने भी अपनी आँखोंसे देखा था तिवारी, तुम्हें घरमें घुसते ही दो नोट दरवाजेके पास पड़े मिले थे और तुमने उठाकर बाबूको दे दिये थे।"

तिवारीके हाथकी करछुल हाथहीमें रह जाती,— "अच्छा, यह बात है !"

"उधर तरकारी जो जली जा रही है तिवारी, फिर खाई भी न जायगी !"

तिवारी कड़ाही उतारकर कहता, "लेकिन बाबूसे मैं यह बात कह दूँगा, लल्ली !"

भारती हँसकर जवाब देती, "कह न देना ! तुम्हारे बाबूका क्या मुझे डर पड़ा है ?"

परन्तु इतनी बड़ी आश्चर्यजनक बात भी बाबूसे कह देनेका तिवारीको फिर कभी मौका ही नहीं मिला। कब और किस तरह मिलेगा, सो भी उसकी समझमें नहीं आ रहा है। एक दिन आलसके कारण वह बासी हल्दीसे साग बना रहा था, तब भारतीने उसे फटकार दिया था। और एक दिन, बगैर नहाये ही उसने रसोई बना ली थी, इस लिए भारतीने उसके हाथका खाया नहीं था। तिवारीने गुस्सेमें आकर कहा था, "तुम तो ईसाई ठहरीं, भला तुम लोगोंको इतना विचार क्यों ? तुम तो, देखता हूँ, हमारी माजीसे भी आगे बढ़ गई !"

भारती सिर्फ जरा हँसकर चली गई थी, कुछ जवाब नहीं दिया था। असलमें रसोईके मामलेमें, एक माजीके सिवा तिवारीसे और कोई कुछ प्रश्न कर सकता हैं, यह उसकी धारणाके बाहरकी बात थी, इसलिए उस दिन उसे मन ही मन बड़ा दुःख हुआ था। मगर उसके बादसे आचार-विचारके मामलेमें उसे इस म्लेच्छ लड़कीसे भी सावधान रहना पड़ा था। तब ये सब बातें उसे अच्छी नहीं लगी थीं, और जो अच्छी भी लगी थीं, उनकी उसने कभी कदर महसूस नहीं की थी। ये ही सब बातें आज उसे चिन्तामें लीन किये दे रही हैं। अब वह बर्मा लौटकर नहीं आयेगा। जानेके पहले भारतीसे भेंट होनेकी कोई आशा नहीं, और भेंट करनेका कोई कारण भी नहीं। जो कुछ वह जानता है, उसे सुना देनेको कोई आदमी नहीं। इसी तरह दिनपर दिन, रोज एक ही सड़कके

किनारे निष्फल दृष्टि बिछाये चुपचाप अकेले बैठे रहनेसे उसकी छातीके भीतर मानो नोंच-खोंस-सी चला करती थी।

उस दिन आफिससे लौटकर अपूर्व तिवारीसे अचानक पूछ बैठा, "भारतीका घर कहाँपर है तिवारी?"

तिवारीने संशयतिक्त स्वरमें जवाब दिया, "मैं जाकर देख आया हूँ क्या?"

"जाते वक्त तुमसे कह नहीं गई थी?"

"मुझसे किस लिए कह जाती?"

अपूर्वने कहा, "मुझसे कहा था, पर जगहकी ठीक याद नहीं रही। कल एक दफे ढूँढ़ना होगा।"

तिवारीका मन डगमगाने लगा,—न मालूम कौन-सा फसाद उठ खड़ा हो। पर उसकी इतनी हिम्मत नहीं पड़ी कि कारण पूछ लेता। अपूर्व खुद ही कहने लगा, "चोरीकी चीजें मिल गई हैं। पुलिस उन्हें वापस देना चाहती है; लेकिन भारतीके दस्तखत चाहिए।"

तिवारी दूसरी तरफ देखता हुआ चुप रहा, अपूर्व कहने लगा, "उस दिन वे यही बात तो कहने आई थीं, सो तेरी हालत देखकर फिर लौट ही न सकीं। वे न सम्हालतीं, तो तू न जाने कबका मरकर भूत हो गया होता। मेरे साथ भेंट भी न होती।"

तिवारीने हाँ, ना, कुछ भी नहीं कहा और अन्तिम बात सुननेके लिए वह चुपचाप पत्थरकी तरह बैठा रहा। अपूर्वने कहा, "उस दिन आकर देखा तो अँधेरे घरमें तू और भारती, और कोई था ही नहीं; क्या होता, कोई ठीक थोड़े ही था। कहाँ खाती होंगी, कहाँ सोती होंगी,—दो दिन पहले बेचारीके मा-बाप गुजर चुके थे,—मगर कैसी कड़ी लड़की है, किसी तरफ कोई ध्यान ही नहीं।" तिवारीसे अब न रहा गया, बोला, "चली कब गई थी?"

अपूर्वने कहा, "मेरे आनेके दूसरे ही दिन। सबेरा होने भी न पाया था कि 'जाती हूँ' कहके ऐसी गई कि फिर पता ही नहीं।"

"गुस्सा होकर चली गई क्या?"

"गुस्सा होकर?" अपूर्वने जरा सोचकर कहा—"क्या मालूम, हो भी सकता है। उसको तो समझना ही मुश्किल है। नहीं तो, तेरे लिए इतना किया, इतनी सेवा की, एक बार फिर खबर लेने भी न आई कि अच्छा हुआ या नहीं।"

यह बात तिवारीको अच्छी नहीं लगी। बोला, "खुद ही शायद बीमार पड़ गई हो।"

खुद ही बीमार पड़ गई हो! अपूर्व चौंक पड़ा। भारतीके विषयमें बहुत दिन बहुत-सी बातोंका खयाल आया है, पर किसी दिन बीमार पड़नेकी तो आशंका भी उसके मनमें नहीं उठी। जाते समय शायद वह गुस्सा होकर ही चली गई हो और गुस्सा होनेके कारणोंके बारेमें ही उसके मनमें तरह-तरहके विचार उठते रहे हैं। परन्तु और भी कुछ हो सकता है, इस विषयमें उसके क्षुब्ध चित्तने कभी खयाल ही नहीं किया। सहसा बीमारीकी बात सुनकर, इस बारेमें जितनी भी बातें उस रातको हुई थीं पलक मारते ही उसे सब याद आ गईं और तब वह चेचकके सिवा और किसी बीमारीकी कल्पना ही न कर सका। नये मकानमें जहाँ वह रहती है, वहाँ उसे देखने-भालनेवाला कोई है नहीं,—शायद उसे अस्पताल भेज दिया गया हो, शायद अब तक जिन्दा भी न हो,—मन ही मन वह एक बारगी चंचल हो उठा। एक कुरसीपर बैठकर आफिसकी पोशाक, नकटाई, खोलते हुए उसने बातचीत शुरू की थी, हाथका यह काम उसका वहीं बन्द हो गया, मुँहसे कोई आवाज ही नहीं निकली, उसी कुरसीपर मिट्टीके पुतलेकी तरह बैठा रहा—ऐसी एक तरहकी अपरिचित और अस्पष्ट अनुभूति उसपर छा गई, मानो अब उसे संसारमें और कोई काम करना ही नहीं है।

कुछ देर तक कोई कुछ बोला नहीं। इसी तरह बीस पचीस मिनट बीत जानेपर जब अपूर्वने हिलने तकका नाम नहीं लिया, तब तिवारी मन ही मन सिर्फ आश्चर्यान्वित ही नहीं, उद्विग्न भी हो उठा। आहिस्तेसे बोला, "छोटे बाबू, मकान-मालिकका आदमी आया था; अगर ऊपरका कमरा लेना हो तो इसी महीनेमें बदल लेनेके लिए कह गया है। मुझे फिकर है कि कहीं और कोई न आ जाय।"

अपूर्वने मुँह उठाकर कहा, "कौन आयेगा यहाँ?"

तिवारीने कहा, "आज माजीका एक पोष्टकार्ड आया है। दरवानसे लिखवाकर भेजा है।"

"क्या लिखा है?"

"मेरे आराम हो जानेसे उन्हें बहुत खुशी हुई है। दरवानका भाई छुट्टी

लेकर देश जा रहा है,—उसके हाथ विश्वेश्वरकी पूजाके लिए पाँच रुपये भिजवाये हैं।"

अपूर्वने कहा, "अच्छा ही तो है। मा तुझे लड़केकी तरह मानती हैं।"

तिवारीने श्रद्धासे विगलित होकर कहा, "लड़केसे भी ज्यादा। मैं तो चला ही जाऊँगा, पर माकी इच्छा है कि छुट्टी लेकर हम दोनों चले आवें। चारों तरफ हारी-बीमारी—"

अपूर्व बीचहीमें बोल उठा, "हारी-बीमारी कहाँ नहीं है रे? कलकत्तेमें नहीं होती? तूने शायद डरानेके लिए तरह-तरहकी बातें लिख दी होंगी?"

"जी नहीं।" तिवारीने सोच रक्खा था, असली बात वह खाने-पीनेके बाद रातको कहेगा। पर अब उससे रहीं रहा गया। बोला, "काली बाबू बहुत जिद कर रहे हैं। शायद सभीकी यह इच्छा है कि इस चैतके बाद बैसाख लगते ही यह शुभ काम हो जाय।"

काली बाबू अत्यन्त निष्ठावान् ब्राह्मण हैं। उनके घरानेकी आचार-परायणताकी काफी प्रसिद्धि है। उन्हींकी छोटी लड़कीको माने पसन्द किया है, यह आभास उनके कई पत्रोंसे मिल चुका था। तिवारीकी बात अपूर्वको अच्छी नहीं लगी। बोला, "इतनी जल्दी काहेकी है? काली बाबूको गौरी-दानका सबर न हो, तो वे और कहीं कोशिश कर सकते हैं।"

तिवारीने जरा हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "जल्दी उन्हें है या माजीको, मैं कैसे जान सकता हूँ छोटे बाबू? लोग शायद उन्हें डराते होंगे कि बर्मा देश अच्छा नहीं है—यहाँ रहनेसे लड़के बिगड़ जाते हैं!"

अपूर्व ख्वामख्वाह एकदम जल-भुन उठा, बोला, "देख तिवारी, तू मेरे ऊपर इतनी पण्डिताई मत बघारा कर, कहे देता हूँ। माको तू रोज रोज इतनी चिट्ठियाँ क्यों लिखा करता है? मैं बच्चा नहीं हूँ।"

इस अकारण क्रोधसे तिवारी पहले तो आश्चर्यमें पड़ गया, पर फिर उसे भी गुस्सा आ गया। इधर रोगसे उठनेके बादसे उसका भी मिजाज नाना कारणोंसे ठीक नहीं रहा था, बोला, "आते वक्त माजीसे यह बात कह क्यों नहीं आये? तो मेरा भी पिण्ड छूट जाता, जात-धरम नष्ट करने जहाजपर न चढ़ना पड़ता।"

अपूर्वकी आँखें सुर्ख हो गईं, वह चटसे कॉलर और नकटाई उठाकर पहनने लगा। तिवारी बहुत दिनोंसे इसके मानी जानता था। बोला, "तो दानी-पानी कुछ नहीं पीयेंगे?"

अपूर्व उसके प्रश्नके उत्तरमें खूँटीसे कोट उतारकर उसमें हाथ डालते डालते दनदनाता हुआ बाहर चला गया।

तिवारी गरम होकर बोला, "कल इतवारको चटगाँव होकर एक जहाज जाता है,-मैं उसीसे चला जाऊँगा, कहे देता हूँ।"

अपूर्वने सीढ़ीसे उतरते हुए कहा, "तुझे कसम है अगर न गया," और वह नीचे चला गया।

पाँच मिनटके अन्दर मालिक और नौकरमें किस लिए ऐसी गुस्सागुस्सी हो गई, यदि कोई अनभिज्ञ मौजूद होता तो देखकर आश्चर्य-चकित हो जाता। वह सोच भी नहीं सकता कि ऐसे अर्थहीन आघातके जरिये ही मनुष्यके व्यथित विक्षुब्ध चित्तने हमेशा अपनेको सहज स्वाभाविक अवस्थामें लानेका मार्ग खोज निकाला है।

११

अपूर्वके जानेका एकमात्र स्थान था तलवरकरका मकान। रंगूनमें बंगालियोंकी कमी नहीं है, मगर जबसे वह आया है तबसे इतनी झंझटोंमें उसके दिन बीते हैं कि किसीसे परिचय करनेकी उसे फुरसत ही नहीं मिली। घरसे निकलकर आज भी वह रेल्वे स्टेशनकी तरफ ही जा रहा था, पर अचानक उसे शनिवारको उनके सस्त्रीक थियेटर देखने जानेकी बात याद आ गई। लिहाजा, रास्तेमें घूमने-फिरनेके सिवा और कहीं जानेकी जब कोई सम्भावना नहीं दीखी तो चटसे भारतीकी भी याद आ गई। उसके प्रति अपनी गहरी अकृतज्ञता आज उसे तीक्ष्ण होकर चुभने लगी। उसका आहत मन अपने ही सामने मानो जवाबदेहीके तौरपर कहने लगा, 'वह अच्छी तरह होगी, उसे कुछ नहीं हुआ; नहीं तो क्या इतने बड़े जीवन-मरणके प्रश्नके विषयमें जरा वह खबर तक नहीं पहुँचाती? ऐसा हो ही नहीं सकता।' फिर भी वह इससे और आगे न बढ़ सका। तेलके कारखानेके पास ही कहीं उसका घर है, इस बातको वह भूला नहीं था। उसे ढूँढ़ निकालनेके लिए उसका मन नाच उठा। परन्तु इतने दिनों बाद इस तरह जो व्यक्ति अपनेको छिपाये हुए है, उसकी खबर लेने जानेकी लज्जाने भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। सम्भव है वह ऐसा नहीं चाहती हो, हो सकता है कि वह मुझे देखकर नाखुश हो। इसीसे, चलते चलते वह अपने आपसे सौ-सौ बार कहने लगा, पुलिस उसके दस्तखत चाहती है, लिहाजा मैं

अपने कामसे ही आया हूँ,—वह कैसे है, कहाँ रहती है, इन सब अकारण कुतूहलोंसे नहीं आया। इतने दिनों बाद यह अभियोग भारती मुझपर किसी तरह भी नहीं लगा सकती।

अपूर्व इस तरफ पहले कभी नहीं आया था। पूरबकी तरफ चौड़ी सड़क सीधी चली गई है। बहुत दूर चलकर दाहनी तरफ नदीके किनारे जो सड़क गई है, वहाँ पहुँचकर उसने एक आदमीसे पूछा, "इधर साहब-मेमोंके मकान किधर हैं, मालूम है?" इसके जवाबमें उसने आस-पासके जो बड़े-बड़े बंगले दिखाये, उनकी आकृति अवयव और ठाठ-वाट देखकर अपूर्व समझ गया कि उसके प्रश्नमें ही गलती हुई। संशोधन करके उसने फिर पूछा "बहुत-से हिन्दुस्थानी भी रहते हैं, कारीगर, मिस्त्री, उनके बाल-बच्चे—"

उस आदमीने कहा, "बहुत बहुत। मैं भी तो एक मिस्त्री हूँ। मेरे ही नीचे पचास कारीगर रहते हैं—जो कहता हूँ सो ही होता है।—छोटे साहबसे कहकर नौकरीसे बरखास्त तक करा सकता हूँ। आप किसको चाहते हैं?" अपूर्वने सोच समझकर कहा, "मैं किसे चाहता हूँ?—अच्छा जो बंगाली ईसाई, या—"

वह आश्चर्य-चकित होकर बोला, "कह रहे हैं बंगाली,—फिर ईसाई कैसा? ईसाई होनेसे क्या कोई बंगाली बना रहा है? ईसाई ईसाई है, मुसलमान मुसलमान है। बस, मैं तो इतना ही जानता हूँ साहब!"

अपूर्वने कहा, "ओः हो, आखिर हैं तो बंगालहीके! बंगला भाषा ही तो बोलते हैं!"

वह गरम हो उठा, बोला, "बोला करें, इससे क्या? बोलनेहीसे हो गया! जो अपनी जात गँवाकर ईसाई हो गया, उसमें रह क्या गया साहब? अगर कोई बंगाली उसके साथ आहार-ब्योहार करे तो देखूँ! वह एक आई है न औरत मास्टरनी,—लड़कोंको पढ़ा देती है, बस। पर क्या कोई उसके साथ खाता-पीता है, या बैठता-उठता है?"

जरा कुछ किनारा मिलते ही अपूर्वने उससे पूछा, "वे रहती कहाँ हैं, मालूम है आपको?'

"इतना भी नहीं मालूम मुझे? इस रास्तेसे सीधे जाकर गंगाके किनारे जाके पूछिएगा नया स्कूल कहाँ है,—नन्हा-सा लड़का भी बता देगा। डाक्टर

बाबू रहते हैं न वहाँ ! आदमी थोड़े ही हैं, देवता हैं देवता ! मुरदेको जिला सकते हैं। "—इतना कहकर वह अपने कामसे चला गया।

उस रास्तेसे सीधे जाकर अपूर्वको सामने एक लाल रंगका लकड़ीका मकान दिखाई दिया : दुमंजिला, एकदम नदीके किनारे। तब रात हो चुकी थी, रास्तेमें कोई आदमी नहीं था, मकानकी खुली खिड़कीसे प्रकाश आ रहा था। किसीसे पूछनेकी गरजसे वह वहीं खड़ा हो गया। मगर मनमें उसे सन्देह नहीं रहा कि भारती यहीं रहती होगी और उस खिड़कीसे ही उसके दर्शन होंगे।

लगभग पंद्रह मिनट बाद दो तीन आदमी बाहर निकले और उसे खड़ा देखकर जैसे चौंक पड़े। एकने पूछा, "कौन ? किसे चाहते हैं ?"

उसके संदिग्ध स्वरसे अपूर्व संकुचित होकर बोला, "मिस जोजफ नामकी कोई महिला यहाँ रहती हैं ?"

उसने उसी क्षण कहा, "रहती क्यों नहीं,—आइए।"

अपूर्वकी ठीक इच्छा जानेकी नहीं थी, परन्तु दुविधा करते ही उस आदमीने कहा, "आप कबसे खड़े हैं ? वे तो घर ही पर हैं,—आइए। हम आपको लिये चलते हैं।" इतना कहकर वह आगे बढ़ने लगा।

उसकी बातसे साफ जाहिर होता था कि वह उसे जाँच लेना चाहता है, लिहाजा सोचा : दरवाजेसे 'नहीं' कहकर लौट जानेसे उसका सन्देह ऐसा भद्दा रूप धारण करेगा कि जिसका ठिकाना नहीं। इसलिए "चलिए" कहकर वह उसके पीछे हो लिया और क्षण-भर बाद ही उस मकानके नीचेके कमरेमें पहुँच गया।—एक तरफ ऊपर जानेकी सीढ़ी है। हॉल जैसा लम्बा-चौड़ा कमरा है। छतके नीचे बड़ा भारी एक लैम्प लटक रहा है, कई टेबिल-कुरसियाँ पड़ी हैं, एक काला बोर्ड है और दीवारोंपर चारों तरफ तरह तरहके नक्शे टँगे हुए हैं, अपूर्व देखते ही समझ गया कि यही नया स्कूल है। वहाँ चार-पाँच जने स्त्री और पुरुष मिलकर किसी बातपर बहस कर रहे थे, सहसा एक अपरिचित आदमीको घुसते देख चुप हो गये। अपूर्व सिर्फ एक बार उनकी तरफ देखकर जिसके साथ आया था उसीके पीछे पीछे ऊपर चढ़ा चला गया। भारती घरपर ही थी; अपूर्वको देखकर उसका चेहरा चमक उठा। पास आकर उसके हाथ पकड़कर उसने स्वागतके साथ उसे एक कुरसीपर बिठा दिया, और कहा, "इतने दिनोंसे मेरी कुछ खबर ही नहीं ली अपने ?"

अपूर्वने कहा, "आपने भी तो मेरी खबर-सुध नहीं ली।" मगर तुरंत ही वह इस बातको समझ गया कि उसकी बात जवाबके हिसाबसे ठीक नहीं बैठी।

भारती सिर्फ जरा हँस दी, बोली, "तिवारी घर जाना चाहता है, उसे जाने दीजिए। नहीं जानेसे वह बिल्कुल नीरोग नहीं होगा।"

अपूर्वने कहा, "यानी आप हमारी खबर-सुध नहीं लेतीं, मेरा यह कहना सच नहीं?"

भारती फिर जरा हँसकर बोली, "कल रविवार है, कल तो कुछ होगा नहीं; हाँ, परसों बारह बजेके भीतर ही कोर्टमें जाकर आप अपने रुपये और चीज-वस्तु ले आइएगा। जरा देख-भालकर लीजिएगा, कहीं ठग न लें सब।"

"आपके दस्तखत चाहिए लेकिन।"

"मालूम है।"

अपूर्वने पूछा, "आपके साथ तिवारीकी शायद भेंट हो जाती होगी, क्यों?"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, "नहीं। पर आप जाकर उसपर झूठमूठ गुस्सा होइएगा।"

अपूर्वने कहा, "झूठमूठ नहीं, उसपर सचमुच ही गुस्सा होना चाहिए। आपने उसकी जान बचाई है, इतनी कृतज्ञता उसमें होनी चाहिए थी।"

भारतीने कहा, "सो तो है। नहीं तो, कमसे कम वह मुझे जेल भेजनेकी एक बार कोशिश तो कर ही देखता।"

अपूर्व इस व्यंगको समझ गया। नीचेको निगाह किये कुछ देर बैठा रहकर अन्तमें बोला, "आप मुझपर सख्त नाराज हैं?"

भारतीने कहा, "हरगिज नहीं। दिन-भर स्कूलमें लड़के-लड़कियोंको पढ़ाकर घर आती हूँ और समितिकी असंख्य चिठ्ठी-पत्रियाँ लिखकर बिस्तरपर पढ़ते पढ़ते सो जाती हूँ,—नाराज होनेका वक्त ही कहाँ है मेरे पास?"

अपूर्वने कहा, "अच्छा,—नाराज होनेका भी वक्त नहीं आपके पास!"

भारतीने कहा, "कहाँ है बताइए? आप किसी रोज सबेरेसे आकर देखिए, सच है कि झूठ।"

अपूर्वके मुँहसे बेमालूम एक दीर्घ निश्वास निकल पड़ी। बोला, "देखनेकी मुझे जरूरत ही क्या है!" फिर जरा ठहरकर बोला, "स्कूलसे आपको कितनी तनख्वाह मिलती है?"

भारतीने हँसी रोककर गम्भीर होकर कहा, " आप तो खूब आदमी हैं ! तनख्वाहकी बात कहीं किसीसे पूछी जाती है ? इससे उसका अपमान नहीं होता !"

अपूर्वने क्षुण्ण कंठसे कहा, " अपमान करनेके इरादेसे तो मैंने पूछा नहीं। जब कि नौकरी करती हैं—"

भारती बीचहीमें बोल उठी, " न करूँ, तो क्या आपका कहना है कि भूखों मरूँ ? "

अपूर्वने कहा, " जैसी यह नौकरी है, उसे देखते तो यह भूखों मरना ही है। इससे बल्कि, हमारे आफिसमें एक जगह खाली है, तनख्वाह सौ रुपये,—और दो-एक घंटेसे ज्यादा मेहनत भी नहीं करनी पड़ती। "

भारतीने कहा, " मुझे वही नौकरी करनेको कहते हैं ? "

अपूर्वने कहा, " दोष ही कौन-सा है ? "

भारतीने गरदन हिलाकर कहा, " नहीं, मैं नहीं करूँगी। आप ही तो उसके मालिक हैं, काममें कुछ गलती हुई नहीं कि आप लाठी लेकर दरवाजेपर आ खड़े होंगे ! "

अपूर्वने कुछ जवाब नहीं दिया। वह मन ही मन समझ गया कि भारती सिर्फ मज़ाक़ कर रही है; फिर भी उसके उस एक दिनके आचरणपर व्यंग कसनेसे उसका बदन जल उठा। कुछ देर पहलेसे नीचे जो तर्क-वितर्कका कोलाहल सुनाई दे रहा था, सहसा वह उद्दाम हो उठा। अपूर्वने भले मानसकी तरह कहा, " आपका स्कूल शायद शुरू हो गया,—लड़कोंने शायद पढ़नेमें ध्यान लगाया है ? "

भारतीने गम्भीरताके साथ कहा, " तब तो शोर कुछ कम होता। शायद उनके शिक्षकोंने विषय-निर्वाचनकी ओर ध्यान दिया है। "

" आप नहीं जायँगी ? "

" जाना तो चाहिए था, मगर आपको छोड़कर जानेको जी नहीं चाहता !" —इतना कहकर वह जरा मुसकराई। मगर अपूर्वके कान तक सुर्ख हो उठे। वह दूसरी तरफ आँखें फेरकर बगलकी दीवारपर कच्चे झाऊके पत्तोंसे लिखे हुए कई अक्षरोंकी ओर सहसा देखकर कहने लगा, " वह क्या लिखा है वहाँ ? "

भारतीने कहा, " पढ़िए न !"

अपूर्व क्षण-भर ध्यानसे बढ़कर बोला, ' पथका अधिकार'।' इसके मानी ?

भारतीने कहा, " यही हमारी समितिका नाम है। यही हमारा मंत्र है, यही हमारी साधना है। आप हमारे सदस्य होंगे ? "

अपूर्वने कहा, " आप खुद तो सदस्या होंगी ही। मगर हमें करना क्या होगा ? "

भारतीने कहा, " हम सभी राहगीर हैं, पथिक हैं। मनुष्यको मनुष्यताकी राहपर चलनेके सब तरहके दावे या अधिकार मानते हुए हम समस्त बाधा-विघ्नोंको रौंदते हुए चलेंगे। हमारे बाद जो लोग आयेंगे, वे बिना किसी उपद्रवके चल सकें, उनकी अबाध गतिको कोई रोक न सके, यही हम लोगोंका प्रण है। आयेंगे आप हमारे दलमें ? "

अपूर्वने कहा, " हम पराधीन जातिके हैं। हम अँगरेज नहीं हैं, फरासीसी नहीं है, अमेरिकन नहीं हैं,—कहाँ मिलेगी हमें अबाध गति ? स्टेशनमें एक बेञ्चपर बैठनेका हमें हक नहीं, अपमानित होकर शिकायत करनेका भी रास्ता नहीं। " कहते कहते उस दिनकी सारी बेइज्जती,—फिरंगी छोकरोंके बूटोंकी मारसे लेकर स्टेशन-मास्टर द्वारा निकाले जाने तकका साराका सारा अपमान और उसकी वेदनाको याद करके उसकी दोनों आँखें प्रदीप्त हो उठीं। बोला, " हम लोगोंके बैठनेसे बेञ्च अपवित्र हो जाती है,—हमारे घुसनेसे घरकी हवा गंदी हो जाती है,—हम लोग जैसे आदमी ही नहीं! हमारे शरीरमें मानो आदमीका जीव, आदमीका खून ही नहीं है!—इसीके विरुद्ध अगर आप लोगोंकी साधना हो, तो मैं भी आपके साथ हूँ। "

भारतीने कहा, " आप भी क्या मनुष्यकी इस ज्वालाको महसूस करते हैं अपूर्व बाबू ? सचमुच क्या आदमीकी छूतसे आदमीको कुछ आपत्ति न करनी चाहिए, एककी देहकी हवा लगनेसे दूसरेके घरकी हवा गंदी नहीं होती ? "

अपूर्व तीव्र कंठसे कहने लगा, " हरगिज नहीं। मनुष्यके चमड़ेका रंग उसकी मनुष्यताका पैमाना नहीं। किसी एक खास देशमें पैदा होना ही तो उसका अपराध नहीं हो सकता ? माफ कीजिएगा आप, जोज़फ साहबके सिर्फ क्रिश्चियन होनेकी वजहसे ही अदालतने मुझपर बीस रुपया जुरमाना कर दिया था। धर्म भिन्न होनेसे ही क्या मनुष्य हीन साबित हो जाता है ? यह कहाँका न्याय है ? मैं कहता हूँ आपसे, इसी वजहसे मरेंगे ये लोग किसी दिन। यह जो

मनुष्यको अकारण छोटा और नीचा समझना है, यह जो घृणा है, यह जो विद्वेष-भाव है, इस अपराधको भगवान् हरगिज माफ नहीं कर सकते।"

वेदना और बेइज्जतीके मुकाबिले दुनियामें ऐसी कोई चीज नहीं जो मनुष्यकी सच्ची रूहको खींचकर बाहर ला सके। इसीके कारण वह सब कुछ भूलकर अपमान करनेवालोंके विरुद्ध अपमानितोंकी पीड़ा और पीड़कके विरुद्ध पीड़ितोंके मर्मान्तिक अभियोगसे सहसमुख हो उठा था। भारती उसके उद्दीप्त चेहरेकी तरफ देखती हुई अब तक चुप बैठी थी, परन्तु, उसकी बात खत्म होते ही उसने सिर्फ जरा-सा मुसकरा दिया और मुँह फेर लिया। अपूर्व चौंक उठा, मानो उसके चेहरेपर किसीने जोरसे तमाचा मार दिया हो। भारतीके किसी भी प्रश्नपर अबतक उसने ध्यान नहीं दिया था, लेकिन अब वे अग्नि-रेखाकी तरह उसके दिमागमें ऐसे जोर-शोरसे चक्कर काटने लगे कि उसके मुँहसे कुछ बात ही नहीं निकली।

थोड़ी देर बाद भारतीने जब मुँह फेरकर देखा तब उसके ओठोंपर हँसीका चिह्न तक न था। बोली, "आज शनिवारको हमारा स्कूल बन्द है, पर समितिका काम होता है। चलिए न, नीचे चलकर डॉक्टरसे आपका परिचय करा दूँ और सदस्य भी बना लूँ।"

"वे क्या सभापति हैं?"

"सभापति! नहीं, वे हमारे जड़-मूल हैं। जमीनके नीचे रहते हैं, उनका काम आँखोंसे नहीं दीखता।"

जड़के प्रति अपूर्वको रंचमात्र भी कुतूहल पैदा नहीं हुआ। पूछने लगा, "आपके सदस्य शायद सभी क्रिश्चियन होंगे?"

भारतीने कहा, "नहीं तो, मेरे सिवा और सब हिन्दू हैं।"

अपूर्व आश्चर्यान्वित होकर बोला, "मगर औरतोंका गला भी तो सुन रहा हूँ?"

भारतीने कहा, "वे भी हिन्दू हैं।"

अपूर्वने क्षण-भर दुविधा करके कहा, "लेकिन वे शायद जाति-भेद,— यानी खाने-पीने और छुआछूत आदिका विचार नहीं रखती होंगी?"

भारतीने कहा, "नहीं।" फिर हँसती हुई बोली, "मगर कोई ऐसे विचार रखता भी हो, तो उसके मुँहमें हम जबर्दस्ती कोई खानेकी चीज नहीं ठूँस

देतीं। आदमीकी व्यक्तिगत प्रवृत्तिका हमारे यहाँ सम्मान किया जाता है। आपके लिए डरनेकी कोई बात नहीं।"

अपूर्वने कहा, "डरकी क्या बात है! मगर,—अच्छा, आप जैसी शिक्षित महिला भी शायद इसमें होंगी?"

"मुझ जैसी?" वह हँसती हुई बोली, "हमारी जो सभानेत्री हैं, उनका नाम है सुमित्रा, वे अकेली ही सारी दुनिया घूम आई हैं,—सिर्फ एक डाक्टरके सिवा उन जैसी विदुषी शायद इस समितिमें और कोई नहीं है।"

अपूर्वने आश्चर्यके साथ पूछा, "और जिन्हें आप डाक्टर कहती हैं, वे?"

"डाक्टर?" श्रद्धा और भक्तिसे भारतीकी आँखें सजल हो उठीं, बोली "उनकी बात छोड़िए अपूर्व-बाबू। परिचय देकर शायद उन्हें छोटा कर डालूँगी।"

अपूर्वने आगे कोई प्रश्न नहीं किया, वह चुप हो रहा। देशको प्यार करनेका नशा उसके खूनमें समाया हुआ है, इस लिए 'पथका अधिकार' नामकी विचित्रता उसे अपनी ओर खींचने लगी। इस संगीहीन बन्धुहीन विदेशमें इतने असाधारण शिक्षित नर नारियोंकी आशा और आकांक्षाएँ, प्रयत्न और उद्यम,—उनका इतिहास, उनके रहस्यमय कर्म-जीवनकी अपरिज्ञात पद्धति कि जो उस अद्भुत नामको जकड़ती जा रही है,—उसके साथ घनिष्ठ मिलनके लोभको जीतना कठिन है। परन्तु फिर भी न जाने कैसी एक विजतीय धर्म-हीन अस्वास्थ्यकर भाप नीचेसे उठ उठकर उसके मनको धीरे-धीरे ग्लानिसे भर देने लगी।

शोर बढ़ता ही जा रहा था। भारतीने कहा, "चलिए, चलें।"

अपूर्वने रायमें राय मिलाकर कहा, "चलिए।"

दोनों नीचे पहुँच गये। भारतीने उसे एक बेतके शोफेपर बिठा दिया और स्थानाभावसे वह भी उसके पास बैठ गई।

वह आसन इतना संकीर्ण था कि उसपर उतने आदमियोंके सामने भद्रताकी रक्षा करते हुए दो जनोंका बैठना नहीं हो सकता था। ऐसा अद्भुत आचरण भारतीने पहले कभी नहीं किया था। अपूर्वको सिर्फ संकोच ही नहीं हुआ, वह अत्यन्त लज्जा भी अनुभव करने लगा। मगर, वहाँ इन सब बातोंपर ध्यान देनेकी भी किसीको फुरसत नहीं मालूम होती थी। उसका और भी एक

बातपर लक्ष्य गया : उस जैसे अपरिचित व्यक्तिको आसन ग्रहण करते देख लगभग सभीने उसकी तरफ देखा, परन्तु वाद-विवाद ऐसी उद्दाम गतिसे चल रहा था कि उसमें रंच-मात्र भी बाधा नहीं पहुँची। सिर्फ एक आदमी, जो कि उसकी तरफ पीठ किये टेबिलपर बैठा हुआ कुछ लिखा रहा था, लिखता ही रहा। अपूर्वका आगमन शायद उसे मालूम ही न हुआ। अपूर्वने सबको गिनकर देखा, छह महिलाएँ और आठ पुरुष मिलकर वाद-विवादमें भाग ले रहे हैं। इनमें सभी अपरिचित थे,—सिर्फ एक आदमीको अपूर्व देखते ही पहचान गया। वेश-भूषामें कुछ परिवर्तन जरूर हो गया है, परन्तु इस मूर्तिको कुछ दिन पहले उसने मिकथिला रेल्वे-स्टेशनपर बिना टिकट सफर करनेके कुसूरपर पुलिसके हाथसे बचाया था, और इसीने अपनी इच्छासे यथाशीघ्र रुपये वापस भेज देनेका वचन भी दिया था। उसने इसकी तरफ देखा भी, मगर शराबके नशेमें जिसके आगे हाथ पसारकर उपकार ग्रहण किया था, शराब बिना-पीई हालतमें वह उसका स्मरण नहीं कर सका। किन्तु उसके कारण नहीं, बल्कि भारतीका खयाल करके अपूर्वके हृदयमें गहरी चोट पहुँची कि ऐसे संसर्गमें वह कैसे आ फँसी?

सामने कोई खड़ा था, उसके बैठे जाते ही भारतीने अपूर्वके कानके पास अपना मुँह ले जाकर चुपकेसे कहा, "वे ही हैं हमारी प्रेसिडेण्ट सुमित्रा।"

कहनेकी जरूरत नहीं थी, अपूर्व देखते ही ताड़ गया था कि नारीके द्वारा अगर किसी समितिका संचालन हो सकसा है, तो वह यही होनी चाहिए। उम्र होगी तीसके करीब; परन्तु है ऐसी जैसे राज-रानी। रंग कच्चे सोने जैसा, दाक्षिणात्य ढंगका जूड़ा बँधा हुआ है, हाथोंमें गिनतीकी चार चार सोनेकी चूड़ियाँ हैं, गर्दनके पास सोनेके हारका कुछ हिस्सा चमक रहा है, कानोंमें सब्ज नगदार एरन लटक रहे हैं जो नगोंपर प्रकाश पड़नेसे साँपकी आँखोंके समान चमक उठे हैं,—यही तो चाहिए!—ललाट, ठोड़ी, नाक, आँख, भौंहें,—कहींपर जरा भी कोई नुक्स नहीं,—कैसा सुन्दर आश्चर्यजनक रूप है! काले बोर्डपर एक हाथ टेके खड़ी हैं। अपूर्वके पलक गिरते ही नहीं। वह गणित पढ़कर ही इतना बड़ा हुआ है, काव्यके साथ उसका बहुत कम परिचय है, मगर, जो लोग काव्य लिखा करते हैं, वे संसारमें इतनी चीजोंके होते हुए भी तरुण लताके साथ नारी-देहकी क्यों तुलना करते हैं, यह बात आज

और इस दलमें रहती हुई भी वे सतीत्व कायम रखकर देशकी सेवा कर सकेंगीं, यह बात दावेके साथ हरगिज नहीं कही जा सकती।"

सुमित्राके चेहरेपर कुछ सुर्खी आ गई, पर उसी वक्त स्वाभाविक भाव लाकर उन्होंने कहा, "दावेके साथ कुछ कहना उचित भी नहीं। परन्तु हम लोगोंने देखा है: नवताराके हृदय है, जीवन है, साहस है,—और जो सबसे बढ़कर है वह धर्म-ज्ञान भी है। देशकी सेवाके लिए इतना होना हमारी दृष्टिमें काफी है। लेकिन हाँ, जिसे आप सतीत्व कहते हैं, उसे कायम रखना उनके लिए सहज होगा या नहीं, सो वे ही जानें।"

मनोहरने नवताराके झुके हुए चेहरेकी तरफ कटाक्षसे देखते हुए व्यंग-भरे स्वरमें कहा, "बहुत ही ऊँचा धर्मज्ञान है! देशकी सेवा करती हुई शायद वे यही शिक्षा देशकी औरतोंको देती फिरेंगीं?"

सुमित्राने कहा, "उनके दायित्व-ज्ञानपर हम लोगोंका विश्वास है। व्यक्ति-विशेषके चरित्रकी आलोचना करना हमारा नियम नहीं। परन्तु जिस पतिको वे मनसे प्रेम नहीं कर सकी हैं, उसे और एक बड़े कामके लिए छोड़ आनेमें उन्होंने अन्याय नहीं समझा,—यही शिक्षा अगर वे देशके महिला समाजको देना चाहें तो दें, हमारी तरफसे उसपर कोई भी आपत्ति नहीं होगी।"

मनोहरने कहा, "हमारे इस सीता-सावित्रीके देशमें ऐसी ही शिक्षा वे औरतोंको देंगीं?"

सुमित्राने समर्थन करते हुए कहा, "उचित तो यही है। औरतोंके आगे सिर्फ अर्थ-हीन बोल न सुनाकर नवतारा अगर कहें कि इस देशमें सीताने एक दिन आत्म-सम्मानकी रक्षाके लिए पतिको त्यागकर पाताल-प्रवेश किया था, और राजकन्या सावित्रीने दरिद्र सत्यवानसे विवाहसे पहले इतना प्रेम किया था कि अत्यन्त अल्पायु जानकर भी उनसे विवाह करनेमें उन्हें जरा भी हिचकिचाहट नहीं हुई थी,—मैं खुद भी अपने दुराचारी पतिको प्रेम नहीं कर सकी हूँ, इसलिए मेरी जैसी हालतमें तुम भी ऐसा ही करना,—तो इस शिक्षासे देशकी महिलाओंकी भलाई ही होगी, मनोहर बाबू!"

मनोहरके ओठ मारे क्रोधके काँपने लगे। पहले तो उसके मुँहसे बात ही नहीं निकली, बादमें आवेशमें आकर वे बोले, "तो देश जहन्नुमको जायगा!" फिर सहसा हाथ जोड़कर कहने लगे, "दुहाई है आप लोगोंकी, खुद आप जो चाहें,

कीजिए, मगर दूसरोंको यह शिक्षा न दीजिए। विलायती सभ्यताकी आमद होनेसे हमारा काफी नुकसान हो चुका है, मगर अब औरतोंमें भी उसका प्रचार करके सारे भारतवर्षको रसातल न पहुँचाइए।"

सुमित्राके चेहरेपर विरक्ति और क्लान्ति दोनों एक साथ प्रकट हो उठीं, बोलीं, "रसातलसे बचानेका अगर कोई रास्ता है, तो यही है। असलमें, विलायती सभ्यताके विषयमें आपको विशेष कुछ ज्ञान नहीं है, लिहाजा, इस विषयमें बहस करनेसे सिर्फ वक्त बरबाद होगा। बहुत-सा समय चला भी गया है,—हमें और काम भी करने हैं।"

मनोहर बाबूने यथासाध्य क्रोधका दमन करते हुए कहा, "समय मेरे पास भी बहुत नहीं है। तो नवतारा नहीं जायँगीं?"

नवताराने अबतक मुँह उठाकर देखा भी नहीं था, उसने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

मनोहरने सुमित्रासे पूछा, "तो इनका दायित्व आप ही लोगोंने ले लिया?"

नवताराने ही इसका जवाब दिया, "अपना दायित्व मैं खुद ही ले सकूँगी, आप चिन्तित न हों।"

मनोहरने वक्र दृष्टिसे नवताराकी ओर देखकर फिर सुमित्रासे ही प्रश्न किया, "आपहीसे पूछता हूँ, पतिके घर विवाहित जीवन बितानेकी अपेक्षा स्त्रीके लिए क्या और भी कोई गौरवकी चीज है,—आप बता सकती हैं?"

सुमित्राने कहा, "औरोंके विषयमें चाहे जो हो; परन्तु कमसे कम नवताराके विषयमें इतना कह सकती हूँ कि उनके पतिके घरके विवाहित जीवनको मैं गौरवका जीवन नहीं कह सकती।"

इस उत्तरके बाद मनोहर बाबू अपनेको सम्हाल न सके। अत्यन्त कटु कंठसे बोल उठे, "मगर अब घरके बाहर उसके असती जीवनको शायद गौरवका जीवन कह सकेंगीं?"

मगर आश्चर्य है कि इतने बड़े बीभत्स व्यंगसे भी किसीके चेहरेपर कोई चांचल्य नहीं दिखाई दिया। सुमित्राने शान्त स्वरमें ही कहा, "मनोहर बाबू, हमारी समितिमें संयत भावसे बात करनेका नियम है।"

"और उस नियमको अगर मैं न मान सकूँ?"

"तो आपको बाहर निकाल दिया जायगा।"

मनोहर बाबू आपेसे बाहर होकर पागल-से हो गये। धनुषकी डोरीसे छूटे हुए तीरकी तरह सतर होकर बोले, "अच्छा जाता हूँ! गुड बाई!" इतना कहकर दरवाजेके पास पहुँचते ही उनका उन्मत्त क्रोध मानो सहस्र धाराओंमें बह पड़ा। हाथ पैर पटकते हुए जोरसे चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे, "मैं तुम-लोगोंका सब हाल जानता हूँ। अँगरेजी राज्यको तुम लोग उखाड़ फेंकना चाहते हो। मगर यह खयाल भी न करना। मैं गँवार किसान नहीं हूँ, ऐडवोकेट हूँ। अच्छा, देखा जायगा!" कहकर वे अँधेरेमें लपकते हुए चले गये। सहसा मालूम हुआ जैसे एक बड़ा काण्ड-सा हो गया। किसीने उत्तेजना प्रकट नहीं की, परन्तु सभीके चेहरेपर मानो एक छाया-सी पड़ गई। सिर्फ एक ही आदमीने जो कोनेमें बैठा इधर पीठ किये लिख रहा था, इधरको देखा तक नहीं। अपूर्वको मालूम हुआ : या तो वह बिलकुल बहरा है, या एकदम पत्थरकी तरह निराकुल निर्विकार है। भारतीका चेहरा उसने देखना चाहा, पर मानो वह जान बूझकर दूसरी तरफ गर्दन फिराये बैठी रही। मनोहर आदमी चाहे जैसा भी हो, पर इस समितिके विरुद्ध जैसी बातें कह गया है, वे अत्यन्त सन्देहजनक हैं। इतने आश्चर्यपूर्ण स्त्री-पुरुष कहाँसे आये और कैसे इन लोगोंने इस समितिका संगठन किया, इनका सच्चा उद्देश्य क्या है, सहसा भारती इनमें कैसे आ जुटी, और वह जो एक दिन टिकट खरीदनेके बदले शराब खरीदके पी गया था और उसकी आँखोंके सामने पकड़ा गया था,—सबसे बढ़कर यह नवतारा यहाँ कैसे आई! पतिको त्यागकर देशकी सेवा करने आई है!—सतीत्व-रक्षाकी बातपर विचार करनेकी अभी जिसे फुरसत ही नहीं! और मजा यह कि ये लोग इतने बड़े अन्यायका समर्थन ही नहीं करते बल्कि उसे बढ़ावा भी देते हैं! और जो इन सबकी संचालिका हैं, स्त्री होकर भी वे प्रकाश्य सभामें इतने पुरुषोंके सामने सती-धर्मके प्रति अपनी एकान्त अवज्ञा निःसंकोच भावसे प्रकट करनेमें जरा लजाई तक नहीं! आखिर यह है क्या?

कुछ देरतक कमरेमें एकदम सन्नाटा छाया रहा। बाहर अँधेरा था और संकीर्ण सड़क भी सूनसान थी। न मालूम कैसी एक उद्विग्न आशंकासे अपूर्वका मन भीतरसे भारी-सा हो उठा।

सहसा सुमित्राका कंठ ध्वनित हो उठा, "अपूर्व बाबू!"

अपूर्वने चौंककर मुँह उठाके उनकी तरफ देखा।

सुमित्राने कहा, "आप तो हम लोगोंको पहचानते नहीं। लेकिन, भारतीके जरिए हम सब आपको पहचानते हैं। सुना है आप हमारी समितिके सदस्य होना चाहते हैं। सच है?"

अपूर्व 'नहीं' न कर सका, गर्दन हिलाकर सम्मति दे बैठा। जो आदमी कोनेमें बैठा एकाग्र चित्तसे लिख रहा था, उसकी तरफ लक्ष्य करके सुमित्राने कहा, "डाक्टर, अपूर्व बाबूका नाम लिख लीजिएगा।" फिर वे अपूर्वसे हँसकर बोलीं, "हमारे यहाँ किसी तरहका चन्दा नहीं देना पड़ता, यह हमारी समितिकी एक खास विशेषता है।"

प्रत्युत्तरमें अपूर्वने खुद भी जरा हँसनेकी कोशिश की, पर वह हँस न सका। एक मोटे रजिस्टरमें सचमुच ही जब उसका नाम लिख लिया गया तो भीतर ही भीतर उसका मन चंचलतासे भर उठा और चुप न रह सकनेके कारण बोल उठा, "मगर क्या उद्देश्य है, क्या मुझे करना होगा,—यह सब कुछ तो मुझे मालूम ही नहीं हुआ!"

"भारतीने क्या आपको कुछ समझाया नहीं?"

अपूर्व क्षण-भर सोचकर बोला, "कुछ समझाया तो है; मगर एक बात मैं आपसे पूछता हूँ, नवताराके आचरणको क्या आपकी समिति वास्तवमें अन्याय नहीं समझती?"

सुमित्राने कहा, "कमसे कम मैं तो नहीं समझती। कारण, देशसे बढ़कर मेरे लिए और कुछ भी नहीं है।"

अपूर्वने श्रद्धाके साथ कहा, "देशको मैं भी प्राणोंसे ज्यादा प्यार करता हूँ और मानता हूँ कि देशकी सेवा करनेका अधिकार स्त्री-पुरुष दोनोंको समान है, मगर दोनोंका कार्य-क्षेत्र एक नहीं। हम पुरुष बाहर आकर काम करेंगे, स्त्रियाँ घरमें रहकर, शुद्ध अन्तःपुरमें पति-पुत्रकी सेवामें रहकर अपनेको सार्थक बनायेंगीं। उनके इस वास्तविक कल्याणसे देशका जितना बड़ा काम होगा, उतना काम पुरुषोंके साथ भीड़ करके खड़े जानेसे नहीं हो सकता।"

सुमित्रा हँस दी। अपूर्वने चारों ओर लक्ष्य किया तो मालूम हुआ कि लगभग सभी उसकी तरफ गौर करके मुसकरा रहे हैं। सुमित्राने कहा, "अपूर्व बाबू, यह बहुत दिनोंकी और बहुतोंके मुँहसे निकली हुई बात है, इस बातको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। लेकिन आप तो जानते हैं, किसी बातको

बहुत दिनोंसे बहुत-से आदमी कहते चले आये हों, तो इतनेहीसे वह सच्ची नहीं हो जाती। इसके भीतर पोल है। जिन लोगोंने कभी किसी दिन देशका काम नहीं किया, यह उन्हींकी कही हुई बात है। देशकी अपेक्षा अपना स्वार्थ जिनके लिए बहुत बड़ा है, वे ही यह कहते हैं। पर इसमें जरा भी सत्य नहीं। आप स्वय जब काममें लग जायँगे, तब इस सत्यका अनुभव करने लगेंगे कि जिसे आप स्त्रियोंका बाहर आकर पुरुषोंमें भीड़ करना कहते हैं, वह अगर किसी दिन हो सका, तो सचमुच ही देशका काम होगा; नहीं तो सिर्फ पुरुषोंकी भीड़ सूखी बालूकी भीतकी तरह झर-झरकर गिर पड़ेगी, किसी दिन भी जमकर पक्की नहीं होगी।"

अपूर्व मन ही मन लज्जित होकर बोला, "पर इससे क्या अनीति नहीं बढ़ेगी ? चरित्र कलुषित होनेका डर नहीं रहेगा ?"

सुमित्राने कहा, "डर क्या भीतर भी रहते हुए कम रहता है ? घरोंके भीतर क्या अनीत नहीं होती ? अपूर्व बाबू, वह बाहर आनेका दोष नहीं है, दोष विधाताका है जिन्होंने नर-नारीकी सृष्टि की है। उनमें अनुराग जो भर दिया है उन्होंने ! अपूर्व बाबू, मनमें जरा विनय रखकर संसारके और देशोंकी तरफ भी तो देखिए ?"

इस मन्तव्यको सुनकर अपूर्व खुश न हो सका, बल्कि, जरा कुछ तीव्रताके साथ ही कहने लगा, "अन्य देशोंकी बात अन्य देश सोचें, हम अपने कल्याणकी बात सोच सकें, तो यही हमारे लिए काफी है। आप मुझे क्षमा करेंगी। यहाँ मैं एक बातपर ध्यान दिये बगैर नहीं रह सकता कि विवाहित जीवनपर आप लोगोंकी आस्था नहीं है, और तो क्या नारीत्वका जो चरम उत्कर्ष है, उस सतीत्व और पातिव्रत्य धर्मको भी आप लोग उपेक्षाकी दृष्टिसे देखती हैं। इससे कल्याण हो सकता है ?"

सुमित्रा कुछ देर तक उसके चेहरेकी तरफ देखकर सकौतुक स्निग्ध कंठसे बोली, "अपूर्व बाबू, आप जरा नाराजीसे कह रहे हैं, नहीं तो, ठीक यह भाव तो मैंने प्रकट नहीं किया। और, आद्यन्त आपने गलत ही समझा हो, सो भी नहीं। जिस समाजमें केवल 'पुत्रार्थे' ही भार्या ग्रहण करनेकी विधि है, नारी होनेके कारण उस विधिको तो मैं श्रद्धाकी दृष्टिसे नहीं देख सकती। आप-सतीत्वके चरम उत्कर्षकी बड़ाई कर रहे थे, मगर जिस देशमें यही विवाहकी व्यवस्था है उस देशमें वह चीज बड़ी नहीं हो सकती, छोटी ही होती है। सतीत्व तो सिर्फ देहमें ही सीमित नहीं है अपूर्व बाबू, वह मनसे भी तो होना चाहिए।

मन-वचन-कायसे प्रेम बगैर हुए तो उसका ऊँचे स्तरपर पहुँचना सम्भव नहीं। आप क्या वास्तवमें यही समझते हैं कि मंत्र पढ़कर ब्याह होजानेसे कोई भी भारतीय स्त्री किसी भी भारतीय पुरुषको प्रेम कर सकती है ? यह क्या तालाबका पानी है जो किसी भी पात्रमें भर कर मुँह बन्द कर देनेसे काम चल जायगा ? "

अपूर्वको सहसा कुछ जवाब ढूँढ़े नहीं मिला, बोला, "मगर हमेशासे चलता तो आ रहा है ? "

सुमित्राने उसकी बात सुनकर हँसते और सिर हिलाते हुए कहा, " सो तो चल ही रहा है। 'प्राणाधिक' 'प्राणनाथ' लिखनेमें उन्हें कोई हिचकिचाहट नहीं होती, कर्तव्यकी दृष्टिसे श्रद्धा-भक्ति करनेमें भी उन्हें संकोच नहीं। और वास्तवमें, घर-गृहस्थीके काममें इससे ज्यादाकी जरूरत भी नहीं होती। आपने तो कथा पढ़ी ही होगी कि कोई एक ऋषि-पुत्र दूधके बदले चावलका धोवन पीकर ही रहते थे।—पर आराम चाहे जैसा भी हो; जो चीज नहीं है, उसकी कल्पना करके गर्व तो नहीं किया जा सकता ? "

यह आलोचना अपूर्वको बहुत ही वाहियात मालूम हुई। परन्तु अबकी बार भी वह कुछ जवाब न बन सकनेके कारण कहने लगा, " आप क्या यह कहना चाहती हैं कि इससे ज्यादा किसीके भाग्यमें कुछ जुटता ही नहीं ?"

सुमित्राने कहा, " नहीं, ऐसा मैं कह ही नहीं सकती। कारण, संसारमें 'क्वचित् कभी' नामके भी शब्द मौजूद हैं। "

अपूर्वने कहा, " अच्छा, क्वचित् कभी ही सही। मगर बात आपकी सच भी हो, तो भी मैं कहूगा कि समाजके मंगलके लिए और उत्तर पुरुषके कल्याणके लिए यही अच्छा है। "

सुमित्राने उसी प्रकार शान्त किन्तु दृढ़ स्वरसे कहा, " नहीं अपूर्व बाबू, समाज और आपके उत्तर पुरुष इनमेंसे किसीका भी इससे अन्ततो गत्वा कल्याण न होगा। समाज और वंशके नामपर व्यक्तियोंको अब तक बलि किया जाता रहा है, पर फल उसका अच्छा नहीं हुआ,—आज वह नहीं चल सकता। प्रेमकी सबसे बड़ी आवश्यकता उत्तर-पुरुषके लिए न होती तो ऐसे जबर्दस्त स्नेहकी व्यवस्था उसके अन्दर टिक ही नहीं सकती थी। विवाहित जीवनके इस व्यर्थ मोहकी मायासे नारीको अलग होना ही पड़ेगा। उसे समझना ही होगा कि इसमें उसके लिए लज्जाकी बात है, गौरवकी नहीं। "

अपूर्वने व्याकुल होकर कहा, "लेकिन आप जरा सोचिए तो सही, आपकी इन सब शिक्षाओंसे हमारे सुनियंत्रित समाजमें अशान्ति और विद्रोह उठ खड़ा होगा!"

सुमित्राने कहा, "होने दीजिए। अशान्ति और विद्रोहके मानी तो अकल्याण नहीं है, अपूर्व बाबू! जो रोगी है, कमजोर है, जिसके झुर्रियाँ पड़ रही हैं, वही तो अपनेको उत्कंठित सावधानताके साथ बचाता रहता है कि किसी तरफसे उसे धक्का न लग जाय। रात दिन क्षण क्षण इसी डरसे वह सूखके काँटा होता जाता है, जरासे हिलने-डुलनेमें ही उसकी चुटकियोंमें जान आ जाती है। और, अगर समाजकी ऐसी ही हालत हो गई हो, तो हो जाने दीजिए इस पार कि उस पार। दो दिन आगे-पीछे होनेमें ज्यादा क्या नुकसान है?"

इस बातका अपूर्वने जवाब नहीं दिया, वह चुप रहा। सुमित्रा खुद भी कुछ देर मौन रही, फिर बोली, "ऋषि-पुत्रकी उपमा देकर मैंने शायद आपके मनको दुखाया है। लेकिन करती क्या, इतना दुःख जो आपका बकाया था; उससे मैं आपको बचा भी कैसे सकती थी?"

उसकी अन्तिम बात अपूर्वकी समझमें न आई, लेकिन उसका विरक्तिका पात्र भर चुका था। इसीसे उत्तरमें कह बैठा, "जगन्नाथजीके रास्तेमें खड़े होकर मिशनरी लोग यात्रियोंको काफी सताते हैं; फिर भी, उस टोंटे जगन्नाथको छोड़कर कोई पूरे हाथोंवाले ईसाको नहीं भजता। आश्चर्य है कि टोंटेसे ही उनका काम चल जाता है!"

सुमित्रा गुस्सा नहीं हुई, हँसकर बोली, "संसारमें 'आश्चर्य' है, इसीलिए तो आदमीका जीना असम्भव नहीं हो जाता अपूर्व बाबू! पेड़के पत्तोंका रंग सभीको सब्ज नहीं दिखाई देता, यह उन्हें मालूम ही नहीं। फिर भी लोग उसे सब्ज ही कहते हैं, यह क्या कम आश्चर्य है? सतीत्वका सच्चा मूल्य जाननेसे क्या—"

"सुमित्रा!" जो आदमी अब तक चुपचाप लिख रहा था, वह उठकर खड़ा हो गया। सभी उसके साथ उठ खड़े हुए।

अपूर्वने देखा: गिरीश महापात्र है।

भारतीने उसके कानमें कहा, "ये ही हैं हमारे डाक्टर। खड़े हो जाइए।"

काठकी पुतलीकी तरह अपूर्व उठके खड़ा हो गया, परन्तु क्षणमें कुछ मनोहरके अन्तिम शब्दोंकी याद आते ही उसका सारा खून बर्फ़-सा ठंडा हो गया।

गिरीशने उसके पास आकर कहा, "आप शायद मुझे भूले न होंगे। मुझे ये सब लोग डाक्टर कहते हैं।" इतना कहकर वह हँस दिया।

अपूर्व न हँस सका, धीरेसे बोला, "मेरे चाचाजीकी नोट-बुकमें कोई एक,—भयानक-सा नाम लिखा हुआ है—"

गिरीशने सहसा उसके दोनों हाथ अपने हाथोंमें लेकर चुपकेसे कहा, "सव्यसाची न ?" और फिर हँसकर कहने लगा, "मगर रात हो गई है अपूर्व बाबू, चलिए आपको जरा आगे पहुँचा दूँ। रास्ता ठीक नहीं है,—पठान वर्क-मैनोंको शराब पीनेपर कुछ होश-हवास नहीं रहता। चलिए।" —इतना कहकर डाक्टर लगभग जबरदस्ती ही उसे घरसे बाहर ले गये।

अपूर्व सुमित्राको नमस्कार भी न कर सका, भारतीसे एक बात भी न कर पाया,—मगर सबसे बड़ी चीज जो उसके हृदयपर धक्का मारने लगी वह था मोटा रजिस्टर जिसमें उसका नाम लिखा रह गया!

१२

कुछ कदम आगे बढ़कर अपूर्वने सौजन्य दिखाते हुए कहा, "आपका अस्वस्थ कमज़ोर शरीर है, अब ज्यादा चलनेकी जरूरत नहीं। सीधा रास्ता तो गया है, बड़ी सड़कपर आसानीसे पहुँच जाऊँगा,—आप रहने दीजिए अब।"

डाक्टरने चलते हुए ही जरा हँसकर कहा, "आसानीसे आनेसे ही क्या आसानीसे जाया जा सकता है अपूर्व बाबू? तब, शामके वक्त जो रास्ता सीधा था, अब इतनी रात बीते पठान और बेकार हब्शियोंने मिलकर शायद उसे काफी टेढ़ा बना दिया हो। चलिए, अब खड़े मत होइए।"

अपूर्वने इशारा समझते हुए भी पूछा, "क्या करते हैं ये लोग? मार-पीट भी करते हैं?"

साथीने हँसते हुए ही कहा, "करते क्या नहीं! शराबका खर्च दूसरोंके मत्थे लादनेके इस कामको अभी तक वे छोड़ नहीं सके हैं। मान लीजिए, जैसे आपके

पास सोनेकी घड़ी है। यदि वह दूसरेकी जेबमें जाने लगे तो आपको आपत्ति होगी ही। फिर उसके बादकी घटना तो अत्यन्त स्वाभाविक है। ठीक है न?"

अपूर्वने गर्दन हिलाकर कहा, "ठीक तो है, पर यह तो मेरे पिताजीकी घड़ी है।"

डाक्टरने कहा, "यह तो वे समझना चाहेंगे नहीं! लेकिन आज वगैर समझे काम नहीं चलेगा।"

"अर्थात्?"

"अर्थात् आज इसके बदले उन्हें शराब पीनेको न मिल सकेगी।"

अपूर्व क्षण-भर मौन रहकर सन्दिग्ध कंठसे बोला, "बल्कि चलिए, और किसी रास्तेसे घूमकर निकल जायँ।"

डाक्टर उसके चेहरेकी तरफ देखकर खिलखिलाकर हँस दिये। वह लगभग औरतोंकी स्निग्ध सकौतुक हँसी थी। बोले, "घूमकर? अब आधी रातके वक्त? नहीं नहीं, उसकी जरूरत नहीं, चलिए।" कहकर उन्होंने अपने उसी दुबले पतले हाथसे अपूर्वका दाहिना हाथ खींचकर ऐसा दबा दिया कि अपूर्वके बहुत दिनोंके जिम्नास्टिक, क्रिकेट और हॉकी खेले हुए हाथके भीतरकी हड्डियाँ तक चरचरा उठीं।

अपूर्व अपना हाथ छुड़ाकर बोला, "चलिए, समझ गया।" और तब उसने खुद भी जरा हँसनेकी कोशिश की और कहा, "चाचाजीने उस दिन आपके विषयमें ही हँसीमें कहा था, 'बेटाजी, उस महापुरुषके स्वागतके लिए क्या यों ही इतने आदमियोंका इन्तजाम किया जाता है? हम लोगोंके गुप्त रजिस्टरमें लिखा है कि वे कृपा करें तो पाँच-सात-दस पुलिसवालोंकी जिन्दगी सिर्फ तमाचे मारकर ही खत्म कर सकते हैं!' चाचाजीके कहनेके ढंगपर हम लोग उस दिन खूब हँसे थे, लेकिन, अब मालूम होता है कि हँसना ठीक नहीं था; आप चाहें तो यह भी कर सकते हैं!"

डाक्टरके चेहरेका भाव बदल गया, कहने लगे, "चाचाजीकी वह अतिशयोक्ति थी। मगर 'हम लोग' कौन कौन?"

अपूर्वने कहा, "वे और उनके दो-चार कर्मचारी।"

"अच्छा, वे लोग!" कहकर उसने एक साँस ले ली। अपूर्व इसका अर्थ समझ गया; पर कुछ देरतक उसे कोई बात ही नहीं सूझी। सीधा रास्ता

आज सीधा ही था; क्योंकि, किसी भी कारणसे हो, रुपये-पैसे छीननेवाला वहाँ कोई भी मौजूद नहीं था। निर्जन सुनसान गलीको पार करके बड़ी सड़कके करीब पहुँचनेपर अपूर्व सहसा बोल उठा, "अब शायद मैं बेधड़क जा सकूँगा। धन्यवाद।"

उत्तरमें डाक्टरने कम प्रकाशमय सामनेकी चौड़ी सड़कपर बहुत दूरतक निगाह फैलाकर धीरेसे कहा, "जा सकेंगे शायद।"

अपूर्व नमस्कार करके बिदा होते समय अपने भीतरके कुतूहलको किसी भी तरह दबा न सका, कह बैठा, "अच्छा, सव्य—"

"नहीं नहीं, सव्य नहीं,—डाक्टर बाबू!"

अपूर्व जरा कुछ लज्जित-सा होकर बोला, "अच्छा डाक्टर बाबू, हम लोगोंका सौभाग्य है कि रास्तेमें कोई था नहीं, मगर मान लीजिए कि अगर वे तादादमें ज्यादा होते, तो भी क्या कोई डर नहीं था?"

डाक्टरने कहा, "तादादमें वे दो-चार-दससे कभी ज्यादा नहीं होते।"

अपूर्वने कहा, "दो-चार-दस जने! यानी दो आदमी होते तो भी डर नहीं था और दस होते तो भी नहीं?"

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, "नहीं।"

बड़ी सड़कके चौराहेपर आकर अपूर्वने पूछा, "अच्छा, वास्तवमें क्या आपका पिस्तौलका निशाना कभी गलत होता ही नहीं?"

डाक्टरने उसी तरह मुसकराते और गर्दन हिलाते हुए कहा, "नहीं। मगर क्यों, बताइए तो? मेरे साथ तो पिस्तौल है नहीं।"

अपूर्वने कहा, "बगैर लिये ही निकल पड़े हैं,—आश्चर्य है! अँधेरी गहरी रात साँय साँय कर रही है।" वह सुनसान लम्बे रास्तेकी तरफ देखकर बोला, "रास्तेमें न तो कोई आदमी है, न पुलिस है; और बत्तियाँ भी हैं सो नहींके बराबर। अच्छा डाक्टर बाबू, मेरा मकान यहाँसे कोस-भरके करीब होगा? क्यों?"

डाक्टरने कहा, "हाँ, इतना तो होगा ही!"

अपूर्वने कहा, "अच्छा नमस्कार, आपको बड़ी तकलीफ दी।" और फिर जानेको तैयार होकर कहा, "अच्छा, ऐसा भी तो हो सकता है कि आज वे लोग किसी दूसरे रास्तेपर खड़े हों?"

डाक्टरने अनुमोदन करते हुए कहा, "कोई आश्चर्य नहीं।"

अपूर्वने कहा, "आश्चर्य क्या है! होंगे ही!—अच्छा नमस्कार! मगर एक मजेकी बात देखी! जहाँ असली जरूरत है, वहाँ पुलिसकी छाया तक नहीं दिखाई देती! यही तो है उनका कर्तव्य-ज्ञान! और इसीके लिए हम लोग टैक्स देते देते मरे जाते हैं! सब बन्द कर देना चाहिए। क्यों, है न ठीक?"

"इसमें क्या शक!" कहकर डाक्टर खिलखिलाकर हँस दिये। वैसी ही औरतोंकी-सी कोमल मीठी हँसी थी। बोले, "चलिए, बात करते करते और भी थोड़ा-सा आगे पहुँचा दूँ।"

अपूर्व मारे शर्मके एकदम म्लान हो गया। क्षण-भर जमीनकी तरफ देखकर धीरेसे बोला, "मैं बड़ा डरपोक आदमी हूँ डाक्टर बाबू, मुझमें जरा भी साहस नहीं। और कोई होता तो बड़ी आसानीसे चला जा सकता, इतनी रातमें आपको तकलीफ न देता।"

उसकी इस विनम्र और निरभिमान सच्ची बातपर डाक्टर अपनी हँसीपर आप ही कुछ लज्जित-से हो गये। स्नेहसे उसके कंधेपर हाथ रखकर बोले, "साथ चलनेके लिए ही मैं आया हूँ अपूर्व बाबू, नहीं तो प्रेसिडेण्ट यह चीज मेरे हाथमें न देतीं।" और तब उन्होंने अपने बायें हाथकी काली-सी मोटी चीज दिखाई।

अपूर्वने चौंककर कहा, "सुमित्राने? तो क्या वे आपपर भी हुक्म चला सकती हैं?"

डाक्टरने हँसकर कहा, "क्यों नहीं!"

अपूर्वने कहा, "मगर वे और किसी आदमीको भी तो साथ भेज सकती थीं?"

डाक्टरने कहा, "उसके मानी होते, सबको एक साथ भेजना। उससे यही व्यवस्था सीधी थी अपूर्व बाबू।"

चलते चलते बातें होती रहीं। डाक्टरने कहा, "सुमित्रा हमारे दलकी संचालिका हैं, उन्हें सब तरफ निगाह रखकर चलना पड़ता है। जहाँ छुरी-छुरा खून-जख्म वगैरह होनेकी सम्भावना है वहाँ तो हर किसीको भेजा नहीं जा सकता। मैं नहीं होता तो आज आपको वहीं रहना पड़ता,—वे किसी तरह आने ही नहीं देतीं।"

इस सुनसान अँधेरे रास्तेमें छुरी-छुरेके नामसे अपूर्वके रोंगटे खड़े हो गये। धीरेसे बोला, " मगर इसी रास्ते आपको जो अकेले जाना पड़ेगा ? "

डाक्टरने कहा, " सो तो पड़ेगा ही । "

अपूर्वने फिर कोई प्रश्न नहीं किया । उसके निभृत वार्तालापकी गूँज कहीं किसी अवांछित व्यक्तिको न खींच लाये, इस बातका खयाल उसके मनमें मौजूद था । वह अपनी आँख, कान और मनको एक ही साथ रास्तेके दाहिने, बायें और सामने नियुक्त करके दबे-पाँव तेजीके साथ चलने लगा । लगभग पन्द्रह मिनट तक इसी तरह चलकर, शहरका पहला पुलिस-स्टेशन पार करके, बस्तीमें प्रवेश करनेके बाद अपूर्व फिर बात करने लगा । बोला, डाक्टर बाबू, मेरा घर तो अब ज्यादा दूर नहीं है, चलिए न, यदि आज रातको वहीं रह जाइए तो क्या हर्ज है ? "

डाक्टर उसके मनकी बात ताड़ गये, हँसते हुए बोले, " हर्ज बहुत-सी बातोंमें नहीं होता अपूर्व बाबू, मगर बिना जरूरतके भी कोई काम करनेकी हमारे यहाँ मनाही है । सिर्फ जरूरत न होनेकी वजहसे ही मुझे लौट जाना होगा । "

" आप लोग क्या बिना जरूरत दुनियामें कोई काम ही नहीं करते ? "

" करना मना है ।—तो मैं अब चलूँ अपूर्व बाबू ? "

पीछेके सारे अन्धकारमय रास्तेकी तरफ देखकर और इस आदमीके अकेले लौट जानेकी कल्पना करके अपूर्वको रोमांच हो आया । बोला, " डाक्टर बाबू, आदमीकी इज्जत रखनेकी भी आपके यहाँ मनाही है ? "

डाक्टरने आश्चर्यके साथ पूछा, " अचानक ऐसी बात क्यों ? "

अपूर्व क्षुण्ण अभिमानके स्वरमें बोला, " इसके सिवा और क्या हो सकता है, बताइए ? मैं डरपोक आदमी हूँ, गुण्डोंके झुंडमेंसे अकेला नहीं जा सकता, पर मुझे सही-सलामत पहुँचाकर उसी विपत्तिके भीतरसे आप अगर अकेले लौट जायँ, तो फिर मैं क्या मुँह दिखाने लायक रहूँगा ? "

डाक्टरने उसी वक्त मारे स्नेहके उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और कहा, " अच्छा तो चलिए, आज रातको आपके ही यहाँ अतिथि होकर रहूँगा । मगर ऐसा बखेड़ा क्या आपको अपने ऊपर लेना चाहिए भाई ? "

अपूर्व बातको ठीक तौरसे समझ न सका, परन्तु कुछ कदम आगे बढ़ते ही

जब उसके हाथमें जरा खिंचाव पड़ने लगा, तो उसने घूमकर देखा कि डाक्टर लँगड़ा रहे हैं। बोला, " आपके जूतेमें लग रही है मालूम होता है, आप लँगड़ा क्यों रहे हैं ? "

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, " कुछ नहीं। बस्ती आते ही मेरे पैर ऐसे ही लँगड़ाने लगते हैं। गिरीश महापात्रका चलना याद है ? "

अपूर्व ठिठककर खड़ा हो गया। बोला, " तो अब आपके जानेकी जरूरत नहीं डाक्टर बाबू। "

डॉक्टरने उसी तरह मुसकराकर कहा, " मगर आपकी इज्जत ? "

अपूर्वने कहा, " आपके सामने मेरी इजत कैसी ? पाँवकी धूलके बराबर भी नहीं। आपके सिवा दुनियामें क्या और किसीको इतनी हिम्मत हो सकती है ? "

इस डाक्टर नामधारी व्यक्तिके जीवन-इतिहासके साथ अपूर्वका प्रत्यक्ष परिचय कुछ भी न था। होता, तो वह इस अत्यन्त तुच्छ बातपर इतना उच्छ्वास प्रकट करनेमें मारे शर्मके गड़ जाता। समुद्रके आगे गोष्पदके समान इस रास्तेको अकेले तय करना इस आदमीके लिए क्या है! पुलिसके आदमी जिसे सव्यसाचीके रूपमें जानते हैं, दस-बारह गुण्डे मिलकर भला उसका रास्ता कैसे रोक सकते हैं ?

डाक्टरने मुँह फेरकर हँसीको छिपाते हुए अन्तमें भले मानसकी तरह कहा, " अच्छा, इससे तो यह अच्छा है कि चलिए हम दोनों जने फिर एक साथ लौट चलें। मुझ अकेलेपर तो शायद कोई हमला करनेकी हिम्मत भी करे, पर आपके रहनेसे उसकी सम्भावना नहीं रहेगी। "

अपूर्वने अनिश्चित स्वरमें कहा, " फिर लौटूँ ? "

डाक्टरने कहा, " हर्ज क्या है ? तब मेरे अकेले जानेके खतरेकी भी आशंका न रहेगी ? "

" रहूँगा कहाँ ? "

" मेरे पास। "

आफिससे लौटनेके बाद अपूर्वने खाना नहीं खाया था, उसे जोरकी भूख लग रही थी। वह जरा लज्जित होकर बोला, "देखिए, मैंने अभी तक खाया-पीया नहीं है,—न हो तो आज—"

डाक्टरने उसी तरह हँसते चेहरेसे कहा, "चलिए न, भाग्यकी परीक्षा ही सही आज। लेकिन एक बात है, तिवारी बेचारा बड़ी फिक्र करेगा।"

तिवारीका नाम सुनते ही अपूर्वके मनमें एक तरहकी बदला लेनेकी भावना जाग उठी, वह गुस्सेमें आकर बोला, "मरने दीजिए उसे,—चलिए आप।" इतना कहकर वह एक तरहसे जबर्दस्ती ही उन्हें साथ लेकर उस अँधेरे-उजाले रास्तेसे वापस लौटने लगा। डरकी बात उसे याद ही नहीं रही और इससे वह पुलिस-स्टेशन पार होनेके बाद चलते चलते सहसा पूछ बैठा, "अच्छा, डाक्टर बाबू, आप क्या ऐनार्किस्ट हैं?"

डाक्टरने अँधेरेमें ही उसके चेहरेपर तीक्ष्ण दृष्टि डालते हुए पूछा, "आपके चाचाजीकी क्या राय है?"

अपूर्वने कहा, "उनका तो कहना है कि आप एक जबर्दस्त ऐनार्किस्ट हैं।"

"तो मैं ही सव्यसाची हूँ, इस विषयमें आपको क्या कोई सन्देह ही नहीं है?"

"नहीं।"

"ऐनार्किस्टका आप क्या अर्थ समझते हैं?"

अपूर्वसे इस प्रश्नका सहसा जवाब देते नहीं बना। वह जरा सोचकर बोला, "यानी राजद्रोही,—जो राजाका शत्रु हो।"

डाक्टरने कहा, "हमारे राजा इस देशमें नहीं रहते, विलायतमें रहते हैं। लोग कहते हैं कि वे बहुत ही अच्छे आदमी हैं। न मैंने कभी उन्हें आँखोंसे देखा है और न उन्होंने ही मेरा रंचमात्र नुकसान किया है। तब उनसे मेरा वैर-भाव हो ही कैसे सकता है अपूर्व बाबू?"

अपूर्वने कहा, "जिनको होता है, उनको कहाँसे हो जाता है बताइए? उनका भी तो उन्होंने अनिष्ट नहीं किया?"

डाक्टरने जोरसे सिर हिलाते हुए कहा, "ठीक है, आप जैसा कह रहे हैं वैसा इस देशमें कोई नहीं है,—बिलकुल झूठ बात है।"

उनके कंठस्वरकी प्रबलता और अस्वीकार करनेकी तीव्रतासे वह चौंक पड़ा। अविश्वास करनेकी उसे हिम्मत ही नहीं हुई। फिर भी देशमें कुछ न कुछ तो है ही, बचपनमें उसकी देहको भी इसकी आँच लग चुकी है; और पिता डिप्टी मजिस्ट्रेट न होते तो कहाँका पानी कहाँ जाकर मरता इस बातका उसने बड़ेपनमें पद-पदपर अनुभव किया है। जरा सोचकर उसने कहा, "राजा न

सही राज-कर्मचारियोंके विरुद्ध कोई न कोई षड्यंत्र चल रहा है, यह तो झूठ नहीं है डाक्टर बाबू ?"

डाक्टरने बहुत देर तक कोई उत्तर नहीं दिया, उसके बाद धीरेसे कहा, "राज-कर्मचारी राजाके नौकर हैं, तनख्वाह पाते हैं, हुक्मकी तामील करते हैं। एक जाता है, दूसरा आता है। यह सहज और मोटी बात है। परन्तु आदमी जब इस सहजको जटिल और मोटीको निरर्थक बारीक करके देखना चाहता है, तब उससे सबसे बड़ी गलती होती है। इसीसे वह उनपर आघात करनेको ही राज-शक्तिकी जड़में आघात करना समझकर आत्म-वंचना करता है। इतनी बड़ी घातक व्यर्थता और नहीं हो सकती।"

अपूर्व जरा चुप रहकर बोला, "मगर ऐसे व्यर्थ कामको करनेवाले क्या हिन्दुस्तानमें नहीं हैं ?"

डाक्टरने शान्त भावसे कहा, "हो भी सकते हैं।"

परन्तु अपूर्व सहसा आग्रहान्वित हो उठा, बोला, "अच्छा डाक्टर बाबू, ये लोग सब रहते कहाँ हैं और करते क्या हैं ?"

उसकी उत्सुकता और व्यग्रता देखकर डाक्टर बाबू सिर्फ जरा हँस दिये।

अपूर्वने कहा, "हँसने लगे आप तो ?"

डाक्टरने उसी तरह हँसकर कहा, "आपके वे चाचाजी होते तो शायद समझ जाते। जब आपकी धारणा है कि मैं एक ऐनार्किस्टोंका पण्डा हूँ तब मेरे मुँहसे क्या इसके जवाबकी आशा करनी चाहिए अपूर्व बाबू ?"

अपनी अबुद्धिमानीका साफ इशारा पाकर अपूर्व शर्मिन्दा हो गया, मन ही मन जरा नाराज भी हुआ, बोला, "आशा करना बिलकुल ही अनुचित होता अगर आज मैं आपके दलमें न मिला लिया गया होता। इस बातको शायद आप अस्वीकार न करेंगे कि सदस्यको यह सब जाननेका अधिकार है। यह तो लड़कोंका खेल नहीं है, जबर्दस्त जिम्मेदारी भी तो है ?"

"है ही।" कहकर डाक्टर बाबू हँस दिये। यह मीठी हँसी और निरातङ्क सहज बात अपूर्वके कानोंमें ठीक व्यंगोक्तिके समान खटकी। विद्रोही-दलके पक्के रजिस्टरमें जिसका नाम लिख लिया गया है, उसके प्रश्नका क्या यही उत्तर होना चाहिए ? इससे ज्यादा जाननेकी उसे आवश्यकता ही नहीं ? मन ही मन डर कर और क्रुद्ध होकर इस आदमीको आज उसने गलत समझ लिया, परन्तु

बादमें इस गलतीको सुधारकर उसे अनेकों बार देखना पड़ा कि किसी भी हालतमें और किसी भी कारणसे इसके मुँहकी हँसी उद्वेगसे और गलेका स्वर उत्तेजनासे चञ्चल नहीं हुआ।

निःशब्द गम्भीरताके साथ डाक्टरके इस साधारण संक्षिप्त जवाबका प्रतिकार करनेकी इच्छासे वह चुपचाप रास्ता चलने लगा, मगर ज्यादा देर तक उससे न रहा गया, उस छोटी-सी बातकी तीक्ष्णता तीरकी तरह मानो उसकी छातीमें छिदने लगी। वह तीखे स्वरमें बोला, " किसी दलके रजिस्टरमें नाम लिख लेनेसे ही काम नहीं चलता, उसका फलाफल भी समझा देना पड़ता है।"

" परन्तु उन लोगोंने क्या ऐसा नहीं किया ? "

अपूर्वने कहा, " कहाँ, कुछ भी तो नहीं किया! 'पथका अधिकार!'—पर अधिकार या दावेका अर्थ इतना होगा, सो कौन जानता था ? और आप भी तो मौजूद थे, नाम लिखनेके पहले जानना तो चाहिए था कि मेरा यथार्थ मत क्या है ? "

डाक्टर बाबूने जरा लज्जित होकर कहा, " लड़कियोंने यह सब किया है, वे ही जानती हैं किसे मेम्बर बनायें और किसे नहीं। मैं तो अचानक आ गया हूँ। वास्तवमें मैं इस सभाके बारेमें विशेष कुछ जानकारी नहीं रखता।"

अपूर्वने समझा यह भी मज़ाक़ है। उत्कंठा और आशंकासे सारीकी सारी बातें उसे बहुत ही भद्दी मालूम हुईं। अपनेको फिर वह सम्हाल न सका, जल-भुनकर कहने लगा, " क्यों छल कर रहे हैं डाक्टर बाबू ? चाहे सुमित्राको प्रेसिडेण्ट बनाइए चाहे और किसीको; दल आपका ही है और आप ही इसके सर्वेसर्वा हैं, इसमें मुझे रंच-मात्र भी सन्देह नहीं। पुलिसकी आँखोंमें धूल झोंक सकते हैं, पर मेरी आँखोंको आप धोखा नहीं दे सकते, यह आप निश्चय समझ लीजिए। "

अबकी बार उस दुबले-पतले रहस्यप्रिय आदमीने अकृत्रिम विस्मयके साथ दोनों आँखें फाड़कर अपूर्वके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, "मेरे दलसे आपका मतलब है ऐनार्किस्ट दल ? आप झूठमूठ ही शंकित हो उठे हैं अपूर्व बाबू, आपने शुरूसे आखिर तक गलती की है। उनका ठहरा जीने-मरनेका खेल, वे भला आप जैसे डरपोक आदमीको शामिल करेंगे ? वे क्या पागल हैं ? "

अपूर्व मारे शर्मके गड़ गया, मगर उसकी छातीपरसे एक भारी पत्थर-सा भी उतर गया। डॉक्टरने कहा, " पथका अधिकार' नाम देकर सुमित्रा ने ही

इस छोटी-सी समितिकी प्रतिष्ठा की है। आदमी भूल गया है कि जीवन-पथपर स्वेच्छानुसार निर्विघ्न चलनेका मनुष्यका दावा कितना बड़ा और कितना पवित्र है। आप लोग, अर्थात् जो उस समितिके सदस्य हैं वे, अपना सम्पूर्ण जीवन देकर आदमीको उस बातकी याद दिलाना चाहते हैं। सुमित्राने मुझसे अनुरोध किया कि मैं जितने दिन यहाँ हूँ, उसकी समितिका संगठन कर दूँ। मैं राजी हो गया,—बस, इसके सिवा आप लोगोंके साथ मेरा कोई सम्बध नहीं। आप लोग ठहरे समाज-सुधारक, मगर मुझे समाज-सुधार करते फिरनेकी न तो फुरसत है और न इतना धैर्य ही। हो सकता है कि कुछ दिन रहूँ, और नहीं तो कल ही चल दूँ; संभव है फिर जिन्दगी-भर किसीसे भेंट ही न हो। जिन्दा हूँ या नहीं, यह खबर भी शायद आप लोगोंके कानोंतक न पहुँचे।"

उनकी बातें शान्त और धीर थीं; उच्छ्वास या आवेगकी उसमें भाफतक न थी। यह व्यक्ति चाहे जो भी हो; परन्तु सव्यसाचीके जो लक्षण अपूर्वने अपनें चाचाजीसे सुन रक्खे थे, चटसे उसे उनकी याद आ गई और तब उसकी छातीमें शूल-सा छिद गया। परन्तु उसी वक्त उसे यह भी खयाल आ गया कि वह पाषाण है, उसके लिए यह वेदनाकी अनुभूति क्यों? क्षण-भर बाद उसने पूछा, "डाक्टर बाबू, सुमित्रा कौन हैं? आपका उनसे परिचय कैसे हुआ?"

उत्तरमें डाक्टर सिर्फ जरा हँस दिये। जवाब न पाकर अपूर्व स्वयं समझ गया कि ऐसा पूछना ठीक नहीं हुआ। इस थोड़ेसे अर्सेमें ही वह इस रहस्यमय विचित्र समाजके आचरणकी विशिष्टतापर गौर करने लगा था, इसीसे वह भारतीके सम्बन्धमें भी अपने कुतूहलको दबाकर चुप हो रहा।

पाँच-छह मिनट इसी तरह चुपचाप बीत जानेपर डाक्टरने ही पहले बात छेड़ी, कहा, "आपके भाग्यसे ही शायद आज रास्ता बिलकुल साफ था। अक्सर ऐसा देखनेमें नहीं आता। मगर आप सोच क्या रहे हैं, बताइए तो?"

अपूर्वने कहा, "सोच तो बहुत कुछ रहा हूँ, पर छोड़िए उस सबको।—अच्छा, आपने कहा न, मनुष्यका जीवन-पथपर निर्विघ्न चलनेका अधिकार है। जैसे हम लोग आज निर्विघ्न चल रहे हैं,—ठीक इसी तरह न?"

डाक्टरने हँसकर कहा, "इसी तरहका ही कुछ होगा शायद।"

अपूर्वने कहा, "लेकिन वह जो महिला पतिको छोड़कर इस समितिकी सदस्या होने आई है, उसे तो मैं ठीकसे समझ नहीं सका?"

डाक्टरने कहा, " मैं भी ठीक समझ गया हूँ, ऐसा नहीं कह सकता। इन सब-बातोंको सुमित्रा ही अच्छी तरह समझती है।"

अपूर्वने पूछा, " उसके शायद पति नहीं हैं ?"

डाक्टर चुप रहे। अपूर्वको लजा और क्षोभके साथ फिर याद करना पड़ा कि उसके अकारण औत्सुक्यका वे जवाब नहीं देंगे। और इस बातकी जाँचके लिए ज्यों ही उसने इस साथीके चेहरेकी तरफ देखा, त्यों ही वह एक बारगी आश्चर्य-चकित हो गया। उसे ऐसा मालूम हुआ कि मानो इस आश्चर्यजनक आदमीके अपरिचित जीवनका एक छुपा हुआ कोना दिखाई दे गया। वहाँ क्या है, सो तो कहना मुश्किल है, पर अब तक जो कुछ वह मालूम कर सका था, उससे वह अलग चीज है। मानो उसका मन किसी सुदूर प्रान्तरमें चला गया है, आसपास कहीं भी नहीं है। पासके एक लैम्प-पोष्टका क्षीण प्रकाश उसके चेहरे-पर पड़ रहा था, बगलसे जाते समय अपूर्वने स्पष्ट देखा कि इस सदा-सावधान व्यक्तिकी आँखोंपर एक धुँधला जाल-सा घूम रहा है,—क्षण-भरके लिए मानो वह मन ही मन कोई चीज ढूँढ़ रहा है।

अपूर्वने फिर कोई प्रश्न नहीं किया, चुपचाप चलता गया। इसके दो ही मिनट बाद अकस्मात अकारण ही वे हँस पड़े और बोले, "देखिए अपूर्व बाबू, आपसे मैं सच ही कह रहा हूँ, स्त्रियोंके इन सब प्रणय-घटित मान-अभिमानोंकी बातें मेरी समझमें कतई नहीं आतीं। समझनेकी कोशिश भी की जाय तो निरर्थक बहुत ज्यादा समय नष्ट हो जाता है, और समय इतना कहाँसे मिले ?"

अपूर्वके प्रश्नका यह उत्तर नहीं था, वह चुप हो रहा। डाक्टर कहने लगे, "बड़ी मुश्किल है। इनके बगैर काम भी नहीं चलता, और शामिल कर-नेसे बखेड़ा उठ खड़ा होता है!"

यह मन्तव्य भी असम्बद्ध था। अपूर्वने कुछ जवाब नहीं दिया।

" क्या हुआ ? आप तो बोल ही नहीं रहे कुछ ?"

अपूर्वने कहा, " क्या कहूँ, बताइए ?"

डाक्टरने कहा, " जो तबीयतमें आवे। देखिए अपूर्व बाबू, यह भारती बड़ी अच्छी लड़की है। जैसी बुद्धिमती, वैसी ही कर्मठ और भद्र।"

यह भी फालतू बात है। परन्तु प्रत्युत्तरमें उसने यह प्रश्न जान-बूझकर ही

नहीं किया कि आपने उसे कितने रोजसे जाना है और कैसे जाना? सिर्फ बोला, "हाँ।" परन्तु श्रोताका अगर इधर जरा भी ध्यान होता तो अपूर्वके मुँहसे निकले हुए इस एक अक्षरके जवाबसे वह आश्चर्य-चकित हो जाता। परंतु वे कुछ अन्यमनस्क-से होकर बात कर रहे हैं, यह बात अपूर्वको पहले-हीसे मालूम थी। डाक्टरने शायद अपने अन्तिम शब्दोंके सिलसिलेमें ही कहा, "आपके बारेमें वह कह रही थी, कि 'आप बड़े कट्टर हिन्दू हैं, और मने इतने बड़े कट्टर हिन्दू ब्राह्मणकी जात मार दी है!'"

अपूर्वने कहा, "हो सकता है।" उस अत्यन्त अन्यमनस्क आदमीके साथ बातचीत करनेकी उसकी तबीयत ही नहीं हुई। बड़ी सड़क लगभग खत्म हो चली थी, गलीकी मोड़पर आमने-सामनेकी दो बत्तियाँ सामने ही दिखाई दे रही थीं; दसेक मिनट और चलनेसे घर आ जायगा। इतनेमें डाक्टर अपने सोते हुए मनको अकस्मात् फटकारकर एकदम सजग होकर बोले, "अपूर्व बाबू!"

अपूर्व उनके स्वरकी तीक्ष्णतासे सचेत होकर बोला, "कहिए!"

डाक्टरने कहा, "इस देशमें जब तक मैं हूँ तब तक तो जरूरत नहीं; परन्तु मेरे चले जानेपर आप निःसंकोच भावसे सुमित्राको सहायता पहुँचाते रहिएगा। ऐसी स्त्री आप संसार घूम आनेपर भी कहीं न पायेंगे। इनकी यह समिति कहीं अनादर और लापरवाहीसे सूख न जाय।—एक इतने बड़े आइडियाको क्या सिर्फ ये इनी-गिनी स्त्रियाँ सार्थक कर सकती हैं? आपकी एकनिष्ठ सेवाकी आवश्यकता है।"

इस व्यक्तिकी धारणाके अनुसार वास्तवमें वह इतनी बड़ी महिला है, इस बातपर अपूर्वको विश्वास नहीं हुआ। बोला, "फिर इतने बड़े आइडियाको छोड़कर आप स्वयं क्यों चले जाना चाहते हैं?"

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, "अपूर्व बाबू, जहाँ छोड़ जाना मंगल-जनक है, वहाँ पकड़े रहना अकल्याणकर ही होता है। मेरी सहायताकी आप लोगोंको आवश्यकता नहीं,—आप लोग स्वयं इसे बना डालिए। सम्भव है, इसीके द्वारा देशकी सबसे बड़ी सेवा हो जाय।"

अपूर्वने कहा, "नवताराके बारेमें तो मैं विश्वास नहीं कर सकता डाक्टर बाबू!"

डाक्टरने कहा, " परन्तु सुमित्रापर विश्वास कीजिएगा। विश्वास करनेकी इतनी बड़ी ऊँची जगह आपको और कहीं न मिलेगी अपूर्व बाबू ! " थोड़ी देर ठहरकर फिर कहा, " आपसे तो मैं पहले ही कह चुका हूँ कि स्त्रियोंके बारेमें मेरी जानकारी बहुत कम है; मगर सुमित्रा जब कहती है कि जीवन-पथमें मनुष्यको चलनेका बाधा-बन्धनहीन अधिकार है, तो उसके इस दावेको किसी भी युक्तिसे अमान्य नहीं किया जा सकता। सिर्फ मनोहरकी ही बात नहीं,—बहुतसे आदमियोंके निर्दिष्ट किये हुए मार्गपर चलनेसे नवताराका जीवन निर्विघ्न होता, इस बातको मैं समझता हूँ, और यह भी मानता हूँ कि जो रास्ता उसने खुद अपने लिए चुना है वह निरापद नहीं है; परन्तु स्वयं विपत्तियोंमें डूबा हुआ मैं उसका विचार कैसे कर सकता हूँ, बताइए ? सुमित्राका कहना है, इस जीवनको निर्विघ्न बिता सकना ही मनुष्यका चरम उद्धार है। मनुष्यका विचार ही उसके कार्यको नियंत्रित करता है; परन्तु दूसरोंके विचारद्वारा निर्धारित कार्य जब हमारे स्वाधीन विचारका मुँह बन्द कर देता है तब उससे बढ़कर आत्महत्या मेरी समझमें हमारे लिए और कुछ हो ही नहीं सकती !—इस बातका तो कोई जवाब मुझे ढूँढ़े नहीं मिलता अपूर्व बाबू ! "

अपूर्वने कहा, "मगर सभी लोग अगर अपने विचारके अनुसार—"

डाक्टर बीचमें ही बोल उठे, "अर्थात् सभी अगर अपने अपने खयालके अनुसार काम करना चाहें,—यही न ? " और जरा मुसकरा दिये, फिर बोले " तब फिर कैसी दुर्घटनाएँ होंगीं, आप सुमित्रासे जरा पूछ देखिएगा। "

अपूर्व अपने प्रश्नको गलत समझकर लज्जाके साथ उसका संशोधन करना चाहता था, पर उसके लिए समय ही नहीं मिला। डाक्टर बीचहीमें बोल उठे " मगर अब बहस नहीं चल सकती अपूर्व बाबू, हम लोग आ पहुँचे। खैर, और किसी दिन इस आलोचनाका अंत किया जायगा। "

अपूर्वने सामने मुँह उठाकर देखा : वही लाल रंगका स्कूलवाला मकान है और भारतीके दुमँजिले कमेरेसे बत्तीका प्रकाश आ रहा है।

डाक्टरने पुकारा, " भारती ! "

भारतीने खिड़कीमेंसे मुँह निकालकर व्यग्र स्वरमें कहा, "विजयके साथ आपकी भेंट हुई थी डाक्टर बाबू ? आपको बुलाने गया है वह। "

डाक्टरने कहा, "तुम्हारी प्रेसिडेण्टकी आज्ञासे न ? मगर कोई भी हुक्म

इतनी रातमें किसीको उस रास्ते भेजा नहीं सकता।—लेकिन किसे वापस ले आया हूँ, देखा?"

भारतीने गौरसे देखा और अँधेरेमें भी पहचान लिया कि अपूर्व है। बोली, "अच्छा नहीं किया। लेकिन आप जल्दी जाइए, नरहरिने शराब पीकर कुदालीसे अपनी स्त्रीका सिर फोड़ डाला है, बचेगी या नहीं, सन्देह है। सुमित्रा बहिन वहीं गई हैं।"

डाक्टरने कहा, "अच्छा ही तो किया है। मरती है तो मरने दो।—हाँ, मेरे अतिथिका क्या होगा?"

भारतीने कहा, "स्त्रियोंपर तो आपका असीम अनुग्रह है! अगर वह उसकी स्त्री न होती, खुद नरहरि होता, तो अब तक आप उलटे-पाँव कबके भागके पहुँच गये होते!"

डाक्टरने कहा, "खैर, तुम्हारे कहनेसे उलटे-पाँव ही भागा भागा जाऊँगा। —पर अतिथि?"

"मैं आ रही हूँ" कहकर भारती बत्ती हाथमें लिये हुए तुरत ही उतर आई और दरवाजा खोलकर बोली, "सचमुच अब देर न कीजिए डाक्टर बाबू, जाइए।—मगर, ईसाईके आतिथ्यको क्या ये मंजूर करेंगे?"

डाक्टर मन ही मन जरा झुँझलाकर बोले, "इन्हें छोड़कर मैं जा भी कैसे सकता हूँ भारती?—अस्पताल भेजनेका इन्तजाम क्यों नहीं किया?"

भारतीने गुस्सा होकर कहा, "जो करना हो आप कीजिए डाक्टर बाबू, आपके पैरों पड़ती हूँ, देरी न कीजिए। मैं इन्हें सम्हाल लूँगी, आप कृपा करके जल्दी जाइए।"

अपूर्व अब तक चुप खड़ा था; परन्तु, उसके लिए एक आदमीकी जान जाय, ऐसा तो हरगिज नहीं होना चाहिए, यह सोचकर वह कुछ कहना ही चाहता था कि उसके पहले ही डाक्टर साहब तेजीसे चल दिये और अन्धकारमें अदृश्य हो गये।

१३

भारती नीचेके दरवाजे-जंगले बन्द करनेमें लग गई। अपूर्व सीढ़ीसे ऊपर चढ़कर भारतीके कमरेमें पहुँचा और अच्छी-सी एक आराम-कुरसी

छाँटकर उसपर हाथ-पाँव पसारकर लेट गया। फिर आँखें मींचकर एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर बोला, "आह!" अपनी अत्यन्त थकावटका उसे अब अनुभव हुआ।

कई मिनट बाद भारती ऊपर आकर जब हाथकी बत्ती तिपाईपर रखने लगी तो अपूर्वको मालूम हो गया; परन्तु, सहसा ऐसी शर्म मालूम हुई कि क्षण-भरमें सो जाने जैसे अत्यन्त असम्भव बहानेके सिवा और कुछ उसे सूझा ही नहीं। हालाँ कि यह कोई नहीं बात नहीं थी;—इसके पहले भी इन दोनोंने एक कमरेमें रात बिताई है,और तब शर्मकी हवा भी उसके मनको नहीं लगी थी। मन ही मन इसका कारण ढूँढ़ते ढूँढ़ते उसे तिवारीकी याद आ गई। वह तब मरणासन्न था, उसे होश नहीं था,—यद्यपि वह नहीं रहनेके ही बराबर था, फिर भी उस उपलक्ष्यको कारण मानकर उसे तसल्ली हो गई। भारतीने कमरेमें आकर उसकी तरफ देखा और फिर वह अपने हाथका अधूरा काम पूरा करनेमें लग गई; उसकी कपट-निद्रा भंग करनेकी उसने कोशिश ही नहीं की। परन्तु इस पुराने मकानके पुराने दरवाजे-जंगले बन्द करनेमें जो खटखट फटफट हुई, वह सचमुचकी नींद छुटानेके लिए भी काफी थी, लिहाजा अपूर्व उठकर बैठ गया। आँखें मींड़ता हुआ जँभाई लेता हुआ बोला, "उफ्, इतनी रात बीते फिर वापस आना पड़ा!"

भारती खींच-खाँचकर एक जंगला बंद कर रही थी, बोली, "जाते वक्त आप कहते क्यों नहीं गये? सरकार-महाशयसे आपका खाना मँगवा रखती।"

बात सुनकर अपूर्वका नींदके बादका भारी गला एकाएक तीक्ष्ण हो उठा, बोला, "इसके मानी? वापस आनेकी बात क्या मुझे मालूम थी?"

भारती लोहेकी सिटकिनी दबाकर बन्द करती हुई स्वाभाविक स्वरमें बोली, "मेरी ही भूल हुई। भोजनकी बात उसी वक्त उनसे कहलवा देनी चाहिए थी। इतनी रातको झंझट न करना पड़ता। अब तक आप दोनों कहाँ बैठे रहे? अपूर्वने कहा, "उन्हींसे पूछिएगा। दो तीन कोस चलनेका नाम बैठे रहना है या क्या, सो मुझे नहीं मालूम।"

भारतीका खिड़की बन्द करनेका काम अभीतक खत्म नहीं हुआ था, वह छींटका परदा खींच रही थी, उसमें लगी हुई ही विस्मय प्रकट करके बोली, "ओफ् हो, तो यह क्यों नहीं कहते कि गोरखधन्धेमें फँस गये थे? पैदल

चलना ही सार हुआ !" यह कहकर वह घूमकर खड़ी हुई और जरा मुस्कराकर बोली, "संध्या-पूजा करनेकी बला अभीतक लगी हुई है या जाती रही ? हो, तो धोती निकाले देती हूँ, कपड़े बदल लीजिए।" इतना कहकर वह आँचलसमेत चाबियोंका गुच्छा हाथमें लेकर आलमारी खोलती हुई बोली, "तिवारी बेचारा मारे फिक्रके मर रहा होगा। आज तो, मालूम होता है, आफिससे लौटकर घर जानेका भी वक्त नहीं मिला ?"

अपूर्व गुस्सेको दबाकर बोला, "यह मैं जानता हूँ कि आपको बहुत-सी ऐसी बातें मालूम हो जाती हैं जो मुझे नहीं मालूम हो पातीं; मगर धोती निकालनेकी जरूरत नहीं। संध्या-पूजाकी बला मेरी दूर नहीं हुई है, और इस जन्ममें दूर होगी भी नहीं; पर आपकी दी हुई धोतीसे मुझे कोई सहूलियत नहीं होगी। रहने दीजिए, तकलीफ न कीजिए।"

भारतीने कहा, "देखिए तो सही, क्या दे रही हूँ—"

अपूर्व बीचहीमें बोल उठा, "मुझे मालूम है, टसरकी या रेशमी देंगी; मगर मुझे जरूरत नहीं है,—आप मत निकालिए।"

"संध्या-पूजा न कीजिएगा ?"

"नहीं।"

"सोयेंगे क्या पहनकर ? क्या आफिसके कोट-पतलून पहने पहने ही ?"

"हाँ।"

"भोजन नहीं करेंगे ?"

"नहीं।"

"सच ?"

अपूर्वके स्वरमें बहुत देरसे स्वाभाविकता नहीं थी। अब तो वह सचमुच नाराज हो पड़ा, बोला "आप क्या मज़ाक़ कर रही हैं !"

भारतीने मुँह उठाकर उसके चेहरेकी तरफ देखा, फिर कहा, "मज़ाक़ तो आप ही कर रहे हैं। आपमें बूता है बगैर खाये उपासे रहनेका ?"

इतना कहकर उसने आलमारीमेंसे एक सुन्दर रेशमकी साड़ी निकाल ली, और कहा, "बिलकुल पवित्र है। मैंने भी कभी नहीं पहरी। उस कोठरीमें जाकर कपड़े उतारकर इसे पहन आइए। नीचे नल है, मैं बत्ती दिखाती हूँ,

आप हाथ-मुँह धोकर मन ही मन संध्या कर लीजिए। लाचारीमें यह व्यवस्था शास्त्रमें भी कही गई है,—कोई जबरदस्त पाप न होगा।"

सहसा उसके गलेका शब्द और बातचीतका ढंग ऐसा बदल गया कि अपूर्व हक्का-बक्का-सा हो गया। उसे चटसे याद आ गया कि उस दिन सबेरे भी ठीक इसी तरहसे बात कहके वह उसके घरसे चली आई थी। अपूर्वने हाथ बढ़ाकर धीरेसे कहा, "दीजिए न धोती, मैं खुद ही बत्ती लेकर जा रहा हूँ। लेकिन मैं किसी ऐरे गैरेके हाथकी रसोई नहीं खा सकूँगा।"

भारतीने नरम होकर कहा, "सरकार महाशय बहुत अच्छे ब्राह्मण हैं। गरीब आदमी हैं। होटल खोल रक्खा है, पर अनाचारी नहीं हैं। खुद रसोई बनाते हैं, सभी कोई उनके हाथकी खाते हैं,—कोई आपत्ति नहीं करता। हमारे डाक्टर बाबूके लिए भी उन्हींके यहाँसे खाना आता है।"

फिर भी अपूर्वका संकोच दूर नहीं हुआ, उसने विरस मुखसे कहा, "चाहे जैसी रसोई खानेमें मुझे तो घृणा-सी मालूम होती है।"

भारती हँस दी, बोली, "चाहे जैसी रसोई क्या मैं भी आपको खिला सकती हूँ? मैं खुद खड़ी रहकर उससे सब ठीकसे लगवा लाऊँगी, तब तो आपको आपत्ति नहीं होगी?" यह कहकर वह फिर जरा हँस दी।

अपूर्वने फिर कोई प्रतिवाद नहीं किया, बत्ती और धोती लेकर नीचे चला गया। परन्तु उसका चेहरा देखकर भारतीको समझना बाकी न रहा कि वह होटलका भोजन करनेमें अत्यन्त संकोच और विघ्नका अनुभव कर रहा है।

कुछ देर बाद अपूर्व जब रेशमी साड़ी पहनकर नीचे एक लकड़ीकी बेञ्चपर बैठा था, तब भारती अकेली दरवाजा खोलकर अँधेरेमें बाहर निकल गई। कहती गई, "सरकार महाशयको लेकर मैं जल्द ही आ रही हूँ, तब तक आप नीचे ही रहिएगा।" वास्तवमें लौटनेमें उसे देर नहीं लगी। अभी तुरत ही अपूर्वकी संध्या पूजा खत्म हुई थी कि भारतीने बत्ती हाथमें लिये अत्यन्त सावधानीके साथ प्रवेश किया। साथमें सरकार महाशय थे, उनके हाथमें पीतलके ढकनसे ढकी हुई थाली थी; और उनके पीछे पीछे एक आदमी पानीका गिलास और आसन लिये आ रहा था। उसने भारतीके आदेशानुसार कमरेके एक तरफ पानी छिड़ककर चौका करके आसन बिछा दिया और सरकार महाशयने वहाँ थाली रख दी। उन दोनोंके चले जानेपर भारतीने किवाड़ बन्द

कर लिये और गलेमें आँचल डालकर हाथ जोड़कर सविनय निवेदन किया, “ यह म्लेच्छका अन्न नहीं है, सब खर्च डाक्टर बाबूका है। आप बिना किसी संकोचके आतिथ्यको स्वीकार कीजिए। ”

परन्तु उसके इस सकौतुक परिहासको अपूर्व प्रसन्न चित्तसे ग्रहण न कर सका। यह माना कि वह जाति पाँति मानता है; हर किसीका छुआ नहीं खाता, होटलकी बनी रसोई खानेमें उसकी रुचि नहीं होती,—परन्तु इसके माने यह नहीं कि उसमें इतनी ज्यादा दकियानूसी है कि वह इस बातका भी विचार करता हो कि उसके पैसे म्लेच्छने दिये या अध्यापक ब्राह्मणने। बड़े भाइयोंने उसकी शुद्धाचारिणी माको बहुत दुःख दिया है, अच्छी हो चाहे बुरी, माकी आज्ञा और उनके हृदयकी इच्छा उल्लंघन करनेमें उसे अत्यन्त क्लेश मालूम होता है। यह बात भारती बिलकुल जानती ही न हो, सो भी नहीं; फिर भी, जब तब उसके इस आचार-विचारपर व्यंग करके इस तरह उपहास करनेकी कोशिशपर वह अत्यन्त झुँझला उठा। पर कुछ जवाब न देकर आसनपर बैठ गया, और ढक्कन उठाकर खानेमें लग गया। भारती सावधानीके साथ सब तरहकी छूतको बचाती हुई दूर जमीनपर बैठ गई, और थालीके भोजनकी छान-बीन करते करते मन ही मन संकुचित और अत्यन्त उद्विग्न हो उठी। वह ईसाई है, इसलिए होटलके रसोईघरमें नहीं घुसने पाई थी, और इस बातका उसे विचार ही नहीं हुआ कि सरकार महाशय पीछेका बचा हुआ सामान किसी तरह इकट्ठा कर-कराके थाली सजा लाये हैं। घरमें काफी उजाला नहीं था, फिर भी ढक्कन खोलते ही अन्न-व्यंजनका जो रूप प्रकट हुआ, उसे देखकर तो भारतीका बोल ही बन्द हो गया। अनेक बार उसने अपने ऊपरके कमरेके छेदमेंसे छिपे छिपे अपूर्वकी भोजन-सामग्री और खानेका ढंग देखा है। तिवारीकी छोटी मोटी मामूली त्रुटिपर इस बहमी आदमीका खाना नष्ट होते भी उसने कितनी ही बार अपनी आँखोंसे देखा है। वही अपूर्व जब आज चुपचाप म्लान मुखसे इस वाहियात खानेको खाने लगा, तब उससे नहीं रहा गया। वह व्याकुल होकर कह उठी, “ रहने दीजिए, रहने दीजिए, इसे खानेकी जरूरत नहीं,—आप नहीं खा सकेंगे। ”

अपूर्वने विस्मित होकर मुँह उठाके देखा, कहा, “ खा नहीं सकूँगा ? क्यों ? ”

भारतीने सिर्फ सिर हिलाकर कहा, “ नहीं, नहीं खा सकेंगे। ”

अपूर्वने प्रतिवाद करते हुए उसी तरह सिर हिलाकर कहा, “ नहीं, खूब

मजेमें तो खा रहा हूँ।" इतना कहकर ज्यों ही उसने गस्सा तैयार किया, त्यों ही भारती उठकर उसके बिलकुल पास आकर खड़ी हो गई। बोली, "आप खा भी सकें, तो मैं नहीं खाने दे सकती। ज़बर्दस्ती खाकर बीमार पड़ गये तो इस परदेशमें आखिर भुगतना तो मुझे ही पड़ेगा! उठिए।"

अपूर्वने उठकर धीरेसे कहा, "तो खाऊँगा क्या? आज तलवरकर भी आफिसमें जल-पान नहीं लाये थे,—जितना खा सकूँ, इसीमेंसे न खा लूँ? क्या कहती हैं?" इतना कहकर उसने इस ढँगसे भारतीके मुँहकी ओर देखा कि उसकी असीम भूखका पता पानेमें सामनेवालेको जरा भी देर न लगी।

भारती उदास चेहरेसे जरा हँस दी; पर सिर हिलाकर बोली, "मैं प्राण निकल जानेपर भी आपको यह कचरा नहीं खाने दूँगी अपूर्व बाबू,—हाथ धोकर ऊपर चलिए, मैं और कोई इन्तजाम किये देती हूँ।"

अनुरोध या आदेशानुसार अपूर्व शान्त बालककी तरह हाथ धोकर ऊपर चल दिया। दस ही मिनट बाद फिर उन्हीं सरकार महाशय और उनके सहयोगीने आकर दर्शन दिये। अबकी बार भात-दालके बदले एकके हाथमें मुरमुरे और दूधका गिलास और दूसरेके हाथमें थोड़ेसे फल और पानीका लोटा था। इस आयोजनको देखकर अपूर्व मन ही मन खुश हुआ। इतने कम समयके भीतर ऐसी सुव्यवस्थाकी उसने कल्पना भी नहीं की थी। उन दोनोंके चले जानेपर अपूर्वने प्रसन्न चित्तसे खानेमें मन लगाया। किवाड़के बाहर सीढ़ीके पास खड़ी हुई भारती देख रही थी। अपूर्वने कहा, "आप भीतर आकर बैठ जाइए। काठके फर्शमें दोष माननेसे तो इस बर्मामें रहना ही दुश्वार हो जायगा।"

भारतीने वहींसे हँसकर कहा, "कहते क्या हैं! आपका मत तो बिलकुल उदार हुआ जा रहा है!"

अपूर्वने कहा, "नहीं, इसमें सचमुच ही दोष नहीं है। डाक्टर बाबूने कहा कि चलो लौट चलें,—मैं भी लौट आया। यहाँ शराबियोंके ऊधमके मारे खूनखराबियाँ तक होती रहती हैं, सो कौन जानता था!"

"जानते तो क्या करते?"

"जानता तो? अगर जानता कि मेरे लिए आपको इतनी तकलीफ उठानी पड़ेगी, तो मैं हरगिज वापस आनेको राजी न होता।"

भारतीने कहा, "हाँ, जरूर न होते। पर मैं समझी थी कि आप खुद ही अपनी तबीयतसे लौट आये हैं!"

अपूर्वका मुँह लाल हो उठा। उसने मुँहका कौर लीलकर जोरसे प्रतिवाद करते हुए कहा, "हरगिज नहीं! कभी नहीं! बल्कि कल आप डाक्टर बाबूसे पूछ देखिएगा।"

भारतीने शान्त भावसे कहा, "इतनी पूछ-ताछकी जरूरत ही क्या है? आपकी बातपर क्या मैं विश्वास नहीं करती?"

उसके स्वरमें कोमलता होनेपर भी अपूर्वकी देहमें आग-सी लग गई। उसके वापस आनेपर भारतीने जो मन्तव्य प्रकट किया था, उसकी याद करके वह गरमीके साथ बोल उठा, "मुझे झूठ बोलनेकी आदत नहीं,— आप विश्वास न करें, न सही।"

भारतीने कहा, "मैं विश्वास क्यों नहीं करूँगी?"

अपूर्वने कहा, "सो नहीं मालूम। जिसका जैसा स्वभाव!" और वह सिर नीचा करके खाने लगा।

भारती क्षण-भर मौन रहकर धीरेसे बोली, "आप झूठमूठको गुस्सा हो रहे हैं। मैं तो सिर्फ यही आपसे कह रही थी कि यदि डाक्टरके कहनेसे वापस न आकर अपनी ही इच्छासे आये हों तो भी इसमें दोष क्या है? जैसे शामको आप अपनी इच्छासे पता लगाकर मेरे यहाँ आये, तो इसमें क्या कोई दोष हो गया?"

अपूर्वने थालीपरसे मुँह नहीं उठाया, कहा "शामको खबर लेने आना और आधी रातको बिना कारण आना, दोनों ठीक एक बात तो नहीं?"

भारतीने उसी वक्त कहा, "सो तो नहीं है। इसीसे आपसे कह रही थी: जरा जता जाते तो इतनी तकलीफ़ नहीं होती। सब कुछ ठीक करके रखा जा सकता था।"

अपूर्व चुपचाप खाने लगा, कुछ जवाब नहीं दे सका। खाना जब लगभग खत्म हो गया, तब सहसा उसने मुँह उठाकर देखा कि भारती स्निग्ध सकौतुक दृष्टिसे उसकी तरफ टुकुर-टुकुर देख रही है। भारती बोली, "देखिए तो, खानेकी कितनी तकलीफ हुई!"

अपूर्वने गम्भीर होकर कहा, "आज आपको हो क्या गया है मालूम नहीं, बिलकुल सीधी बात भी नहीं समझ पातीं!"

भारतीने कहा, "और ऐसा भी तो हो सकता है कि बिलकुल सीधी न होनेकी वजहसे ही नहीं समझ पाती होऊँ ?" और वह खिलखिला कर हँस पड़ी।

इस हँसीको देखकर अपूर्व खुद भी हँस दिया और उसे शक हुआ कि शायद अबतक भारती उसे झूटमूठ ही तंग कर रही थी। छोटी छोटी बातोंमें यह ईसाई लड़की उसे शुरूसे ही छेड़नेकी कोशिश करती चली आ रही है; फिर भी, यह विद्वेष नहीं,—कारण किसी भी आपद-विपदमें उसके लिए इतनी बड़ी निःसंशय निर्भर जगह इस परदेशमें और कहीं नहीं है, इस सत्यको स्वतःसिद्धकी भाँति उसके हृदयने हमेशाके लिए स्वीकार कर लिया है।

गिलासका पानी निबट गया था, अपूर्वके रीता गिलास उठाते ही भारती घबराकर उठी, "उफ् हो, अब ?—"

"और पानी नहीं है क्या ?"

"है तो !" भारतीने गुस्सा होते हुए कहा, "इतना नशा करनेसे क्या आदमीको किसी बातका होश रहता है ? पानीका लोटा शिबू नीचे टूलपर छोड़ गया है,—मेरी भी फूटी तकदीर कि उस तरफ नजर भी नहीं गई। अब तो कोई उपाय नहीं, अब तो खानेके बाद आचमन करते वक्त ही पीजिएगा,—क्यों क्या कहते हैं ? मगर नाराज नहीं हो सकेंगे, कहे देती हूँ !"

अपूर्वने हँसकर कहा, "इसमें नाराज होनेकी कौन-सी बात है ?"

भारतीने आन्तरिक अनुतापके साथ कहा, "है क्यों नहीं ! खाते वक्त पीनेको पानी न मिले तो बड़ी अतृप्ति-सी मालूम होती है। मालूम होता है जैसे पेट ही नहीं भरा। लेकिन अधूरा खाना छोड़-छाड़कर भूखे उठनेसे भी नहीं चलेगा। अच्छा, जाऊँ चटसे, शिबूको बुला लाऊँ ?"

अपूर्वने उसके मुँहकी तरफ देखकर हँसते हुए कहा, "इसके लिए इतनी अँधेरी रातमें शिबूको बुलाने जायँगी !—मुझे क्या आपने बिलकुल हो वा समझ रक्खा है ?"

अपूर्वका पेट भर चुका था, फिर भी वह जबरदस्ती दो-चार गस्सा और खा गया; और अन्तमें जब उठकर खड़ा हुआ तो उसे बड़ी भारी शर्म-सी आने लगी। बोला, "सच कहता हूँ मैं आपसे, मुझे कुछ भी दिक्कत नहीं हुई। मैं हाथ-मुँह धोनेके बाद ही पानी पिऊँगा, आप झूठमूठको दुःखित न हूजिए।"

भारतीने हँसकर कहा, "दुःखित क्यों होने लगी ? हरगिज नहीं। मैं जानती

हूँ, दुःख करनेको मेरे लिए कुछ है ही नहीं।" इतना कहकर उसने बत्ती उठाते हुए दूसरी ओर मुँह फेर लिया। फिर बोली, "मैं बत्ती दिखाती हूँ, जाइए आप, नीचे जाकर मुँह-हाथ धो आइए,—पानीका लोटा सामने ही रक्खा है, भूल न आइएगा।"

अपूर्व नीचे चला गया। थोड़ी देर बाद ऊपर आनेपर देखा कि भारतीने उसकी जूठी थाली वगैरह सब हटाकर जगह बिलकुल साफ कर रक्खी है और चौकी आदि जो सामान वहाँसे हटाकर खानेकी जगह की गई थी वह सब फिरसे जहाँका तहाँ सजा दिया गया है। इसके सिवाय उस आराम-कुरसीके पास, जिसपर वह पहले आकर बैठा था, एक तिपाईपर तश्तरीमें सुपारी, इलायची वगैरह रखी हुई है। भारतीके हाथसे तौलिया लेकर उसने हाथ-मुँह पोंछा और सुपारी-इलायची आदि मुँहमें डालकर उसी आराम-कुरसीपर बैठ कर, तथा पीठ टेककर आरामसे तृप्तिकी गहरी उसास लेते हुए कहा, "उफ़, अब जरा देहमें दम आया। कैसी जोरकी भूख लग गई थी!"

भारती उसकी आँखोंके सामनेसे बत्ती उठाकर एक किनारे रख रही थी, उसी उजालेमें उसके चेहरेकी तरफ देखकर अपूर्व उठके बैठता हुआ बोला, "आपको तो सरदी-सी लग गई, मालूम होता है?"

भारतीने झटपट बत्तीको रखते हुए कहा, "नहीं तो।"

"नहीं कैसे! गला भारी है, आँखें फूली-फूली-सी हो रही हैं, काफी ठंड लगी है। अब तक कुछ खयाल ही नहीं किया था।"

भारतीने कुछ जवाब नहीं दिया। अपूर्वने कहा, "ठंडका भी क्या कसूर है! इतनी रातमें कितनी दौड़-धूप करनी पड़ी है!"

भारतीने इसका भी जवाब नहीं दिया। अपूर्वने क्षुण्ण कंठसे कहा, "वापस आकर फिजूल ही आपको तकलीफ दी। मगर यह कौन जानता था, बताइए, कि डाक्टर बाबू मुझे लौटा लाकर अन्तमें आपहीपर बोझ लादकर खुद खिसक जायँगे? भोगना पड़ा सब आपहीको।"

भारती खिड़कीके पास इधरको पीठ किये कुछ कर रही थी, बोली, "सो तो पड़ा ही। पर भगवान ही बोझ लाद दें, तो शिकायत किसके विरुद्ध की जाय, बताइए?"

अपूर्वने आश्चर्यके साथ पूछा, "इसके मानी?"

भारतीने उसी तरह काम करते हुए ही कहा, " मानी मैं ही क्या खाक जानती हूँ! पर देख तो रही हूँ, बर्मामें जबसे आपने कदम रक्खा है तबसे बोझा खींचना पड़ रहा है सिर्फ मुझको ही। पिताजीके साथ लड़े आप, दण्ड दिया मैंने। घरकी रखवारीके लिए रख गये तिवारीको आप, उसकी सेवा करनी पड़ी मुझे। बुला लाये डाक्टर बाबू, और अब झंझट उठाना पड़ रहा है मुझे। मुझे तो डर है कि जिन्दगी-भर मुझको ही न आपका बोझ ढोना पड़े। लेकिन अब रात बहुत कम रह गई है, कहाँ सोयेंगे बताइए तो?"

अपूर्वने विस्मित होकर कहा, " वाह, यह मैं क्या जानूँ?"

भारतीने कहा, " होटलमें डाक्टर बाबूकी कोठरीमें आपके लिए बिछौना करने कह आई हूँ, शायद इन्तजाम हो गया होगा।"

" कौन ले जायगा वहाँ तक? मैं तो जानता नहीं।"

" मैं ही लिये चलती हूँ, चलिए, शोर-गुल मचा कर उन्हें जगाया जाय।"

" चलिए " कहकर अपूर्व उसी वक्त उठकर खड़ा हो गया। फिर जरा संकोचके साथ बोला, " लेकिन आपका तकिया और बिछौनेका चादरा मैं लेता जाऊँगा। कमसे कम ये दो चीजें तो मुझे चाहिए ही, दूसरेके बिछौनेपर जान निकल जानेपर भी मैं न सो सकूँगा।" यह कहकर वह खाटपरसे उसका तकिया और चादरा उठाने जा ही रहा था कि भारतीने रोक दिया। उसका मलिन गम्भीर मुखड़ा स्निग्ध कोमल हँसीसे भर उठा, मगर वह उसे छिपानेके लिए मुँह फेरकर धीरेसे बोली, " यह भी तो दूसरेके ही बिछौने हैं अपूर्व बाबू, नफरतका न होना तो बड़े आश्चर्यकी बात है! लेकिन, अगर ऐसी ही बात है तो आपको होटलमें सोने जानेकी जरूरत नहीं, आप इसी खाटपर सो जाइए।" यह बात उसने जान-बूझकर ही नहीं कही कि कुछ ही घंटे पहले मेरे दिये हुए वस्त्रसे भगवानकी उपासना करनेमें भी आपको नफरत-सी मालूम हुई थी।

अपूर्व और भी ज्यादा संकुचित हो उठा, बोला, " मगर आप कहाँ सोयेंगी? आपको तो तकलीफ ही होगी?"

भारतीने गर्दन हिलाकर कहा, " जरा भी नहीं।" फिर उँगलीसे दिखाते हुए कहा, " उस छोटी कोठरीमें कोई भी चीज बिछाकर मैं आरामसे सो

सकती हूँ। बगैर कुछ बिछाये सिर्फ काठके फर्शपर तिवारीके पास कितनी ही रातें बिता दी हैं, पर सो शायद आपने देखा नहीं है।"

अपूर्वने महीने-भर पहलेकी बात याद करके कहा, "एक रात मैंने भी देखा था; बिलकुल ही न देखा हो, सो बात नहीं।"

भारतीने हँसते चेहरेसे कहा, "उस रातकी आपको याद है? अच्छा, उसी तरह एक रात और देख लीजिएगा।"

अपूर्व कुछ देर नीचेको निगाह किये बैठा रहा, फिर बोला, "उस समय तो तिवारी बीमार था,—पर अभी लोग क्या समझेंगे?"

भारतीने जवाब दिया, "कुछ भी नहीं समझेंगे। कारण, दूसरोंकी बातपर निरर्थक खयाल करनेवाला छोटा मन यहाँ किसीका भी नहीं है।"

अपूर्वने कहा, "नीचेकी बेञ्चपर भी तो बिस्तर बिछाकर आसानीसे सो सकता हूँ?"

भारतीने कहा, "आप सो भी सकें, पर मैं तो नहीं सोने दे सकती! कारण, उसकी जरूरत नहीं। मैं आपके लिए अस्पृश्य हूँ; इसलिए आपके जरिये मेरा कुछ नुकसान होगा, यह डर तो मुझे है नहीं।"

अपूर्वने आवेगके साथ कहा, "मेरे द्वारा आपका रंचमात्र भी अनिष्ट हो सकता है, इस बातका मुझे भी कोई डर नहीं। परन्तु जब आप अपनेको अस्पृश्य कहती हैं, तो मुझे बड़ा दुःख होता है। 'अस्पृश्य' शब्दमें घृणाका भाव है, मगर आपसे तो मैं घृणा नहीं करता। हमारी जाति अलग है, आपका छुआ हम खा नहीं सकते; परन्तु इसका कारण क्या घृणा है? इतनी बड़ी झूठी बात और नहीं हो सकती। बल्कि इसके कारण आप ही भीतरसे मुझसे घृणा करती हैं। उन दिन सबेरे जब आप मुझे अपार समुद्रमें छोड़कर चली आई थीं, तबका चेहरा आज भी मुझे याद है, उसे मैं जिन्दगी-भर नहीं भूल सकता!"

भारतीने कहा, "मेरी और चाहे जो बातें भूल जायँ, पर उस अपराधको नहीं भूल सकते?"

"कभी नहीं।"

"उस चेहरेपर मेरे क्या था? घृणा?"

"जरूर।"

भारती उसके चेहरेकी तरफ देखकर हँस दी, फिर धीरेसे बोली, "अर्थात् आदमीके मनको समझनेकी बुद्धि आपकी बहुत ही बारीक है,—है या नहीं? मगर यह सब आज रहने दीजिए, आप सोइए। मुझे तो रात जागनेकी आदत है, मगर आप ज्यादा जागेंगे तो शायद मेरी ही आफत बढ़ जायगी।"

इतना कहकर, उत्तरकी प्रतीक्षा बगैर किये ही, वह रैकपरसे दो कम्बल उठाकर बगलकी कोठरीमें चली गई।

थोड़ी देर बाद भारती फिर आई और अपूर्वके पलंगकी मशहरी खोलकर और उसे चारों तरफसे अच्छी तरह दबाके सोने चली गई। परन्तु अपूर्वकी मिची हुई आँखोंमें नींदकी छाया तक न पड़ी। कमरेके एक कोनेमें आड़में रखी हुई बत्ती टिमटिमा रही है, बाहर गहरा अंधकार है, रातका पूरा सन्नाटा छाया हुआ है। शायद उसके सिवा और कोई भी कहीं जग नहीं रहा। कब नींद आयेगी, इसका भी कोई ठीक नहीं, फिर भी इस जागरणमें उसने निद्रा-विहीनताका रंच-मात्र भी अनुभव नहीं किया। उसका सारा शरीर और मन अक्षरशः अनुभव करने लगा कि इस घरमें, इस खाटपर, इस नवीन निशीथ रात्रिमें ठीक इसी तरह चुपचाप सोते रहनेके समान सुन्दर और मधुर दूसरी वस्तु त्रिभुवनमें नहीं है। उसे ऐसा मालूम होने लगा कि ऐसे एकान्त चिन्ता-शून्य निश्चिन्त विश्रामका आनन्द उसे मानो पहले कभी मिला ही नहीं।

सबेरे उसकी नींद खुली भारतीके पुकारनेपर। आँखें खोलकर देखा कि सामने उसके पाँयतेके पास भारती खड़ी है, पूरबकी खिड़कीसे प्रभात-सूर्यका रंगीन प्रकाश उसके सद्य-स्नानसे भीगे हुए बालोंपर, उसकी सफेद रेशमकी साड़ीकी लाल किनारीपर और उसके सुन्दर मुखड़ेके स्निग्ध श्याम रंगपर पड़ रहा है। उसका यह अपूर्व सौन्दर्य अपूर्वकी दृष्टिमें आ समाया।

भारतीने कहा, "उठिए, फिर आफिस भी तो जाना है?"

"हाँ, सो तो जाना ही है।" कहता हुआ अपूर्व उठ बैठा। बोला, "देखता हूँ कि आपका तो नहाना-धोना भी हो चुका!"

भारतीने कहा, "आपको भी झटपट नहा-धोकर तैयार हो जाना पड़ेगा। कल रातको अतिथि-सत्कारमें काफी त्रुटियाँ रह गई हैं। आज हमारी सभा-नेत्रीकी आज्ञा है कि आपको अच्छी तरह खिलाये-पिलाये बगैर हरगिज न छोड़ा जाय।"

अपूर्वने पूछा, "कलकी वह औरत बच गई?"

"उसे अस्पताल भेज दिया गया है,—जी जानेकी उम्मीद तो है।"

उस औरतको अपूर्वने कभी आँखोंसे भी नहीं देखा था, परन्तु फिर भी उसके सुसंवादको उसने मानो परम लाभ समझा। आज उसे ऐसा मालूम हुआ कि अब उससे किसीका भी अकल्याण न सहा जायगा।

स्नान-संध्यादि करके कपड़े पहनकर जब वह ऊपर पहुँचा, तब लगभग नौ बजे थे। इस बीचमें चौका लगाकर सरकार महाशय थाली-आली सब रख गये थे। अपूर्वने आसनपर बैठते ही पूछा, "कहाँ, आपकी प्रेसिडेण्टके साथ तो भेंट नहीं हुई? उनके अतिथि-सत्कारकी शायद यही रीति होगी?"

भारतीने कहा, "आपके जानेके पहले जरूर मुलाकात हो जायगी। उन्हें शायद आपसे कुछ काम भी है।"

अपूर्वने कहा, "और डाक्टर बाबू, जो मुझे बुला लाये थे? अभी तक शायद वे बिस्तरपर ही पड़े होंगे?" और वह हँसने लगा।

भारतीने इस हँसीमें भाग नहीं लिया। कहा, "बिस्तरपर पड़नेका उन्हें वक्त ही नहीं मिला। अभी अभी तो आये हैं अस्पतालसे। सोने, न सोने किसीकी भी कीमत नहीं उनके नजदीक।"

अपूर्वको सुनकर आश्चर्य हुआ, उसने पूछा, "इससे वे बीमार नहीं पड़ते?"

भारतीने कहा, "कभी देखा तो नहीं। बीमारी और तन्दुरुस्ती दोनों ही शायद उनसे हार मानकर भाग गई हैं। आदमीके साथ उनकी बराबरी ही नहीं हो सकती।"

अपूर्वको कल रातकी बहुत-सी बातें याद आ गईं, वह मुग्ध कंठसे बोला, "आप सभी शायद उन्हें अत्यन्त श्रद्धाकी दृष्टिसे देखती हैं?"

"श्रद्धा? श्रद्धा तो बहुत लोग बहुतोंकी करते हैं।" कहते कहते उसका स्वर अकस्मात् गाढ़ा हो आया, वह बोली, "उनके चले जानेपर ऐसा मालूम होता है कि हम सब रास्तेकी धूलमें पड़ी रहें और वे हमारे ऊपरसे चले जायँ। मालूम होता है, फिर भी आशा नहीं मिटती अपूर्व बाबू!" कहकर उसने मुँह फेरकर आँखें पोंछ डालीं।

अपूर्वने फिर कुछ नहीं पूछा, नीचेको निगाह किये भोजन करने लगा। उसे बार बार यही खयाल होने लगा कि सुमित्रा और भारती जैसी इतनी बड़ी शिक्षिता और बुद्धिमती नारियोंके हृदयमें जिसने अपना इतना ऊँचा सिंहासन बना लिया

है, मालूम नहीं, भगवानने उसे किस धातुसे बनाकर संसारमें भेजा है और वे कौन-सा असाधारण काम उससे कराना चाहते हैं !

दूर दरवाजेके पास भारती चुपचाप बैठी रही। अपूर्व खुद भी विशेष कुछ बोला नहीं। इसके बाद, एक तरहसे चुपचाप ही उसका खाना खत्म हुआ। यद्यपि कोई अप्रीतिकर बात नहीं हुई, फिर भी, आजके प्रभातपर जो, बहुत ही मीठे, तौरपर शुरू हुआ था, अकारण ही न जाने कहाँसे एक छाया-सी आ पड़ी।

आफिसके कपड़े पहनके तैयार होकर उसने कहा " चलिए, डाक्टर बाबूसे मिल आवें।"

" चलिए, उन्होंने आपको बुलाया भी है।"

सरकार महाशयके पुराने खंडहर-से होटलमें, बिलकुल पीछेकी तरफ, एक कोठरीमें डाक्टर बाबू रहते हैं। न उजाला है, न हवा; आसपास गंदा पानी जमा हुआ है और उसमेंसे बदबू आ रही है। बहुत ही पुराना काठका फर्श है; पाँव रखते ही डर लगता है कि कहीं टूट न जाय। ऐसी गन्दी कोठरीमें भारती जब उसे ले गई तब उसके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। कोठरीमें घुसनेपर कुछ देर तक तो उसे अच्छी तरह कुछ दिखाई ही नहीं दिया।

डाक्टर बाबूने अभ्यर्थना करते हुए कहा, " आइए अपूर्व बाबू।"

" ओःफ्,—कैसी भीषण कोठरी आपने अपने लिए चुनकर निकाली है डाक्टर बाबू !"

" मगर कितनी सस्ती है, सो तो कहिए ? महीनेका दस आना किराया है !"

अपूर्वने कहा, " ज्यादा है, ज्यादा है, बहुत ज्यादा है। दस पैसे होना चाहिए था।"

डाक्टरने कहा, " हम सब दुखी आदमी किस तरह रहते हैं, आपको अपनी आँखोंसे देखना भी तो चाहिए। बहुतोंके लिए तो यही राजप्रासाद है !"

अपूर्वने कहा, " तो ऐसे प्रासादसे भगवान् मुझे हमेशा वंचित रक्खें ! बापरे बाप !"

डाक्टरने कहा, " सुना है कल रातको आपको बड़ी तकलीफ हुई, मुझे क्षमा कीजिएगा।"

अपूर्वने कहा, " क्षमा करूँगा तब, जब आप इस कोठरीको छोड़ देंगे, उसके पहले नहीं।"

उत्तरमें डाक्टर सिर्फ जरा मुसकरा दिये, बोले, "अच्छा, ऐसा ही होगा।"

अब तक अपूर्वने देखा नहीं था, सहसा अत्यन्त-आश्चर्यके साथ देखा कि दीवारके पास एक मोंढ़ेपर सुमित्रा बैठी हुई है। बोला, "आप यहाँ हैं ? मुझे माफ कीजिएगा, मैंने बिलकुल देखा ही नहीं।"

सुमित्राने कहा, "यह कुसूर आपका नहीं है अपूर्व बाबू, अँधेरेका है।"

अपूर्वके आश्चर्यकी सीमा नहीं रही जब उसने उसका स्वर सुना। वह स्वर जितना करुण था उतना ही विषण्ण। ऐसा मालूम हुआ जैसे अभी अभी कोई दुर्घटना हो गई है, और उससे वह डर-सा गया। अच्छी तरह देख-भाल कर उसने धीरेसे कहा, "डाक्टर बाबू, आज यह आपकी कैसी पोशाक है ? कहीं जा रहे हैं क्या ?"

डाक्टरके सिरपर पगड़ी, बदनपर लम्बा कोट, ढीला पायजामा और पाँवोंमें सलीमशाही जूते थे। एक चमड़ेके सूट-केसमें कुछ बंडल-से बँधे थे। बोले, "मैं तो अब चल दिया अपूर्व बाबू, ये सब रहीं, आपको देख-भाल करनी पड़ेगी। आपसे इससे ज्यादा कहनेकी मैं जरूरत नहीं समझता।"

अपूर्व दंग रह गया, बोला, "अचानक चल कैसे दिये ? कहाँ जा रहे हैं ?"

डाक्टरके स्वरमें कभी परिवर्तन नहीं होता; वैसे ही सहज स्वाभाविक शांत स्वरमें बोले, "हमारे कोशमें क्या 'अचानक' शब्द होता है अपूर्व बाबू ? अभी जा रहा हूँ भामोके रास्ते और भी कुछ उत्तरकी तरफ। थोड़ा-सा सच्ची जरीका माल है, सिपाहियोंमें यह अच्छे दामोंमें बिक जाता है।" और फिर जरा मुसकरा दिये।

सुमित्रा अब तक कुछ बोली नहीं थी, सहसा कहने लगी, "उन्हें पेशावरसे एकदम भामोमें ले आया गया है, जानते हो उनपर आजकल कैसी कड़ी नजर रक्खी जाती है ? तुम्हें भी बहुतसे पहचानते हैं। यह कभी मत सोचना कि सभीकी आँखोंमें तुम धूल झोंक सकोगे। अभी कुछ दिन और न जाते तो क्या होता ?" यह कहते कहते अन्तमें उसका स्वर कुछ अद्भुत-सा हो गया।

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, "तुम तो जानती ही हो, बगैर गये काम नहीं चल सकता।"

सुमित्राने आगे कुछ नहीं कहा। परन्तु अपूर्व सारे मामलेको लहमे-भरमें समझ गया। उसकी आँखें और दोनों कान गर्म हो उठे और सारी देहसे

आग-सी निकलने लगी। आखिर किसी कदर वह पूछ ही बैठा, "मान लीजिए, अगर उनमेंसे किसीने पहचान लिया? और कहीं पकड़ लिया?"

डाक्टरने कहा, "पकड़ लिया तो शायद फाँसीपर चढ़ा देंगे। लेकिन दस बजेकी गाड़ीमें अब देर नहीं है अपूर्व बाबू, मैं चल दिया।" यह कहकर उन्होंने स्ट्रैपमें बँधे हुए भारी बोझको अनयास ही उठाकर पीठपर रक्खा और चमड़ेका बैग हाथमें लटका लिया।

भारतीने अभी तक एक भी शब्द नहीं कहा था, और न अब भी कोई बात कही, सिर्फ पैरोंके पास सिर टेककर प्रणाम कर लिया। सुमित्राने भी प्रणाम किया; पर पैरोंके पास नहीं, बिलकुल पाँवोंपर पड़कर। ऐसा मालूम हुआ कि शायद अब वह उठेगी ही नहीं, इसी तरह पड़ी रहेगी,—करीब एक मिनट बाद जब वह चुपकेसे उठ खड़ी हुई तब उस स्वल्प आलोकित कोठरीमें उसका आनत चेहरा किसीको दिखाई ही नहीं दिया।

डाक्टरने कोठरीके बाहर आकर कल रातकी तरह अपूर्वका हाथ अपनी मुट्ठीमें दबाते हुए कहा, "चल दिया अपूर्व बाबू, सव्यसाची मैं ही हूँ।"

अपूर्वके मुँहके भीतरका हिस्सा सूखकर रेगिस्तान हो गया था, उसके गलेसे आवाज ही नहीं निकली; परन्तु उसने उसी क्षण घुटने टेककर उन औरतोंकी तरह ही जमीनसे सिर लगाकर नमस्कार किया। डाक्टरने उसके माथेपर हाथ रक्खा, और एक हाथ भारतीके माथेपर रखकर अस्फुट स्वरमें क्या कहा, कुछ सुनाई नहीं दिया। उसके बाद जल्दी जल्दी कदम रखते हुए वे बाहर चले गये।

अपूर्व जब उठके खड़ा हुआ तो देखा कि भारतीके बगलमें वह अकेला खड़ा है और पीछे उस फूटी कोठरीके बन्द दरवाजेके भीतर वह कर्तव्य-कठोर अशेष-बुद्धि-शालिनी अधिकार-समितिकी भयशून्य तेजस्विनी सभानेत्री क्या करने लगी है, कुछ मालूम नहीं हुआ।

१४

भारती और अपूर्व दोनोंने पीछेके बन्द दरवाजेकी तरफ देखा, परन्तु कोई कुछ बोला नहीं। अपूर्व कुछ बिना समझे भी इतना समझ गया कि इस तरह जिस व्यक्तिने अपनेको स्वेच्छासे कैद कर रक्खा है, उसके सम्बन्धमें

कुतूहली नहीं होना चाहिए। जब दोनों होटलके बाहर निकल आये तब भारतीने कहा, "चलिए अपूर्व बाबू, हम लोग चल दें।"

"मगर, मेरा तो आफिसका वक्त हो गया है।"

"रविवारको भी आफिस है?"

अपूर्व खुश होकर बोला, "रविवार है! ओफ् हो, मुझे खयाल ही नहीं था। इस बातकी सबेरे याद आती तो नहाने-खानेमें इतनी जल्दी नहीं करनी पड़ती। आपको तो सब बातें याद रहती हैं, फिर भी इतनी-सी बात भूल गई थीं!"

भारतीने कहा, "हो सकता है। मगर, कल रातको आपके न खानेकी बात नहीं भूली थी।"

अपूर्व सहसा ठिठककर खड़ा हो गया, बोला, "मगर, मैं देरी नहीं कर सकता। तिवारी बेचारा फिक्रमें मरा जा रहा होगा।"

भारतीने कहा, "नहीं मर रहा। उसकी वजह, आपके जागनेके पहले ही मैंने खबर भिजवा दी है कि आप सकुशल हैं।"

"उसे मालूम है कि मैं आपके यहाँ हूँ?"

भारतीने गर्दन हिलाकर कहा, "हाँ, मालूम है। तड़के ही मैंने आदमी भेज दिया है।"

इस समाचारको सुनकर अपूर्व सिर्फ निश्चिन्त ही नहीं हुआ, बल्कि उसके मनपरसे सचमुचका एक बोझा-सा उतर गया। कल रातको लौटते वक्त, खाते वक्त, सोते वक्त, सब काममें उसे इसी बातकी चिन्ता होती रही थी कि क्या मालूम कल सबेरे तिवारी उसकी बातपर विश्वास करेगा या नहीं। इस बर्मा देशकी कितनी ही कहावतें प्रसिद्ध हैं। शायद माके पास चिट्ठीमें कुछ अंटसंट लिख दे, या वापस घर पहुँचकर कोई जिक्र कर दे, तो पक्की स्याहीकी तरह स्याही पुँछ जानेपर भी उसका दाग नहीं मिटेगा,—यह छोटी-सी बात ही छोटे-से काँटेकी तरह उसके पाँवोंमें हर कदमपर गड़ रही थी। इतनी देर बाद अब वह निर्भय होकर कदम बढ़ाने लगा। तिवारी और चाहे जो करे, पर भारतीकी बातपर जान जानेपर भी अविश्वास नहीं कर सकता। जो फारखती भारतीने लिख दी है, अपूर्व इस बातको अच्छी तरह जानता था कि उससे बढ़कर निष्कलंकताकी बड़ी दलील तिवारीके लिए और कुछ नहीं हो सकती, वह पुलकित चित्तसे बोला, "आपकी सब तरफ निगाह रहती है। घर-पर मैंने

भारतीने कहा, "और अगर वह सेवा न करे ?—आप रहेंगे परदेशमें, जिठानियोंकी देखादेखी वह भी अगर उन्हींकी तरह हो जाय, माकी सेवा न करके उलटी उनको तकलीफ देने लगे, तो फिर आप क्या करेंगे, बताइए भला ?"

अपूर्व डर गया, बोला, "यह कभी नहीं हो सकता। धर्मात्मा घरानेकी लड़की माको किसी तरह कष्ट नहीं पहुँचा सकती, यह आप निश्चित समझिए।"

"धर्मात्मा ब्राह्मण-घराना ?" भारती जरा मुसकरा दी, फिर बोली, "अभी रहने दीजिए, अगर जरूरत हुई तो उसका किस्सा आपको फिर कभी सुनाऊँगी।" फिर कुछ देर चुप रहकर बोली, "आप सिर्फ माकी सेवाके लिए ही ब्याह करके उसे वहाँ छोड़ आयेंगे, तो क्या यह उसपर भारी अन्याय नहीं होगा ?"

अपूर्व उसके चेहरेकी तरफ देखकर बोला, "हाँ, सो तो होगा।"

भारतीने कहा, "और इस अविचार या अन्यायके बदले आप उससे सुविचारका दावा करेंगे ?"

अपूर्व कुछ देर तक चुप बैठा रहा, फिर आहिस्तेसे बोला, "मगर इसके सिवा और उपाय ही क्या है भारती ?"

भारतीने कहा, "उपाय चाहे न भी हो, परन्तु इतनी असम्भव आशा आप बड़ेसे बड़े धर्मात्मा घरानेकी लड़कीसे भी नहीं कर सकते। इसका फल कभी अच्छा नहीं हो सकता। आपकी निष्ठुरताके बदले जितना ही वह अपना कर्तव्य पालन करेगी, उतने ही आप उसकी दृष्टिमें छोटे होते जायँगे। और, स्त्रीकी दृष्टिमें अश्रद्धेय और हीन होनेसे बढ़कर दुर्भाग्य संसारमें और है ही नहीं अपूर्व बाबू !"

बात इतनी ज्यादा सच थी कि अपूर्व निरुत्तर हो रहा। शास्त्रानुसार स्त्रीका क्या कर्तव्य है, पतिव्रता किसे कहते हैं, सासकी निःस्वार्थ-सेवाका कितना महत्त्व है, पतिकी इच्छा-मात्रका पालन करनेमें कितना पुण्य है, इत्यादि अनेक पौराणिक कथाएँ उसने नज़ीरके तौरपर अपने मित्रोंके सामने पेश की हैं और आधुनिकताके विरुद्ध वह काफी लड़ा है,—अपनी बातोंसे मित्र-गोष्ठीको उसने दंग कर दिया है; परन्तु इस ईसाई लड़कीके सामने उसका आभास मात्र भी उसके मुँहसे नहीं निकला। कुछ देर बाद उसने करीब करीब अपने आपसे ही कहा, "वास्तवमें, आजकलके जमानेमें ऐसी लड़की शायद कोई होगी ही नहीं।"

भारती हँस दी और बोली, "कतई कोई है ही नहीं, ऐसा तो कैसे कह सकते हैं ? हो सकता है धर्मात्मा-घरमें न हो, और कहीं कोई हो जो इसके लिए अपनेको सम्पूर्ण रूपसे जलाञ्जलि दे सके। परन्तु उसे आप ढूँढ़के कैसे निकालेंगे ?"

अपूर्व अपनी ही चिन्तामें था, भारतीकी बातपर उसका ध्यान नहीं गया; बोला, "सो तो है ही।"

भारतीने कहा, "आप देश कब जायँगे ?"

अपूर्वने अन्यमनस्ककी भाँति ही जवाब दिया, "क्या मालूम, मा कब चिट्ठी लिखेंगी बुलानेके लिए।" फिर कुछ देर बिलकुल चुप रहकर कहा, "पिताजीके साथ मत न मिलनेसे मेरी मा जीवनमें कभी सुखी नहीं हुई। ऐसी माको अकेले छोड़नेको मेरा कभी जी नहीं चाहा। क्या मालूम, अबकी बार जानेपर वे फिर लौटने देंगी या नहीं।" फिर सहसा भारतीके चेहरेकी तरफ निगाह जमाकर कहने लगा, "देखो भारती, बाहरसे देखनेमें हमारे घरकी हालत भले ही अच्छी मालूम हो, पर भीतर तंगी है। शहरके अधिकांश गृहस्थोंकी यही दशा है। भाभियाँ चाहे जिस दिन हम लोगोंको अलग कर दे सकती हैं। अगर यहाँ फिरसे नौकरीपर न आ सका, तो हमारे कष्टोंकी सीमा न रहेगी।"

भारतीने कहा, "आपको आना ही होगा।"

"मासे हमेशा अलग रहूँगा ?"

"उन्हें राजी करके साथ लेते आइएगा। मैं निश्चित जानती हूँ, वे जरूर चली आयेंगी।"

अपूर्व हँसता हुआ बोला, "हरगिज नहीं। माको तुम पहचानती नहीं। अच्छा, मान लो कि वे आ भी गईं, तो उन्हें सम्हालनेवाला यहाँ कौन है ?"

भारतीने भी हँसते हुए कहा, "मैं सम्हाल लूँगी।"

"आप ? आपके घरमें घुसते ही मा हँड़िया-डबकिया फिंकवा देंगी।"

भारतीने जवाब दिया, "कितनी बार फिंकवायेंगी ? मैं रोज रोज घरमें घुस जाया करूँगी।"

इसपर दोनों ही हँस पड़े। भारतीने सहसा गम्भीर होकर कहा, "आप खुद भी तो उसी हँड़िया फेंकनेवालोंके दलमें हैं ! मगर हँड़िया फेंक देनेसे ही

अगर सब झगड़ा मिट जाता तो संसारकी समस्याएँ बहुत आसान हो जातीं। विश्वास न हो, तो तिवारीसे पूछ देखिएगा। ”

अपूर्वने स्वीकार करते हुए कहा, “ ठीक है। वह बेचारा हँडिया जरूर फेंक देगा, पर साथ साथ उसकी आँखोंसे आँसू भी गिरेंगे। आपकी तो वह इतनी भक्ति करता है कि जरा-सा पौंटाते ही ईसाई होनेको राजी हो जाय तो ताज्जुब नहीं; कुछ कहा नहीं जा सकता। ”

भारतीने कहा, “ दुनियामें कहा कुछ भी नहीं जा सकता, न नौकरके बारेमें और न मालिकके बारेमें।” इतना कहकर उसने हँसी छिपानेके लिए मुँह नीचा कर लिया। अपूर्वका चेहरा सुर्ख हो उठा, बोला,“ लेकिन दुनियामें इतना तो कहा जा सकता है कि नौकर और मालिककी बुद्धिमें तारतम्य होता है ?”

भारतीने कहा, “ सो तो है ही। इसीलिए उसके राजी होनेमें देर हो सकती है, पर मालिकको देर न लगेगी ! ” कहते कहते उसकी दृष्टि दबी हुई हँसीके वेगसे चंचल हो उठी। अपूर्व इस मजाकको समझकर खुश हुआ, बोला, “ सच, मजाक नहीं, क्या आप मेरे धर्म छोड़नेकी कल्पना कर सकती हैं ? ”

भारतीने कहा, “ हाँ, कर सकती हूँ। ”

“ सच, कर सकती हैं ? ”

“ सच, कर सकती हूँ। ”

अपूर्वने कहा, “ मगर, मैं तो यह जान जानेपर भी नहीं सोच सकता।”

भारतीने कहा, “ जान जाना क्या चीज है, सो तो आप जानते नहीं। तिवारी जानता है। लेकिन इस विषयमें बहस करनेसे क्या होगा ? आप जैसे अन्धकारमें भटकनेवालोंको प्रकाशमें लानेसे बढ़कर और भी बहुतसे जरूरी काम मुझे करने हैं। अब आप सो जाइए जरा। ”

अपूर्वने कहा, “ दिनमें मैं नहीं सोता। पर आपको जरूरी काम क्या करना है ? ”

भारतीने कहा, “ आपकी बेगार करना ही क्या मेरे लिए एक-मात्र जरूरी काम है ? मुझे भी थोड़ा-बहुत राँध-रूँधकर खाना पड़ता है। सोते नहीं तो चलिए मेरे साथ, नीचे चलकर बैठिएगा। मेरे हाथका जब कि किसी न किसी दिन खाना ही है, तो उससे बिलकुल अनभिज्ञ रहना ठीक नहीं। ” इतना कहकर वह खिलखिलाकर हँस पड़ी।

अपूर्वने कहा, "मैं मर जानेपर भी आपके हाथकी नहीं खा सकता।"

भारतीने कहा, "पर मैं जिन्दा रहकर खानेकी बात कह रही हूँ!" और वह हँसती हुई नीचे उतर गई।

अपूर्वने उसे बुलाते हुए कहा, "तो मैं अब घर जाता हूँ, तिवारी बेचारा फिक्र कर रहा होगा।" कुछ देर तक वह जवाबके लिए कान लगाये रहा, अन्तमें पीठ टेककर लेट गया। भारतीने शायद सुना नहीं, या सुनकर भी उत्तर नहीं दिया। परन्तु यही तो सबसे बड़ी समस्या नहीं है, बड़ी समस्या यह है कि उसे जल्दी घर जाना चाहिए। किसी भी बहानेसे अब देरी करना अच्छा नहीं लगता। मगर, भीतरसे जानेकी ताकीद जितनी ही ज्यादा महसूस होने लगी, देह उतनी ही आलससे शिथिल हुई जाने लगी। अन्तमें वह उस बड़ी कुरसीपर ही हाथपर मुँह रखकर सो गया।

१५

"बहुत अबेर हो गई, उठिए।"

अपूर्व आँखें रगड़ता हुआ उठकर बैठ गया। दीवारकी घड़ीकी तरफ देखकर बोला, "अरे, तीन-चार घंटेसे कम न सोया हूँगा! मुझे जगा क्यों नहीं दिया?—वाह, सिरके नीचे यह तकिया कब रख दिया! इसके होते हुए भी क्या किसीकी नींद खुल सकती है!"

भारतीने कहा, "नींद खुलनी होती, तो तभी खुल जाती। इसे न रख देती तो गर्दनमें फिजूल दर्द और हो जाता। जाइए, मुँह-हाथ धो आइए, सरकार महाशय जल-पानकी तश्तरी लिये खड़े हैं,—उन्हें बहुत काम है, जरा जल्दी छुट्टी दे दीजिए।"

दरवाजेके बाहर सरकार खड़ा ही था, मुँह बढ़ाकर उसने भी जल्दीका इशारा किया।

नीचेसे मुँह-हाथ धो आनेके बाद अपूर्वने जल-पान किया, और सुपारी-इलायची खाते खाते प्रसन्न चित्तसे कहा, "अब मुझे छुट्टी दीजिए, मैं घर जाऊँ।"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, "सो नहीं हो सकता। तिवारीको खबर भिजवा दी है, कल आफिससे लौटते समय ही आप घर पहुँचेंगे। और यह भी खबर

मँगा ली है कि आपका तिवारी स्वस्थ शरीर, मस्त तबीयतसे घरकी रखवाली कर रहा है,—आप जरा भी चिन्ता न कीजिए।"

"लेकिन क्यों?"

भारतीने कहा, "क्योंकि फिलहाल आप हमारे अभिभावक हैं। आज सुमित्रा जीजी अस्वस्थ हैं, नवतारा गई हैं मन्मथ बाबूको लेकर उस पार, और आपको जाना होगा मेरे साथ। आपके लिए प्रेसिडेंटका यही आदेश है। वह धोती लाकर रख दी है, पहनिए और चलिए।"

"कहाँ जाना होगा?"

"मजदूरोंकी लाइनमें। यानी, बड़े बड़े कारखानोंके करोड़पति मालिकोंने अपने मजदूरोंके लिए जो पंक्तिबद्ध नरक-कुंड बनवा रक्खे हैं, उनको देखने। आज छुट्टीके दिन ही वहाँ काम है।"

अपूर्वने पूछा, "वहाँ क्यों?"

भारतीने जवाब दिया, "नहीं तो, अधिकार समितिका काम क्या घर बैठे हो सकता है?" फिर जरा हँसकर बोली, "आप इस समितिके विशेष सदस्य हैं, खास मौकेपर गये बगैर तो आप सब बातें समझ न सकेंगे अपूर्व बाबू!"

"चलिए" कहकर अपूर्व आफिसकी पोशाक बदलकर पाँचेक मिनटमें तैयार हो गया।

भारतीको आलमारी खोलकर कोई एक चीज़ छिपाकर जेबमें रखते देख अपूर्वने पूछा, "यह आपने क्या ले लिया?"

"भरी पिस्तौल।"

"पिस्तौल? पिस्तौल क्यों?"

"आत्म-रक्षाके लिए।"

"इसका पास है?"

"नहीं।"

अपूर्वने कहा, "अगर कहीं पुलिस पकड़ ले, तो आत्म-रक्षा दोनोंकी ही हो जायगी। कै सालकी होगी, मालूम है?"

"नहीं होगी,—चलिए।"

"अपूर्वने दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए कहा, "दुर्गा! श्रीहरी!—चलिए।"

बड़ी सड़कसे उत्तरकी तरफ बर्मी और चीनियोंकी बस्ती पार करके बाजारके

किनारेसे लगभग मील-भर रास्ता तय करके दोनों एक बड़े कारखानेके सामने पहुँचे और बन्द फाटककी छोटी-सी खिड़कीमेंसे होकर भीतर चले गये। दाहिनी तरफ कॉरूगेटेड-लोहेके (टिनकी चद्दरोंके) गोदामोंकी कतार है और उसके दूसरी तरफ कारीगर और मजदूरोंके रहनेके लिए चीड़के तख्तों और पुरानी टीनकी बनी हुई पंक्तिवार कोठरियाँ हैं। सामनेकी तरफ एक कतारमें पानीके नल हैं और पीछेकी तरफ टीनके पाखाने। शुरू शुरूमें शायद उनमें किवाड़ थे, पर अब फटे टाट झूल रहे हैं। यही भारतीयोंकी 'कुली लाइन' है। इसीमें पंजाबी, मदरासी, बर्मी, बंगाली, मराठी, गुजराती, बिहारी, ब्रजवासी,—हिन्दू, मुसलमान,—स्त्री और पुरुष मिलकर लगभग एक हजार प्राणी दिनपर दिन, महीनेपर महीने और वर्षपर वर्ष बिताते चले आ रहे हैं।

भारतीने कहा, "आज कामका दिन नहीं है, छुट्टी है, नहीं तो इन पानीके नलोंपर ही खून-खराबी होती दिखाई दे जाती।"

अपूर्वने गर्दन हिलाते हुए कहा, "छुट्टीके दिनकी भीड़ देखकर भी तो उसका अन्दाजा लगाया जा सकता है।"

इतनी जनताके सामने ही एक मदरासी स्त्री टाटका परदा उठाकर पाखानेमें घुस रही थी,—परदेकी हालत देखकर अपूर्वका चेहरा सुर्ख हो उठा; बोला, "अधिकार-समितिका काम ही करना हो तो और कहीं चलिए, यहाँ तो मैं खड़ा भी नहीं रह सकता।"

भारती खुद भी इस बातको महसूस कर रही थी, परन्तु उत्तरमें सिर्फ जरा हँस दी।—अर्थात् मनुष्यके दर्जेसे उतारकर जिन्हें पशु बना डाला गया है, उनके लिए इन सब झंझटोंकी क्या जरूरत?

इसके बाद दोनों चलकर एक बंगाली मिस्त्रीके बासेमें पहुँचे : अधेड़ उम्र है, कारखानेमें पीतल-ढलाईका काम करता है : शराब पीकर काठके फर्शपर पड़ा पड़ा किसीको बुरी बुरी गालियाँ दे रहा है। भारतीने पुकारा, "मानिक, किसपर गुस्सा हो रहे हो? सुशीला कहाँ है? आज दो दिनसे वह पढ़ने क्यों नहीं जाती?"

मानिक किसी कदर हाथ-पैरोंके सहारेसे उठकर बैठ गया और गौरसे देखकर पहचाननेके बाद बोला, "बहनजी हैं? आओ, बैठो। सुशीला तुम्हारे स्कूलमें

कैसे जाय, बताओ ? खाना पकाना, चौका-बासन करना, लड़केको सम्हालना,—सभी तो उसको करना पड़ता है,—छाती फटी जाती है बहनजी ! जदुआ सालेको कतल न कर दिया तो मैं कायथकी पैदाइश नहीं ! बड़े साहबको ऐसी दरखास्त दूँगा कि सालेकी नौकरी ही खतम हो जाय ! ”

भारतीने हँसते हुए कहा, “ सो दे देना, और कहो तो सुमित्रा बहनजीसे कहकर मैं ही तुम्हारी दरखास्त लिखवा दूँ । लेकिन कल हम लोगोंकी सभा है फयारके मैदानमें, सो याद है न ? ”

इतनेमें एक दस-ग्यारह सालकी लड़की वहाँ आ पहुँची । उसने अपनी धोतीके छोरमेंसे एक बोतल निकालकर सावधानीसे रखते हुए कहा, “बापूजी, घोड़ा मार्का शराब नहीं मिली, टोपी मार्का ले आई हूँ । चार पैसे बाकी रह गये हैं ।—रामैया शराब पीके मतवाला होकर क्या कह रहा था, बताऊँ ? ”

उत्तरमें पिताने रामैयाको एक भद्दी गाली दी । भारतीने कहा, “ ऐसी जगह तुम अब मत जाया करो, अच्छा । तुम्हारी मा कहाँ है सुशीला ? ”

“ मा ? मा तो परसों जदु-चाचाके साथ चली गई है, लाइनके बाहर किरायेपर घर लेकर रहती है । ”

लड़की और भी कुछ कहना चाहती थी, इतनेमें बाप गरज उठा, “ रहवाता हूँ वहाँ मैं !—ब्याहता स्त्री है, कोई बजारकी वेश्या नहीं ! ” और अनिश्चित काँपते हुए हाथोंसे स्क्रूके अभावमें टूटी करछुलीकी नोकसे वह नई बोतलका डाट खोलनेमें लग गया ।

भारतीने सहसा पीछेसे अपने अंचलमें खिंचाव महसूस करके मुड़कर देखा, तो अपूर्वका चेहरा बिलकुल सफेद फक पाया । कभी उसने भारतीको छुआ नहीं था, मगर अभी उसे इसका कुछ होश ही न रहा । बोला, “ चलिए यहाँसे । ”

“ जरा ठहरिए । ”

“ नहीं, एक मिनट भी नहीं । ” इतना कहकर वह एक तरहसे जबर्दस्ती ही उसे बाहर ले गया । घरके भीतर मानिक बोतल और करछुली लिये वीर दर्पके साथ गरजता रहा, “ चाहे कतल करके फाँसीपर ही क्यों न चढ़ना पड़े !—मैं दासू गुण्डेका लड़का हूँ, जेल और फाँसी-वाँसीकी मैं परवाह नहीं करता । ”

बाहर आकर अपूर्व मानो आगकी तरह जल उठा, “हरामजादा, बदमाश,

शराबी, पाजी कहींका। जैसे राक्षसोंका नरक-कुण्ड बना रक्खा है! यहाँ पैर रखनेमें आपको घृणा नहीं होती!"

भारतीने उसके मुँहकी तरफ देखकर धीरेसे कहा, "नहीं, क्योंकि यह नरक-कुण्ड इनका बनाया हुआ नहीं है। ये तो सिर्फ दूसरोंके कार्यका प्रायश्चित्त कर रहे हैं।"

अपूर्वने कहा, "नहीं, इन लोगोंने नहीं बनाया, मैंने बनाया है। लड़कीकी बात सुनी? उसकी मा जैसे कहीं तीर्थ-यात्रा करने गई हो!—निर्लज्ज बेहया शैतान!—फिर कभी यहाँ आप आईं तो अच्छा न होगा, कहे देता हूँ!"

भारतीने जरा हँसते हुए कहा, "मैं तो म्लेच्छ ईसाई हूँ, यहाँ आनेमें मुझे क्या दोष है?"

अपूर्वने गुस्सेमें कहा, "दोष नहीं? ईसाइयोंके लिए क्या कोई अच्छी-बुरी बात नहीं? अपने समाजमें उन्हें क्या कोई जवाबदेही नहीं करनी पड़ती?"

भारतीने उत्तर दिया, "कौन है मेरा जो जवाबदेही करनी पड़ेगी? किसका सिर पिरायेगा मेरे लिए, आप ही बताइए?"

अपूर्वको सहसा कोई उत्तर नहीं सूझा, बोला, "यह सब आपकी चालाकी है। आप घर लौट चलिए।"

"मुझे और भी कई जगह जाना है। आपको अच्छा न लगे तो आप चले जाइए।"

"'चले जाइए' कहनेसे ही क्या मैं आपको यहाँ छोड़कर चला जा सकता हूँ?"

"तो साथमें रहिए। मनुष्यपर मनुष्य कितना अत्याचार कर रहा है, इस बातको आँख खोलकर देखना सीखिए। सिर्फ छुआछूत बचाकर आपने सोचा होगा कि खुद साधु बनके रहेंगे और अकेले ही पुण्य संचय करके स्वर्ग जायँगे, क्यों?—ऐसा खयाल भी न कीजिएगा।" कहते कहते भारतीका चेहरा कठोर और गलेका स्वर तीक्ष्ण हो उठा। इस मूर्ति और स्वरसे अपूर्व काफी परिचित था। भारतीने कहा, "उस लड़कीकी मा और जदुनन्दनने जो अपराध किया है, सो क्या सिर्फ उन्हींको दण्ड देनेसे खत्म हो जायगा? क्या आप उनके कोई नहीं हैं?—यह हरगिज नहीं हो सकता। डॉक्टर बाबूको न जानने तक मैं भी ठीक ऐसा ही सोचती थी, परन्तु आज मैं निश्चित जानती हूँ कि इस नरक-कुण्डमें

जितना पाप इकट्ठा होगा, उसका भार आपको भी स्वर्गके दरवाजेसे वापिस घसीट लायेगा और इस नरक-कुण्डमें डुबा देगा। मजाल क्या है कि आप इस दुष्कृतिका ऋण चुकाये बगैर छुटकारा पा जायँ! हम सब अपनी ही गरजसे आते हैं अपूर्व बाबू, इस बातका अनुभव करना ही हमारी अधिकार-समितिकी सबसे बड़ी साधना है। चलिए।"

अपूर्व निरीह और निस्पृहकी भाँति बोला, "चलिए।"

भारतीकी बात न तो वह समझ ही सका और न उसपर उसे विश्वास ही हुआ।

कुछ दूरीपर एक साखूका पेड़ था, भारतीने उँगलीसे दिखाते हुए कहा, "वह रहा सामने, कई घर बंगालियोंके हैं वहाँ,—चलिए।"

अपूर्वने पूछा, "बंगालियोंके सिवा अन्य देशवासियोंमें आप लोग काम नहीं करतीं?"

भारतीने कहा, "करती हूँ। सभीकी हमें जरूरत है, मगर प्रेसिडेण्टके सिवा और कोई तो उन सबकी भाषा जानता नहीं, वे स्वस्थ होतीं तो यह काम उन्हींका है, मेरा नहीं।"

"वे हिन्दुस्तानकी सभी भाषाएँ जानती हैं?"

"जानती हैं!"

"और डाक्टर बाबू।"

भारतीने हँसकर कहा, "डाक्टर बाबूके सम्बन्धमें आपको बड़ा कुतूहल है! इस बातपर आप विश्वास क्यों नहीं कर सकते कि दुनियामें जो कुछ जाना जा सकता है वे सब जानते हैं, और जो कुछ किया जा सकता है वे करते हैं। किसने उनका 'सव्यसाची' नाम रक्खा था, हम लोग नहीं जानतीं, मगर इतना कह सकती हूँ कि उनके लिए संसारमें शायद ही कोई बात असाध्य और अज्ञात हो।" यह कहती हुई वह अपने मनसे आगे चलने लगी। परन्तु उसके पीछे अपूर्व सहसा ठिठककर खड़ा हो गया और एक गहरी साँस लेता हुआ किसी गहरे विचारमें पड़ गया। अकस्मात् यह बात उसके हृदयमें घुमड़ उठी कि इस अभागे पराधीन देशमें इतने बड़े महान् प्राणोंका कोई मूल्य ही नहीं! चाहे जिसके हाथसे किसी भी क्षण ये कुत्तेकी मौत मर सकते हैं! संसारके विधानमें इतना बड़ा निष्ठुर अन्याय क्या और हो सकता है? भगवान् मंगलमय! यही अगर सच हो, तो यह किसके और किस पापका दण्ड है?

दोनों एक घरमें घुसे। भारतीने पुकारा, "पाँचकौड़ी, कैसी तबीयत है आज?"

अँधेरे कोनेमेंसे उत्तर आया, "आज जरा अच्छा हूँ।" और एक बूढ़ा-सा आदमी दाहिना हाथ ऊँचा किये सामने आ खड़ा हुआ। उसके शरीरपर ऊपरसे नीचे तक कई जगहपर लेप लगे हुए थे, "बेटीजी, लड़कीको तो खूनके दस्त हो रहे हैं, शायद जीयेगी नहीं। लड़केको भी कलसे जोरका बुखार है, बेहोश पड़ा है। हाथमें एक पैसा तक नहीं कि दवा या साबूदाने मँगवाकर खिलाता।" यह कहते कहते उसकी आँखोंमें आँसू भर आये।

अपूर्वके मुँहसे निकल पड़ा, "पैसे क्यों नहीं हैं?"

इस अपरिचित आदमीकी तरफ कुछ देर तक देखनेके बाद उसने कहा, "'पुली' की साँकलसे इस दाहने हाथमें जखम हो गया है, महीने-भरसे काम-धन्धा कुछ कर नहीं सकता, पैसे कहाँसे आवें बाबूजी?"

अपूर्वने पूछा, "कारखानेके मैनेजर कुछ इन्तजाम नहीं करते?"

पाँचकौड़ीने बायाँ हाथ कमरपर रखते हुए कहा, "हाय हाय! रोज-मजूरके लिए कौन इन्तजाम करता है! ऊपरसे कह रहा है कि काम नहीं कर सकते तो घर खाली कर दो,—जब अच्छे हो जाओ तब आना, काम मिल जायगा। ऐसी हालतमें कहाँ जाऊँ, आप ही बताइए बाबू साहब! छोटे साहबके हाथ-पाँव जोड़कर ज्यादासे ज्यादा हफ्ते-भर और रह सकूँगा। बीस सालसे काम कर रहा हूँ बाबूजी, ये लोग ऐसे नमकहराम हैं!"

बात सुनकर अपूर्वकी देहमें आग लग गई। उसकी ऐसी इच्छा होने लगी कि मैनेजरको अगर पा जाय, तो वह उसे यहाँ लाकर दिखावे कि देखो अच्छे दिनोंमें जिन लोगोंने लाखों रुपये पैदा कराये हैं, आज बुरे दिनोंमें उनको कितने दुःख सहने पड़ रहे हैं!

कलकत्तेमें अपूर्वके मकानके पास बैलगाड़ियोंका अड्डा था, इस समय उसे उसकी याद आ गई,—एक जोड़ी बैल, जो जिन्दगी-भर खींच खींच कर अन्तमें बूढ़े हो गये थे, उस गाड़ीवानने कसाईके हाथ बेच दिये। इस हृदय-हीनताको दूर करनेका कोई उपाय नहीं, लोग कुछ करते नहीं; और कोई करना भी चाहे तो सब उसे पागल बताकर हँसीमें उड़ा देते हैं। उस रास्तेसे जब कभी वह निकला है, इस बातका खयाल करके उसकी आँखोंमें आँसू

भर आये हैं। बैलोंके लिए नहीं, अर्थकी उस प्यासके लिए जो आदमीको इतना बर्बर निष्ठुर बनाकर प्रतिदिन पतनकी ओर ले जा रही है। सहसा भारतीकी बात याद करके वह मन ही मन कहने लगा : ठीक ही तो है, 'कौन कहाँ क्या कर रहा है,' 'न मालूम, मैं तो नहीं करता', 'ऐसा ही हुआ करता है', 'हमेशासे यही होता आया है' आदि कहनेसे ही तो इतने बड़े पापोंकी जवाबदेहीसे छुटकारा नहीं मिल सकता! बैल और घोड़े,—ये तो कारण-मात्र हैं; यह अभागा पाँचकौड़ी भी एक कारण है। जो अपनी हत्यासे अपनेको बचा नहीं सकते, अपने कष्टोंसे जो कमजोर हैं, जो निरुपाय लाचार हैं, जिन्हें आदमी होकर भी हम अपनी लज्जाहीन वंचना और क्रूर हृदय-बृत्तिसे धीरे धीरे मार रहे हैं,—सबलका यह जो आत्महत्याका अहोरात्रव्यापी उत्सव चला रहा है, इसकी बत्ती कब बुझेगी? इस सत्यानाशी उन्मत्तताका अन्त किस तरह होगा? मरणके पहले क्या उनका होश ठिकाने न आयेगा?

कोठरीके एक किनारे मैले-कुचैले फटे चिथड़ोंपर दोनों बच्चे मुरदेकी तरह पड़े हुए थे। भारती पास जाकर उनकी देहपर हाथ धरकर परीक्षा करने लगी। अपूर्व मारे डरके वहाँ न जा सका; परन्तु दरिद्र और पीड़ित दोनों बच्चोंकी मूक वेदना उसके हृदयपर हथौड़ेकी तरह चोटपर चोट करने लगी। वह वहीं खड़ा खड़ा उच्छ्वसित आवेगके साथ मन ही मन कहने लगा : लोग कहते हैं, यही दुनिया है! इसी तरह तो दुनियाके सब काम हमेशासे होते आये हैं!—मगर यह क्या कोई युक्ति है? दुनिया क्या सिर्फ अतीतके ही लिए है? मनुष्य क्या सिर्फ अपने पुराने संस्कार लेकर ही अचल बना रहेगा? नई किसी बातकी क्या वह कल्पना नहीं करेगा? उन्नति करना क्या उसका समाप्त हो चुका है? जो अतीत हैं, जो मर चुके हैं, सिर्फ उन्हींकी इच्छा,—उन्हींका विधान मनुष्यके सम्पूर्ण भविष्य, सम्पूर्ण जीवन और उन्नति करनेके समस्त द्वारोंको बन्द करके हमेशा उसपर अपना प्रभुत्व करता रहेगा?

"चलिए।"

अपूर्वने चौंकपर देखा, भारती है। पाँचकौड़ी चुपचाप उदास खड़ा था, भारती उससे स्निग्ध कंठसे कह रही थी, "डरो मत तुम, सब अच्छे हो जाओगे। कल सबेरे ही मैं डाक्टर, दवा-दारू सब भेज दूँगी—"

उसकी बात खत्म होनेके पहले ही अपूर्व जेबमें हाथ डालकर रुपया निकाल रहा था कि भारतीने हाथ बढ़ाकर इशारेसे उसे रोक दिया। पाँचकौड़ीकी

निगाह दूसरी तरफ थी, उसने यह नहीं देखा; परन्तु अपूर्व इसका कारण न समझ सका। भारतीने फिर अपनी जेबमेंसे चार आने पैसे निकालकर उसके हाथमें देते हुए कहा, " बच्चोंके लिए चार पैसेकी मिसरी, चार पैसेके सागूदाने और बाकी दो आनेके चावल-दाल लाकर तुम इस वक्तका काम चला लेना। कल सबेरे तुम्हारा इन्तजाम कर दिया जायगा। अब हम लोग जाते हैं।" यह कहकर भारती अपूर्वको साथ लेकर वहाँसे निकलकर रास्तेपर आ गई।

रास्तेमें अपूर्वने क्षुण्ण होकर कहा, " आप बड़ी कंजूस हैं। मुझे भी नहीं देने दिया, और खुद भी नहीं दिया।"

भारतीने कहा, " दे तो आई!"

" इसे 'दे आना' कहते हैं! उसकी इस संकटावस्थामें पाई-पैसोंका हिसाब करके चार आने देना तो उसका अपमान करना है!"

भारतीने पूछा, " आप कितना दे रहे थे?"

अपूर्वने कुछ तय नहीं किया था, सम्भवतः जो हाथमें पड़ता वही दे देता; परन्तु अभी उसने सोचकर कहा, " कमसे कम पाँचेक रुपये।"

भारतीने दाँतों तले जीभ दबाकर कहा, " अरे बापरे! आप तो सब मिट्टी ही कर देते। बाप तो शराब पीकर रात-भर बेहोश पड़ा रहता, और बच्चे दोनों खत्म हो जाते!"

" शराब पीता?"

" पीता नहीं? हाथमें रुपये आ जानेपर शराब न पीयें, ऐसे असाधारण व्यक्ति इस संसारमें कितने हैं?"

अपूर्व क्षण-भर अभिभूतकी भाँति स्तब्ध रहकर बोला, " आपको तो सब बातोंमें मजाक सूझता है। बीमार बच्चोंके इलाजके रुपयोंकी बाप शराब पी जायगा, क्या यह भी सच हो सकता है?"

भारतीने कहा, " सच न हो तो आप जिस देवताकी कसम खाने कहेंगे,—मा मनसा, ओला बीबी,—" और वह सहसा हँस पड़ी, किन्तु उसी वक्त अपनेको सम्हालकर बोली, " नहीं तो दाताका हाथ दबाकर दुखीको कुछ पानेसे रोक देती, सच कहिए, क्या मैं इतनी ओछी हूँ?"

अपूर्वने पूछा, " इन बच्चोंकी मा नहीं है?"

" नहीं।"

"कहीं कोई अपना कुटुम्बी या रिश्तेदार भी न होगा?"

"भारतीने कहा, "हो भी, तो काम नहीं आनेका। दस-बारह साल पहले पाँचकौड़ी एक बार अपने देश गया था और वहाँसे एक पड़ोसीकी विधवाको भगाकर ले आया था। लड़की-लड़के उसीके हैं। दो साल हुए, वह गलेमें फाँसी लगाकर मर गई,—यही पाँचकौड़ीका संक्षिप्त इतिहास है।"

अपूर्वने एक दीर्घ निःश्वास लेकर कहा, "सचमुच ही नरककुण्ड है!"

भारतीने अत्यन्त स्वाभाविक स्वरमें सिर हिलाते हुए कहा, "इसमें रत्ती-भर भी मत-भेद नहीं। मगर मुश्किल यह है कि ये सब अपने ही भाई-बहन हैं। खूनका सम्बन्ध अस्वीकार करनेसे ही रिहाई नहीं मिल सकती अपूर्व बाबू, ऊपर बैठे हुए जो विचारक सब कुछ देख रहे हैं, वे एक एक कौड़ीका हिसाब ले लेंगे तब छोड़ेंगे!"

अपूर्वने गम्भीर होकर कहा, "अब मालूम होता है, बिलकुल असम्भव नहीं।" क्षण -भर पहले इसी पाँचकौड़ीके घरमें खड़े खड़े उसने जो जो बातें सोची थीं, वे सब बिजलीकी तरह एकाएक फिर उसके मनमें दौड़ने लगीं। बोला, "हम जब कि आदमी हैं, तो हमपर भी दायित्व तो है ही।"

भारतीने समर्थन किया। बोली, "शुरू शुरूमें मुझे भी दिखाई न देता था, गुस्सा होकर लड़ा करती थी। पर अब स्पष्ट दिखाई देने लगा है अपूर्व बाबू, कि इन सब अज्ञानी, दुखी दुर्बल-चित्त भाई-बहनोंके माथे इस असह्य पापका बोझा कौन दिन-रात लाद रहा है।"

पासकी कोठरीमें एक उड़िया मिस्त्री रहता है, उसकी बगलवाली कोठरीसे बीच-बीचमें जोरकी हँसी और शोर-गुल सुनाई दे रहा था। पाँचकौड़ीकी कोठरीमेंसे भी वह सुनाई पड़ता था। दोनों उसी कोठरीमें जा पहुँचे। भारतीको सब जानते थे, उसका सबने एक साथ स्वागत किया। एक आदमी चटसे उठकर इन दोनोंके बैठनेके लिए एक स्टूल और एक बेतका मोढ़ा उठा लाया। बगैर कुछ बिछाये खाली लकड़ीके फर्शपर बैठे हुए छह-सात मर्द और आठ-दस औरतें मिलकर शराब पी रही थीं। एक टूटा-सा हारमोनियम और एक बायाँ तबला बीचमें पड़ा था। तरह तरहकी छोटी-बड़ी रंगबिरंगी रीती बोतलें चारों तरफ लुढ़क रही थीं; एक बूढ़ी-सी औरत ज्यादा नशा हो जानेके कारण एक तरफ इस तरह पड़ी हुई थी कि उसे नंगी भी कहा जा सकता

था। साठसे लेकर पचीस वर्ष तकके सभी उम्रके स्त्री-पुरुष शामिल थे,—आज रविवार था, छुट्टीका दिन ठहरा। प्याज-लहसनकी तरकारीकी और साथ साथ सस्ती जर्मन शराबकी अवर्णनीय दुर्गन्ध अपूर्वकी नाकमें जाते ही उसका जी मतलाने लगा। एक कम उम्रकी औरतके हाथमें शराबका गिलास था,—शायद वह अब तक पक्की पियक्कड़ नहीं हो पाई थी, क्योंकि थोड़े ही दिन पहले घरसे निकली थी,—उसने बाँयें हाथसे अपनी नाक दबाकर बड़ी मुश्किलसे शराबका गिलास अपने मुँहमें उँड़ेल लिया और तख्तोंकी संधमेंसे लगी बार बार थूकने। एक मर्दने जाकर झटपट उसके मुँहमें तरकारी ठूँस दी। एक भारतीय स्त्रीको अपनी आँखोंके सामने शराब पीते देख अपूर्व एकदम हक्काबक्का-सा हो गया। परन्तु उसने कनखियोंसे भारतीके चेहरेकी तरफ नजर की तो देखा कि इतने बड़े भयानक बीभत्स दृश्यसे भी उसके चेहरेपर किसी तरहकी विकृतिका चिह्न तक नहीं!—यह सब वह सह गई। मगर कुछ देर बाद घर-मालिककी फरमाइशसे टुनियाने जब गाना शुरू किया, 'पनिया भरन गई' और उसकी बगलवाला आदमी हारमोनियम खींचकर ख्वाम-खाह उसकी एक चाबी दबाकर जोर-जोरसे बिलो करने लगा तब, इतनी ज्यादती भारतीसे शायद सही नहीं गई। वह व्यस्त होकर कह उठी, "मिस्त्री साहब, कल हम लोगोंकी सभा है, भूले न होंगे शायद? पहुँचना ही चाहिए सबको।"

"जरूर जरूर बहनजी!" यह कहता हुआ कालीचरण एक गिलास शराब गटक गया।

भारतीने कहा, "बचपनमें पढ़ा है न, एक एक मूँज बटकर रस्सा बनाया जाता है। सबके एक हुए बगैर तुम लोग कभी कुछ नहीं कर सकते। सिर्फ तुम्हीं लोगोंकी भलाईके लिए सुमित्रा बहनजी कितनी मेहनत कर रही हैं, बताओ?"

इस बातपर सबने एक साथ अपनी राय जाहिर की। भारती कहने लगी, "तुम लोगोंके बिना क्या इतना बड़ा कारखाना एक रोज भी चल सकता है? तुम्हीं लोग तो सच्चे मालिक हो, यह तो सीधी-सी बात है कालीचरण, इतना भी तुम लोग न समझोगे तो कैसे काम चलेगा!"

सब कोई बोल उठे, "ठीक बात है, ठीक बात है। हम लोगोंके बिना सब अँधेरा है।"

भारतीने कहा, "फिर भी, तुम लोगोंको कितनी तकलीफ है, जरा सोच तो देखो! जब तब बगैर कुसूरके तुम लोगोंको लात-जूता मारकर निकाल दिया जाता है। इसी बगलकी कोठरीमें देखो : काम करते करते पाँचकौड़ीका हाथ टूट गया जिससे आज वह भूखों मर रहा है, उसके बच्चे एक बूँद दवाको भी तरस रहे हैं, खानेको पथ्य नहीं मिलता, बेचारे भूखों मर रहे हैं! बड़ा साहब कोठरीसे भी निकाल देना चाहता है! जो ये लोग करोड़ों रुपये मुनाफा कर रहे हैं, सो किसकी बदौलत? और तुम लोगोंको क्या मिलता है उसमेंसे?—उस दिन श्यामलालको छोटे साहबने धक्का देकर गिरा दिया, वह आज भी अस्पतालमें पड़ा सड़ रहा है,—यह सब तुम लोग क्यों बरदाश्त करते हो? एक बार एक साथ खड़े होकर कहो, 'यह अत्याचार अब नहीं सहेंगे' फिर देखें कैसे वे तुम्हारे बदनपर हाथ उठाते हैं। सिर्फ एक बार—एक बार अपनी सच्ची ताकतको देखना सीख जाओ,—और तुम लोगोंसे हमें कुछ नहीं चाहिए कालीचरन!"

एक मतवाला अब तक मुँह बाये सुन रहा था, बोला, "बाबा, हम कर क्या नहीं सकते? ऐसा एक पेच ढीला छोड दे सकते हैं कि धड़ धड़ धड़ाम!—बस! आधा कारखाना ही हवा हो जाय!"

भारती डर गई, बोली, "नहीं नहीं, दुलाल, ऐसा करनेकी जरूरत नहीं। ऐसा मत करना। उससे तुम्हीं लोगोंका नुकसान है! शायद बहुत-से आदमी मारे जायँ,—शायद,—नहीं नहीं, ऐसी बात सपनेमें भी न सोचना। इससे बढ़कर और पाप नहीं!"

दुलाल मतवालेकी-सी हँसी हँसकर बोला, "नहीं जी,—सो क्या मैं समझता नहीं! मैं तो एक बातकी बात कह रहा हूँ कि हम लोग क्या कर सकते हैं!"

भारती कहने लगी, "तुम लोगोंको सत्य मार्गपर, सच्चे रास्तेपर खड़े होना चाहिए। उसीसे तुम्हें सब कुछ मिल जायगा। उन लोगोंपर जो तुम्हारे रुपये पावने हैं,—उन्हींको पाई पाई वसूल करना है।"

औरत-मर्द सब मिलकर शोर मचाने लगे। भारतीने कहा, "शाम हो रही है, अभी और एक जगह जाना है, इसलिए जा रहे हैं, मगर कलकी बात तुम लोग हरगिज नहीं भूलना।" इतना कहकर वह उठ खड़ी हुई।

कालीचरनके घरकी यह बेहूदी धींगामस्ती अपूर्वको बहुत ही भद्दी मालूम हुई, परन्तु अन्तमें चलते चलते जो बातें हुईं, उनसे तो उसके क्रोधका

ठिकाना ही न रहा। बाहर आकर उसने गुस्सेके साथ कहा, "ये सब बातें तुम इन लोगोंसे क्यों कहने बैठीं ?"

भारतीने जरा आश्चर्यके साथ पूछा, "कौन-सी बातें ?"

अपूर्वने उसी तरह गुस्सेसे कहा, "ये लोग नालायक हरामजादे शराबी ठहरे। दुलाल था या कौन,—उसने क्या कहा, सुना ? मान लो, यह बात कहीं साहबके कान तक पहुँच गई, तो ?"

"साहबके कान तक पहुँचेगी कैसे ?"

"अरे ये ही लोग कह देंगे। इन सबको क्या तुमने युधिष्ठिर समझ रक्खा है ? शराबके नशेमें कब क्या कर डालें, कोई ठीक है ! तब तुम्हारे ही ऊपर दोष आयेगा ! हो सकता है कि कह दें, तुम्हींने सिखा दिया था !"

"मगर है तो यह झूठ बात !"

अपूर्व अधीर होकर कहने लगा, "झूठ बात ! अरे अँगरेजी राज्यमें झूठी बातपर क्या कभी किसी को सजा नहीं मिलती ? राज्य ही जो झूठी बातपर खड़ा हुआ है !"

भारतीने कहा, "तो मुझे भी सजा हो जायगी।"

अपूर्वने कहा, "तुमने कह दिया, सजा हो जायगी ! नहीं नहीं, यह सब नहीं होगा। यहाँ तुम्हारा आना हरगिज नहीं हो सकता,—हरगिज नहीं।"

कुछ दूर आगे एक आदमीसे मिलनेकी जरूरत थी, पर दरवाजेपर ताला लगा देखकर दोनों उसी रास्तेसे वापस लौट पड़े। कालीचरनके घरके सामने आकर देखा, 'पनिया भरन गई' गाना बन्द हो गया है, और उसके बदले मद-मत्त तर्क शुरू हो गया है। एक औरत नशेमें चूर होकर अपने पतिके शोकमें रो रही है, दूसरा आदमी उसे यह कहकर सान्त्वना दे रहा है कि देशकी बातें याद करनेसे अब कोई फायदा नहीं,—यहीं फिर तेरा सब कुछ हो जायगा, तू मन्नत मानकर हर पूनोंको सत्यनारायणकी कथा बँचवा। कई आदमी इस बातपर झगड़ा कर रहे हैं कि ये ईसाई औरतें कारखानेमें हड़ताल कराना चाहती हैं, हड़ताल होनेसे हमारी तबाहीका ठिकाना न रहेगा,—इन लोगोंको अब इस लाइनमें नहीं आने देना चाहिए। कालीचरन मिस्त्री समझा कर कह रहा था : मैं कुछ बेवकूफ नहीं हूँ, इन लोगोंका सिर्फ रंग-ढंग देख रहा हूँ। एक अत्यन्त होशियार औरतने सलाह दी : बच्चा साहबको अभीसे होशि-यार कर देना चाहिए।

वहाँसे भारतीको जबर्दस्ती खींच ले जाकर अपूर्वने तीक्ष्ण स्वरमें कहा, "और करेंगी इन लोगोंकी भलाई ?—नमकहराम हैं हरामजादे ! पाजी ! बदमाश ! उफ्,—बगलकी कोठरीमें दो अनाथ बच्चे मर रहे हैं, कोई उधर आँख उठाकर देखता तक नहीं ! नरक और कहाँ होगा !"

भारतीने उसके मुँहकी ओर देखकर कहा, "अचानक हो क्या गया आपको ?"

अपूर्वने कहा, "मुझे कुछ नहीं हुआ, मैं जानता था। मगर तुमने सुना कि नहीं, बताओ ?"

भारतीने कहा, " नई कोई बात नहीं, ऐसी बातें तो हम रोज़ ही सुना करती हैं।"

अपूर्व गरजकर बोला, " ऐसी शैतानी ? इतनी कृतघ्नता ? इन्हें चाहती हो तुम अपने दलमें मिलाना ? इनकी तुम भलाई करना चाहती हो ?"

भारतीके स्वरमें किसी तरहकी उत्तेजना नहीं आई, बल्कि वह जरा मलिन हँसी हँसकर बोली, " ये लोग कौन हैं अपूर्व बाबू ? ये लोग भी तो हम ही हैं, इस छोटी-सी बातको ज्यों ही आप भूल जाते हैं त्यों ही गड़बड़ीमें पड़ जाते हैं। और भलाईकी पूछते हैं ? 'भलाई करना' अगर संसारमें कोई शब्द हो, और उसकी अगर कहीं जरूरत हो तो यहींपर है। भलाई डाक्टर साहबकी तो की नहीं जा सकती अपूर्व बाबू ?"

अपूर्वने इस बातका कोई जवाब नहीं दिया, वह चुप रहा।

दोनों जनें चुपचाप फाटकसे बाहर आकर फिर उसी बर्मी मुहल्लेके भीतरसे बड़ी सड़कपर आ गये। संध्या बीत चुकी थी, गृहस्थोंके घर बत्तियाँ जल रही थीं। सड़कके दोनों किनारे रात-दूकानें लग चुकी थीं और उनमें बिक्री हो रही थी। उसके बीचमें होकर भारती जरा-सा घूँघट मारकर चुपचाप जल्दी जल्दी चलने लगी। बस्ती खत्म होकर जब मैदान शुरू हुआ तो सड़ककी मोड़पर भारतीने पीछेकी ओर देखकर अपूर्वसे कहा, " आप घर जाना चाहें तो यह सड़क गई है दाहनी तरफ सीधी शहरको।"

अपूर्व अन्यमनस्क था, बोला, "क्या कहा आपने ?"

भारतीने कहा, "अब आपका माथा ठंडा हुआ है ! यथायोग्य सम्बोधनके शब्द याद आ गये ?"

"इसके मानी ?"

"इसके मानी, गुस्सेमें अबतक 'आप' और 'तुम' का भेद भूल गये थे। अब होश आ गया।"

अपूर्वने अत्यन्त लज्जित होकर स्वीकार करते हुए कहा, "आप नाराज़ तो नहीं हुईं?"

भारती हँस पड़ी। बोली, "जरा हो भी जाऊँ तो क्या हर्ज है? चलिए!"

अपूर्वने फिर कोई आपत्ति नहीं की। आज उसके मनमें बहुत-सा जहर, बहुत-सी आग धक धक जल रही थी। उन शराबियोंकी बातोंको वह किसी तरह भूल ही नहीं रहा था। चलते चलते सहसा कडुए स्वरमें बोल उठा, "यह सब सुमित्राका काम है, आपको यहाँ सरदारी करने जानेकी क्या जरूरत? कौन जाने कहाँ कोई कब क्या कर बैठे, पीछेसे आपको लेकर फिर खींचातानी हो!"

भारतीने कहा, "सो होने दीजिए।"

अपूर्वने कहा, "वाह जी होने दीजिए! असल बात यह है कि सरदारी करना आपका स्वभाव है। मगर इसके लिए और भी ती बहुत जगह हैं।"

"एक दिखा न दीजिए?"

"मुझे क्या पड़ी है!"

यहाँपर मरम्मतके लिए सड़क खुद रही थी। जाते समय दिनमें कोई दिक्कत नहीं हुई, मगर अब दोनों तरफके पेड़ोंकी छायासे और भी ज्यादा अँधेरा हो जानेसे रास्ता दुर्गम हो गया था। भारतीने अपना हाथ बढ़ाकर अपूर्वका बायाँ हाथ जोरसे पकड़ लिया। बोली, "स्वभाव तो मेरा जायगा नहीं अपूर्व बाबू, कोई काम तो चाहिए ही। लेकिन, आप जैसे अनाड़ीके ऊपर अगर सरदारी पा जाऊँ तो और सब काम छोड़-छाड़ दूँ।"

"आपके साथ बातोंमें नहीं जीत सकता," कहकर वह होशियारीसे देख-भालकर रास्ता चलने लगा।

१६

दूसरे दिन तीसरे पहर सुमित्राके नेतृत्वमें फयार-मैदानमें जो सभा हुई, उसमें आदमी ज्यादा नहीं आये; यहाँ तक कि जिन लोगोंने व्याख्यान देनेका वचन दिया था, उनमेंसे भी बहुतसे नहीं आ सके। नाना कारणोंसे सभाका काम चालू करनेमें देर हो गई और रोशनीका इन्तजाम न होनेसे शाम होते ही वह भंग भी कर देनी पड़ी। सुमित्राके व्याख्यानके सिवा शायद उस सभामें उल्लेख-योग्य कुछ भी न हो सका। परन्तु, इससे अधिकार-समितिके इस प्रथम उद्यमको व्यर्थ नहीं कहा जा सकता। कारण, मजदूरोंमें चारों तरफ एक दूसरेके जरिए बात फैल गई, साथ ही कारखानोंके मालिकोंके कानों तक पहुँचनेमें भी देर न लगी। जैसे भी हो, चारों तरफ यह खबर उड़ गई कि कोई एक बंगाली स्त्री सारी दुनिया घूम-घामकर अन्तमें बर्मा आ पहुँची है,—जैसा उसका रूप है, वैसी ही शक्ति! किसकी ताकत है कि उसे रोके! कैसे वह साहबोंके कान पकड़ कर मजदूरोंके लिए सब तरहके आराम वसूल कर लेगी और उनकी मजूरीके पैसे दूने करवा देगी, सो सब उसने अपने ही मुँहसे आम सभामें सबको कह सुनाया है। इसलिए जो लोग खबर न मिलनेसे उस दिन सभामें नहीं पहुँच पाये थे, वे आगामी शनिवारको फयार-मैदानमें जरूर पहुँचें।

बीस-पचीस कोसके दर्मियान जितने भी कारखाने थे, उन सबमें यह बात दावानलकी तरह फैल गई। उस दिन सुमित्राको कुछ ही आदमियोंने आँखोंसे देखा होगा, किन्तु उसके रूप और शक्तिकी ख्याति अतिरंजित होकर,—यहाँ तक कि अमानुषिक होकर, जब लोगोंके कानों तक पहुँची तो अशिक्षित मजदूरोंमें सहसा मानो एक तरहका जागरण-सा हो उठा। संसारमें जो हमेशासे अत्याचारसे दबे हुए हैं, पीड़ित हैं, दुर्बल हैं, और इसीलिए मनुष्यके स्वाभाविक अधिकारसे सबलोंद्वारा वंचित कर दिये गये हैं,—अपनेपर विश्वास करनेका दुनियामें कोई कारण, जिन्हें ढूँढ़े नहीं मिलता,—देवता और दैवके प्रति उन्हींका विश्वास सबसे ज्यादा होता है। लिहाजा सुमित्राके विषयमें फैली हुई अफवाह उन्हें असंगत नहीं मालूम हुई,—यह बात लगभग एक तरहसे निश्चित-सी हो गई कि एक दिनका नागा करके फयार मैदानमें जाना ही होगा। उनकी बात और उपदेशमें ऐसा कोई पारस-पत्थर अगर हो जिससे मजदूरोंकी दुखिया तकदीर

रातों-रात एकबारगी जादूकी तरह सौभाग्यकी दीप्तिसे चमक उठे, तो चाहे जैसे भी हो, उस दुर्लभ वस्तुको ले ही आना चाहिए।

उस दिन ग्रामकी सभामें वक्ताओंके अभावमें अपूर्व जैसे अनाड़ीको भी साग्रह,अनुरोधके मारे मजबूरन खड़े होकर दो चार शब्द कहने पड़े थे। उसे सभामें बोलनेका अभ्यास नहीं था, जो बोला भी था वह बिलकुल वाहियात था और उसके लिए वह मन ही मन हदसे ज्यादा लज्जित भी हुआ था; मगर आज जब उसे सहसा खबर मिली कि उन लोगोंके उस दिनके व्याख्यान व्यर्थ नहीं गये, बल्कि यहाँ तक फैल हुआ है कि उनकी आगामी सभामें कारखानोंका काम तक बन्द करके मजदूरोंने उपस्थित होनेका दृढ सकल्प कर लिया है, तो बड़ाई और आत्म-प्रसादके आनन्दसे उसकी छाती भीतरसे मानो फूली न समाई। उस दिन अपने वक्तव्यको वह साफ साफ नहीं कह सका था, मगर उसका डर जाता रहा था। बहुत-से आदमियोंके बीचमें खड़े होकर जनताको सम्बोधन करके बोलनेमें जो एक तरहका नशा है, उसका उसे स्वाद मिल चुका था; आज आफिसमें आते ही सुमित्राकी चिट्ठीमें अनेक प्रशंसा-वाक्योंके साथ आगामी सभामें भी दुबारा व्याख्यान देनेके लिए जो निमंत्रण मिला, उससे वह मारे उत्तेजनाके चंचल हो उठा और आफिसके काममें मन न लगा सका। मन ही मन वह इस बातकी तैयारी करने लगा कि किस तरह पहलेसे और भी विशद, और भी तेज, और भी सुन्दर ढंगसे व्याख्यान दिया जा सकता है।

दोपहरको टिफिनके लिए बैठा, तो उसने सहसा रामदाससे सब बातें कह दीं। एक दिन उसीके लिए रामदासने भारतीका अपमान किया था,—तबसे उसके साथ मेरा लेशमात्र भी सम्बन्ध है, यह कहनेमें उसे शर्म आती थी। अदालतमें जिस दिन जुर्माना हुआ था, तबसे अब तक कितने-से दिन हुए होंगे! इस बीच वह उद्दण्ड बर्बर साहब मर चुका है, उसकी बंगालिन स्त्री मर चुकी है और उसकी वह क्रिश्चियन लड़की भी मकान छोड़कर अन्यत्र कहीं चली गई है,—सिर्फ इतना ही रामदासको मालूम था। परन्तु इसी अरसेमें उस मकान छोड़कर गई हुई लड़कीके साथ मौन गोपनताके तले उसके मित्रके जीवनमें कितना बड़ा काव्य और कितने गहरे दुःखका इतिहास तेजीके साथ बनता चला जा रहा था, उसे इस बातकी कोई खबर नहीं थी? आज जब पुलककी अधिकतामें अपूर्वके मुँहसे सभी बातें निकलने लगीं, तो रामदास उसके मुँहकी तरफ देखकर

चुप मारे बैठा रहा। भारती, सुमित्रा, डाक्टर, नवतारा, यहाँ तक कि उस शराबी तकका उल्लेख करके जब तक वह अपनी अधिकार-समितिके कार्य और लक्ष्यका वर्णन करके उस दिनकी कुली-लाइनमें घूमनेकी बातें एक एक करके कहता रहा, तब तक रामदासने एक भी प्रश्न नहीं किया।

इस बातका खयाल करके कि किसी दिन देशके लिए इस आदमीने जेलकी सजा भुगती है, बेतोंकी मार सही है, और भी न जाने कितने अत्याचार सहे हैं, अपूर्व रामदासपर श्रद्धा रखता आया है। ये सब बातें रामदासके मुँहसे सिर्फ एक दिनके सिवा और किसी दिन उसके सुननेमें नहीं आईं, फिर भी उन्हें अपनी कल्पनासे बड़ा करके, आफिसमें बड़ा होता हुआ भी अपूर्व हमेशा ही अपनेको रामदाससे छोटा समझता आया है। क्षुद्रता उसमें नहीं थी, रामदास उसका मित्र है,—मित्रके प्रति उसके विद्वेष नहीं था, फिर भी बड़े और छोटेका भाव वह अपने मनसे किसी तरह दूर नहीं कर पाता था। इस तरह इन दो मित्रोंकी घनिष्ठताके बीचमें भी व्यवधानकी प्राचीर खड़ी हो गई थी। अब सुमित्राका पत्र रामदासकी आँखोंके सामने रखकर अधिकार-समितिके विशिष्ट सदस्य और देशके काममें नियोजित-प्राण सेवकके रूपमें अपनेको व्यक्त करके एक ही क्षणमें मानो वह अपने मित्रके समकक्ष हो उठा, और इसीके साथ क्षण-भरमें उसके सिरसे हीनताका बोझ उतर गया।

चिट्ठी अँगरेजीमें लिखी हुई थी, तलवरकरने उसे दो बार चुपचाप आद्योपान्त पढ़ा और मुँह उठाकर कहा, "बाबूजी, ये सब बातें आपने मुझसे एक दिन भी नहीं कहीं?"

अपूर्वने कहा, "कहनेसे भी क्या आप शरीक हो सकते थे?"

तलवरकरने कहा, "यह बात आप क्यों पूछ रहे हैं? आपने शरीक होनेके लिए बुलाया ही कहाँ?"

उसके स्वरमें अभिमानकी ध्वनि थी जो स्पष्ट रूपसे अपूर्वके कानोंमें जा खटकी, उसने कुछ देर चुप रहकर कहा, "इसका सबब है रामदास बाबू, आप तो जानते ही हैं, इन सब कामोंमें कितनी जबर्दस्त आशंका है! आपने विवाह किया है, आपके लड़की है, स्त्री है, आप गृहस्थ हैं,—इसीसे मैंने आपको इस आँधी-तूफानमें शामिल करना उचित नहीं समझा।"

तलवरकरने आश्चर्यके साथ कहा, "गृहस्थोंको क्या देशकी सेवा करनेका अधिकार नहीं है? जन्म-भूमि क्या सिर्फ आप ही लोगोंकी है, हम लोगोंकी नहीं?"

अपूर्वने शरमिन्दा होकर कहा, "मैंने ऐसा इशारा नहीं किया तलवरकरजी, मैंने सिर्फ यही बात कही है कि आप विवाहित हैं, गृहस्थ हैं। आपके सिरपर काफी जिम्मेवारी है, इससे इस विदेशमें इतनी बड़ी विपत्तिमें पड़ना शायद आपके लिए ठीक नहीं।"

तलवरकरने कहा, "शायद!—सो हो सकता है। मगर विजित और पराधीन देशकी सेवा करनेका नाम ही तो विपत्ति है अपूर्व बाबू। इसका और कोई नाम नहीं, इस बातको मैं हमेशासे जानता हूँ। हिन्दुओंमें विवाह करना धर्म है, पर मातृभूमिकी सेवा करना उससे भी बड़ा धर्म है। एक धर्म दूसरे धर्ममें बाधा पहुँचायेगा, यह अगर एक दिनके लिए भी समझता बाबूजी, तो मैं ब्याह ही नहीं करता।"

उसके चेहरेकी तरफ देखकर अपूर्वने फिर कोई प्रतिवाद नहीं किया, वह चुप हो रहा। पर इस युक्तिका उसके मनने समर्थन नहीं किया। किसी दिन अपने देशके काममें इस आदमीने बहुत कष्ट सहे हैं और आज भी उसका वह तेज बिलकुल बुझ नहीं गया है, जरा-सा प्रसंग पाते ही वह भीतरसे भभक उठा है, इस बातका खयाल करके अपूर्व मारे श्रद्धाके विगलित हो उठा; परन्तु इससे ज्यादा सचमुच ही उसने और कोई आशा नहीं की। बुलाते ही वह अपने कुटुम्बकी ममता छोड़कर, उनके भरण-पोषणके मार्गको कण्टकाकीर्ण करके, अधिकार-समितिका सदस्य बननेके लिए दौड़ा आयेगा, इस बातपर न तो उसे विश्वास हुआ और न उसने ऐसी इच्छा ही की। इन कई दिनोंमें ही उसकी स्वदेश-सेवाके अधिकारकी महत्त्वाकांक्षा इतनी ज्यादा ऊँची हो गई थी! सहसा इस प्रसंगको बन्द करके उसने आगामी सभाका कारण और उद्देश्यकी व्याख्या करते करते सरल कंठसे यह भी व्यक्त कर दिया कि मैंने अपने जीवनमें सिर्फ एक दिनके सिवा और कभी व्याख्यान नहीं दिया। सुमित्राके निमंत्रणकी उपेक्षा तो मैं नहीं कर सकता, परन्तु एककी बात बहुतोंको सुनाने लायक भाषा या अनुभव दोनोंमेंसे कुछ भी मुझमें नहीं है।

तलवरकरने पूछा, "क्या करेंगे तब?"

अपूर्वने कहा, "व्याख्यान देने लायक अनुभवके नाम तो मुझे सिर्फ एक ही

दिन कारखाना देखनेका मौका मिला है। वहाँके अधिकांश कुली-मजदूर पशुओंका-सा जीवन बिताया करते हैं, इस बातको मैं बिना किसी संशयके अनुभव कर आया हूँ; मगर क्यों और किसलिए, यह कुछ नहीं जानता।"

रामदासने हँसते हुए कहा, "फिर भी आपको बोलना ही पड़ेगा? न बोलें तो?"

अपूर्व चुप रहा; परन्तु उसका चेहरा देखकर स्पष्ट मालूम हुआ कि इतनी बड़ी इज्जतको छोड़ देना उसके लिए बहुत ही कठिन है।

तब रामदासने खुद ही कहा, "लेकिन मैं इन लोगोंके बारेमें कुछ कुछ जानता हूँ।"

"कैसे जाना आपने?"

"मैं बहुत दिन इन लोगोंमें रहा हूँ अपूर्व बाबू! यदि आप एक बार मेरी नौकरीके सर्टिफिकटोंको देखेंगे तो मालूम हो जायगा कि मैंने कल-कारखानों और-मजदूरोंमें ही अधिक दिन बिताये हैं। और अगर आज्ञा दें, तो मैं इनके दुःखकी बहुत-सी कहानियाँ आपको सुना सकता हूँ। वास्तवमें, इन लोगोंको बगैर देखे तो देशके घावके वास्तविक दर्दकी जगह ही छूट जायगी बाबूजी।"

अपूर्वने लज्जाके साथ कहा, "सुमित्रा भी ठीक यही बात कहती हैं।"

रामदासने कहा, "बिना कहे कोई चारा भी तो नहीं। और इस बातको जानती हैं, इसीसे वे अधिकार-समितिकी संचालिका हैं। बाबूजी, आत्म-त्यागका स्रात तो वहीं है, देश-सेवाकी बुनियाद उसीपर है, वहाँ तक न पहुँचनेसे आपका सारा उद्यम, सभी आकांक्षाएँ मरुभूमिके समान दो ही दिनमें सूख जायँगी।"

ये बातें अपूर्वने कुछ नई नहीं सुनीं, परन्तु रामदासके हृदयमेंसे आज वे मानो सशब्द उठकर अपूर्वकी छातीमें तीक्ष्ण तीरकी तरह छिद गईं। रामदास और कुछ कहना चाहता था, पर अकस्मात् परदा हटाकर साहबके भीतर आ जानेसे दोनों चौंककर उठ खड़े हुए। साहबने अपूर्वको लक्ष्य करके कहा, "मैं चल दिया। आपकी टेबिलपर एक चिट्ठी रख आया हूँ, कल ही उसका जवाब देना जरूरी है" यह कहकर वह उसी समय बाहर चला गया। दोनोंने घड़ीकी तरफ देखा तो चार बजे चुके थे।

१७

साहबके चले जानेपर आज कुछ जल्दी ही आफिसकी छुट्टी करके दोनों फयार-मैदानके लिए निकल पड़े। पाँच बजे मीटिंग शुरू होनेकी बात है, उसमें अब देर नहीं है। इधर कोई सवारी नहीं मिलती, लिहाजा जरा तेजीसे बगैर चले ठीक समयपर पहुँच सकेंगे या नहीं, सन्देह है। रास्तेमें अपूर्वने कोई बातचीत नहीं की। उसके जीवनका आज विशेष दिन है। आशंका और आनन्दकी उत्तेजनासे उसके मनमें तूफान-सा उठ रहा था। कारीगरों और कुली-मजदूरोंके विषयमें उसने कुछ तो एक पुस्तकसे और कुछ रामदासकी बातोंसे अपने व्याख्यानका मसाला संग्रह कर लिया था, उसीको मन ही मन सजाता और दुहराता हुआ वह आगे चलने लगा। सन् १८६२ ई० में बम्बई प्रान्तमें कहीं पहले पहल रुईका कारखाना खुला था, उसके बाद बढ़ते बढ़ते आज कारखानोंकी संख्या कितनी हो गई है, तब कुली-मजदूरोंकी कैसी शोचनीय अवस्था थी,—किस तरह उन्हें रात-दिन मेहनत करनी पड़ती थी, और इस विषयमें विलायतके रुईके कारखानेके मालिकोंके साथ भारतीय मिल-मालिकोंका पहले पहल झगड़ेका सूत्रपात हुआ, और मिल-कानून किस सनकी किस तारीखको कैसी कैसी बाधाएँ पार करता हुआ पास होकर पहले पहल इस देशमें प्रचलित हुआ, उसमें क्या क्या बातें थीं और अब वह कानून परिवर्तित होकर किस रूपमें चल रहा है, मजदूरोंको संघ-बद्ध करनेकी कल्पना कब और किसने की, उसका फल क्या हुआ, विलायत और हिन्दुस्तानके मजदूरोंमें सुनीति आर दुर्नीतिकी तुलनात्मक आलोचना करनेसे क्या नतीजा निकलता है, और उससे संसारमें नफ़ा-नुकसानका परिणाम क्या निर्दिष्ट किया गया है, इत्यादि। संग्रह-मालामेंसे कहीं कोई मनका खो न जाय, इस डरसे वह बार बार अपनेको सावधान करता रहा। उसकी स्मरण-शक्ति तेज थी, बहुतसे इम्तहान देनेसे उसे अपनेपर इतना भरोसा हो गया था। व्याख्यान देते देते बीचमें सहसा वह कुछ भूल नहीं सकता, लिहाजा, उसके मुँहसे जब अत्यन्त सारगर्भित वाक्यधारा कभी ऊँचे सप्तक, कभी गम्भीर खाद और कभी हुंकार शब्दसे गरजती हुई समाप्त होगी, तब असंख्य श्रोताओंकी तालियाँ शायद रोके न रुकेंगी। सुमित्राकी प्रसन्न दृष्टि उसे स्पष्ट दिखाई देने लगी और भारती?—इतने थोड़ेसे

समयमें इतना ज्ञान और अनुभव मैंने कैसे प्राप्त कर लिया, इसके आनन्द-पूर्ण आश्चर्यसे उसका चेहरा उज्ज्वल और आँखोंकी दृष्टि सजल होकर एक-मात्र उसीकी तरफ देखती रहेगी। इस दृश्यको अपनी कल्पनासे देखकर अपूर्वकी नसोंमें जोरसे खून दौड़ने लगा। उसके साथ जल्दी जल्दी कदम बढ़ाते हुए चलना आज तलवरकरको भी मुश्किल मालूम होने लगा।

उन लोगोंने मैदान पहुँचकर देखा कि कहीं तिल धरनेको भी जगह नहीं, इतने आदमी इकट्ठे हुए हैं कि जिसका शुमार नहीं। उस दिनके वक्ताके नाते जिन लोगोंने अपूर्वको पहचान लिया, उन लोगोंने अपूर्वके लिए रास्ता छोड़ दिया; और जिन लोगोंने नहीं पहचाना, वे भी देखादेखी हटकर खड़े हो गये। विपुल जनताके बीचों-बीच मंच था। डाक्टर अभी तक लौटे नहीं, इसलिए उनके सिवा समितिके और सब सदस्य मौजूद थे। मित्रको साथ लेकर अपूर्व किसी कदर भीड़ पार करके मंच तक पहुँच गया। मंचपर एक बेंच अभी तक खाली थी, आँखोंसे इशारा करके सुमित्राने उन दोनोंको उसीपर बैठनेके लिए प्रार्थना की। मंचके सामनेकी तरफ खड़ा होकर एक पंजाबी अत्यंत भयानक भाषण दे रहा था, शायद वह किसी कारखानेकी नौकरीसे बरखास्त किया हुआ मिस्त्री या और कोई कर्मचारी था। अपूर्वके आ जानेसे क्षण-भर वह रुक-सा गया, फिर दूने तेजसे चिल्ला चिल्ला कर बोलने लगा। अच्छे वक्तासे जनता युक्ति तर्क नहीं चाहती,—जो बुरा है, वह क्यों बुरा है, यह जाननेकी उसे कोई खास जरूरत नहीं होती; वह तो सिर्फ, जो बुरा है वह कितना बुरा है, असंख्य विशेषणोंसे उसीको सुनकर खुश हो जाती है। पंजाबी मिस्त्रीके प्रचण्ड व्याख्यानमें शायद यही गुण काफी तौरसे मौजूद था, इसीसे श्रोतागण काफी चंचल हो उठे थे, यह बात उनके चेहरोंसे साफ मालूम हो रही थी। इतनेमें अकस्मात् एक भयंकर विघ्न आ उपस्थित हुआ। मैदानके एक किनारेसे असंख्य दबे हुए कंठोंसे संत्रस्त कोलाहल उठ खड़ा हुआ और दूसरे ही क्षण देखा गया कि बहुतसे लोग धक्कमधक्का करके भागनेकी कोशिश कर रहे हैं, और उन्हींको दो भागोंमें विभक्त करके दलते रौंधते हुए बड़े बड़े घोड़ोंपर सवार बीस पचीस गोरे पुलिस-कर्मचारी तेजीसे आगे बढ़ते आ रहे हैं। उनके एक हाथमें लगाम, दूसरे हाथमें चाबुक और कमरमें पिस्तौल झूल रही है। उनके कंधोंपर लोहेकी जालियाँ चमक

रही हैं, और गुलाबी चेहरे क्रोध और अस्तमान सूर्यकी किरणोंसे सिन्दूरकी तरह लाल हो उठे हैं। जो व्यक्ति व्याख्यान दे रहा था उसका वज्रकण्ठ सहसा कब चुप हो गया और मंचकी भीड़में वह लहमे-भरमें कैसे कहाँ गायब हो गया, कुछ पता ही नहीं लगा।

गोरोंके सरदारने मंचके बिलकुल पास आकर कर्कश कंठसे कहा, "मीटिंग बन्द करनी होगी।"

सुमित्रा अभीतक बिलकुल स्वस्थ नहीं हो पाई थी, उसके लंघनसे उदास चेहरेपर पीली छाया-सी पड़ गई, मगर फिर भी वह उठकर बोली "क्यों?"

"हुक्म है।"

"किसका हुक्म?"

"गवर्नमेण्टका।"

"किस लिए?"

"मजदूरोंको हड़तालके लिए उकसाना मना है।"

सुमित्राने कहा, "व्यर्थ उकसाकर तमाशा देखनेका हमारे पास समय नहीं है। योरोप आदि देशोंकी तरह इनको संघ-बद्ध होनेकी आवश्यकता समझा देना ही इस मीटिंगका उद्देश्य है।"

साहबने चौंककर कहा, "संघबद्ध करना? फार्मके विरुद्ध? यह तो इस देशमें जबर्दस्त गैरकानूनी बात है। इससे शान्ति भंग हो सकती है।"

सुमित्राने कहा, "जरूर, हो क्यों नहीं सकती! जिस देशमें गवर्नमेण्टके मानी ही हैं बड़े बड़े व्यवसायी, और सारे देशका खून चूसनेके लिए ही जिस देशमें ऐसा विराट् यंत्र खड़ा किया—"

वक्तव्य उसका समाप्त भी न हो पाया कि गोरेकी सुर्ख आँखोंमेंसे चिनगारियाँ निकलने लगीं। गरजकर बोला, "दूसरी बार यह बात कही तो मुझे एरेस्ट करनेके लिए मजबूर होना पड़ेगा।"

सुमित्राके आचरणसे जरा भी चांचल्य प्रकट नहीं हुआ, वह उसके मुँहकी तरफ एकटक देखकर जरा मुसकरा दी। बोली, "साहब, मैं बीमार हूँ और बहुत ही कमज़ोर हूँ। नहीं तो, दूसरी बार ही क्यों, यह बात सौ बार चिल्लाकर इन आदमियोंको सुना देती। मगर आज मुझमें शक्ति नहीं।" यह कहकर वह फिर जरा हँस दी।

इस रोग-पीड़ित रमणीकी सहज शान्त हँसीके आगे साहब शायद मन ही मन लज्जित हो गया, बोला, " ऑल राइट! आपको सावधान कर दिया है।" फिर घड़ी देखकर बोला, " मीटिंग बन्द करनेका मेरे पास हुक्म है, तोड़ देनेका नहीं। दो चार बातें कहके इन्हें शान्तिके साथ जानेके लिए कह दीजिए। और कभी ऐसा न होने पावे।"

आजकल लगभग बगैर खाये ही सुमित्राके दिन कट रहे थे। सबके मना करनेपर भी वह आज कुछ कुछ बुखार लिये ही सभामें चली आई थी। पर अब श्रान्ति और अवसादने मानो उसे नीचेसे ऊपर तक आच्छन्न कर डाला। चौकीकी पीठपर सिर रखकर उसने अस्फुट स्वरमें अपूर्वको बुलाकर कहा, " अपूर्व बाबू, सिर्फ दस मिनट वक्त है,—शायद उतना भी न हो। जोरसे चिल्लाकर सबको कह दीजिए, संघ-बद्ध बगैर हुए तुम लोगोंके उद्धारका और कोई रास्ता नहीं। आज कारखानोंके मालिकोंने हम लोगोंका जो अपमान किया है, यदि हम आदमी हैं तो इसका बदला लें।" कहते कहते उसका कमजोर गला रुँध-सा गया। परन्तु सभा-नेत्रीकी यह आज्ञा सुनकर अपूर्वका चेहरा बिलकुल फक पड़ गया। विह्वल नेत्रोंसे सुमित्राकी ओर देखकर वह बोला " उत्तजित करना क्या गैरकानूनी नहीं होगा?"

सुमित्राने विस्मित मृदु कंठसे कहा, " पिस्तौलके जोरसे सभा तोड़ देना क्या कानूनन ठीक है? वृथा रक्तपात मैं नहीं चाहती, पर यह बात आप अपनी पूरी शक्ति लगाकर सुना दीजिए कि आजका अपमान मजदूर भाई हरगिज न भूलें।"

अधिकार-समितिके जो और चार पाँच पुरुष सदस्य मंचपर बैठे हुए थे, उनका चेहरा देखनेसे मालूम होता था कि वे साधारण और तुच्छ व्यक्ति हैं। या तो कारीगार होंगे या ऐसे ही कोई और। अपूर्व नया होनेपर भी समितिका शिक्षित और विशिष्ट सदस्य था। अतएव इतनी बड़ी जनताको सम्बोधन करके कुछ कहनेका भार उसीपर आ पड़ा। अपूर्वने शुष्क कण्ठसे कहा, " मैं तो हिन्दी अच्छी तरह जानता नहीं।"

सुमित्रासे बोला भी नहीं जाता था, फिर भी उसने कहा, " जो कुछ भी जानते हों, उसीसे दो चार शब्द कह दीजिए अपूर्व बाबू, समय नष्ट न कीजिए।"

अपूर्व सबके मुँहकी तरफ देखने लगा। भारती मुँह फेरे हुए थी। उसकी राय तो नहीं मालूम हो सकी; पर गोरे सरदारके चेहरेका भाव मालूम हो गया। बहुत ही नजदीकसे अत्यन्त स्पष्ट और अत्यन्त कठिन भावसे उसके साथ अपूर्वकी चार आखें हो गईं। कुछ कहनेके लिए अपूर्व उठके खड़ा हुआ, उसके ओठ भी हिलने लगे, परन्तु उन दोनों ओठोंके भीतरसे हिन्दी बंगला अँगरेजी किसी भी भाषामें कुछ भी नहीं निकला। उसके अत्यन्त पाण्डुर मुखसे जो कुछ व्यक्त हुआ, वह और चाहे जैसा हो, पर अधिकार-समितिके सदस्योंके उपयुक्त नहीं था।

तलवरकर उठके खड़ा हो गया और सुमित्राकी ओर लक्ष्य करके बोला, "मैं इन बाबूजीका मित्र हूँ और हिन्दी जानता हूँ। अगर आज्ञा हो तो मैं ही इनका वक्तव्य जोरके साथ सुना दूँ।"

भारतीने मुँह फेरकर देखा, सुमित्रा विस्मित तीक्ष्ण दृष्टिसे देखती हुई बैठी रही, और इन दोनों नारियोंकी उन्नद्ध दृष्टिके सामने लज्जित, किंकर्तव्य-विमूढ़, वाक्यहीन अपूर्व स्तब्ध होकर सिर नीचा करके जड़ मूर्तिकी तरह बैठ गया।

रामदास घूमकर खड़ा हुआ और अपने दाहिने बायें और सामने उपस्थित विक्षुब्ध भयभीत चंचल जन-समूहको सम्बोधित करके खूब जोर-जोरसे बोलने लगा, "भाइयो, मुझे बहुत सी बातें कहनी थीं, पर इन लोगोंने अपने बाहुबलसे हमारा मुँह बन्द कर दिया है।" यह कहते हुए उसने उँगलीसे सामनेकी पुलिसकी तरफ इशारा किया और फिर कहना शुरू किया "इन कुत्तोंको जिन लोगोंने हमारे पीछे छोड़ दिया है, तुम लोगोंके पीछे लगा दिया है, वे तुम लोगोंके कारखानोंके मालिक हैं। वे हरगिज यह बात नहीं चाहते कि कोई तुम लोगोंको तुम्हारे दुःखों और दुर्दशाओंकी बात समझावे। तुम लोग उन लोगोंके कारखानोंको चलानेवाले और बोझ ढोनेवाले जानवर हो। इसीलिए वे अपनी सारी शक्ति और सारी शठता लगाकर इस सत्यको तुम लोगोंसे सर्वथा छिपाये रखना चाहते हैं कि तुम लोग भी उन्हींकी तरह आदमी हो, तुम लोगोंको भी उन्हींकी तरह भर-पेट खाने और जी भरकर आनन्द करनेका जन्म-सिद्ध अधिकार भगवानसे मिला है। सिर्फ एक बार अगर तुम लोगोंकी नींद खुल जाय, सिर्फ एक बार अगर तुम लोग इस सत्यको समझ जाओ कि हम लोग भी आदमी हैं,—चाहे जितने भी दुखी हों, गरीब हों, अशिक्षित

हों, फिर भी हम आदमी ही हैं, हमें अपने मनुष्यताके अधिकारसे किसी भी बहानेसे कोई भी वंचित नहीं रख सकता, तो ये गिनतीके मिल-मालिक तुम्हारे आगे हैं क्या चीज ? इस सत्यको क्या तुम लोग नहीं समझोगे ? इसमें देश-विदेश नहीं, जात-पाँत नहीं, धर्म नहीं, साम्प्रदायिकता नहीं,—हिन्दू नहीं, मुसलमान नहीं,—जैन, बौद्ध, सिक्ख कुछ भी बखेड़ा नहीं,—हैं सिर्फ धनोन्मत्त मिल-मालिक और उनके कारखानोंमें काम करने-वाले प्रवंचित भूखे मजदूर। तुम्हारी ताकतसे वे डरते हैं, तुम्हारी शिक्षाकी शक्ति को वे अत्यन्त संशयकी दृष्टिसे देखते हैं, तुम लोगोंमें जाननेकी आकांक्षा उत्पन्न होनेसे उनकी छातीका खून सूखने लगता है। असमर्थ, कमजोर, मूर्ख, दुर्नीतिमें फँसे हुए तुम्हीं लोग तो उनके विलास-व्यसनोंकी एकमात्र नींव हो, बुनियाद हो। इसीलिए, तुम लोगोंके जिन्दा रहनेके लिए कमसे कम जितनेकी जरूरत है, उससे ज्यादा तिल-भर भी वे अपनी इच्छासे नहीं देना चाहते,—इस बातको समझना क्या तुम्हारे लिए बहुत ही ज्यादा कठिन है ? और, इस बातको मुक्त कंठसे व्यक्त करनेके अपराधमें क्या आज इन गोरोंके हाथसे हमारा बेइजत होना ही हमारे हाथ आयेगा ? गरीबोंकी इस जिन्दा रहनेकी लड़ाईमें तुम लोग क्या अपनी सारी शक्तिके साथ शामिल नहीं हो सकते ?"

गोरे सरदारने इस देशमें रहकर जो कुछ थोड़ी-बहुत हिन्दी सीखी थी, उससे इस व्याख्यानका मतलब वह लगभग कुछ भी नहीं समझा, मगर उपस्थित श्रोताओंके चेहरों और आँखोंमें उत्तेजनाके चिह्न देखकर वह यों ही उत्तेजित हो उठा। उसने अपनी रिस्टवाचकी तरफ वक्ताका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, "अब सिर्फ पाँच मिनट समय है, आप खत्म कीजिए"

तलवरकरने कहा "सिर्फ पाँच मिनट! उससे ज्यादा एक सेकण्ड भी नहीं!—तो भी इन अमूल्य मिनटोंको मैं व्यर्थ नहीं जाने दूँगा। मेरे प्यारे वंचित भाइयो, तुम लोगोंसे मेरी बिनती है, तुम लोग हमारे प्रति जरा भी अविश्वास न करना। शिक्षित होनेसे, शरीफ घरानेके होनेसे, कारखानोंमें मजदूरीका काम न करनेके कारण हम लोगोंको सन्देहकी दृष्टिसे देखकर तुम लोग अपना अनिष्ट अपने आप न कर बैठना। तुम लोगोंकी नींद छुड़ानेके लिए सारे देशमें पहली शंख-ध्वनि हम लोगोंने ही की है। आज शायद इस

बातको तुम न समझो, मगर यह निश्चय जानना कि अधिकार-समितिसे बढ़कर तुम्हारा सच्चा हितैषी देशमें और कोई नहीं है।"

उसका गला सूखकर कड़ा होता जाता था, फिर भी वह जी-जानसे चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा, "मैं बहुत दिनोंसे तुम लोगोंमें काम करता आया हूँ। शायद तुम लोग मुझे नहीं जानते, पर मैं तुम लोगोंको जानता हूँ। जिन्हें तुम अपना मालिक समझते हो, मैं भी किसी दिन उन्हींमेंसे एक था। वे किसी भी तरह तुम लोगोंको आदमी न होने देंगे। सिर्फ जानवरोंकी तरह रखकर ही वे तुम्हारा मनुष्यत्वका अधिकार रोके रह सकते हैं और किसी भी तरह नहीं,—इस बातको बगैर समझे अब तुम्हारा काम नहीं चल सकता। उन लोगोंके मुँहसे तुम हमेशासे यही सुनते आये हो कि तुम लोग बुरे आदमी हो, उच्छृंखल हो, इन्द्रिय-लम्पट हो। इसीसे, जब कभी तुम लोगोंने अपने हकोंकी बात उनसे कही है, तभी उन लोगोंने तुम्हारे सब दुःख कष्टोंकी जड़में तुम्हारे ही असंयत चरित्रको दोष देकर तुम्हारी उन्नतिमें बाधा खड़ी की है। सिर्फ इसी असत्यको वे हरदम तुम्हें समझाते आ रहे हैं कि बगैर अच्छे हुए कभी किसीकी उन्नति नहीं हो सकती। मगर आज मैं तुम लोगोंको बिना किसी संकोचके और बिलकुल साफ दिलसे बता देना चाहता हूँ कि उन लोगोंका ऐसा कहना हरगिज सच नहीं है। तुम्हारा चरित्र ही सिर्फ तुम लोगोंकी इस दुर्दशाके लिए जिम्मेदार नहीं है; बल्कि तुम्हारी यह प्रवंचित हीन अवस्था ही तुम लोगोंके चरित्रके लिए जिम्मेदार है। उनके इस असत्यका आज तुम्हें बिना किसी डरके विरोध करना होगा। जोरदार शब्दोंमें आज तुम्हें इस बातकी घोषणा करनी ही होगी कि सिर्फ रुपया ही सब कुछ नहीं है।" कहते कहते उसका सूखा हुआ गला अत्यन्त प्रखर हो उठा; वह कहने लगा, "बिना मेहनतके दुनियामें कोई भी चीज पैदा नहीं होती, —लिहाजा हम सब मजदूर ठीक तुम्हीं लोगोंकी तरह मालिक हैं,—हम लोग भी तुम्हारी ही तरह सब चीजों और सब कारखानोंके अधिकारी हैं।"

इतनेमें किसी एक पंजाबीने गोरे सरदारके कानमें कुछ कहा, और उसे सुनते ही उस सरदारकी आँखें जलते अंगारेकी तरह चमक उठीं। उसने कड़क कर कहा, "स्टॉप। यह नहीं चल सकता। इससे शान्ति भंग होगी।"

अपूर्व चौंक पड़ा और रामदासके कुड़तेका छोर खींचने लगा, बोला,

" बस, बस करो रामदास। इस निःसहाय मित्रहीन विदेशमें तुम्हारी स्त्री है, छोटी लड़की है,—बस करो!"

रामदासने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। जोर-जोरसे चिल्लाता हुआ कहता ही गया, " ये लोग अन्याय करनेवाले हैं! ये लोग डरपोक हैं! सत्यको ये लोग किसी भी तरह तुम्हारे कानों तक पहुँचने नहीं देना चाहते! मगर ये लोग नहीं जानते कि सत्यकी किसी भी तरह गला घोंटकर हत्या नहीं की जा सकती। सत्य चिरजीवी है! वह अमर है।"

गोरा सरदार इसके मानी नहीं समझा। परन्तु अकस्मात् हजारों आदमियोंके शरीरसे टकराती हुई कड़ी गर्मीकी भभक मानो उसके चेहरेपर आ लगी। वह गरज उठा, " यह नहीं चल सकता! यह राजद्रोह है!"

पलक मारते ही पाँच छह गोरोंने घोड़ोंपरसे कूदकर रामदासको घसीटकर नीचे उतार लिया। देखते देखते उसका लम्बा शरीर तो घुड़सवारोंके बीचमें जाकर बिला गया, मगर तीक्ष्ण तीव्र कंठस्वर किसी भी तरह दबाये नहीं दबा। उस विक्षुब्ध विपुल जनतामें एक छोरसे लेकर दूसरे छोरतक ध्वनित होने लगा " भाइयो, शायद फिर कभी तुम लोग मुझे न देख पाओगे, मगर, मनुष्य होकर पैदा होनेकी अपनी इज्जत अगर तुम लोगोंने मालिकोंके चरणोंमें न सौंप दी हो, तो इतना बड़ा अत्याचार,—इतनी जबर्दस्त बेइज्जती तुम लोग हरगिज मत सहना।"

परन्तु उसकी बात खत्म होनेके पहले ही मानो दक्ष-यज्ञ शुरू हो गया। घोड़े दौड़ने लगे, चाबुक चलने लगे, और अपमानित अभिभूत त्रस्त मजदूरोंका दल एकाएक ऐसा भाग खड़ा हुआ कि कौन किसके ऊपर गिरा पड़ा और कौन किसके पाँवतले कुचला गया, कोई ठीक-ठिकाना न रहा।

थोड़ेसे दबे और खुँदे हुए घायल मजदूरोंके सिवा साराका सारा मैदान साफ हो गया। किसी कदर लँगड़ाते और कराहते हुए जो लोग अभी तक चले जा रहे थे, उन्हींकी तरफ एकटक देखती हुई सुमित्रा स्तब्ध होकर बैठी रही, और उसके पास ही बैठा रहा अपूर्व। इसके सिवाय वहीं एक और भी व्यक्ति चुपचाप सिर झुकाये किं-कर्तव्य विमूढकी तरह स्थिर बैठी रही।

जो आदमी गाड़ी लाने गया था, दस मिनट बाद उसके लौटनेपर सुमित्रा भारतीका हाथ पकड़कर धीरे धीरे गाड़ीपर जाकर बैठ गई। उसके बगैर बोले

उसकी चिन्ता-धारामें व्याघात करनेके लिए कभी कोई उससे व्यर्थका प्रश्न नहीं करता। खासकर आज, जब कि उसकी तबीयत खराब है और वह थकी हुई परेशान है, उससे कोई कुछ न बोला। भारतीने वापस आकर अपूर्वसे कहा, "चलिए।"

अपूर्वने मुँह उठाकर देखा, कुछ देर वह न जाने क्या सोचता रहा, फिर बोला, "कहा चलनेके लिए कहती हैं मुझसे?"

भारतीने कहाँ, "मेरे घरपर।"

अपूर्व थोड़ी देर चुप रहा। अन्तमें धीरेसे बोला, "आप लोगोंको तो मालूम है, मैं समितिके अयोग्य हूँ। वहाँ अब तो मेरे लिए स्थान नहीं हो सकता।"

भारतीने पूछा, "तो कहाँ जायँगे? अपने घर?"

"घर? हाँ, एक दफे जाना होगा," इतना कहते कहते अपूर्वकी आँखें भर आईं। वह किसी कदर आँसुओंको रोकता हुआ बोला, "मगर इस परदेशमें और एक जगह कैसे जाऊँ, कुछ समझमें नहीं आता भारती।"

सुमित्राने गाड़ीमेंसे क्षीण स्वरमें पुकारा, "तुम लोग आओ।"

भारतीने फिर कहा, "चलिए।"

अपूर्वने गर्दन हिलाते हुए कहा, "अधिकार-समितिमें अब मेरे लिए स्थान नहीं है।"

भारतीने सहसा उसका हाथ पकड़ लेना चाहा, पर तुरन्त ही अपनेको सभाँल लिया और अपूर्वके मुँहपर अपनी दोनों आँखोंकी सम्पूर्ण दृष्टि जमाकर चुपकेसे कहा, "अधिकार-समितिमें स्थान न हो तो न सही, पर और एक अधिकारसे आपको स्थान-च्युत कर सके, संसारमें ऐसी कोई भी शक्ति नहीं है, अपूर्व बाबू!"

गाड़ीमेंसे सुमित्राने फिर असहिष्णु कंठसे पूछा, "तुम लोगोंके आनेमें देर होगी क्या भारती?"

भारतीने हाथ हिलाकर गाड़ीवानसे इशारा करते हुए कहा, "आप जाइए, हम लोग पैदल ही चले आवेंगे।"

रास्तेमें चलते चलते अपूर्व सहसा कहने लगा, "तुम मेरे साथ चलो भारती।"

भारतीने कहा, "साथ ही तो चल रही हूँ।"

अपूर्वने कहा, "सो नहीं। तलवरकरकी स्त्रीके पास मैं कैसे जाऊँगा,

जाकर उनसे क्या कहूँगा, क्या उनका इन्तजाम करूँगा,—कुछ भी मेरी समझमें नहीं आता। रामदासको यहाँ अपने साथ लानेकी बेवकूफी मुझसे क्यों हुई ? ”

भारती चुप रही। अपूर्व कहने लगा, “ इस परदेशमें अचानक कैसा सत्यानाश हो गया ! मुझे तो कुछ सूझ ही नहीं रहा है ! ”

भारतीने कोई मन्तव्य प्रकट नहीं किया। दोनों कुछ देर तक चुपचाप चलते रहे, उसके बाद अपूर्व उपाय-हीन दुश्चिन्तासे व्याकुल होकर सहसा कह उठा, “ मेरा क्या कसूर है ? बार बार सावधान कर देनेपर भी कोई गलेमें फाँसी लगाकर लटक जाय, तो मैं उसे कैसे बचा सकता हूँ ? मैंने क्या उससे कहा था कि तुम व्याख्यान दो ? स्त्री है, लड़की है, घर-गृहस्थी है,—इस बातका जिसे होश नहीं, वह नहीं मरेगा तो क्या मैं मरूँगा ? भुगतें अब दो सालकी सजा ! ”

भारतीने कहा, “ आप क्या अभी उनकी स्त्रीके पास नहीं जायँगे ? ”

अपूर्वने उसके मुँहकी तरफ देखकर कहा, “ जाना ही होगा ! मगर साहबको कल क्या जवाब दूँगा ? लेकिन मैं तुमसे पहलेहीसे ही कहे रखता हूँ भारती, कि साहबने एक भी बात उलटी-सीधी कह दी तो मैं नौकरी छोड़ दूँगा। ”

“ छोड़कर क्या करोगे ? ”

“ घर चला जाऊँगा। इस देशमें आदमीको रहना चाहिए ? ”

भारतीने कहा, “ उनको छुड़ानेकी कोशिश भी नहीं करेंगे ? ”

अपूर्व ठिठककर खड़ा हो गया, बोला “ चलो न, किसी अच्छे बैरिस्टरके पास चलें भारती, मेरे पास करीब हजार रुपये होंगे,—इतनेसे काम नहीं होगा ? अपनी घड़ी-वड़ी बेच-बाचकर और भी पाँच सौ रुपये हो सकते हैं। चलो न, चले चलें। ”

भारतीने कहा, “ मगर पहले उनकी स्त्रीके पास जाना सबसे जरूरी काम है अपूर्व बाबू ! मेरे साथ अब मत चलिए, वहींसे गाड़ी करके सीधे स्टेशन चले जाइए। उन्हें क्या चाहिए, घरमें क्या कमी है, कमसे कम एक बार खबर लेना तो जरूरी है। ”

अपूर्वने सिर हिलाकर अपनी राय जाहिर की कि हाँ जरूरी है, किन्तु फिर भी वह उसके साथ ही चलने लगा। भारतीने कहा, “ अब तो मैं अकेली ही जा सकती हूँ, आप स्टेशन जाइए। ”

जवाब देनेमें शायद अपूर्वको संकोच हो रहा था, मगर कुछ ही देरके लिए। उसके बाद ही उसने कहा, "मैं अकेला नहीं जा सकूँगा।"

भारतीने कहा, "तो घर जाकर तिवारीको साथ लेते जाइए।"

"नहीं, तुम चलो साथ।"

"मुझे तो जरूरी काम है।"

"सो रहने दो, चलो।"

"मगर मुझे आप इतना ज्यादा क्यों लपेट रहे हैं अपूर्व बाबू?"

अपूर्व चुप रहा।

भारती उसके चेहरेकी तरफ ताक कर जरा हँस दी। बोली, "अच्छा, चलिए मेरे साथ। पहले मैं अपना काम कर डालूँ, तब चलूँ।"

रास्तेमें चलते चलते भारती अचानक कह उठी, "जिन्होंने आपको नौकरी करने परदेश भेजा है वे आपको नहीं पहचानतीं, भले ही वे आपकी मा हों। तिवारी देश जा रहा है, मैं खुद जाकर इन्तजाम करके उसके साथ आपको देश रवाना कर आऊँगी।"

अपूर्व मौन रहा। भारतीने कहा, "क्यों, कुछ जवाब नहीं दिया?"

अपूर्वने कहा, "जवाब देनेका कुछ है ही नहीं। मा जीती न होतीं तो मैं संन्यासी हो जाता।"

भारतीने आश्चर्यके साथ कहा, "संन्यासी? लेकिन मा तो अभी जीती हैं।"

अपूर्वने कहा, "हाँ। देशमें एक छोटेसे गाँवमें हम लोगोंका छोटा-सा मकान है, माको मैं वहीं ले जाऊँगा।"

"उसके बाद?"

"मेरे पास जो एक हजार रुपया हैं, उनसे एक छोटी-सी मोदीकी दूकान खोल लूँगा। उसीसे हम दोनोंका काम चल जायगा।"

भारतीने कहा, "सो चल सकता है। मगर अचानक इसकी जरूरत क्यों आ पड़ी?"

अपूर्वने कहा, "आज मैं अपनेको पहचान गया हूँ। सिर्फ माके सिवा संसारमें और कहीं भी मेरी कुछ कीमत नहीं। भगवान् करें, इससे ज्यादा मैं किसीसे कुछ चाहूँ भी नहीं।"

भारतीने लहमे-भर उसके चेहरेकी ओर देखा, फिर पूछा, " मा शायद आपको बहुत प्यार करती है ? "

अपूर्वने कहा, " हाँ। हमेशा माकी जिन्दगी दुःख ही दुःखमें कटी, अब तो मुझे इस बातका डर लगता है कि कहीं उनका वह दुःख और भी न बढ़ जाय। मेरे सभी काम-काजोंके आधेमें जैसे मा बनी रहती हैं और बाकी आधेको भी वे ही जकड़े रहती हैं। इससे मुझे एक क्षण भी छुटकारा नहीं भारती, इसीसे मैं डरपोक हूँ, इसीसे मैं सबकी अश्रद्धाका पात्र हूँ। " कहते कहते सहसा उसके मुँहसे एक दीर्घ निःश्वास निकल पड़ा।

इसका जवाब भारतीने नहीं दिया, वह सिर्फ अपना हाथ धीरेसे अपूर्वके हाथमें थमाकर चुपचाप चलने लगी।

संध्याका अन्धकार गाढ़ा होता आ रहा था। अपूर्वने उद्विग्न कंठसे पूछा, " रामदासके परिवारके लिए क्या इन्तजाम करूँ भारती ? सिर्फ एक नौकरानीके सिवा इस देशमें उनके देशका आदमी शायद कोई नहीं है और होगा भी, तो क्या उनका भार लेगा ? "

भारती खुद भी कुछ सोचकर तय नहीं कर पाई थी, फिर भी उसने हिम्मत बँधानेके लिए कहा, " चलिए तो, पहले जाकर देखें। इन्तजाम कुछ न कुछ हो ही जायगा। "

अपूर्व समझ गया—यह फालतू बात। उसके मनको कोई सान्त्वना नहीं मिली, बोला, " तुम्हें शायद वहाँ रहना पड़ेगा। "

" मगर मैं तो ईसाई हूँ, मैं उनके क्या काम आऊँगी ! "

" सो तो सही है। " यह बात अपूर्वको नये तौरसे चुभी।

दोनों जब घर पहुँचे, तब शाम बीते बहुत देर हो चुकी थी। रातके वक्त कैसे क्या करना होगाः मन ही मन चिन्ता करके दोनोंके भय और उद्वेगकी सीमा न रही। नीचेका कमरा खुला था। भीतर कदम रखते ही भारतीने देखाः उधर खुली खिड़कीके पास आरामकुरसीपर कोई लेटा हुआ है। उसके मुँह उठाकर इधर देखते ही भारती पहचान गई और मारे खुशीके लगी शोर मचाने, " डाक्टर बाबू, कब आ गये आप ? सुमित्रा जीजीसे भेंट हुई ? "

" नहीं। "

अपूर्वने कहा, " बड़े गजबकी दुर्घटना हो गई है डाक्टर बाबू ! हमारे एकाउण्टेण्ट रामदास तलवरकरको पुलिस पकड़ ले गई है। "

भारतीने कहा, " इनसिनमें उनका घर है। वहाँ उनकी स्त्री है, लड़की है,— उन लोगोंको अभी कुछ भी नहीं मालूम। "

अपूर्वने कहा, " इतनी दूर इस अँधेरी रातमें कैसी भयानक आफत आ पड़ी डाक्टर बाबू ! "

डाक्टर उबासी लेकर सीधे होकर बैठ गये और हँस दिये, फिर भारतीसे बोले, " मैं बहुत थका हुआ हूँ, मुझे जरा चाय बनाकर पिला सकती हो भारती ? "

भारतीने कहा, " पिला सकती हूँ, लेकिन हम लोगोंको अभी बाहर जाना होगा डाक्टर बाबू ! "

" कहाँ ? "

" इनसिन। तलवरकरके घर। "

" कोई जरूरत नहीं। "

अपूर्वने आश्चर्यसे उनके मुँहकी तरफ देखकर कहा, " जरूरत नहीं कैसे डाक्टर बाबू ? ऐसे संकटके समय उनके घरका इन्तजाम करना,—कमसे कम खबर-सुध लेते रहना तो जरूरी ही मालूम होता है। "

डाक्टरने हँसते हुए कहा, " इसमें सन्देह नहीं। लेकिन यह भार मेरे ऊपर है,—आप लोग बहुत करेंगे तो इस अँधेरी रातमें इनसिनकी गलियोंमें चक्कर काट आ सकते हैं, पर अन्तमें होगा यही कि घर ढूँढ़े न मिलेगा। " वे फिर हँस दिये, और बोले, " इससे अच्छा यह है कि आप बैठें और भारती चाय बनाकर ले आवे।—मगर आप शायद न पीयेंगे ?—अच्छी बात है। होटलका महाराज पवित्रताके साथ कुछ खानेको बनाये लाता है, आप खा-पीकर आराम कीजिए। "

भारती निश्चित और प्रसन्न चित्तसे चाय बनाने ऊपर जाने लगी, मगर अपूर्वको किसी भी तरह विश्वास नहीं हुआ। डाक्टरकी सभी बातें उसे पहेली-सी और बहुत बुरी मालूम हुईं। उसने दुःखित होकर भारतीको लक्ष्य करके कहा, " ऐसी रातमें तकलीफ उठानेसे तुम तो बच गईं; लेकिन मेरी जिम्मेदारी बहुत ज्यादा है। चाहे जितनी भी रात हो, मुझे वहाँ जाना ही चाहिए। "

यह सुनकर भारती ठिठककर खड़ी हो गई, लेकिन उसी वक्त डाक्टरकी आँखोंकी तरफ देखकर फिर प्रसन्नताके साथ चली गई।

डाक्टर बाबूने एक मोमबत्ती निकाली। उसे जलाई और जेबमेंसे कई चिट्ठियाँ निकालकर वे उनका जवाब लिखने बैठ गये। दसेक मिनट ठहरकर अपूर्व झुँझला उठा। उसने पूछा, "चिट्ठियाँ क्या बहुत ज्यादा जरूरी हैं?"

डाक्टरने बगैर मुँह उठाये ही कहा, "हाँ।"

अपूर्वने कहा, "उन लोगोंका कोई इन्तजाम हो जाना भी कम जरूरी नहीं है। आप क्या उनके घर किसीको भेजेंगे?"

डाक्टरने कहा, "इतनी रातमें? कल सवेरेके पहले शायद वहाँ जानेके लिए कोई आदमी नहीं मिल सकता।"

अपूर्वने कहा, "तो इस कामके लिए आपको चिन्तित होनेकी जरूरत नहीं। सवेरे तो मैं खुद ही जा सकूँगा। आप भारतीको मना नहीं करते तो हम लोग आज भी जा सकते थे, और मेरा खयाल है कि वही अच्छा होता।"

डाक्टरके चिट्ठी लिखनेमें कोई रुकावट नहीं आई क्योंकि उन्हें मुँह उठानेकी भी फुरसत नहीं थी। सिर्फ इतना कहा, "आवश्यकता नहीं थी।"

अपूर्वने अपने भीतर गुस्सेको भरसक दबाते हुए कहा, "इस क्षेत्रमें आवश्यकताकी धारणा आपकी और मेरी एक-सी नहीं है। वे मेरे मित्र हैं।"

भारती चायका सामान लेकर नीचे उतर आई और दो प्याला चाय बनाकर पास बैठ गई। डाक्टरका चिट्ठी लिखना और चाय पीना दोनों काम एक साथ चलने लगे। दो-तीन मिनट चुपचाप कट जानेके बाद भारती सहसा उठकर कहने लगी, "आप हमेशा ही व्यस्त रहते हैं। दो घड़ी आपके पास बैठकर कुछ बातें सुनें, इतना भी समय आप हम लोगोंको नहीं देते।"

भारतीके ये उलहने-भरे शब्द डाक्टरके अन्यमनस्क कानोंमें जाकर खटक गये, उन्होंने चायके प्यालेसे मुँह हटाकर हँसते हुए कहा, "क्या करूँ बहना, अभी रातकी दो बजेकी गाड़ीसे ही मुझे फिर जाना है।"

समाचार सुनकर भारती चौंक पड़ी, और अपूर्वके मनका सन्देह अपने मित्रके सम्बन्धमें और भी गहरा हो गया। भारतीने पूछा, "एक रातके लिए भी क्या आपको आराम करनेकी फुरसत नहीं मिलेगी डाक्टर बाबू?"

अपूर्वने कहा, " बता ही रहे हैं। उनका और मेरा आप मज़ाक कर रहे हैं। लेकिन मैं जानता हूँ, जन्म-भूमि उनके लिए प्राणोंसे भी प्यारी है। वे निर्भीक हैं, धीर वीर हैं। आपकी तरह छिपे छिपे नहीं फिरते और न पुलिसके डरसे लँगड़ा-लँगड़ाकर चलते हैं। आप डरपोक हैं।"

मारे आश्चर्यके भारती दंग हो रही थी, पर अब उससे नहीं सहा गया। उसने तीव्र स्वरसे कहा, " आप किनसे क्या कह रहे हैं अपूर्व बाबू ! यकायक आप पागल तो नहीं हो गये ?"

अपूर्वने कहा, " नहीं, पागल नहीं हुआ। ये चाहे जो भी हों, पर रामदासकी पाँवकी धूलके बराबर भी नहीं, इस बातको मैं मुक्त कंठसे कहूँगा उनका तेज, उनकी वाग्मिता, निर्भीकतासे ये मन ही मन ईर्ष्या करते हैं इसीसे तुम्हें जाने नहीं दिया, और मुझे छलसे रोक दिया।"

भारती उठके खड़ी हो गई और अपनेको अत्यन्त कठिनाईसे संयत करके सहज स्वरमें बोली, " आपको मैं बेइज्जत नहीं कर सकती, पर इस समय आप यहाँसे चले जाइए अपूर्व बाबू ! आपको हम लोगोंने गलत समझा था। मारे डरके जिसे हिताहितका ज्ञान नहीं रहता उसके उन्मादके लिए यहाँ स्थान नहीं है। आपकी बात ही सच है, अधिकार-समितिमें आपके लिए स्थान नहीं होगा। भविष्यमें फिर कभी किसी भी बहाने मेरे पास आनेकी कोशिश न कीजिएगा।"

अपूर्व बिना कुछ उत्तर दिये ही उठ खड़ा हुआ। पर डाक्टरने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, "और जरा बैठिए अपूर्व बाबू, ऐसे अँधेरेमें अकेले मत जाइए। स्टेशन जाते वक्त रास्तेमें मैं आपको घर पहुँचाता जाऊँगा।"

अपूर्वका होश ठिकाने आ रहा था, वह नीचेको सिर झुकाकर बैठ गया। डाक्टर बचे हुए बिस्कुट जेबमें रखने लगे, यह देख भारतीने पूछा, "यह क्या कर रहे हैं आप ?"

" रसद इकट्ठी कर रहा हूँ बहन।"

" सचमुच आज ही रातको चले जायँगे ?"

"नहीं तो क्या यों ही अपूर्व बाबूको रोक रक्खा है ? तुम सब मिलकर इस तरह अविश्वास करने लगे, तो मैं जीऊँगा कैसे, बताओ तो ?" कहते हुए उन्होंने कृत्रिम क्रोध प्रकट किया। भारतीने अभिमान-भरे स्वरमें कहा, "नहीं, आज आप नहीं जा सकते, आप बहुत थके हुए हैं। इसके अलावा सुमित्रा

जीजी बीमार हैं,—आप बार बार न-जाने कहाँ चले जाया करते हैं,—न तो कोई बात सुनाते हैं, और न उपदेश देते हैं। समितिको मैं अकेली कैसे चलाऊँ, बताइए तो? मैं भी अब जहाँ खुशी होगी चली जाऊँगी।"

लिखी हुई चिट्ठियाँ भारतीके हाथमें देते हुए डाक्टरने हँसकर कहा, "इनमें एक तुम्हारी है, एक सुमित्राकी है, और तीसरी तुम्हारी अधिकार-समितिकी है। मेरा उपदेश समझो, आदेश समझो,—जो समझो सब कुछ इसीमें मिलेगा।"

चिट्ठियाँ हाथमें लेकर भारतीने उदास चेहरेसे कहा, "अबकी बार क्या आप ज्यादा दिनोंके लिए जा रहे हैं?"

"देवाः न जानन्ति!" कहकर डाक्टर मुसकरा दिये।

भारतीने कहा, "हम लोगोंके लिए बड़ी मुश्किल है,—न तो चेहरेसे, न बातोंसे, किसी भी तरह आपके मनकी बात नहीं समझी जा सकती। साफ साफ बताइए कब तक लौटेंगे?"

"कह तो दिया, देवाः न जानन्ति—"

"नहीं, सो नहीं होगा, सच सच बताइए,—कब लौटेंगे?"

"इतना तकाजा क्यों है, बताओ तो?"

भारतीने कहा, "मालूम नहीं अबकी बार कैसा एक डर-सा लग रहा है। मालूम होता है मानो सब टूट फूटकर चकनाचूर हो जायगा।" कहते कहते सहसा उसकी आँखें भर आईं।

उसके माथेपर हाथ रखकर डॉक्टरने हँसीके ढंगपर कहा, "नहीं होगा बहन, नहीं होगा,—सब ठीक हो जायगा।" और फिर वे सहसा खिलकर हँस पड़े बोले, "लेकिन इस आदमीसे इस तरह झूठमूठकी लड़ाई करोगी तो कहे देता हूँ कि सचमुच ही रोना पड़ेगा। अपूर्व बाबू गुस्सा जरूर होते हैं, पर जिससे प्रेम कर बैठते हैं उससे प्रेम करना भी जानते हैं। मनुष्यमें जो हृदय नामकी चीज है, वह हम लोगोंके संसर्गसे सूखकर अभी तक लकड़ी नहीं हो पाई है। खिले हुए कमलकी तरह वह ज्योंकी त्यों ताजा बनी हुई है।"

भारती कुछ जवाब देना चाहती थी, परन्तु अपूर्वके सहसा मुँह उठाते ही उसका मुँह बन्द हो गया।

इसी समय दरवाजेके सामने एक घोड़ा-गाड़ी आ खड़ी हुई और उसके बाद ही दो आदमी भीतर आ पहुँचे। एक ऊपरसे नीचेतक साहबी पोशाक

पहने था जो शायद सिवा डॉक्टरके और सबके लिए अपरिचित था; और दूसरा था रामदास तलवरकर। अपूर्वका चेहरा चमक उठा परन्तु वह शोर मचाकर मित्रके स्वागतके लिए आगे नहीं बढ़ सका। रामदासने आगे बढ़कर डाक्टरके पाँव छुए। अपूर्वको यह अद्भुत मालूम हुआ। मगर डॉक्टरके मुँहकी तरफ देखता हुआ वह चुप ही बना रहा।

अँगरेजी पोशाक पहने हुए आदमीने अँगरेजीमें ही बात की; बोला, "जमानतके लिए ही इतनी देर हो गई। केस शायद गवर्नमेण्ट चलावेगी नहीं।"

डाक्टरने मुस्कराकर कहा, "इसके मानी यह है कि गवर्नमेण्टको आज तक तुमने पहचाना नहीं मेरे किसन!"

इस बातमें रामदासने हँसते हुए सहमत होकर कहा, "मैदानसे थाने तक आपको बराबर साथ साथ जाते देखा था, फिर अचानक आप कहाँ लापता गये, सो मालूम ही नहीं हुआ।"

डाक्टरने हँसकर कहा, "लापता होनेका जबर्दस्त कारण आ गया था रामदास बाबू, और अब रात ही रातमें यहाँसे भी लापता हो जाना पड़ेगा।"

रामदासने कहा, "उस दिन रेल्वे स्टेशनपर मैंने आपको पहचान लिया था।"

डाक्टरने गर्दन हिलाते हुए कहा, "मालूम है, मगर सीधे घर न जाकर इतनी रातमें यहाँ क्यों आये?"

रामदासने कहा, "आपके पैर छूने। पूनाकी सेण्ट्रल जेलमें मेरे पहुँचनेके बाद ही आप चले आये। तब मौका नहीं मिला। नीलकान्त जोशीका क्या हुआ, मालूम है? वह तो आपके ही साथ था?"

डाक्टरने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, बैरककी दीवार लाँघ न सका, इसलिए सिंगापुरमें उसे फाँसी हो गई!"

अपूर्वको ये सब बातें अचिन्तनीय और अद्भुत दुःस्वप्नके समान मालूम होने लगीं। उससे रहा नहीं गया, अकस्मात् पूछ बैठा, "डाक्टर बाबू, तो क्या आपको भी फाँसी होती?"

डाक्टर उसके मुँहकी तरफ देखकर जरा हँस दिये। उस हँसीसे अपूर्वके सिरके बाल तक खड़े हो गये।

रामदासने उत्सुक होकर कहा, "फिर?"

डाक्टरने कहा, "फिर क्या, बैङ्काकके रास्ते पहाड़ लाँघकर टेवॉय आ

पहुँचा । तकदीर बुलन्द थी, इसलिए अचानक जंगलमें एक हाथीका बच्चा भी भगवानने जुटा दिया । उसके साथ रहनेसे बड़ी सहूलियत हो गई । अन्तमें हाथीका बच्चा बेचकर देशी जहाजपर नारियलके बोरोंके साथ अपना भी चालान कराके तीन महीनेमें एकदम आराकान पहुँचकर इस पार चला आया । वे दिन बड़े मजेमें कटे थे रामदास बाबू !—आज अचानक थानेमें एक परम मित्रके साथ रूबरू मुलाकात हो गई । बी० ए० चेलिया उनका नाम है, बड़ी मुहब्बत करते हैं मुझसे । बहुत दिनोंके अदर्शनके बाद ढूँढ़ते ढूँढ़ते एकदम सिंगापुरसे बर्मा आ पहुँचे हैं । हाव-भावसे मालूम हुआ कि पता लगा लिया है । मगर, भीड़में उतनी निगाह नहीं कर पाये, नहीं तो पैतृक गलेका—"

इतना कहकर वे कहकहा मारकर हँसते हँसते अकस्मात् अपूर्वके चेहरेकी तरफ देखकर यकायक चौंक पड़े; बोले, "यह क्या अपूर्व बाबू ? क्या हो गया आपको ?"

अपूर्व दाँतों तले ओठ दबाकर अपनेको सम्हालनेकी कोशिश कर रहा था, डाक्टरकी बात खत्म होनेके पहले ही वह दोनों हाथोंसे अपना मुँह ढककर तेजीके साथ कमरेसे बाहर निकल गया ।

१८

अपूर्वके इस तरह चल देनेसे सबको बड़ा आश्चर्य हुआ । कमरेमें उजाला ज्यादा नहीं था, मगर फिर भी उसके चेहरेका अस्वाभाविक भाव और आँसुओंसे रुँधे हुए कंठकी अशोभनता किसीसे छिपी न रही । बैरिस्टर कृष्ण अय्यरने कुछ देर चुप रहकर पूछा, "ये कौन थे डाक्टर ? बहुत ही सेण्टिमेण्टल हैं ।" अय्यरने अपने अन्तिम शब्दपर जोर देते हुए स्पष्ट ही एक आरोप-सा किया । अर्थात् ऐसा आदमी यहाँ क्यों ?

डाक्टर सिर्फ जरा हँस दिये, मगर चटसे उत्तर दिया तलवरकरने । बोले, "ये मिस्टर मुखर्जी हैं,—अपूर्व मुखर्जी । एक ही आफिसमें काम करते हैं हम दोनों, मेरे सुपीरियर आफिसर हैं ।" फिर जरा ठहरकर स्नेह और श्रद्धाके साथ कहने लगे, "मगर हम दोनों अत्यन्त अन्तरंग हैं,—परम मित्र हैं ये मेरे । और सेण्टिमेण्टल ? ई-येस ।—डाक्टर बाबू, मुखर्जीको रंगूनमें जो पहले पहल तजुर्बा हुआ था आपने शायद उसका किस्सा नहीं सुना ? वह एक—"

सहसा भारतीपर दृष्टि पड़ जानेसे वे शर्माकर रुक गये, फिर बोले, "खैर जो भी हो, पहली मुलाकातके दिनसे ही उनसे मेरी मित्रता हो गई,—वास्तवमें वे मेरे परम मित्र हैं।"

तलवरकरकी व्यग्रता और खासकर उनके बार बार, 'परम मित्र' शब्दके प्रयोगसे बैरिस्टरको फिर सेण्टिमेण्टलिज्मपर कटाक्ष करनेका साहस नहीं हुआ; परन्तु उसका चेहरा संदिग्ध और अप्रसन्न-सा बना ही रहा।

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "सेण्टिमेण्ट चीज ऐसी कोई बुरी नहीं है अय्यर! और यह समझना भी ठीक नहीं कि सब तुम जैसे कड़े पत्थर हो जायँ, तभी काम चलेगा।"

कृष्ण अय्यर खुश नहीं हुए, बोले, "ऐसा मैं नहीं समझता; मगर इतना समझ लेनेमें भी शायद कोई दोष नहीं कि इस कमरेके सिवा उनके लिए चलने फिरनेके लिए बहुत काफी जगह खुली पड़ी है।"

तलवरकर मन ही मन नाराज हुए। जिनको वे बार बार अपना परम मित्र बता रहे हैं, उन्हींके सामने अवांछित व्यक्ति सिद्ध करनेकी कोशिश करना,—इसे उन्होंने अपना ही अपमान समझा और कहा, "मिस्टर अय्यर, अपूर्व बाबूको मैं पहचानता हूँ। यह सच है कि हमारे मंत्रकी दीक्षा लिये उन्हें ज्यादा दिन नहीं हुए हैं, परन्तु मित्रकी गैर-भरोसेकी युक्तिसे थोड़ा बहुत विचलित हो जाना कोई भयंकर अपराध नहीं है। उनके लिए संसारमें चलने-फिरनेकी जगह काफी पड़ी है, मगर, मैं आशा करता हूँ कि यहाँ भी उनके लिए जगहकी कमी नहीं पड़ेगी।"

आज कृष्ण अय्यरने भीड़में खड़े खड़े अपूर्वकी तरफ काफी लक्ष्य किया था, वे चुप रहे; किन्तु डाक्टरने अपनी स्वाभाविक शान्तिके साथ कहा, "जरूर, कमी नहीं पड़ेगी।" इतना कहकर वे उपस्थित सभीके चेहरोंकी तरफ क्षण-भर चुपचाप देखते रहे, फिर मानो भारतीको ही लक्ष्य करके सहसा गम्भीर होकर बोले, "मगर यह मित्रता संसारमें कितनी क्षण-भंगुर चीज है भारती! आज जिसके विषयमें कल्पना भी नहीं की जा सकती, कल उससे जरा-सा कारण मिलनेपर चिर-विच्छेद हो जाता है। दुनियामें यह कोई अस्वाभाविक नहीं तलवरकर, इसके लिए भी तैयार रहना अच्छा है। मनुष्य बड़ा कमजोर है

अय्यर, बड़ा ही कमजोर है! तब इसी सेण्टिमेण्टकी जरूरत पड़ती है उसकी चोट सहनेके लिए।"

इन सब बातोंका कोई उत्तर नहीं, और न इनका प्रतिवाद ही किया जा सकता है। दोनों मौन रहे, परन्तु भारतीका चेहरा म्लान हो गया। डाक्टरपर इन सबकी अविचलित भक्ति है, और भारती इस बातको अच्छी तरह जानती है कि बिना कारण कोई भी बात कहना डाक्टरके स्वभावके विरुद्ध है; परन्तु किस बातपर और किस लिए उन्होंने यह बात कही, और ठीक ठीक उसका क्या मतलब हुआ, इस बातको समझ न सकनेके कारण उसका मन उद्वेग और आशंकासे दहल-सा गया।

डाक्टरने सामनेकी घड़ीकी तरफ देखकर कहा, "मेरा तो जानेका समय हुआ जा रहा है भारती, आज रातकी ही गाड़ीसे जा रहा हूँ तलवरकर!"

कहाँ और किस लिए,—स्वयं अपने आप बिना बताये ऐसा अनावश्यक कुतूहल प्रकट करनेका इन लोगोंमें नियम नहीं है। क्षण-भर जिज्ञासु दृष्टिसे देखते रहनेके बाद तलवरकरने पूछा, "मेरे लिए आपकी क्या आज्ञा है?"

डाक्टरने हँसकर कहा, "आज्ञा तो है ही, मगर एक बात है। बर्मामें अगर स्थान न रहे, तो कमसे कम अपने देशमें तो रहेगा ही। मजदूरोंपर जरा निगाह रखना।"

तलवरकरने गर्दन हिलाकर कहा, "अच्छा। फिर कब मुलाकात होगी?"

डाक्टर ठहाका मारकर हँस दिये, बोले, "नीलकान्त जोशीके शिष्य हो तुम, यह तुमने क्या प्रश्न कर दिया!"

तलवरकर चुप रहे। डाक्टरने फिर कहा, "अब देर मत करो, जाओ,—घर पहुँचते पहुँचते करीब सवेरा हो जायगा।—तो क्या यहाँ प्रेक्टिस करना तय कर लिया अय्यर?"

कृष्ण अय्यरने सिर हिलाकर अपनी राय जाहिर की। किरायेकी गाड़ी बाहर बाट देख रही थी। दोनों बाहर चलने लगे तो तलवरकर बोल उठे, "अँधेरेमें अपूर्व बाबू कहाँ चले गये, एक बार देखा तक नहीं—"

मगर इस बातका उत्तर देना शायद किसीने जरूरी नहीं समझा। कुछ ही देर बाद गाड़ीके शब्दसे मालूम हुआ कि वे चले गये। डाक्टरने कहा, "तुम क्या समझती हो, अपूर्व घर चला गया?"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, " नहीं, यहीं आस-पासमें कहीं होंगे, जरा ढूँढ़ा जाय तो मिल जायँगे। मुझसे एक बार मिले बगैर वे हरगिज नहीं जायँगे। "

डाक्टरने हँसकर कहा, " तो दस-पन्द्रह मिनटमें यह काम कर डालना जरूरी है। मैं इससे ज्यादा समय नहीं दे सकता बहन। "

" नहीं, इतनेके भीतर ही वे आ जायँगे। " इतना कहकर भारतीने सिर्फ डाक्टरकी बातका ही जवाब नहीं दिया, बल्कि अपनेको भी भरोसा दे लिया। अकेले इतने अँधेरेमें वे हरगिज नहीं जा सकते, लिहाजा यहीं कहीं होंगे,—इस विषयमें जैसे वह निश्चिन्त थी वैसे ही अपने इस अत्यन्त भक्ति और श्रद्धा-भाजन अतिमानवसे बिदा होनेके पहले एक बार सर्वान्तःकरणसे क्षमा माँगनेकी आवश्यकताके विषयमें भी निःसंशय थी। अनेक दिशाओं और अनेक कारणोंसे अपूर्वने बहुतसे अपराध इकठ्ठ कर लिये थे, समय रहते उनकी सफाई कराये बगैर भारतीकी जान कैसे बचे ? परन्तु यह अमूल्य समय व्यर्थ नष्ट हुआ जा रहा है,—अपूर्वका पता ही नहीं। दरवाजेके बाहर अँधेरेकी तरफ भारतीकी चंचल दृष्टि तीक्ष्ण हो उठी और चौकन्ना चित्त बाहरसे परिचित पैरोंकी आहटकी प्रतीक्षामें अधीर हो उठा। उसकी इच्छा होने लगी कि यहीं कहीं वह होगा, जल्दीसे जाकर ढूँढ़ लावे। मगर आज इतनी व्याकुलता प्रकट करते हुए उसे अत्यन्त शर्म मालूम होने लगी। डाक्टर अपने स्ट्रैपसे बँधे बोरिया-बसनाकी तरफ देखकर जँभाई लेते हुए उठ खड़े हुए। भारतीने दीवारकी घड़ीकी तरफ देखा तो मालूम हुआ कि अब पाँच छह मिनटसे ज्यादा समय नहीं है, उसने कहा, " आप क्या पैदल ही जायँगे ? "

डाक्टरने सिर हिलाकर कहा, " नहीं। सम्भवतः दो बजके बीस मिनटपर बड़ी सड़कसे एक घोड़ा-गाड़ी निकलेगी, चालू गाड़ी होगी,—छह सात आनेमें स्टेशन पहुँचा देगी। "

भारतीने कहा, " बगैर पैसे भी पहुँचा देगी। लेकिन जानेके पहले क्या सुमित्रा जीजीको देखने नहीं जाबँगे ? सचमुच वे बीमार हैं। "

डाक्टरने हँसकर कहा, " मैंने तो नहीं कहा कि वे बीमार नहीं हैं। मगर डाक्टरको दिखाये बिना बीमारी अच्छी कैसे होगी ? "

भारतीने कहा, " अगर यही बात है तो दुनियामें आपसे बढ़कर बड़ा डाक्टर कौन होगा ? "

डाक्टरने व्यंग-भरे स्वरमें उत्तर दिया, "तब तो हो चुकीं अच्छी ! जमाना बीत गया उसका अभ्यास छूटे, वह विद्या तो धुल-पुँछकर साफ हो गई होगी,—इसके सिवा इतना समय ही कहाँ है कि बैठा बैठा इलाज करता रहूँ।" बात खत्म भी न हो पाई थी कि भारती सहसा बोल उठी, "समय कहाँ ! समय कहाँ ! कोई मर भी जाय तो आपको समय नहीं मिलनेका,—किस कामका ऐसा देशका काम ? देखिए डाक्टर बाबू, ऐसा दिमाग नहीं है आपका कि सीखी हुई विद्या धुल-पुँछ जाय। अगर सचमुच ही कोई चीज धुल-पुँछ गई है तो वह है किसीपर आपका प्रेम !"

डाक्टरका हँसता हुआ चेहरा क्षणभरके लिए गम्भीर होकर फिर जैसाका तैसा हो गया। परन्तु तीक्ष्ण-दृष्टि भारती उसी वक्त अपनी गलती समझ गई। यद्यपि उसकी घनिष्ठता बहुत दूर तक पहुँच गई है, मगर फिर भी इस दिशामें उँगली उठानेका अधिकार अब तक उसे नहीं प्राप्त है। वास्तवमें सुमित्रा कौन है, डाक्टरके साथ उसका क्या सम्बन्ध है और कब कैसे वह इस दलमें आ गई,—इस विषयमें अबतक भारती कुछ नहीं जानती। इनके दलमें व्यक्तिगत परिचयके सम्बन्धमें कुतूहली होना निषिद्ध है, लिहाजा अनुमान करनेके सिवा ठीक तौरसे कोई बात जाननेका कोई उपाय ही नहीं। सिर्फ स्त्री होनेके कारण ही उसे सुमित्राके मनके भावसे कुछ कुछ मालूम हो गया था, मगर अपने उस अनुमानके आधारपर अकस्मात् इतना बड़ा इशारा कर बैठनेसे उसे सिर्फ संकोच ही नहीं, डर भी मालूम हुआ। डर डाक्टरका नहीं सुमित्राका। यह बात किसी भी तरह उसके कान तक नहीं पहुँचनी चाहिए। सुमित्राका और कोई परिचय मालूम न होनेपर भी उस निस्तब्ध तीक्ष्ण-विद्या-बुद्धिशालिनी रमणीकी दुर्भेद्य निबिड़ताके परिचयसे कोई भी अपरिचित नहीं था। उसके स्वल्प भाषणसे, उसके प्रखर सौन्दर्यके प्रत्येक पदक्षेपसे, उसके संयत-गम्भीर वार्तालापसे, उसके अचंचल आचरणकी गंभीरतासे, इस दलमें रहते हुए भी उसके दूरत्वको सब भीतर ही भीतर अनुभव करते थे। यहाँतक कि उसकी बीमारीके बारेमें भी अपने आप किसी तरहकी चर्चा छेड़नेकी किसीको हिम्मत न पड़ती थी। परन्तु उस दुर्लंघ्य कठोरताको भेदकर उसकी अत्यन्त गुप्त दुर्बलता उस दिन अपूर्व और भारतीके सामने प्रकट हो पड़ी थी जिस दिन एक आदमीको बिदा करते समय सुमित्रा अपनेको सम्हाल न सकी थी, और उसी दिनसे मानो वह अपने-

को सबसे अलग बहुत दूर हटा ले गई है। उसकी वह आत्माश्रयी अन्तर्गूढ़ वेदना दूसरेकी बिन-माँगी सहानुभूतिकी चोटसे एकाएक भड़क उठेगी, इस बातकी याद आते ही भारतीका क्षुब्ध चित्त आशंकासे भर गया।

डाक्टरने आराम-कुरसीपर लेटकर सामनेकी टेबिलपर पैर फैला दिये और उनके मुँहसे अचानक ही निकल पड़ा "आह!"

भारतीने आश्चर्यके साथ कहा, "आप तो सो रहे हैं!"

डाक्टरने नाराज होकर कहा, "क्यों, मैं क्या घोड़ा हूँ जो जरा लेटते ही गठिया पकड़ लेगी? मुझे नींद आ रही है,—तुम लोगोंकी तरह मैं खड़े खड़े नहीं सो सकता।"

भारतीने कहा, "खड़े खड़े तो हम भी नहीं सो सकतीं! मगर कोई आकर कहे कि आप दौड़ते दौड़ते सो सकते हैं, तो मुझे उसमें भी आश्चर्य नहीं होगा। आपकी इस देहसे संसारमें क्या नहीं हो सकता सो कोई नहीं जानता। लेकिन वक्त तो हो गया, अभी गये बगैर गाड़ी नहीं मिलेगी।"

"चली जाने दो।"

"जाने दो कैसे?"

"उफ्,—बड़ी जोरसे नींद आ रही है, आँखें नहीं खोली जातीं।" कहकर डाक्टर सोने लगे।

भारती पुलकित चित्तसे सोचने लगी, सिर्फ मेरे ही अनुरोधसे आज इनका जाना स्थगित हो गया है। नहीं तो नींद तो दूर रही, बिजली पड़नेकी दुहाई देकर भी उनके संकल्पमें बाधा नहीं पहुँचाई जा सकती। भारतीने कहा, "सचमुच अगर नींद आ रही हो तो ऊपर चलकर सो रहिए न।"

डाक्टरने आँखें मीचे हुए ही पूछा, "फिर तुम क्या करोगी? अपूर्वकी बाट देखते देखते रात बिता दोगी?"

भारतीने कहा, "मेरी भली चलाई। बगलकी कोठरीमें बिछौना बिछाकर सो रहूँगी।"

डाक्टरने कहा, "गुस्सा होकर लेटा जा सकता है, पर सोया नहीं जा सकता। बिछौनेपर पड़े पड़े फड़फड़ाते रहनेसे बढ़कर और कोई सजा नहीं। इससे अच्छा है कि ढूँढ़ लाओ,—मैं किसीसे कहूँगा नहीं।"

भारतीका चेहरा सुर्ख हो उठा पर उसकी शर्म पकड़ाई नहीं दी, कारण

डाक्टर आँखें मींचे हुए थे। उनकी मिची हुई आँखोंकी ओर देखती हुई भारती कुछ देर मौन रही, फिर अपनेको सम्हालकर धीरे-से बोली, " अच्छा डाक्टर बाबू, यह बात आपने जानी कैसे कि बिस्तरपर पड़े पड़े फड़फड़ाते रहनेसे बढ़कर और कोई सजा नहीं ? "

" लोग कहा करते हैं, इसीसे । "

" अपने अनुभवसे कुछ नहीं जानते ? "

डाक्टरने आँखें खोलकर कहा, " अरी बहना, हम जैसे अभागोंको बिस्तर भी नसीब नहीं होते, फिर उनपर फड़फड़ाना कैसा ! इतनी रईसीके लिए फुरसत कहाँ है ? " और वे मुसकरा दिये ।

भारती सहसा पूछ बैठी, " अच्छा डाक्टर बाबू, लोग कहा करते हैं कि आपके भीतर गुस्सा है ही नहीं, सो क्या यह सच है ? "

डाक्टरने कहा, " सच ? कभी नहीं, कभी नहीं । लोग झूठमूठ मेरे विरुद्ध प्रचार करते हैं—वे मुझसे जलते हैं । "

भारतीने हँसकर कहा, " या फिर बहुत ज्यादा चाहते हैं, इसीसे अफवाह उड़ाया करते हैं । वे तो यह भी कहते हैं कि न आपमें मान-अभिमान है, न दया-माया है, हृदय बिलकुल पत्थर-सा हो गया है । "

डाक्टरने कहा, " यह अत्यन्त प्रेमकी बात है । इसके बाद फिर ? "

भारतीने कहा, " फिर, उस पत्थरपर सिर्फ एक चीज खुदी है ' जननी जन्मभूमि' जिसका आदि नहीं, अन्त नहीं, क्षय नहीं, व्यय नहीं,—जिसकी शक्ल हम लोगोंको दिखाई नहीं देती, इसीसे हम सब आपके पास पास रह सकती हैं, नहीं तो—" कहते कहते वह अकस्मात् रुक गई, फिर क्षण-भर बाद कहने लगी, " कैसे बताऊँ डाक्टर बाबू, एक दिन जब मैं सुमित्रा जीजीके साथ बर्मा ऑयेल कम्पनीके कारखानेके पाससे जा रही थी; वहाँ नये बॉयल-रकी परीक्षा हो रही थी । बहुतसे आदमी खड़े खड़े तमाशा देख रहे थे । अचा-नक उसका एक दरवाजा खुल जानेपर ऐसा मालूम हुआ जैसे उसके भीतर आगका तूफान उठ रहा हो । उसमें इस सारी पृथिवीको इकट्ठा करके डाल दिया जाता तो मानो उसे भी वह जलाकर भस्म कर देता ! सुना, कि वह अकेला ही उस विशाल कारखानेको चला सकता है । लेकिन दरवाजा जैसे ही बन्द हुआ कि वह फिर जैसेका तैसा शान्त जड़-पिण्डवत् हो गया,—उसके भीतरकी गर्मी

बाहर रही ही नहीं। सुमित्रा जीजीने सहसा एक गहरी साँस ले ली। मैंने आश्चर्यके साथ पूछा, 'क्या बात है जीजी?' सुमित्रा जीजीने कहा, 'इस जबर्दस्त यंत्रकी याद रखना भारती, इससे तुम अपने डाक्टर बाबूको पहचान सकोगी। यही उनका वास्तविक चित्र है।"

यह कहकर भारती डाक्टरके मुँहकी तरफ देखने लगी। डाक्टरने अन्य-मनस्ककी तरह मुसकराते हुए कहा, "सब कोई क्या मुझहीसे प्रेम करते हैं! पर, मारे नींदके अब तो आँखें मिची आती हैं भारती, कोई उपाय करो।—लेकिन इसके पहले अपूर्व कहाँ गया, देखोगी नहीं!"

"लेकिन आप यह किसीसे कह नहीं सकते!"

"नहीं। लेकिन मुझसे शरमानेकी शायद तुम जरूरत नहीं समझतीं?"

भारतीने सिर हिलाकर कहा, "नहीं। आदमीसे ही आदमीको शर्म मालूम होती है।" और वह हरीकैन लालटेन हाथमें लिये बाहर चली गई।

दस-पंद्रह मिनट बाद वापस आकर भारतीने कहा, "अपूर्व बाबू चले गये।"

डाक्टर आश्चर्यके साथ उठके बैठ गये, बोले, "ऐसे अँधेरेमें? अकेले?"

"मालूम तो ऐसा ही होता है।"

"आश्चर्य है।"

भारतीने कहा, "मेरे बिस्तर करे कराये हैं; चलिए, सो जाइए।"

"और तुम?"

"मैं जमीनपर कोई कम्बल बिछाकर पड़ रहूँगी, चलिए।"

डॉक्टर उठके खड़े हो गये, बोले, "तो चलो, संकोच-लज्जा तो आदमी आदमीसे करता है,—मैं तो आखिर पत्थर ही ठहरा!"

ऊपरके कमरेमें जाकर डॉक्टर खाटपर सो रहे; भारतीने मसहरी डालकर चारों तरफसे उसे अच्छी तरह दबा दिया और अपने लिए पास ही जमीनपर बिस्तर बिछा लिये। डाक्टरने उसके बिस्तरकी ओर देखकर क्षुण्ण कंठसे कहा, "सब मिलकर इस तरह मेरी लापरवाही करते हैं तो मेरे आत्म-सम्मानको चोट जो पहुँचती है!"

भारती हँस दी, बोली, "हम सबोंने मिलकर आपको आदमीके दर्जेसे निकालकर पत्थरका देवता बना रक्खा है।"

"इसके मानी यह कि मुझसे कोई डर ही नहीं ?"

भारतीने बिना किसी संकोचके जवाब दिया, "रत्ती-भर भी नहीं। आपसे किसीका भी रंचमात्र अकल्याण हो सकता है, इस बातकी हम कल्पना ही नहीं कर सकतीं।"

इसके उत्तरमें डाक्टरने हँसकर सिर्फ इतना ही कहा, "अच्छी बात है, पता चल जायगा किसी रोज़।" विस्तर पर लेटते ही सहसा भारती पूछ उठी, "अच्छा, आपका 'सव्यसाची' नाम किसने रक्खा था डाक्टर बाबू ? यह तो आपका असली नाम नहीं मालूम होता।"

डाक्टर हँसने लगे। बोले, "असल नाम चाहे जो हो, यह नकली नाम दिया है मेरे पाठशालावाले पंडितजीने। उनके यहाँ एक बहुत ऊँचा आमका पेड़ था जिसके आम सिर्फ मैं ही ढेले मारकर गिरा सकता था। एक दफे छतसे कूदनेपर मेरे दाहिने हाथमें चोट आ गई। डाक्टरने आकर उसपर बैण्डेज बाँधकर हाथको गलेसे लटका दिया। इससे और सब तो दुःखित हुए पर पंडितजीको खुशी हुई, उन्होंने कहा, 'अब आम बचे रहेंगे और पकनेपर दो-चार पेटमें भी पहुँच सकेंगे'।"

भारतीने कहा, "आप बड़े शरारती थे ?"

डाक्टरने कहा, "हाँ, बदनाम तो जरा था ही। खैर, मगर दूसरे ही दिन बाँयें हाथसे फिर आम गिराकर खाने लगा। पंडितजीको किसी तरह खबर लग गई और उन्होंने हाथों-हाथ पकड़ भी लिया। कुछ देर तक वे मेरी तरफ अवाक् होकर देखते रहे, फिर बोले, 'कुसूर हो गया बेटा सव्यसाची, आमोंकी आशा अब मैं नहीं रखता। दाहिना हाथ तो टूट गया, बायाँ टूट जानेपर शायद पैरोंकी पारी आयेगी। रहने दो बेटा, अब तकलीफ उठानेकी जरूरत नहीं; थोड़े बहुत कच्चे आम जो बाकी बचे हैं, उन्हें मैं अभी आदमीसे तुड़वा मँगाता हूँ'।"

भारती खिलखिलाकर हँस पड़ी, "तो पंडितजीका बड़े दुःखसे दिया हुआ नाम है यह !"

डाक्टर खुद भी हँस दिये, बोले, "हाँ, बड़े दुःखसे दिया हुआ नाम है। मगर तभीसे मेरे असली नामको लोग बिलकुल भूल ही गये समझो।"

भारतीने कुछ देर स्थिर रहकर पूछा, "अच्छा, सब कोई जो कहा करते हैं

कि देश और आपमें और आप और देशमें कोई फर्क ही नहीं,—दोनों एक ही बात हैं,—सो यह कैसे ?”

डाक्टरने कहा, “ बचपनका वह भी एक जमाना था भारती। इस जीवनमें न जाने कितना आया, कितना गया, पर वह दिन अक्षय ही बना रहा। हमारे गाँवके पास वैष्णवोंका एक मठ था। एक दिन रातको डाकुओंने उसपर धावा बोल दिया। शोर-गुल और रो-पीटसे गाँवके लोग चारों तरफसे जमा हो गये; लेकिन डाकुओंके पास एक बन्दूक थी, उन लोगोंने जब फायर करना शुरू किया तो फिर कोई आगे नहीं बढ़ सका। मेरे एक चचेरे भाई थे,—बड़े ही साहसी और परोपकारी,—जानेके लिए वे फड़फड़ाने लगे; लेकिन यदि गये तो निश्चय मारे जायँगे, इस खयालसे लोगोंने उन्हें पकड़ रक्खा। अपनेको किसी तरह भी छुड़ा न सकनेके कारण वे वहींसे निष्फल उछलने लगे और डाकुओंको गाली देने लगे जिसका कोई नतीजा नहीं हुआ। डाकुओंने सिर्फ एक बन्दूकके जोरसे दो-तीन सौ आदमियोंके सामने महन्तको खूँटीसे बाँधकर जला डाला।—भारती, तब मैं बच्चा ही था, परन्तु उस महन्तका गिड़गिड़ाना, निहोरा करना, और मरण-चीत्कार आज भी मेरे कानोंमें कभी कभी गूँज उठता है। उफ्,—कैसा भयानक हृदय-विदारक आर्तनाद था वह!”

भारतीने साँस रोके हुए कहा, “ फिर ?”

डाक्टरने कहा, “ फिर महन्तजीकी जीवन-भिक्षाका अन्तिम अनुनय सारे गाँवके सामने धीरे धीरे विलीन हो गया। डाकुओंका सरदार जाते समय बड़े भइयासे अपने पिताकी कसम खाकर कह गया कि ‘आज तो हम सब थक गये हैं, मगर महीने-भरके भीतर आकर हम इसका बदला जरूर लेंगे।’ भइया जिला-मजिस्ट्रेटके पास जाकर रोने-धोने और कहने लगे, ‘एक बन्दूक चाहिए।’ मगर पुलिसने कहा, ‘नहीं मिल सकती।’ दो साल पहले किसी अत्याचारी पुलिस सब-इन्सपेक्टरके कान मल देनेके अपराधमें उन्हें दो महीनेकी सजा हो चुकी थी, उसी अपराधका खयाल करके मजिस्ट्रेटने कह दिया, ‘हरगिज नहीं मिल सकती।’ भइयाने कहा, ‘ साहब, तो हम लोग क्या मारे जायं ?’ साहबने हँसकर कह दिया, ‘ जिसे मरनेका डर हो, वह घर-द्वार बेचकर हमारे जिलेसे चला जाय!’ ”

भारती मारे उत्तेजनाके बिस्तरपर उठके बैठ गई, बोली, " नहीं दी ? इतना जबर्दस्त खतरा होते हुए भी नहीं दी ? "

डाक्टरने कहा, " नहीं। और सिर्फ इतना ही नहीं, भइयाने जब व्याकुल होकर तीर-धनुष्य और बरछा बनवाया, तो पता लगते ही पुलिस वह भी उनसे छीन ले गई। "

" क्या हुआ फिर ? "

डाक्टरने कहा, " उसके बादकी घटना अत्यन्त संक्षिप्त है। उसी महीनेके अन्दर सरदारने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। अबकी बार उसके पास शायद और भी एक बन्दूक आ गई थी। घरके और सब लोग तो भाग गये, लेकिन भइयाको कोई वहाँसे चिगा न सका। अन्तमें डाकुओंकी गोलीसे ही उन्हें प्राण देने पड़े।"

भारतीका चेहरा सफेद फक पड़ गया, बोली, " प्राण देने पड़े ? "

डाक्टरने कहा, " हाँ। गोली लगनेके चारेक घंटे बाद तक वे होशमें थे। गाँव-भर इकठ्ठा होकर हो-हल्ला करने लगा। कोई डकैतोंको गलियाँ देने लगा और कोई मजिस्ट्रेटको; पर भइया चुपचाप पड़े रहे। गँवई-गाँव ठहरा, अस्पताल दस-बारह कोस दूर था, रातका वक्त,—डाक्टर बैण्डेज बाँधने आया, मगर भइयाने उसका हाथ हटा दिया और कहा, 'रहने दो, मैं जीना नहीं चाहता।' " कहते कहते उस पाषाण-देवताका कंठ-स्वर सहसा काँप उठा। क्षण-भर मौन रहकर वे फिर कहने लगे, " भइया मुझे बहुत प्यार करते थे। मुझे रोते देख उन्होंने एक बार मेरी तरफ देखा। उसके बाद धीरेसे कहा, 'निर्बल लड़कियोंकी तरह इन सब भेड़-बकरियोंके सुरमें सुर मिलाकर तू मत रो भइया। मगर हाँ, राज्य करनेके लोभसे जिन लोगोंने देशमें मनुष्य कहलाने लायक कोई प्राणी बाकी नहीं छोड़ा, उन्हें तू जिन्दगी-भर माफ मत करना।' बस इतनी ही बात उन्होंने कही,—इससे ज्यादा एक शब्द भी नहीं। घृणाके मारे एक आध 'उफ' 'आह' तक उनके मुँहसे नहीं निकली, और इस अभिशप्त पराधीन देशको छोड़कर वे हमेशाके लिए बिदा हो गये। सिर्फ मैं ही जानता हूँ भारती, कितना बड़ा विशाल हृदय उस दिन बिदा हो गया ! "

भारती चुपचाप स्थिर बैठी रही।—किसी समय किसी गँवई-गाँवमें एक दुर्घटना हो गई थी, उसकी एक साधारण कहानी ही तो है ! डाकुओंके पंजेमें फँसकर दो-चार अज्ञात अप्रसिद्ध अदमियोंकी जानें चली गईं, यही तो ! संसारके बड़े

बड़े विरोधोंके दुःसह दुःखके आगे यह है क्या चीज ?—फिर भी वह घटना इस पाषाणपर न जाने कितनी गहरी लकीर कर गई है ! तुलना और गणनाकी दृष्टिसे दुर्बलोंके दुःखके इतिहासमें हत्याकी यह निष्ठुरता बिलकुल ही नाचीज है। इस देशमें रोजमर्रा न जाने कितने आदमी चोर-डकैतोंके हाथसे मरते रहते हैं। मगर उक्त घटनामें क्या सिर्फ इतनी-सी ही बात थी ? यह पत्थर क्या इतनेसे ही आघातसे विदीर्ण हो सकता है ? भारतीने कनखियोंसे डाक्टरकी ओर ताककर देखा। और बिजलीकी रेखा अकस्मात् अन्धकारको चीरकर जैसे किसी अदृश्य वस्तुको खींचकर बाहर निकाल लाती है, उसी तरह उस पत्थरके चेहरेपर ही उसे मानो सम्पूर्ण अज्ञात रहस्य लहमे-भरमें दिखाई दे गया। उसने देखा : उस वेदनाके इतिहासमें मौत कोई चीज ही नहीं,—मौतने उसे चोट नहीं पहुँचाई; उसपर तो मर्म-भेदी आघात किया है उन दोनों आदमियोंकी मृत्युके भीतर छुपी हुई शृंखलित पदानत समस्त भारतीयोंकी उपायविहीन अक्षमताने ! अपने भाईकी आत्म-हत्या रोकनेके अधिकारसे भी वह वंचित रहा !—उसे अधिकार था सिर्फ आँखें खोलकर देखते रहनेका। भारतीको सहसा मालूम हुआ कि सारी जातिके इस दुःसह लांछन और अपमानकी ग्लानिने मानो उस पाषाणके चेहरेपर निबिड़ निश्छिद्र स्याही पोत दी है।

मारे वेदनाके उसके हृदयके भीतर उथल-पुथल मच गई, उसने कहा, " भइया ! "

डाक्टरने आश्चर्यके साथ गर्दन उठाकर कहा, " मुझे बुला रही हो ? "

भारतीने कहा, " हाँ, अच्छा, अँगरेजोंके साथ तुम्हारी कभी सन्धि नहीं हो सकती ? "

" नहीं। मुझसे बढ़कर उनका शत्रु और कोई नहीं हो सकता। "

भारती मन ही मन दुःखित हुई, बोली, " तुम किसीसे शत्रुता कर सकते,—किसीका अकल्याण चाह सकते हो, इसकी तो मैं कल्पना ही नहीं कर सकती भइया। "

डाक्टर कुछ देर चुपचाप भारतीके चेहरेकी तरफ देखते रहे, फिर मुसकराते हुए बोले, " भारती, यह बात तुम्हारे मुँहसे अच्छी लगती है, और इसके लिए मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ : तुम सुखी होओ। " यह कहकर वे फिर जरा हँस दिये। मगर यह बात भारती जानती थी कि इस हँसीका

कोई मूल्य नहीं हो सकता। संभव है कि यह और ही कुछ हो,—इसका अर्थ निश्चय करना व्यर्थ है। इसीलिए वह मौन रही। डाक्टर धीरे धीरे कहने लगे, "यह बात तुम हमेशा याद रखना भारती, कि हमारा देश इनके हाथमें चला गया है सिर्फ इसीलिए मैं इनका शत्रु नहीं हूँ,—किसी दिन मुसलमानोंके हाथमें भी यह देश चला गया था,—परन्तु इसलिए कि सम्पूर्ण मनुष्यत्वके इतने बड़े परम शत्रु शायद दुनियामें और कोई न होंगे। स्वार्थके लिए धीरे धीरे मनुष्यको अमानुष बना डालना इनका मज्जागत संस्कार है; यही इन लोगोंका रोजगार है, यही इन लोगोंका मूल-धन है! अगर बन सके, तो देशके मनुष्य-मात्रको यह सत्य सिखा देना।"

नीचेकी घड़ीमें टन-टन करके चार बज गये। सामनेके खुले जंगलेके बाहर पिछली रातका अन्धकार गाढ़ा हो आया। उसकी तरफ निर्निमेष दृष्टिसे देखती हुई भारती स्तब्ध स्थिर बैठी न जाने क्या क्या सोचने लगी। परन्तु एक सम्पूर्ण जातिके विरुद्ध इतने बड़े आरोपको सच समझकर उसपर विश्वास करनेकी उसे प्रवृत्ति नहीं हुई।

१९

कल रात-भर भारतीको नींद नहीं आई थी। आज दिनमें उसका शरीर और मन ठीक नहीं था, इसलिए वह सोचती थी कि आज जरा जल्दी जल्दी खाना पीना खत्म करके सो रहेगी। इसके लिए उसने शामसे ही रसोई बनाना शुरू कर दिया। इतनेमें उसके दलके एक आदमीने आकर उसके हाथमें एक चिट्ठी दी। सुमित्राकी चिट्ठी थी: उसने सिर्फ एक ही लाइन लिखकर भारतीको बुलाया है कि जैसी भी हालतमें हो, जरूरीसे जरूरी काम छोड़कर फौरन इस आदमीके साथ चली आओ।

सुमित्राकी आज्ञा उल्लंघन नहीं की जा सकती; परन्तु, भारती बड़े आश्चर्यमें पड़ गई। उस आदमीसे उसने पूछा, "उन्हें अचानक कोई तकलीफ हो गई है क्या!" उत्तरमें उसने कहा, "नहीं।"

नीचे उतरकर देखा कि दरवाजेके सामने पुरानी पहचानी हुई किरायेकी गाड़ी खड़ी है, पर गाड़ीवान बदल गया है। उसे देखकर मालूम नहीं होता कि गाड़ी चलाना उसका पेशा है। इसके सिवा गाड़ी क्यों, सुमित्राके घर जानेमें तो

तीनेक मिनट ही लगते हैं ? उसने बहुत ज्यादा आश्चर्यके साथ पूछा, "बात क्या है हीरासिंह ? सुमित्रा कहाँ है ?"

यह हीरासिंह उनकी समितिका सदस्य न होनेपर भी अत्यन्त विश्वासपात्र है। पंजाबी सिक्ख है, पहले हाँगकाँगकी पुलिसमें नौकरी करता था, अब रंगूनमें टेलिग्राफ आफिसमें पियादेका काम करता है। उसने चुपकेसे कहा, "करीब चार मील दूर बहुत ही गुप्त और बहुत ही जरूरी सभा हो रही है, वहीं आपको जाना है।" भारतीने आगे कुछ नहीं पूछा; वह अँधेरेमें, गाड़ीकी खिड़कियाँ बन्द करके, भीतर बैठ गई। गाड़ी चलने लगी और हीरासिंह सरकारी पियादेकी पोशाकमें सरकारी साइकिलपर सवार होकर दूसरे रास्तेसे चल दिया। रास्तेमें कितनी ही बार बार भारतीके मनमें आया कि गाड़ी लौटाकर रिवाल्वर साथ ले ले, पर देरी होनेके डरसे वह ऐसा न कर सकी; अस्त्र-हीन अरक्षित अवस्थामें ही उसे अनिश्चित स्थानके लिए रवाना हो जाना पड़ा। गाड़ी बहुत ही घूम घूम कर जा रही है, यह बात भारती भीतर रहनेपर भी समझ गई, और कुछ ही देर बाद रास्तेकी असमतलता और असंस्कृत दुरवस्थाका भी उसे पता चल गया। वह यह भी समझ गई कि गाड़ी शहर छोड़कर बाहर चल रही है; पर कहाँ जा रही है, इस बातका उसे जरा भी पता नहीं। साथमें घड़ी नहीं थी, रातके करीब दस साढ़े-दस बजे होंगे कि गाड़ी एक एक बगीचेमें जाकर खड़ी हो गई। हीरासिंह भी वहाँ पहुँच गया था, उसने गाड़ीका दरवाजा खोल दिया। सिरके ऊपर बड़े बड़े पेड़ छाये हुए थे जिनसे अन्धकार ऐसा दुर्भेद्य हो गया था कि अपना हाथ तक नहीं दिखाई देता था। नीचे चारों ओर लम्बी लम्बी घनी घास खड़ी थी जिसके बीचमें होकर एक पतली-सी पगडंडी दिखाई दे रही थी। उसी खतरनाक रास्तेमें हीरासिंह अपनी साइकिलकी छोटी-सी बत्ती दिखाता हुआ आगे आगे चलने लगा। जाते जाते भारतीका मन हजारों बार कहने लगा कि उसने अच्छा नहीं किया, अच्छा नहीं किया। इस खतरनाक भयानक जगहमें आना अच्छा नहीं हुआ।

थोड़ी देर बाद ही वे दोनों एक टूटे-फूटे खंडहरमें पहुँच गये। अँधेरेमें उसका आभास-मात्र पाते ही भारती समझ गई कि यह बहुत दिनोंका छोड़ा हुआ कोई 'चाउंग' है। किसी प्राचीन कालमें बौद्ध श्रमण यहाँ रहा करते थे। जहाँ तक सम्भव है, आस-पास कोई बस्ती नहीं है।

इतना बड़ा मकान, जरा भी कहीं कोई प्रकाश नहीं, आदमी नहीं, आदमीका चिह्न तक नहीं,—दरवाजे-जंगले चोर चुरा ले गये हैं। सामनेके घरमें घुसते ही चमगादड़ और चूहोंकी बदबूसे भारतीका दम अटकने लगा। उसीके बीचमें होकर रास्ता है, न जाने कितने जहरीले साँप-बिच्छू वहाँ होंगे!

बड़े भारी हॉलके एक कोनेमें ऊपर जानेकी सीढ़ी है जो लकड़ीकी है और उसमें भी बीच-बीचमें तख्ते नहीं! उसीसे भारती हीरासिंहका हाथ पकड़े ऊपर चढ़ गई, और सामनेका बरामदा पार होकर बड़ी मुश्किलसे निर्दिष्ट स्थानपर पहुँची। कमरेमें एक चटाई बिछी हुई थी, एक तरफ दो मोमबत्तियाँ जल रही थीं, उन्हींके पास सभानेत्रीके आसनपर सुमित्रा बैठी हुई थी। दूसरी तरफ डाक्टर बैठे थे। उन्होंने स्नेह-भरे स्वरमें बुलाकर कहा, "आओ भारती, मेरे पास आकर बैठो।"

अज्ञात आशंकासे भारतीकी छाती जोरोंसे धड़कने लगी। उसके मुँहसे कोई आवाज ही नहीं निकली। वह जल्दीसे डाक्टरके पास जाकर बैठ गई। भारतीके कंधेपर अपना बायाँ हाथ रखकर डाक्टरने मानो उसे नीरव भाषामें भरोसा-सा दिया, हीरासिंह भीतर नहीं आया, दरवाजेके पास ही खड़ा रहा। भारतीने चारों ओर नजर उठाकर देखा कि जो लोग वहाँ बैठे हैं, उनमेंसे पाँच-छह जनोंको वह बिलकुल ही नहीं पहचानती। परिचितोंमेंसे सिर्फ चार ही जनें वहाँ थे: डाक्टर, सुमित्रा, तलवरकर और कृष्ण अय्यर। सबसे पहले एक भीषणाकृति आदमीपर उसकी दृष्टि पड़ी। वह गेरुआ रंगका चोगा पहने था और सिरपर उसी रंगका साफा बाँधे था। बड़ी हँडिया-सा गोल चेहरा और शरीर गैंडा जैसा स्थूल, मांसल और कर्कश; फटी फटी भद्दी आँखें, जिनके ऊपर भौंहका चिह्न तक नहीं; सींकों-सी खड़ी खड़ी मूँछें, जो दूरसे गिनी जा सकती हैं; रंग ताँबे जैसा,—देखते ही मालूम हो जाता है कि कोई अनार्य मंगोलियन है। इस बीभत्स भयानक आदमीकी तरफ भारतीसे अच्छी तरह आँखें उठाकर देखा भी नहीं गया। दो-एक मिनटके लिए साराका सारा कमरा एकबारगी स्तब्ध स्थिर हो गया।

सुमित्राने भारतीकी तरफ लक्ष्य करके कहा, "भारती, मैं तुम्हारे मनका भाव जानती हूँ, इसलिए मेरी इच्छा नहीं थी कि तुम्हें यहाँ बुलाकर दुःख

दिया जाय, लेकिन डाक्टरने किसीकी मानी ही नहीं। अपूर्व बाबूने क्या किया है, जानती हो?"

भारतीके हृदयके एक कोनेमें ऐसी ही कोई बात दिन-भर काँटेकी तरह चुभती रही है। उसका गला सूख गया और चेहरा सफेद फक पड़ गया; वह बिना कुछ बोले चुपचाप यों ही देखती रह गई।

सुमित्राने कहा, "बोथा कम्पनीने रामदासको आज डिसमिस कर दिया है। अपूर्वकी भी यही दशा होती, पर पुलिस-कमिश्नरके सामने हमारी सब बातें कह देनेसे उनकी नौकरी बच गई। मामूली तनख्वाह तो थी नहीं, शायद पाँच सौ होगी।"

रामदासने गर्दन हिलाकर कहा, "हाँ।"

सुमित्राने कहा, "सिर्फ इतना ही नहीं। अधिकार-समिति एक विद्रोही गिरोह है और हम लोग छिपाकर पिस्तौल वगैरह रखा करते हैं, ये सब बातें भी उन्होंने छिपाई नहीं हैं।—इसकी क्या सजा होनी चाहिए भारती?"

वह भीषणाकृति आदमी गरज उठा, "डेथ् (=मौत)"

अब भारतीने आँखें उठाकर उसकी तरफ देखा और वह एकटक देखती ही रह गई।

रामदासने कहा, "डाक्टर ही सव्यसाची हैं, यह खबर उन्हें लग चुकी है। अपूर्व बाबूने यह भी बता दिया है कि होटलकी फलानी कोठरीमें उन्हें पकड़ा जा सकता है यहाँ तक कि दो साल पहले मैं पॉलिटिकल अपराधमें सजा भुगत चुका हूँ, सो भी कह दिया!"

सुमित्राने कहा, "भारती, तुम जानती हो कि डाक्टर पकड़े गये तो उसका नतीजा क्या होगा? फाँसीसे अगर बच भी गये तो ट्रान्सपोर्टेशन तो जरूर ही होगा।—जेन्टलमेन, आप लोग इस अपराधकी क्या सजा तजवीज करते हैं?"

सब एक साथ बोल उठे, "डेथ्!"

"भारती, तुम्हें क्या कुछ कहना है?"

भारतीके मुँहसे बात नहीं निकली, उसने सिर्फ सिर हिलाकर जताया कि मुझे कुछ नहीं कहना।

वह भयानक आदमी अब बंगलामें बात करने लगा। उच्चारणसे मालूम होता था कि वह चटगाँवकी तरफका है। बोला, "एक्जिक्यूशनका (=मृत्यु-

दण्ड तामील करनेका) भार मैं अपने ऊपर लेता हूँ। लेकिन मैं बन्दूक-अन्दूक, छुरी छुरेसे काम नहीं लेता। यही मेरी बन्दूक है और यही मेरा छुरा!" कहकर उसने अपना शेर जैसा पंजा ऊपर उठाया।

कृष्ण अय्यरने दरवाजेकी तरफ देखकर हीरासिंहसे कहा, "इस बागके उत्तरके कोनेमें एक अन्धा कुआ है,—उसे जरा ज्यादा मिट्टी डालकर ऊपरसे सूखी डाल-पत्तियोंसे बिलकुल चौरस कर देना पड़ेगा। बदबू न निकलने पावे।"

हीरासिंहने सिर हिलाकर जताया कि "किसी तरहकी त्रुटि नहीं रहेगी।"

तलवरकरने कहा, "बाबू साहबको बुलाकर अब सजा सुना देनी चाहिए।"

एकत्रित जूरियोंकी सहायतासे अपूर्वके अपराधका विचार पाँचेक मिनटमें सम्पन्न हो गया। विचारककी राय जैसी संक्षिप्त थी वैसी ही स्पष्ट। उसमें समझमें न आने लायक उलझन कहीं थी ही नहीं। भारतीने सब सुना, परंतु उसके कान और बुद्धिके बीचमें एक ऐसी दुर्भेद्य प्राचीर खड़ी हो गई थी कि उसे भेदकर बाहरकी चीज भीतर पहुँच ही नहीं पाई। इसीसे, शुरूसे आखिर तक, जो कोई बात कहता था उसीके मुँहकी तरफ वह व्याकुल जिज्ञासु दृष्टिसे मूढ़की तरह देखने लगती थी। सिर्फ इतना ही उसकी समझमें आया कि अपूर्वने बड़ा भारी अपराध किया है, और ये सबके सब उसे मार डालनेके लिए तैयार बैठे हैं। इस देशमें उसका जीवन संकटमें है, मगर वह संकट इतना करीब आ पहुँचा है, इस बातका उसे होश नहीं था। सुमित्राका इशारा पाकर एक आदमी उठकर बाहर चला गया और दो ही मिनट बाद जो दृश्य भारतीके सामने आया वह अत्यन्त भीषण दुःस्वप्नमें भी नहीं आ सकता। वह आदमी अपूर्वको लेकर उस कमरेमें घुसा,—उसके दोनों हाथ पीछेकी ओर रस्सीसे मजबूतीके साथ बँधे हुए थे और कमरसे एक भारी पत्थर झूल रहा था। देखते ही भारती बेहोश होकर डाक्टरके ऊपर लुढ़क पड़ी। पर सबकी दृष्टि तब अपूर्वकी ओर थी, इससे सिर्फ एकके सिवा और किसीको यह बात मालूम ही नहीं हुई।

भारतीके आनेसे पहले ही अपूर्वका इजहार लिया जा चुका था। उसने कोई भी बात अस्वीकार नहीं की। आफिसके बड़े साहब और पुलिसके बड़े साहब, दोनोंने मिलकर उससे सब बातें जान ली हैं; परन्तु क्यों उसने इस दल और देशसे इतनी बड़ी शत्रुता की, इस बातको वह अब भी नहीं जानता।

आज दिनको दस बजेसे पहले ही रामदासने यह समाचार सुमित्राको सुना दिया। दण्ड स्थिर हो गया; और किस प्रकार अपूर्वको यहाँ लाया गया, उसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है--

आफिसकी छुट्टीके बाद अपूर्वको पैदल घर जानेकी हिम्मत नहीं होगी, इस बातका अनुमान करके इन लोगोंकी किरायेकी गाड़ी हीरासिंहकी मददसे आफिसके गेटके पास खड़ी कर दी गई और इस जालमें अपूर्व आसानीसे फँस गया। कुछ दूर चलकर गाड़ीवानने कहा कि एक भारी रोलरके टूट जानेसे आगे रास्ता बन्द है, लिहाजा घूमकर जाना पड़ेगा। अपूर्वने इसे मंजूर कर लिया। उसके बाद शायद वह अन्यमनस्क-सा हो गया और जब घंटेभर बाद उसे होश आया तो देखा कि हीरासिंह गाड़ीके भीतर आ गया है और पिस्तौल दिखाकर उसे कहीं लिये जा रहा है।

सुमित्राने कहा, " अपूर्व बाबू, हम लोगोंने आपको डेथ सेण्टेन्स (=मौतका दण्ड) दिया। आपको और कुछ कहना है ? "

अपूर्वने सिर हिलाकर जताया, 'नहीं।' परन्तु उसका मुँह देखनेसे मालूम होता था कि वह कुछ भी नहीं समझा है।

डाक्टर अब तक कुछ भी नहीं बोले थे, पीछेकी तरफ देखकर बोले, " हीरासिंह, तुम्हारी पिस्तौल कहाँ है ? "

हीरासिंहने सुमित्राकी ओर इशारा किया, डाक्टरने हाथ बढ़ाकर कहा, " पिस्तौल देखूँ सुमित्रा ? "

सुमित्राने बेल्टसे पिस्तौल खोलकर डाक्टरके हाथमें दे दी। डाक्टरने पूछा, " और किसीके पास पिस्तौल या रिवाल्वर है ? "

किसीके पास नहीं है, यह बात सबने जता दी। तब सुमित्राकी पिस्तौल अपनी जेबमें रखकर डाक्टरने जरा हँसकर कहा, " सुमित्रा, तुमने कहा कि हम लोगोंने डेथ सेण्टेन्स दिया; मगर भारतीने तो नहीं दिया ? "

सुमित्राने क्षण-भर भारतीके मुँहकी ओर देखकर दृढ़ स्वरसे कहा, " भारती नहीं दे सकती। "

डाक्टरने कहा, " देना चाहिए भी नहीं। क्यों, है न भारती ? "

भारतीके मुँहसे बात नहीं निकली, इस कठोर प्रश्नके उत्तरमें उसने सिर्फ औंधी होकर डाक्टरकी गोदमें अपना मुँह छिपा लिया।

डाक्टरने उसके माथेपर एक हाथ रखकर कहा, " अपूर्व बाबूने जो कर डाला है वह तो मिट नहीं सकता,—उसका नतीजा हमें भोगना ही पड़ेगा, सजा देनेपर भी और न देनेपर भी। मगर मेरा कहना है कि इसकी जरूरत नहीं,— भारतीपर इसका भार रहा कि इस कमजोर आदमीको यह जरा मजबूत बना डाले।—क्यों, क्या राय है सुमित्रा ? "

सुमित्राने कहा, " नहीं। "

सब एक साथ बोल उठे, " नहीं। "

वह कुदर्शन आदमी सबसे ज्यादा उछला। उसने अपने दोनों पंजे ऊपरको उठाकर भारतीकी तरफ इशारा करके कोई बात कह डाली, जो साफ सुनाई नहीं दी।

सुमित्राने कठोर स्वरमें कहा, " हम सबोंकी राय एक है। इतने बड़े अन्यायको प्रश्रय देनेसे हम लोगोंका सारा काम मिट्टीमें मिल जायगा। "

डाक्टरने कहा, " मिल जाय तो इसका क्या उपाय है ? '

सुमित्राके साथ ही साथ पाँच-सात जनें गरज उठे, " उपाय क्या है ? देशके लिए,—स्वाधीनताके लिए हम लोग और कोई बात नहीं मानेंगे। आपकी अकेलेकी बातसे कुछ नहीं हो सकता। "

गरजना बन्द हो जानेपर डाक्टरने उत्तर दिया। अबकी बार उनका स्वर आश्चर्यजनक रूपसे शान्त और नरम सुनाई दिया। उसमें उत्साह या उत्तेजनाकी भाप तक नहीं थी, उन्होंने कहा, " सुमित्रा, विद्रोहको प्रश्रय मत दो। पर तुम लोग जानते हो कि मेरे अकेलेकी राय तुम एक सौ आदमीयोंसे भी ज्यादा कठोर है। " फिर उस भयानक आदमीको सम्बोधित करके कहा, " बिरजू, अपनी उद्दण्डताके कारण तुमने एक बार मुझे बाटाविंयामें दण्ड देनेके लिए मजबूर किया था। अब दूसरी बार मजबूर न करो ! "

भारतीने सिर नहीं उठाया, अब तक वह ज्योंकी त्यों पड़ी हुई थी और उसकी सारी देह थर थर काँप रही थी। उसकी पीठभर स्नेह-पूर्ण हाथ फेरते हुए डाक्टरने उसी तरह स्वाभाविक कंठसे कहा, " डरो मत भारती, अपूर्वको मैं अभय देता हूँ। "

भारतीने सिर नहीं उठाया, पूरा भरोसा भी उसे नहीं हुआ। उसने

डाक्टरके दाहिने हाथकी पतली पतली लम्बी उँगलियाँ अपनी मुट्ठीमें दबाकर धीरेसे कहा, " मगर इन लोगोंने तो अभय नहीं दिया ? "

डाक्टरने कहा, " आसानीसे देंगे भी नहीं। मगर इस बातको वे समझते हैं कि मैंने जिसे अभय दे दिया, उसे छुआ नहीं जा सकता। " फिर जरा हँसकर कहा, " अच्छी तरह सोनेको नहीं मिलता भारती, कभी कभी आधा पेट खाकर ही दिन काट देना पड़ता है,—फिर भी, ये लोग जानते हैं कि इन दुबली-पतली उँगलियोंके दबावसे आज भी बिरजूके इतने बड़े बड़े शेरके से पंजे कुचले जा सकते हैं ! क्यों बिरजू, ठीक है न ? "

चटगाँवका मंगोलियन चेहरा और भी स्याह होकर चुप रह गया। डाक्टरने कहा, " लेकिन अपूर्व अब यहाँ रहे नहीं। देश चला जाय। अपूर्व ट्रेटर (=देशद्रोही) नहीं है, अपने देशको वह सम्पूर्ण हृदयसे चाहता है, मगर अधिकांश,—खैर जाने दो, अपनी जातिकी निन्दा नहीं करूँगा,—लेकिन बड़ी कमजोर जात है यह। अपूर्वको मजबूत बनानेका भार तुम्हें दे तो दिया भारती, पर मुझे उम्मीद नहीं है। घर जाकर उसे आजकी बात, तुम्हारी बात,—कुछ भी भूलनेमें ज्यादा समय नहीं लगेगा। खैर, यह पीछेकी बात है। फिलहाल हम लोग सभानेत्रीसे अनुरोध कर सकते हैं कि आजकी यह सभा भंग कर दी जाय। " यह कहकर उन्होंने सुमित्राकी तरफ देखा।

सुमित्रा डाक्टरसे कभी ' तुम ' और कभी ' आप ' कहकर सम्मानके साथ बातचीत किया करती है, अब भी उसी तरह बोली, " अधिकांशका मत जहाँ एक व्यक्तिके शारीरिक बलसे पराजित हो जाता है, उसे और चाहे जो कहा जाय, सभा नहीं कहा जा सकता। मगर, आपको अगर ऐसा नाटक ही अभिनय कराना था, तो पहलेसे जता क्यों नहीं दिया ? "

डाक्टरने कहा, " अभिनय न होता तो अच्छा होता; पर अवस्था-विशेषके कारण अगर नाटक हो भी गया सुमित्रा, तो,—तो इतना तो तुम लोगोंको भी मानना पड़ेगा कि अभिनय अच्छा ही रहा। "

रामदासने कहा, " मेरी तो धारणा ही नहीं थी कि ऐसा हो सकता है ! "

डाक्टरने कहा, " मित्रता जैसी चीज इतनी क्षण-भंगुर है, क्या इस बातकी भी तुम्हें धारणा थी तलवैरकर ? लेकिन फिर भी ऐसा सत्य संसारमें दुर्लभ ही समझो। "

कृष्ण अय्यरने कहा, "हम लोगोंकी बर्माकी ऐक्टिविटी (=क्रियाशीलता) जाती रही। अब यहाँसे भागना पड़ेगा।"

डाक्टरने कहा, "हाँ, भागना तो पड़ेगा ही। लेकिन समयके अनुसार स्थान छोड़ देना और ऐक्टिविटी छोड़ देना, दोनों एक बात नहीं अय्यर। अगर कहीं ज्यादा समय तक बैठनेको जगह न मिले, तो उसकी शिकायत करना हम लोगोंके लिए शोभा नहीं देता।" कहकर वे भारतीको इशारा करके उठ खड़े हुए, बोले, "हीरासिंह, अपूर्व बाबूको खोल दो। चलो भारती, तुम लोगोंको सुरक्षित पहुँचा आऊँ।"

हीरासिंह आदेश पालन करनेके लिए आगे बढ़ा ही था कि सुमित्राने कठोर स्वरमें कहा, "अभिनयके अन्तिम दृश्यमें तालियाँ बजानेको जी चाहता है। पर यह कोई नई बात नहीं, बचपनमें शायद किसी उपन्यासमें पढ़ी थी। पर इसमें जरा-सी कमी रह गई। युगल-मिलन हम लोगोंके सामने ही हो जाता तो अभिनयमें कहीं कोई त्रुटि नहीं रह जाती। क्यों ठीक है न भारती?"

भारती मारे शर्मके गड़ गड़ गई। डाक्टरने कहा, "शरमानेकी इसमें कोई बात नहीं भारती। बल्कि, मैं तो चाहता हूँ कि अभिनय समाप्त करनेके जो मालिक हैं, वे किसी दिन इसमें जरा भी कहीं कोई त्रुटि न रक्खें। फिर जेबमेंसे सुमित्राका पिस्तौल निकाल कर उसके पास रखते हुए बोले, "मैं इन्हें पहुँचा देने जाता हूँ,—पर कोई डरकी बात नहीं, मेरे पास एक और है।" इसके बाद ब्रजेन्द्रकी तरफ कनखियोंसे देखते हुए बोले, "तुम लोग जो मज़ाक़में कहा करते हो कि मुझे उल्लूकी तरह अँधेरेमें दिखाई देता है, सो आज उसे कोई भूल न जाना!" इतना कहकर वे एक गूढ़ और भयंकर-सा इशारा करके भारती और अपूर्वको अपने साथ लेकर चलनेको तैयार हो गये।

सुमित्रा अकस्मात् खड़ी हो गई और बोली, "क्या फाँसीकी रस्सी अपने ही हाथ अपने गलेमें बगैर डाले काम नहीं चल सकता था?"

डाक्टरने हँसते हुए क्या, "एक मामूली-सी रस्सीसे डरनेसे कैसे काम चलेगा सुमित्रा?"

किसी काममें पड़नेसे रोकनेके लिए इस आदमीको मौतका डर दिखाना कितनी बड़ी बेवकूफी है, इस बातका खयाल करके सुमित्रा खुद ही शरमिन्दा

हो गई; पर उसी समय व्याकुल कंठसे बोल उठी, "यह सब तो तितर-बितर हो ही गया,—पर अब भेंट कब होगी?"

डाक्टरसे कहा, "जरूरत पड़ते ही हो जायगी।"

"वह जरूरत क्या अभी आई नहीं?"

"आई होगी तो जरूर होगी।"

इतना कहकर वे अपूर्व और भारतीको साथ लेकर होशियारीके साथ नीचे उतर गये।

जिस गाड़ीमें भारती आई थी वह अब तक खड़ी ही थी। गाड़ीवानको सुनिद्रासे जगाकर उसीमें तीनों जनें बैठकर चल दिये। बहुत देरकी नीरवताको भंग करके भारतीने पूछा, "भइया, हम लोग कहाँ जा रहे हैं?"

"अपूर्वके घर।" इतना कहकर डाक्टर खिड़कीमेंसे मुँह निकालकर बाहर अन्धकारकी ओर, जितनी दूर दृष्टि जा सकती थी, देखकर स्थिर होकर बैठ गये। दो मीलके करीव चुपचाप चलनेके बाद गाड़ी ठहराकर डाक्टर उतरनेको तैयार हुए तो भारतीने आश्चर्यके साथ पूछा, "यहाँ क्यों?"

डाक्टरने कहा, "अब लौटूँगा। वे सब बैठे बाट देखते होंगे,—कुछ फैसला तो हो ही जाना चाहिए!"

"फैसला?" भारतीने व्याकुल होकर उनका हाथ पकड़के कहा, "सो नहीं, हरगिज नहीं होगा। तुम मेरे साथ चलो।" पर बात मुँहसे निकलनेके बाद वह सुमित्राकी तरह झिझककर रह गई। कारण, डाक्टरके कुछ कहनेके मानी ही हैं तय करके कहना; और, संसारमें किसीका ऐसा कोई डर ही नहीं जो उन्हें रोक सकता हो। फिर भी, भारतीसे हाथ नहीं छोड़ा गया; वह धीरेसे बोली, "पर तुम्हारी मुझे बहुत जरूरत है भइया!"

"सो मुझे मालूम है। अपूर्व बाबू, आप क्या परसोंके जहाजसे घर नहीं जा सकेंगे?"

अपूर्वने कहा, "जा सकूँगा।"

भारती सहसा अत्यन्त चंचल हो उठी, बोली, "भइया, अभी मुझे एक बार घर जाना होगा।"

डाक्टरने गर्दन हिलाकर जवाब दिया, "जरूरत नहीं। तुम्हारे कागजात, तुम्हारी समितिका रजिस्टर, तुम्हारा पिस्तौल, कारतूस,—सब-कुछ अब तक

नवताराने हटा दिया होगा। भोरके वक्त खाना-तलाशी आयेगी,—अतुल खुद सशरीर आयेगा,—उसकी देशी शराबकी बोतल और वह टूटा हुआ बेहाला,—अपूर्व बाबू, आपका उस बेहालेपर कुछ दावा है न ?" इतना कहकर वे जरा हँस दिये, फिर बोले, "इसके सिवा और ज्यादा कुछ पुलिसके साहबके हाथ न पड़ेगा। कल नौ-दस बजेके करीब घर लौटकर, रसोई-असोई बनाकर, खा-पीकर तुम्हें जरा लेटनेकी भी फुरसत मिल जायगी भारती। रातको दो-तीन बजेके करीब फिर मिलूँगा,—कुछ खाने-पीनेको रखना, अच्छा।"

भारती दंग रह गई। मन ही मन कहने लगी, इस तरह अत्यन्त सजग हुए बिना क्या कोई इस मरण-यज्ञमें कूद सकता है ? मुँहसे बोली, "तुम्हारी निगाह कभी चूकती नहीं, तुम सबकी भलाई बुराईकी फिक्र रखते हो। संसारमें मेरा अपना कहनेको कोई नहीं है, अपनी अधिकार-समितिसे मुझे बिदा मत कर देना भइया।"

अँधेरेमें ही डाक्टरने बार बार सिर हिलाकर कहा, "भगवानके कामसे किसीको बिदा कर देनेका अधिकार किसीको भी नहीं है, पर इसकी धारा तुम्हें बदल लेनी होगी।"

भारतीने कहा, "तुम्हीं बदल देना।"

डाक्टरने इस बातका कोई जवाब नहीं दिया, सहसा व्यग्र होकर कहा, "भारती, अब मेरे पास समय नहीं, मैं चल दिया।"

इतना कहकर वे दूसरे ही क्षण अन्धकारमें अदृश्य हो गये।

२०

गाड़ी ज्यों ही चलनेको हुई त्यों ही भारतीने अपूर्वके घरका पता बतानेकी गरजसे खिड़कीमेंसे मुँह निकालकर गाड़ीवानसे कहा, "सुनो गाड़ीवान, तीन नम्बर—"

उसकी बात खत्म होनेके पहले ही गाड़ीवान कह उठा, "आई नो आई नो। (=मैं जानता हूँ, मैं जानता हूँ)"

गाड़ीका आयतन छोटा होनेसे दोनों जनें सटकर बैठे थे; गाड़ीवानके मुँहसे अँगरेजी सुनकर अपूर्वकी सारी देह सिहर उठी और भारतीने उसका स्पष्ट अनुभव किया। इसके बाद करीब घंटे-भर तक गाड़ी घड़ड़ घड़ड़ चलती ही

रही, पर दोनोंमें कोई बातचीत नहीं हुई। अन्धकारमय निस्तब्ध निशीथमें गाड़ीके पहियों और सड़कके कंकड़ोंके संघर्षसे जो कठोर शब्द होने लगा, उससे रह-रहकर अपूर्वके रोयें खड़े हो जाने लगे और डर लगने लगा कि आसपासके लोगोंकी नींद खुले बगैर नहीं रही होगी।

गाड़ी आकर अपूर्वके घरके दरवाजेके सामने खड़ी हो गई। भारतीने भीतरसे गाड़ीका दरवाजा खोलकर अपूर्वको उतरनेके लिए इशारा किया और खुद भी उसके पीछे पीछे उतर पड़ी। उसने मुलायम स्वरमें गाड़ीवानसे पूछा, " कितना भाड़ा हुआ ? "

गाड़ीवानने जरा हँसकर कहा, " नॉट ए पाई। (=एक पाई भी नहीं) " और दूसरे ही क्षण सिर हिलाकर " गुड नाइट टू यू।" कहकर वह गाड़ी हाँकता हुआ सीधा चला गया।

भारतीने पूछा, " तिवारी है ? "

" है। "

ऊपर जाकर दरवाजा खटखटाकर अपूर्वने तिवारीको जगाया। किवाड़ खोलते ही तिवारीने बत्तीके उजालेमें पहले पहल भारतीको देखा। कल अपूर्व घर वापस आया था लगभग भोरके वक्त, आज लौटा है रात खत्म करके और साथमें है भारती। इसलिए तिवारीके समझनेमें कुछ बाकी नहीं रहा, मारे क्रोधसे उसका सारा बदन जलने लगा और बगैर कुछ बोले-चाले ही वह सीधा अपने बिछौनेपर जाकर चद्दर ओढ़के सो गया। इस लड़कीको तिवारी प्यार करता था। एक दिन इसने उसे आसन्न मृत्युके हाथसे बचाया था इसलिए ईसाई होनेपर भी वह इसे श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता था। मगर, इधर कुछ दिनोंसे वह जो रंग-ढंग देख रहा था, उससे उसके मनमें अपूर्वके सम्बन्धमें तरह तरहकी सम्भव-असम्भव दुश्चिन्ताएँ उठ रही थीं,—यहाँ तक कि जाति नष्ट होने तककी। उस सर्वनाशकी प्रकट मूर्ति आज मानो तिवारीके मानस-पटपर एकबारगी मुद्रित हो गई। उसे इस तरह जाकर सो जाते देखके अपूर्वने अपनी आदतके अनुसार कहा, " किवाड़ नहीं बन्द किये तिवारी ? "

उसके मूर्च्छाहत उद्भ्रान्त चित्तने तो कुछ ध्यान नहीं दिया, पर भारती फौरन ताड़ गई। उसने जल्दीसे जवाब दिया, " मैंने बन्द कर दिये हैं।"

अपूर्वने अपने सोनेके कमरेमें जाकर देखा, " खाटपर बिछौने जैसेके तैसे

खड़ी किये पड़े हैं, बिछाये नहीं गये। असलमें बरामदेमें बैठे बैठे राह देखते रहनेमें ही तिवारीकी सारी शाम और रात बीती है, बिस्तर करनेकी बात उसे याद ही नहीं रही। मगर उसके उत्तर देनेके पहले ही भारती जल्दीसे व्यस्तताके साथ कह उठी, "आराम-कुरसीपर जरा बैठ जाइए, मैं एक मिनटमें सब ठीक किये देती हूँ।"

आराम-कुरसीपर आरामसे बैठकर अपूर्वने फिर आवाज़ दी, "एक गिलास पानी तो ला तिवारी।"

उसके पास ही स्टूलपर पानीकी सुराही और गिलास रक्खा था; बिस्तर करते हुए भारतीने उस तरफ इशारा करके कहा, "सोते हुए आदमीको क्यों उठाते हैं अपूर्व बाबू, आप खुद ही ले लीजिए न।"

अपूर्वने हाथ बढ़ाकर सुराही उठानी चाही, पर उठी नहीं, तब उसने उठकर किसी तरह गिलासमें पानी उँड़ेलकर एक उसाँसमे सब पी लिया। पानी पीकर वह फिर आराम-कुरसीपर बैठना चाहता था, इतनेमें भारती बोली, "वहाँ क्या बैठते हैं, बिस्तरपर सो जाइए।"

अपूर्व शान्त बालककी तरह चुपचाप बिस्तरपर आँख मींचकर पड़ रहा। भारती मसहरी डालकर उसे चारों तरफसे दबा रही थी, इतनेमें अपूर्व सहसा पूछ उठा, "तुम कहाँ सोओगी भारती?"

"मैं?" भारती कुछ विस्मित हुई। कारण, ऐसी घटना कोई नई नहीं थी, और इस घरमें कहाँ क्या है, सो भी उससे छिपा नहीं था। इस अनावश्यक प्रश्नके उत्तरमें उसने सिर्फ आराम-कुरसीकी तरफ इशारा करके कहा, "सबेरा होनेमें अब दो ही घंटेकी देर होगी। आप सो जाइए।"

अपूर्वने हाथ बढ़ाकर उसका हाथ पकड़ लिया, और कहा, "वहाँ नहीं, मेरे पास बैठो।"

"आपके पास?" सचमुच भारतीके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा। अपूर्व और चाहे जैसा भी हो पर इन सब मामलोंमें वह कभी आत्म-विस्मृत नहीं होता था। इस तरह कितने ही दिन कितने ही कारणोंसे उन दोनोंको एक ही कमरेमें रात बितानी पड़ी है, पर मान-हानिकर एक भी बात या एक भी इशारा उसके आचरणसे कभी किसी दिन नहीं प्रकट हुआ।

अपूर्वने कहा, "यह देखो, इन लोगोंने मेरा हाथ तोड़ दिया है। क्यों

तुम मुझे इन लोगोंके बीच खींच ले गई ?" उसकी बातका अन्तिम अंश अकस्मात् रोता-सा सुनाई दिया और रुँध-सा गया। भारती मसहरीको एक तरफ़से उठाकर उसके पास बैठ गई। उसने गौर करके देखा, बहुत देरतक कड़ी रस्सीसे बँधे रहनेके कारण कलाइयोंमें लहू जम गया है और सूजन आ गई है। उसकी आँखोंसे आँसू गिर रहे थे। भारतीने अपने आँचलसे उन्हें पोंछते और साहस देते हुए कहा, "कोई डरकी बात नहीं, मैं तौलिया भिगोकर लपेटे देती हूँ। दो-एक दिनमें ठीक हो जायगा।" यह कहकर वह उठके गई, नहानघरसे एक तौलिया भिगोकर ले आई और उससे कलाई बाँधकर स्निग्ध कंठसे बोली, "जरा सोनेकी कोशिश कीजिए, मैं आपके माथेपर हाथ फेरे देती हूँ।" यह कहकर वह धीरे धीरे हाथ फेरने लगी।

अपूर्वने रुँधे हुए गलेसे कहा, "कल जहाज जाता होता तो मैं कल ही चला जाता।"

भारतीने कहा, "अच्छी बात है, कल नहीं तो परसों चले जाइएगा। एक दिनमें आपका कोई अमंगल नहीं होगा।"

अपूर्व क्षण-भर चुप रहकर कहने लगा, "बड़ोंकी,—बड़े-बूढ़ोंकी बात नहीं माननेसे ऐसा ही होता है। माने मुझसे बार बार मना किया था।"

"मा शायद आपको यहाँ आने देना नहीं चाहती थीं ?"

"नहीं; सौ सौ बार मना किया था, पर मैंने नहीं सुना। उसका फल यह हुआ कि कुछ भयंकर लोगोंकी दृष्टिमें अबसे मैं हमेशाके लिए दुश्मन बना रहूँगा। खैर वह तो जो होना होगा, होगा; एक दफे भगवानका नाम लेकर जहाजपर बैठ-भर जाऊँ।" इतना कहकर सहसा उसने एक गहरी साँस ले ली; परन्तु, साथ ही साथ उससे भी सौ-गुनी गहरी साँस जो पासकी दूसरी व्यक्तिके हृदयकी जड़ तक निःशब्द तरंगित हो उठी, उसे वह जान भी न पाया।—और एक भी दिन देर न हो, भगवानका नाम लेकर जहाजपर बैठ-भर जाय, बस। बर्मा आना उसका सम्पूर्ण रूपसे निष्फल हुआ, घर जाकर इस देशके कुछ आदमियोंकी दुश्मनी ही उसे हमेशा याद रहेगी, परन्तु सब दृष्टियोंकी ओटमें किसीकी कुण्ठित दृष्टिकी प्रत्येक बूँदसे जो अमृत झरता रहा है,—उसकी शायद एक भी दिन उसे याद नहीं आयेगी!

अपूर्व कहने लगा, "इस मकानमें पैर रखते ही तुम्हारे पितासे झगड़ा हुआ,

अदालतमें जुरमाना तक भर आया जो इस जिन्दगीमें कभी नहीं हुआ था। उसीसे मुझे होश हो जाना चाहिए था; पर नहीं हुआ।"

भारती चुप थी, और चुप ही बनी रही। अपूर्व खुद भी क्षण-भर चुप रहा, और फिर अपने दुर्भाग्यका सूत्र पकड़कर कहने लगा, "तिवारीने मुझे बार बार सावधान किया था, 'बाबूजी, इनकी अलग जात है हमारी दूसरी जात है, ऐसा मत कीजिए।' पर तकदीरमें जो बदा था उसे कौन रोक सकता है, बताओ? नौकरी आखिर गई ही,—पाँच सौ रुपये महीने इस उम्रमें कितने आदमी पाते हैं? इसके सिवा, मैं लोगोंके सामने यह हाथ निकालूँगा कैसे?"

भारतीने धीरे-से कहा, "तब तक हाथका दाग मिट जायगा।"

इससे ज्यादा बात उसके मुँहसे निकली ही नहीं, अपूर्वके सिरपर जो हाथ फेर रही थी वह अचल-सा होने लगा; और इतने साधारण तुच्छ आदमीको मन ही मन प्यार करने लगनेकी शर्मके मारे वह अपने ही आगे गड़ गड़ गई। इस बातको उसके दलके अधिकांश लोग जान गये हैं। अपूर्वकी जान बचानेके कारण उनके सामने वह अपराधिनी और सुमित्राकी दृष्टिमें नीची हो गई है; फिर भी यह सोचकर उसने मन ही मन गर्वका भी अनुभव किया कि इस अति तुच्छ आदमीकी हत्या करनेके असम्मान और क्षुद्रतासे वह उनकी रक्षा कर सकी।

अपूर्वने कहा, "दाग जल्दी नहीं जायगा। कुछ समझमें नहीं आता कि कोई पूछेगा तो उसे क्या जवाब दूँगा।" परन्तु श्रोताकी तरफसे कोई अनुमोदन न पाकर वह खुद ही कहने लगा, "सब सोचेंगे कि मैं काम नहीं चला सका। इसीसे तो लोग कहा करते हैं कि हिन्दुस्तानी लोग बी० ए०, एम० ए० पास जरूर कर लेते हैं, पर बड़ा पद पाकर उसकी रक्षा नहीं कर सकते। मेरे कालेजके साथी मेरा तिरस्कार करेंगे, और मैं कुछ उत्तर न दे सकूँगा।"

"कुछ बना-बुनूकर उत्तर दे दीजिएगा। अच्छा, अब आप सोइए।"—यह कहकर भारती उठके खड़ी हो गई।

"और भी जरा हाथ फेर दो न भारती!"

"नहीं, मैं बहुत ही थकी हुई हूँ।"

"तो रहने दो, जाने दो। रात भी अब बाकी नहीं है।"

भारतीने बगलकी कोठरीमें जाकर देखा कि बत्ती अब भी टिमटिमा रही है और तिवारी चद्दर ओढ़े सो रहा है। पास ही टूटा-सा एक डेक-चेयर पड़ा था,

वह उसपर जाकर बैठ गई। अपूर्वके कमरेमें अच्छी आराम-कुरसी थी, पर उस तुच्छ आदमीको सामने रखकर एक ही कमरेमें रात बितानेमें आज उसे अत्यन्त लज्जा मालूम हुई। डेक-चेयरपर किसी तरह पीठ टेककर जब वह लेट गई, तब उसके मनमें न जाने कैसी उथल-पुथल होने लगी। इसके पहले इसी कमरेमें एकाधिक बार उसे चोट पहुँची है; पर आज की चोटके साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती। भारतीको पहले यही खयाल आया कि किस तरह और किसकी असीम करुणासे अपूर्व अवश्यम्भावी और आसन्न मृत्युसे बच गया, और अभी वह रात भी खत्म नहीं होने पाई कि यह इतनी बड़ी बातको बिलकुल भूल गया! इसने अपने मित्र तलवरकरके प्रति, अपनी समितिके प्रति और खासकर डाक्टरके प्रति कैसा जबर्दस्त अन्याय अपराध किया है, इस बातका इसे जरा भी खयाल नहीं। इसके लिए बड़ी नौकरी और हाथका दाग ही सबसे बढ़कर जरूरी बात हो गई। वहीं पड़े पड़े सहसा भारतीकी दृष्टि बढ़कर सामनेकी खुली खिड़कीकी तरफ चली गई, देखा कि सवेरा हो गया है। उसने चटसे उठकर दरवाजा खोल दिया; और नशा छूट जानेपर जिस तरह शराबी किसी बीभत्स, अस्वाभाविक, अप्रत्याशित स्थानसे मुँह ढककर भाग खड़ा होता है, उसी तरह वह जल्दी सीढ़ीसे उतरपर सड़कपर जा पहुँची।

२१

दूसरे दिन तीसरे पहर डाक्टरसे एक एक करके सारी घटनाओंका वर्णन करनेके बाद अन्तमें भारतीने कहा, "अपूर्व बाबू महान् आदमी हैं, यह समझनेकी गलती तो मैं एक दिनके लिए भी कभी नहीं की; पर वे इतने साधारण और इतने तुच्छ होंगे, इस बातकी मुझे धारणा नहीं थी।"

भारतीके कमरेमें खाटपर बैठे हुए सव्यसाची किसी किताबके पन्ने उलट रहे थे, उसकी तरफ देखकर गंभीर चेहरेसे बोले, "लेकिन मैं जानता था। आदमी इतना तुच्छ न होता तो क्या तुम्हारा इतना ज्यादा प्रेम इतने तुच्छ कारणसे ही हो जाता?—खैर जाने दो, जान बची, किसीको कुछका कुछ समझकर झूठमूठ दुःख उठा रही थीं, यही न?"

इधर उधर बिखरी हुई चीज-वस्तको,—खासकर जमीनपर बिखरे हुए पुस्तकोंके ढेरको देखते ही समझमें आ जाता था कि इसके पहले पुलिसकी

खानातलाशी हो चुकी है। उन्हें सम्हाल कर रखते हुए भारती बातें कर रही थी। उसने अपने हाथका काम बन्द करके आश्चर्यके साथ आँखें उठाकर कहा, "तुम हँसी कर रहे हो भइया?"

"नहीं।"

"जरूर।"

डाक्टरने कहा, "मुझ जैसे खतरनाक आदमीके मुँहसे, जो बम-पिस्तौल लिये सिर्फ आदमियोंका खून करता फिरता है, हँसी-मज़ाक़?"

भारतीने कहा, "मैंने तो यह नहीं कहा कि तुम आदमियोंका खून करते फिरते हो? यह काम तुमसे हो ही नहीं सकता। पर मज़ाक़के सिवा यह और क्या हो सकता है, बताओ? दो ही तीन घंटेके अन्दर जो और सब कुछ भूलकर सिर्फ हाथके दाग और पाँच सौ रुपयेकी नौकरी ही याद रख सका, उससे बढ़कर अधम, क्षुद्र व्यक्ति मैंने तो नहीं देखा। तुम कहा करते थे कि यह मेरा मोह है। अच्छी बात है, अगर यही बात हो, तो तुम आशीर्वाद दो कि मेरा वह मोह हमेशाके लिए दूर हो जाय, मैं पूरे तन-मनके साथ देशके काममें लग जाऊँ।"

डाक्टरके ओठ दबी हुई हँसीसे विकसित हो उठे, उन्होंने कहा, "तुम्हारे मुँहकी भाषा तो मोह दूर करनेके लिए ही है, इसमें सन्देह नहीं; पर मुश्किल यह है कि तुम्हारे कंठ-स्वरमें उसका आभास तक नहीं! खैर, वह चाहे जो हो भारती, पर तुमसे देशका काम तिल-भर भी नहीं हो सकता। तुमसे तो बल्कि अपूर्व बाबू ही अच्छे। लेन-देनका,—बालकी खाल निकालनेवाला विचार करते करते किसी दिन तुम लोगोंमें समझौता भी हो जा सकता है। —बल्कि, ऐसा ही करो तो अच्छा।"

भारतीने कहा, "इसके मानी, देशसे मैं प्रेम नहीं कर सकती?"

डाक्टरने हँसते चेहरेसे कहा, "काफी परीक्षा बगैर दिये कोई बात ठीक ठीक नहीं कही जा सकती बहन!"

भारती क्षण-भर स्थिर रहकर सहसा जोर देती हुई बोली, "इतना मैं आज कहे देती हूँ भैया, कि मैं तुम्हारी सभी परीक्षाओंमें उत्तीर्ण हो सकूँगी। तुम्हारे काममें इतने स्वार्थ, इतने सन्देह और इतनी क्षुद्रताके लिए स्थान नहीं है।"

उसकी उत्तेजना देखकर डाक्टर हँस दिये और वैसे ही सहज स्वभावसे

तकदीर ठोककर बोले, "हाय री तकदीर! देशके मानी तुमने समझ रक्खा है लम्बी चौड़ी जमीन, नद-नदी और पहाड़? एक अपूर्वको लेकर ही तुम्हें जीवनमें धिक्कार पैदा हो गया और वैरागिन होने चल दीं! यह नहीं जानतीं कि यहाँ सैकड़ों-हजारों अपूर्व और उनके बड़े भइया ही तो घूम-फिर रहे हैं! अरे, पराधीन देशका सबसे बड़ा अभिशाप यह कृतघ्नता ही तो है! जिनकी सेवा करोगी, वे ही तुम्हें सन्देहकी निगाहसे देखेंगे; जिनकी जान बचाओगी, वे ही तुम्हें बेच देना चाहेंगे! मूढ़ता और कृतघ्नता तुम्हें हर कदमपर सुईसी चुभती रहेंगीं। यहाँ न श्रद्धा है, न सहानुभूति है; कोई पास तक नहीं बुलायेगा, कोई सहायता देने नहीं आयेगा; जहरीला साँप समझकर सब दूर हट जायेंगे। देशसे प्रेम करनेका यही तो हम लोगोंके लिए पुरस्कार है भारती! इससे ज्यादा कुछ दावा करना चाहो, तो वह है परलोक। इतनी बड़ी भयंकर परीक्षा तुम किस लिए दोगी बहन? बल्कि, मैं तो तुम्हें असीस देता हूँ कि तुम अपूर्वके साथ सुखसे रहो— मैं निश्चित जानता हूँ कि वह अपनी तमाम दुबिधाओं और तमाम संस्कारोंको नीचे दबाकर किसी न किसी दिन तुम्हारी कीमत जरूर समझ जायगा।"

भारतीकी दोनों आँखें सहसा डबडबा आईं। परन्तु कुछ देर तक नीचेको निगाह किये चुप रहनेके बाद उसने प्रबल चेष्टासे अपनेको सम्हालकर पूछा "मुझपर विश्वास नहीं कर सकनेके कारण ही क्या तुम मुझे किसी तरह बिदा कर देना चाहते हो भइया?"

उसके इस अत्यन्त सरल और निःसंकोच प्रश्नका कोई ऐसा ही सीधा-सा उत्तर शायद डाक्टरकी जबानपर नहीं आया, उन्होंने हँसकर कहा, "तुम सरीखी रानी-बिटियाका ममत्व क्या कोई आसानीसे छोड़ सकता है? मगर, कल अपनी आँखोंसे ही तो देख चुकी हो कि इसमें कितनी दुबकाचोरी, कितनी ईर्ष्या, कितना मर्मान्तिक क्रोध सना हुआ है! तुम्हारी तरफ देखनेसे ही मालूम होता है कि इन सब कामोंके लिए तुम नहीं हो, तुम्हें इस काममें खींच लाना अच्छा नहीं हुआ। तुमसे मुझे सिर्फ एक दिन काम लेना है, उस दिन जिस दिन मेरे लिए छुट्टी लेनेका परवाना आ पहुँचेगा।"

अब भारतीके आँसू नहीं रुक सके। पर उसने उन्हें उसी वक्त हाथसे पोंछते हुए कहा, "इसमें तुम भी मत रहो भइया।"

उसकी बात सुनकर डाक्टर हँस दिये, बोले, "तुमने फिर बड़ी बेवकूफी की बात कह दी भारती।"

भारती शरमिन्दा नहीं हुई, बोली, "सो मालूम है, पर ये लोग बड़े भयंकर और निर्दयी हैं।"

"और मैं ?"

"तुम भी बड़े निष्ठुर हो।"

"सुमित्रा कैसी मालूम हुई भारती ?"

इस प्रश्नको सुनकर भारतीका सिर नीचा हो गया। मारे शर्मके वह कुछ उत्तर न दे सकी, पर उत्तरके लिए ताकीद भी नहीं थी। कुछ देरके लिए दोनों ही चुप रहे। ज्यादा देर नहीं, मगर सिर्फ इतनेहीसे मौनके अवकाशमें इस अत्याश्चर्यमय मनुष्यके उससे भी अधिक आश्चर्यमय हृदयकी रहस्यसे ढकी गहराईमें अकस्मात् बिजली-सी चमक गई।

परन्तु दूसरे ही क्षण डाक्टरने इस बातको दबा दिया। सहसा बच्चेकी तरह सिर हिलाकर स्निग्ध स्वरमें कहा, "अपूर्वके विषयमें तुमने बड़ा अन्याय किया है भारती। इतना बड़ा घातक काण्ड इसके भीतर है, इस बातकी उसे शायद कल्पना भी नहीं होगी। सच कहता हूँ तुमसे, इतना क्षुद्र वह हरगिज नहीं, नौकरी करने विदेश आया है, घरमें मा है, भाई हैं, देशमें बन्धु-बान्धव हैं; सांसारिक उन्नति करके दस-पाँचमें एक बनेगा, यही उसकी आशा है। पढ़-लिखकर परीक्षा पास की है, शरीफ घरका लड़का है, पराधीनताकी लज्जा वह अनुभव करता है। और हिन्दुस्तानी लड़कोंकी तरह वह भी वास्तवमें देशका कल्याण चाहता है। इसीसे, जब तुमने कहा कि अधिकार-समितिके सदस्य बनो, देशकी सेवा करो; तब उसने भी कह दिया, बहुत अच्छा। इस बातको वह निःसन्देह जानता था कि तुम्हारी बात माननेसे उसका अहित न होगा। इस विदेशमें आपद-विपदमें तुम्हीं उसकी एकमात्र सहारा थीं। मगर तुम ही उसे अचानक मौतके गढ़ेमें पटक दोगी, इस बातका उसे क्या पता था, बताओ ?"

भारतीने आँसू छिपानेके लिए मुँह नीचा करके कहा, "क्यों तुम उनके लिए इतनी वकालत कर रहे हो भइया ? वे इस काबिल नहीं हैं। जो बातें कल उनके मुँहसे सुनी हैं, उनके सुननेके बाद भी उनपर श्रद्धा रखना उचित नहीं।"

डाक्टर मुसकराते हुए बोले, "जिन्दगीमें यदि एक अनुचित काम कर ही डाला

तो क्या हुआ ?" यह कहकर थोड़ी देर स्थिर बैठे रहे, फिर बोले, "तुमने तो आँखोंसे देखा नहीं भारती, मैंने देखा है। उन लोगोंने जब उसे रस्सीसे बाँध दिया, तब वह अवाक् होकर देखता रह गया। उन लोगोंने पूछा, 'तुमने ये सब बातें कहीं हैं?' उसने गर्दन हिलाकर कहा, 'हाँ'। लोगोंने कहा, 'इसकी सजा है मृत्यु,—तुमको मरना होगा।' इसके उत्तरमें वह आँखें फैलाये देखता रह गया। मुझे तो मालूम था, उसकी विह्वल दृष्टि तब किसे ढूँढ़ रही थी। इसीसे तुम्हें बुलानेके लिए आदमी भेजा था, बहन! उसने तुमसे चाहे कुछ भी क्यों न कहा हो भारती, पर इस धक्केको अभी तक वह सम्हाल नहीं सका है।"

भारतीसे अब अपनेको सम्हाला न गया, टप टप आँसू टपकाती हुई बोली, "क्यों मुझे तुम ये सब बातें सुना रहे हो भइया? तुमसे बढ़कर आशंका और किसीके लिए नहीं हो सकती, उनके इस आचरणसे तुमसे ज्यादा खतरेमें और कोई नहीं पड़ा; फिर भी, तुमने मेरा मुँह देखकर उन्हें बचानेके लिए घर-बाहर सर्वत्र शत्रु पैदा कर लिये!"

"ओह! सो तो है ही!"

"तो किस लिए उन्हें तुमने बचाना चाहा, बताओ?"

"अपूर्वको बचाना चाहा? अरे नहीं, मैंने बचाना चाहा भगवानकी इस अमूल्य सृष्टिको। जो चीज तुम लोगोंके समान दो साधारण नर-नारीको केन्द्रित करके तैयार हुई है, उसकी क्या कोई कीमत आँकी जा सकती है जो ब्रजेन्द्र जैसे बर्बरोंके हाथ उसे नष्ट कर डालनेके लिए छोड़ देता?—सिर्फ इतनी ही बात थी भारती, सिर्फ इतनी-सी बात। नहीं तो आदमीकी जानकी कीमत हम लोगोंके लिए क्या है? एक कानी कौड़ीके बराबर भी नहीं।" इतना कहकर डाक्टर कहकहा मारकर हँसने लगे।

भारतीने आँखें पोछते हुए कहा, "तुम हँसते हो भइया! तुम्हारी हँसी देखकर मेरे आग लग जाती है। मेरी ऐसी तबीयत होती है कि तुम्हें आँचलमें बाँधकर जंगलमें ले जाकर हमेशाके लिए छुपा दूँ। जो लोग तुम्हें पकड़के फाँसी देंगे, वे क्या तुम्हारी कीमत जानते हैं? उन्हें क्या मालूम होगा कि दुनियाका कितना बड़ा सत्यानाश कर डाला उन लोगोंने? अपने ही देशके आदमी तुम्हारे खूनके प्यासे हैं,—वे कितनी ही बातें बका करते

हैं। लेकिन मैं सोचती हूँ, हृदयमें इतना स्नेह, इतनी करुणा लिये हुए तुम कैसे इन लोगोंके साथ हो ?"

अबकी बार डाक्टर दूसरी तरफ देखने लगे, सहसा उनसे कोई जवाब देते नहीं बना। कुछ देर बाद इधर मुँह फेरकर उन्होंने हँसनेकी कोशिश की, पर अब वह स्वच्छन्द सुन्दर हँसी उनके मुँहपर आई नहीं। बात की, पर उनके उस सहज कंठ-स्वरमें न जाने कहाँसे एक अपरिचित भार आकर जम गया, बोले, "निष्ठुरतासे क्या कभी,—लेकिन रहने दो ये सब बातें। तुम्हें एक किस्सा सुनाता हूँ। नीलकान्त जोशी नामके एक मराठा युवकको तुमने देखा नहीं, पर मैंने जबसे उसे देखा तबसे सिर्फ उसीकी याद आती रहती है।—रास्तेसे कोई मुर्दा निकलता देखता तो उसकी आँखोंसे आँसू टपकने लगते। एक दिन रातको हम दोनों कोलम्बोके एक पार्कमें रेलिंग फाँदकर छिप रहे। पेड़के नीचेकी एक बेञ्चपर सोनेके लिए पहुँचे तो देखा कि उसपर एक आदमी पड़ा है। आहट पाते ही वह 'पानी पानी' करने लगा। चारों तरफ जोरकी बदबू आ रही थी,—दियासलाई जलाकर उसका चेहरा देखा तो साफ मालूम हो गया कि उसे हैजा है। नीलकान्त उसकी तीमारदारीमें लग गया। पौ फटने लगी तो मैंने कहा, 'जोशी, यह रोगी रातके अँधेरेमें किसी तरह पियादेकी निगाहसे बचकर पार्कमें रह गया है, पर सबेरा होनेपर यहाँ नहीं रह सकेगा। वारण्टके आसामी हैं हम लोग,—यह तो मरेगा ही, साथ साथ हमें भी मरना पड़ेगा। चलो, खिसक चलें यहाँसे।' नीलकान्त रोने लगा, 'इस हालतमें इसे कैसे छोड़ जायँ भाई,—इससे बल्कि अच्छा है कि तुम चले जाओ, मैं रह जाऊँ।' बहुत समझाया, पर उसे वहाँसे हिला ही नहीं सका।"

भारतीने भयभीत होकर कहा, "क्या हुआ फिर ?"

"वह रोगी विचारवान् था, सबेरा होनेके पहले ही उसने आँखें मींच लीं। तब कहीं जोशी वहाँसे हिल सका।"

क्षण-भर मौन रहकर, एक गहरी साँस लेकर डाक्टर फिर कहने लगे, "सिंगापुरमें जोशीको फाँसी हो गई। पल्टनके सिपाहियोंके नाम बता देनेसे उसकी फाँसी माफ हो जाती, सरकारकी तरफसे बहुत तरहकी कोशिशें भी हुईं, मगर जोशीने एक बार जो गर्दन हिलाकर कहा, 'मैं नहीं जानता' तो फिर

उसमें कोई रद्दो-बदल हुआ ही नहीं। लिहाजा राज्यके कानूनके माफिक उसे फाँसी दे दी गई। और मजा यह कि जिन लोगोंके लिए उसने प्राण दिये, उन्हें वह अच्छी तरह पहचानता भी नहीं था।—अब भी ऐसे लड़के इस देशमें पैदा होते हैं भारती, नहीं तो बाकी जिन्दगी तुम्हारे आँचलके नीचे छिपे छिपे बिता देनेको मैं राजी हो जाता!"

उत्तरमें भारतीने सिर्फ एक गहरी उसाँस ले ली। डाक्टरने कहा, "नर-हत्या करना मेरा व्रत नहीं है बहन, तुमसे सच कहता हूँ, ऐसा मैं नहीं चाहता।"

"चाहते नहीं,—यह ठीक है, पर जरूरत आ पड़नेपर?"

"जरूरत आ पड़नेपर? मगर, ब्रजेन्द्रकी और सव्यसाचीकी जरूरत तो एक नहीं हो सकती भारती?"

भारतीने कहा, "सो मैं जानती हूँ। मैं तुम्हारी आवश्यकताकी बात ही पूछ रही हूँ भइया?"

प्रश्न सुनकर डाक्टर कुछ देर चुप रहे। ऐसा जान पड़ा जैसे उत्तर देनेमें उन्हें दुबिधा हो रही हो। उसके बाद कुछ कुछ अन्यमनस्क-से होकर धीरेसे बोले, "कौन जानता है, कब मेरा वह परम आवश्यकताका दिन आयेगा। मगर जाने दो,—भारती, यह तुम मत जानना चाहो। उसका रूप तुमसे कल्पनामें भी नहीं सहा जायगा, बहन।"

भारती इस इशारेको समझकर मन ही मन सिहर उठी, बोली, "इसके सिवा क्या और कोई रास्ता नहीं?"

"नहीं।"

उनके मुँहके इस संशय-लेश-हीन बेधड़क उत्तरको सुनकर भारती हत-बुद्धि-सी हो गई, पर भयंकर 'नहीं' को वह वास्तवमें सह नहीं सकी। व्याकुल होकर कहने लगी, "इसके सिवा और कोई मार्ग ही न हो, ऐसा हो ही नही सकता भइया।"

डाक्टर मुसकराते हुए बोले, "नहीं, रास्ता है क्यों नहीं, अपनेको बहलानेके बहुतसे रास्ते खुले पड़े हैं भारती, मगर सत्य तक पहुँचनेके लिए और कोई रास्ता नहीं।"

भारती इसे मंजूर नहीं कर सकी। शान्त मृदु-कंठसे बोली, "भइया, तुम अपार ज्ञानी हो, इस एक-मात्र लक्ष्यको स्थिर रखकर दुनिया-घूम आये हो,

अन्न-वस्त्र चाहिए। भगवानके इतने बड़े सत्यपर पहुँचनेके लिए इस निष्ठुर मार्गके सिवा और कोई मार्ग खुला ही नहीं है, यह मैं किसी तरह भी नहीं सोच सकती। संसार घूमकर तुम सिर्फ यही खबर जान आये हो,—सृष्टिके आरम्भके दिनसे स्वाधीनताके सैकड़ों हजारों तीर्थ-यात्रियोंके चलते रहनेसे इसी मार्गका चिह्न शायद तुम्हारी दृष्टिमें स्पष्ट दिखाई दे रहा है; परन्तु विश्व-मानवकी एकाग्र शुभ बुद्धि,—उसकी अनन्त बुद्धिकी धारा क्या ऐसी खत्म हो गई है कि वह इस रक्त-रेखाके सिवा और किसी मार्गकी टोह आगे कभी लगा ही नहीं सकेगी? ऐसा विधान किसी भी हालतमें सत्य नहीं हो सकता। भइया, मनुष्यताकी इतनी बड़ी परिपूर्णता तुम्हारे सिवा मैंने और कहीं भी नहीं देखी है,—निष्ठुरताके इस बार बार चले हुए मार्गसे तुम अब मत चलो। वह द्वार शायद आज भी बन्द होगा, उसे तुम लोगोंके लिए खोल दो जिससे हम लोग इस संसारमें सभीसे प्रेम करते हुए उस मार्गका अनुसरण करके चलते रहें।"

डाक्टर म्लान चेहरेसे जरा हँसकर उठ खड़े हुए। फिर भारतीके सिरपर हाथ रखकर दो-चार बार धीरे धीरे थपकियाँ देकर बोले, "अब समय नहीं रहा बहन, मैं चल दिया।"

"कोई जवाब नहीं दे गये भइया?"

उत्तरमें डाक्टरने सिर्फ इतना कहा, "भगवान् तुम्हारा भला करें।"

यह कहकर वे धीरे धीरे बाहर चले गये।

२०

जल-पथसे शत्रुपक्षीय जहाज रोकनेके लिए नदीके किनारे शहरके अन्तमें एक छोटा-सा मिट्टीका किला है। वहाँ सिपाही-संत्री ज्यादा नहीं रहते, सिर्फ बैटरी चलानेके लिए कुछ गोरे गोलन्दाज बैरकमें रहा करते हैं। इन निर्विघ्न शान्तिके दिनोंमें वहाँ विशेष कड़ाई नहीं थी। जानेकी मनाही है, लिहाजा कोई अन्यमनस्क राहगीर अगर उस हदमें पहुँच जाता है तो उसे भगा देते हैं, बस इतना ही। इसीके एक किनारे पेड़-पौधोंके बीच पत्थरका एक घाट-सा बना है,—शायद किसी उच्च राज-कर्मचारीके आगमनके उपलक्षमें बना होगा; मगर अभी उससे काम भी नहीं, जरूरत भी नहीं।

भारती कभी कभी अकेली आकर यहाँ बैठा करती है। यह बात नहीं कि किलेकी रक्षाका भार जिनपर था उन लोगोने उसे देखा न हो, पर शायद स्त्री होनेसे और शरीफ घरकी स्त्री होनेसे उन लोगोंने कोई आपत्ति नहीं की थी। अभी अभी सूर्यास्त हुआ है, पर अँधेरा होनेमें अभी देर थी। नदीके कुछ हिस्सेपर और उस पारके पेड़ोंपर सूर्यकी अन्तिम स्वर्णाभा फैल रही थी। पक्षियोंके झुंडके झुंड इधर उधर उड़ रहे थे,—कौओंकी काली देहपर, बगलोंके सफेद पंखोंपर, घुग्घुओंके पाण्डुर शरीरपर आकाशका रंगीन प्रकाश ऐसा मालूम हो रहा था जैसे वे किसी अनजान देशके नये जीव हों। भारती उनकी अबाध स्वच्छन्द गतिको निर्निमेष देख रही थी। मालूम नहीं, इनके घोंसले कहाँ हैं, मगर उस अलक्ष्य आकर्षणको वे छोड़ नहीं सकते। इस बातका खयाल करके भारतीकी आँखोंमें सहसा आँसू भर आये। उन्हें हाथसे पोंछकर उसने दूरकी तरफ देखा : उस पार वृक्ष-श्रेणियोंकी सुनहरी दीप्ति बुझती आ रही है और पेड़ोंकी लम्बी छाया पड़ती रहनेसे नदीका पानी काला होता जा रहा है। उसीमेंसे अन्धकार मानो अपनी लम्बी जीभ निकालकर सामनेके सारे उजालेको चुपचाप चाटता जा रहा है।

सहसा नदीके दाहिनी तरफके मुहानेसे एक छोटी-सी शैम्पेन नाव सामने आकर लग गई। नावमें मल्लाहके सिवा और कोई नहीं था। मल्लाह चटगाँवका मुसलमान-सा जान पड़ा। क्षण-भर भारतीके चेहरेकी तरफ देखकर उसने अपनी दुर्बोध चटगाँवी भाषामें कहा, "अम्मा, उस पार जाओगी? एक आनेमें ही पार कर दूँगा।"

भारतीने हाथ हिलाकर कहा, "नहीं, मैं उस पार नहीं जाऊँगी।"

मल्लाह बोला, "अच्छा दो ही पैसा देना, चलो।"

भारतीने कहा, "नहीं बाबा, तुम जाओ। मेरा घर इसी पार है, उस पार जानेकी मुझे जरूरत नहीं।"

मल्लाह गया नहीं, जरा हँसकर बोला, "पैसा न हो तो मत देना, चलो तो सही, तुम्हें जरा घुमा लाऊँ।" इतना कहकर वह घाटसे नाव लगाने लगा। भारती डर गई। पेड़-पौधोंसे घिरी हुई अँधेरी और सुन-सान जगह थी। बहुत दिनसे रह रही थी, इसलिए वह इन लोगोंकी भाषा बोल न सकने पर भी समझ लेती थी और यह भी जानती थी कि चटगाँवके ये मुसलमान मल्लाह

बड़े शैतान होते हैं। वह चटपट उठके खड़ी हो गई, और गुस्सेके स्वरमें बोली, " तुम जाओ यहाँसे, नहीं तो बुलाती हूँ मैं पुलिसको ! "

उसकी ऊँची आवाज और तीक्ष्ण दृष्टिसे शायद चटगाँवी मुसलमान डर गया, और जहाँका तहाँ रुक गया। भारतीने उसकी तरफ गौरसे देखा : उसकी उम्र तो होगी लगभग पचासकी, पर अभी तक शौक नहीं गया। बेल-बूटेदार लुंगी पहने हुए है जो तेलसे अत्यन्त मैली-चिकटी हो रही है,—शायद किसी पुराने कपड़े बेचनेवालेकी दूकानसे ली हुई है। सिरपर बेलदार टोपी है सामनेकी ओर झुकी हुई। उसकी तरफ रोष-भरी आँखोंसे देखते देखते कुछ ही क्षण बाद भारती हँस पड़ी, बोली, " भइया, चेहरा तो खैर तुमने बदला ही है, पर गलेकी आवाज तक बदलकर ठीक मुसलमानी कर डाली है!"

मल्लाहने कहा, " आऊँ, या पुलिस बुलाओगी ? "

भारतीने कहा, " पुलिस बुलाकर तुम्हें पकड़वा देना ही ठीक है। अपूर्व बाबूकी इच्छाको फिर अपूर्ण क्यों रक्खा जाय ? "

मल्लाहने कहा, " उन्हींकी बात बताता हूँ, आओ। ज्वार अब ज्यादा देर नहीं रहेगा, अभी दो कोस जाना है। "

भारतीके बैठ जानेपर डाक्टरने नाव छोड़ दी, और वे पक्के मल्लाहकी तरह ही उसे तेजोसे ले जाने लगे, मानो दोनों हाथोंसे दो डॉड़ चलाना ही उनका पेशा हो। बोले, " लामा जहाज चला गया, देखा ? "

भारतीने कहा, " हाँ। "

डाक्टरने कहा, " अपूर्व इसी तरफ फर्स्ट क्लास डेकपर खड़े थे दिखाई दिये ? "

भारतीने गर्दन हिलाकर कहा, " नहीं। "

डाक्टरने कहा, " उनके घर या आफिसमें तो मैं जा नहीं सकता था, इस लिए जेटीके एक किनारे शैम्पेन बाँधकर उसपर खड़ा हो गया था। हाथ उठाकर सलाम करते ही—"

भारतीने व्याकुल होकर कहा, " किसके लिए, किस लिए इतना बड़ा खतरनाक काम तुम करने गये भइया ? जान क्या तुम्हारे लिए बिलकुल ही हँसी-खेल है ? "

डाक्टरने सिर हिलाकर कहा, " नहीं, हरगिज नहीं। और पूछती हो कि गया

किस लिए ? ठीक उसी लिए जिस लिए कि तुम यहाँ चुपचाप अकेली बैठी हो बहन।"

भारती अपनी उठती हुई रुलाईको रोक न सकी, रो दी, और बोली, "कभी नहीं। यहाँ मैं आज ही नहीं आई हूँ। अकसर आया करती हूँ। और किसीके लिए नहीं आई।—वे तुम्हें पहचान सके ?"

डाक्टरने हँसकर कहा, "नहीं, बिलकुल नहीं। यह विद्या मुझे खूब अच्छी तरह आती है,—इन डाढ़ी-मूछोंको ताड़ लेना आसान काम नहीं; पर मेरी बड़ी तबीयत हुई कि अपूर्व बाबू मुझे पहचान लें। मगर वे इतने व्यस्त थे कि उन्हें देखनेकी फुरसत ही नहीं हुई।"

भारती चुपचाप देखती रही और उसके अत्यन्त उत्सुक मुँहकी ओर देखकर क्षण-भरके लिए डाक्टर भी चुप हो रहे।

भारतीने पूछा, "फिर क्या हुआ ?"

डाक्टरने कहा, "विशेष कुछ नहीं।"

भारतीने कोशिश करके जरा हँसकर कहा, "विशेष कुछ जो नहीं हुआ, सो, मेरा सौभाग्य है। पहचान लेते पकड़वा देते, और उस अपमानसे बचनेके लिए मुझे आत्म-हत्या करनी पड़ती। नौकरी गई सो गई, जान तो बच गई!"—इतना कहकर उसने उस पार दूर तक दृष्टि पसारकर एक गहरी साँस ले ली।

डाक्टर चुपचाप नाव खेते हुए जाने लगे। कुछ देर मौन रहनेके बाद भारती सहसा पूछ उठी, "क्या सोच रहे हो भइया ?"

"बताओ देखू ?"

"बताऊँ ? तुम सोच रहे हो कि भारती लड़की होकर भी आदमीको मुझसे बहुत ज्यादा पहचान सकती है। अपने प्राण बचानेके लिए कोई भी शिक्षित आदमी इतनी बड़ी क्षुद्रता कर सकता है,—लज्जा नहीं, कृतज्ञता नहीं, ममता माया नहीं,—खबर नहीं दी, खबर लेनेकी कोशिश भी नहीं की,—डरके मारे एकदम जानवरकी तरह भागकर चले गये,—इस बातकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था मगर भारती निःसन्देह जान गई थी!—ठीक यही न ? सच कहना!"

डाक्टर गर्दन फेरकर बिना कुछ उत्तर दिये डाँड़ खेते हुए जाने लगे। कुछ भी नहीं बोले।

"मेरी तरफ एक बार देखो न भइया।"

डाक्टरके मुँह फेरते ही भारतीके दोनों ओठ थर थर काँपने लगे, बोली, "मनुष्य होकर मनुष्यताकी कोई बात ही नहीं,—यह कैसे हो सकता है भइया? इतना कहकर उसने दाँतोंसे जबर्दस्ती ओठोंका काँपना रोक लिया मगर आँखोंके कोनोंसे झरते हुए आँसुओंको वह न रोक सकी।

डाक्टरने उसकी बातका अनुमोदन नहीं किया, प्रतिवाद भी नहीं किया, सान्त्वनाकी एक बात भी नहीं कही। सिर्फ एक लहमे-भरके लिए ऐसा मालूम हुआ जैसे उनकी सुरमा-शुदा आँखोंकी दीप्ति कुछ मद्धिम पड़ गई हो।

इरावतीकी यह शाखा-नदी ज्यादा गहरी और चौड़ी नहीं है, इसलिए इसमें साधारणः स्टीमर या बड़ी नाव नहीं चला करती। मल्लाहोंकी छोटी छोटी मछली पकड़नेकी नावें ही बीच-बीचमें किनारेपर बँधी दिखाई दीं, पर उनमें कोई आदमी नहीं था। सिरके ऊपर आकाशमें तारे दिखाई देने लगे हैं, नदीका पानी स्याह पड़ गया है, निर्जनता और परिपूर्ण निस्तब्धतामें डाक्टरके हाथसे सावधानीसे चलते हुए डाँड़ोंके हलके शब्दके सिवा और कहीं भी कोई शब्द नहीं सुनाई देता। दोनों किनारोंके पेड़ोंकी पंक्तियाँ सामने एक होकर मिल गई हैं। उसीके घने फैले हुए शाखा-पल्लवोंके अन्धकारमें अपनी सजल दृष्टिको स्थिर किये भारती चुपचाप बैठी थी। उनकी शैम्पेन किस तरफ कहाँ जा रही थी, भारतीको कुछ पता नहीं; और जाननेलायक उत्सुक सचेतन अवस्था भी उसके मनकी नहीं थी। सहसा नाव जब एक बड़े भारी पेड़की ओटमें वृक्षलता आदिसे छिपे हुए नालेमें घुसने लगी, तब उसने चौंककर पूछा, "मुझे कहाँ ले जा रहे हो?"

डाक्टरने कहा, "अपने डेरेपर।"

"वहाँ और कौन है?"

"कोई नहीं।"

"मुझे कब वापस पहुँचा दोगे?"

"पहुँचा दूँगा। आज रातको न पहुँचा सका तो कल सबेरे चली जाना।"

भारतीने कहा, "नहीं भइया, सो नहीं होगा। तुम मुझे जहाँसे लाये हो, वहीं पहुँचा दो।"

"मगर मुझे तुमसे बहुत-सी बातें जो कहनी हैं भारती!

भारती इसका कोई जवाब दिये बगैर उसी तरह सिर हिलाती हुई बोली, “ नहीं, तुम मुझे वापस पहुँचा आओ । ”

“ मगर किस लिए भारती ? मुझपर विश्वास नहीं होता है क्या ? ”

भारती नीचेको निगाह किये चुप बैठी रही ।

डाक्टर कहने लगे, “ ऐसी कितनी ही रातें तुमने अपूर्वके साथ अकेले बिताई हैं, सो वह क्या मुझसे भी ज्यादा विश्वासका पात्र है ? ”

भारती उसी तरह चुपकी बैठी रही, 'हाँ' या 'ना' कुछ भी नहीं बोली। नालेकी यह जगह जैसी अन्धकारमय थी वैसी ही कम चौड़ी। बीच बीचमें दोनों किनारोंके पेड़ोंकी डालियाँ देहसे आ-आकर छूने लगीं। उधर नदीमें भाटेका खिंचाव शुरू हो गया था जिससे पानी उलटा जा रहा था। डाक्टरने लालटेन निकाल कर जलाई और बीचमें रख दी। फिर लग्गीसे नावको ढकेलते हुए कहा, “ आज तुम्हें जिस जगह लिये जा रहा हूँ, भारती, दुनियामें ऐसा कोई नहीं जो वहाँसे तुम्हारा उद्धार कर सके।—अब तुम्हें मेरे मनकी बात समझनेमें कुछ बाकी न रहा होगा। ” और वे कहकहा मारकर एकाएक हँस पड़े। अँधेरेमें भारती उनका चेहरा नहीं देख सकी, किन्तु उनकी हँसीके स्वरमें किसीने मानो किसीको धिक्कार-सा दिया। भारतीने मुँह उठाकर निःशंक स्वरमें कहा, “ तुम्हारे मनकी बात समझ सकूँ, इतनी बुद्धि मुझमें नहीं है । पर तुम्हारे चरित्रको मैं पहचानती हूँ। मुझे अकेला रहना उचित नहीं है भइया, इसीसे यह बात कही थी, मुझे तुम क्षमा करो।”

डाक्टरने कुछ देर निस्तब्ध रहकर स्वाभाविक स्वरमें कहा, “ भारती, तुम्हें छोड़कर जानेमें मुझे कष्ट होता है। तुम मेरी बहन हो, मेरा जीजी हो, मेरी मा हो,—अपनेपर इतना विश्वास न होता तो मैं इस रास्तेपर पैर भी नहीं रखता। पर इस संसारमें मेरे सिवा ऐसा और कोई नहीं जो तुम्हारी कीमत दे सके : इसका शतांश भी अगर अपूर्व किसी दिन समझ सकता, तो उसका जीवन सार्थक हो जाता। जीजी, तुम संसारमें लौट जाओ, हम लोगोंमें अब मत रहो। सिर्फ तुम्हारी बात कहनेके लिए ही आज मैं अपूर्वसे मिलने गया था।”

भारती चुप रही।—आज एक शब्द भी कहे बगैर अपूर्व चला गया,—नौकरी करनेके लिए वह बर्मा आया था, कुछ ही दिनोंका तो परिचय था। वह निष्ठावान् ब्राह्मणका लड़का है, उसके देश है, समाज है, घर-द्वार है, आत्मीय-

स्वजन हैं और न जाने क्या क्या है। और भारती है अस्पृश्य ईसाईकी लड़की, जिसके देश नहीं, घर नहीं, मा-बाप नहीं, अपना कहनेके लिए कोई भी नहीं। यह परिचय अगर खत्म ही हो गया हो तो इसमें शिकायतकी कौन-सी बात है?—भारती वैसी ही चुपचाप स्थिर बैठी रही, सिर्फ अँधेरेमें उसकी दोनों आँखोंसे आँसू गिरने लगे।

सामने पास ही पेड़-पौधोंके बीच जरा उजाला-सा नजर आया। डाक्टरने उस तरफ इशारा करके कहा, "वह रहा मेरा डेरा। जरा-सा मुड़ते ही उसके आगे जा उतरूँगा।—पहले बड़ा स्वतंत्र था, अब न जाने कैसी एक ममतामें पड़ गया हूँ भारती। तुम्हारे लिए मुझे बड़ा सोच है। जानेके पहले सिर्फ इतना देख जाना चाहता था कि तुम्हें एक निरापद आश्रय मिल गया।"

भारतीने आँचलसे आँसू पोंछ डाले और कहा, "मैं तो अच्छी तरह ही हूँ भइया!"

डाक्टरने एक गहरी साँस ले ली। यह बात इतनी असाधारण थी कि भारतीके कानमें जाकर चुभ-सी गई।

डाक्टरने कहा, "कहाँ अच्छी तरह हो बहन?—मेरे आदमीने आकर कहा, तुम घरमें नहीं हो। सोचा, जेटीमें कहीं तुम बैठी मिल जाओगी; वहाँ गया भी, पर उसी वक्त निश्चय हो गया कि नदीके किनारे ही कहीं न कहीं तुम मिल जाओगी।—अभागा सिर्फ तुम्हारा आनन्द ही चुराकर नहीं भागा भारती, तुम्हारा साहस तक नष्ट कर गया है।"

इस बातका पूरा मतलब न समझ सकनेके कारण भारती चुप हो रही। डाक्टर कहने लगे, "उस दिन निश्चिन्त मनसे मेरे लिए बिस्तर छोड़कर तुम नीचे सो गई थीं। हँसके बोली थीं, 'भइया, तुम क्या आदमी हो जो तुमसे शर्म या डर लगेगा। तुम सो जाओ।' पर आज तुममें वह साहस नहीं रहा। यद्यपि अपूर्व विशेष निर्भर करने-लायक आदमी नहीं है, फिर भी, पास ही था इसलिए कल भी शायद ऐसी आशंका तुम्हारे मनमें नहीं आई। आश्चर्य तो यह है कि तुम जैसी लड़कीकी निर्भय स्वाधीनताको भी उस जैसा एक अक्षम आदमी कितनी आसानीसे तोड़-फोड़ जा सकता है!"

भारतीने मृदु स्वरमें कहा, "पर उपाय क्या है भइया?"

डाक्टरने गर्दन हिलाकर कहा, "उपाय शायद न भी हो। पर मैं सोचता

हूँ बहन, तुम्हारे चरित्रपर सन्देह करनेवाला आज कोई पासमें नहीं है, इसलिए अगर तुम्हारा अपना ही मन दिन-रात तुमपर सन्देह करता फिरे, तो तुम जीओगी कैसे ? इस तरह तो कोई भी जी नहीं सकता भारती ! ”

भारतीने अपनेको कभी इस तरह विश्लेषण करके नहीं देखा था। उसके पास समय ही कहाँ था ? डाक्टरकी बात सुनकर उसकी श्रद्धा और आश्चर्यकी सीमा न रही; परन्तु वह चुप ही बनी रही।

डाक्टर कहने लगे, “ मैं और एक लड़कीको जानता हूँ, वह रूसकी है। लेकिन उसकी बात जाने दो। कब तुम लोगोंसे भेंट होगी मालूम नहीं, पर मालूम होता है कि होगी जरूर। विधाता करें कि हो। तुम्हारे प्रेमकी तुलना नहीं है, तुम्हारे हृदयसे अपूर्वको कोई नहीं हटा सकता; परन्तु अपनेको उसके ग्रहण-योग्य बना रखनेकी जो जीवन-व्यापी अति-सतर्क साधना आजसे शुरू होगी, उसकी रोजमर्राके असम्मानकी ग्लानि तुम्हारे मनुष्यत्वको एकदम बिगाड़ न दे भारती ! हाय रे ! ऐसे चिर-शुद्ध हृदयका जहाँ मूल्य नहीं,— शरीरकी शुद्धता ही जहाँ सब कुछ है, वहाँ अपनेको इसी तरह बहलाना पड़ता है। कमलको चबाकर खाये बगैर जिन्हें तृप्ति नहीं होती,—शारीरिक भोग ही जिनका चरम लक्ष्य है, उनसे इसी तरह देहकी शुद्धताकी कीमत कान पकड़कर वसूल की जाती है ! हो भी जाय शायद। मालूम नहीं, तकदीरमें जानेकी मियाद और कितने दिनकी है, लेकिन अगर हो, तो ‘ बहन ’ कहकर गर्व करनेको तब सव्यसाचीके पास और कुछ बच नहीं रहेगा। ”

भारतीने पूछा, “ तो मुझे तुम क्या करनेको कहते हो ? तुम्हीं तो मुझसे बार बार संसारमें लौट जानेको कह रहे थे। ”

“ लेकिन सिर नीचा करके जानेके लिए तो नहीं कहा। ”

भारतीने कहा, “ मगर स्त्रियोंका ऊँचा सिर कोई पसन्द नहीं करता भइया।”

डाक्टरने कहा, “ तो मत जाना। ”

म्लान चेहरेसे हँसकर बोली, “ इस विषयमें तुम निश्चिन्त रहना भइया, जाना मेरा नहीं होगा। सारे रास्ते अपने हाथसे बन्द करके सिर्फ एक ही रास्ता खुला रक्खा था वह भी आज बन्द हो गया, यह तो तुम अपनी आँखोंसे देख ही आये हो। अब, जो रास्ता तुम मुझे दिखा दोगे, उसी रास्तेसे चलूँगी। सिर्फ इतनी विनती मानना मेरी, तुम अपने भयंकर रास्तेपर मुझे मत बुलाना।

भगवान् जैसे दुर्लभ पदार्थको पानेके भी जब इतने रास्ते निकले हैं, तब सिर्फ तुम्हारे लक्ष्यपर पहुँचनेके लिए क्या और दूसरा मार्ग नहीं ? मेरा दृढ़ विश्वास है कि मनुष्यकी बुद्धि अभी बिलकुल खत्म नहीं हो गई है,—कहीं दूसरा रास्ता अवश्य होगा। अबसे मैं उसीकी खोजमें निकलूँगी। भयंकर दुःख क्या चीज है, सो उस रातको मुझे मालूम हो गया है। "

डाक्टर मुसकरा दिये, बोले, "यही मेरा डेरा है।" तथा नावको जोर लगाकर ऊपर तक ले गये और उतर पड़े। लालटेनसे रास्ता दिखाते हुए बोले, "जूते खोलकर उतर आओ। पाँवोंमें जरा कीचड़ लगेगा।"

भारती चुपके-से उतर पड़ी : चार-पाँचेक मोटी मोटी सागोनकी लकड़ीकी खूँटियाँ गाड़कर पुराने और नाकाम तख्तोंसे एक घर-सा बना लिया गया है। ज्वारका पानी उतर जानेसे नीचे कीचड़ जम गया है, पेड़-पौधों और पत्तोंकी सड़ाँदसे चारों तरफ बदबू ही बदबू हो रही है। सामने दो-ढाई हाथ चौड़े रास्तेके सिवा चारों तरफ ऐसा जंगल खड़ा है कि साँप बिच्छूकी तो कौन कहे, शेर भालू और हाथी तक छिपे रहें तो पता न चले। आँखोंसे बगैर देखे इस बातकी कल्पना करना भी असम्भव है कि इसके भीतर कोई आदमी रह सकता है, मगर इस आदमीके लिए दुनियामें सब-कुछ सम्भव है।

टूटी-फूटी लकड़ीकी सीढ़ीसे रस्सी पकड़कर ऊपर पहुँचनेपर जब एक सात-आठ सालके बच्चेने आकर किवाड़ खोले तो भारती मारे आश्चर्यके दंग रह गई। भीतर पैर रखते ही देखा कि जमीनपर चटाई बिछाये एक कम उम्रकी बर्मी स्त्री पड़ी सो रही है, तीन-चार बच्चे इधर उधर फिर रहे हैं जिनमेंसे एकने घरमें टट्टी भी फिर रक्खी है और शायद अनावश्यक समझकर ही जिसे साफ नहीं किया गया है। एक दुःसह दुर्गंधसे साराका सारा वायुमंडल विषाक्त हो उठा है। जमीनपर चारों तरफ भात, दाल और प्याज-लहसनके छिलके पड़े हैं। पास ही एक तरफ दो-तीन काली-कलूटी मिट्टीकी छोटी-बड़ी हँड़ियाँ पड़ी हैं, और लड़के उन्हींमें हाथ डाल कर खा और बिगाड़ रहे हैं। यहींसे होकर भारती डाक्टरके पीछे पीछे आगेकी कोठरीमें पहुँची। कहीं कोई असबाब नहीं था : जमीनपर चटाई बिछी है, एक तरफ एक दरी सिमटी हुई रक्खी है। डाक्टरने दरीको बिछाते हुए कहा, "बैठो भारती।" भारती चुपके-से बैठ गई। देखा कि वही परिचित भारी बकुचा

एक किनारे पड़ा है। अर्थात् सचमुच ही यह डाक्टरका वर्तमान-वास-स्थान है। इधरकी कोठरीसे उस बर्मी स्त्रीने कुछ पूछा और डाक्टरने बर्मी भाषामें ही उसका जवाब दिया। थोड़ी देर बाद वह लड़का आकर थोड़ा-सा भात और तरकारी वगैरह एक तरफ रख गया। नावकी लालेटन डाक्टर अपने साथ ही ले आये थे। उसके उजालेमें इन सब खाने-पीनेकी चीजोंको देखकर भारतीका जी मिचलाने लगा।

डाक्टरने कहा, "तुम्हें भी शायद भूख लगी होगी, लेकिन यह सब—"

भारतीके मुँहसे बात नहीं निकली, पर उसने जोरसे सिर हिलाकर जता दिया: नहीं नहीं, बिलकुल नहीं।—वह ईसाईकी लड़की है, जाति-भेद नहीं मानती, पर जहाँसे ये सब चीजें लाई गई हैं उस स्थानको तो वह इसके पहले ही देख आई है।

डाक्टरने कहा, "मुझे लेकिन बड़ी जोरकी भूख लग रही है बहन, पहले जरा पेट भर लूँ।"

इतना कहकर वे हाथ धोकर प्रसन्नताके साथ खाने बैठ गये। भारतीसे उस तरफ देखा भी नहीं गया, घृणा और असीम वेदनासे उसने मुँह फेर लिया। उसकी छातीके भीतरसे रुलाई मानो सहस्रधाराओंमें बह निकलना चाहने लगी। हाय रे देश! हाय रे स्वाधीनताकी प्यास! संसारमें कुछ भी इन लोगोंने अपना समझकर बाकी नहीं रक्खा। यह घर, खाना, यह घृणित संस्रव, इस तरहकी जंगली जानवरोंकी-सी जिन्दगी,—क्षण-भरके लिए मृत्यु भी भारतीके लिए इससे अच्छी मालूम हुई। मर तो शायद बहुतेरे सकते हैं पर यह जो देह और मनको लगातार सताते रहना है, अपने आपको कदम कदम इस तरह हत्याकी तरफ ले जानेकी जो दुःसह सहिष्णुता है,—स्वर्ग और मर्त्यमें क्या कहीं इसकी तुलना मिल सकती है? देशकी पराधीनताकी वेदनाने क्या इन लोगोंके इस जीवनके समस्त ही वेदना-बोधको धो-पोंछकर साफ कर दिया है? कहीं कुछ भी बाकी नहीं छोड़ा?

उसे अपूर्वका खयाल आ-गया। उसका अपनी नौकरी छूट जानेका शोक, उसकी अपनी मित्र मण्डलीमें हाथका दाग दिखाई देनेकी लज्जा—ये ही तो हैं भारत-माताकी सहस्र-कोटि सन्तान! ये ही तो हैं देशकी रीढ़! आरामसे खाते-पहिनते, परीक्षाएँ पास करते और नौकरीमें सफलता पाते, जन्मसे मृत्यु तक जिनका जीवन बिना विघ्न-बाधाके एक-सा बीत जाता है! और यह जो आदमी

अत्यन्त तृप्तिके साथ निर्विकार चित्तसे बैठा भात लील रहा है !—भारतीको एक क्षणके लिए मालूम हुआ कि मानो वह हिमालयकी चोटीके नीचे पत्थरके एक टुकड़ेपर पैर रक्खे खड़ी है, और उपर्युक्त आदमियोंमेंसे एकसे प्रेम करके और उसीके घरके गृहिणी-पनसे वंचित होनेके दुःखसे आज छाती फाड़-फाड़कर मर रही है ! अकस्मात् भारती जोर लगाकर कह उठी, " भइया, तुम्हारा चुना हुआ यह खून-खराबीका रास्ता किसी भी तरह ठीक नहीं । अतीतकी चाहे जितनी नजीरें तुम दिखाओ, मानस-जीवनमें यह विधान हरगिज सत्य नहीं हो सकता कि जो अतीत है, जो बीत चुका है, हमेशा सिर्फ वही छाती ठोककर अनागतको नियंत्रित करेगा । तुम्हारा मार्ग ठीक नहीं है यह,—फिर भी तुम्हारी इस सब कुछ विसर्जन कर देनेवाली देशकी सेवाको ही मैं सिर-माथे लेती हूँ । अपूर्व सुखसे रहें, उनके लिए अब मैं शोक नहीं करूँगी, अपने जीनेका मंत्र आज मैंने आँखोंसे देख लिया है । "

डाक्टरने आश्चर्यके साथ मुँह उठाकर भातके गस्सेमेंसे ही अस्फुट स्वरमें पूछा, " क्या हुआ ? "

२३

हाथ-मुँह धो आनेके बाद डाक्टर अपने बकुचेपर आकर बैठ गये। पूर्वोक्त लड़का एक मोटा चुरुट पीता हुआ कोठरीमें घुसा, कुछ देरतक मुँहमेंसे खूब धुआँ निकालता रहा, और इसके बाद वही चुरुट डाक्टरके हाथमें देकर चला गया । भारतीके चेहरेपर आश्चर्यका चिह्न अनुभव करके डाक्टरने हँसते हुए कहा, " मुफ्तकी मिल जाय तो मैं दुनियामें कोई चीज छोड़ना पसन्द नहीं करता भारती ! अपूर्वके चाचाजीने मुझे जब रंगूनकी जेटीमें पहले पहल गिरफ्तार किया तो मेरी जेबमेंसे गाँजेकी चिलम निकल आई । वह न होती तो शायद छुटकारा ही न मिलता । " इतना कहकर वे मुसकराने लगे ।

भारती यह घटना सुन चुकी थी, उसने कहा, " मुझे मालूम है, और इससे छुटकारा भले ही मिल गया हो पर तुम उसे नहीं पीते यह मैं जानती हूँ ।—लेकिन यह मकान किसका है भइया ? "

" मेरा । "

" और यह बर्मी स्त्री और बच्चे ? "

डाक्टर हँस दिये, बोले, "मेरे एक मुसलमान मित्रके हैं सब। वह भी मेरी तरह फाँसीका आसामी है, पर दूसरे मामलेमें। फिलहाल कहीं बाहर गया हुआ है, परिचयका मौका नहीं मिल सकता।"

भारतीने कहा, "परिचयके लिए मैं व्याकुल नहीं हूँ। मगर, तुम जिस स्वर्गपुरीमें आकर ठहरे हो उससे बिदा करके मुझे अपने घर पहुँचा दो भइया, यहाँ मेरा दम घुटा जा रहा है।"

डाक्टरने हँसते हुए जवाब दिया, "यह स्वर्गपुरी तुम्हें सुहायेगी नहीं, सो मैं तुम्हें यहाँ लानेके पहले ही जानता था। मगर, तुमसे कहनेकी मेरी जितनी बातें हैं, वे तो इस स्वर्गपुरीके सिवा और कहीं प्रकट नहीं की जा सकतीं भारती! आज तुम्हें जरा तकलीफ बरदाश्त करनी ही पड़ेगी।"

भारतीने पूछा, "तुम क्या जल्दी ही कहीं जा रहे हो?"

डाक्टरने कहा, "हाँ। उत्तर और पूर्वके देशोंमें एक बार और घूम आना होगा। लौटनेमें शायद दो साल लग जायँ, पर आज तुम्हें नाना प्रकारसे इतनी व्यथा पहुँची है बहन, कि सब बातें कहनेमें मुझे शर्म मालूम होती है। मगर आज रातके बाद फिर तुमसे आसानीसे मिल सकूँगा, इस बातका भी भरोसा नहीं है मुझे।"

बात सुनकर भारती उद्विग्न हो उठी, बोली, "तो क्या तुम कल ही चले जाओगे?"

डाक्टर मौन रहे। भारती मन ही मन समझ गई कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। उसके बाद, इस रातके खत्म होनेके बाद ही, इस दुनियामें वह बिलकुल अकेली रह जायगी।—खोज-खबर लेनेवाला भी कोई न रहेगा।

डाक्टर कहने लगे, "पैदल रास्ते मुझे दक्षिण चीनके भीतरसे कैण्टॉन जाना पड़ेगा और उस रास्तेसे कामके सिलसिलेमें अगर अमेरिका न जा पहुँचा तो प्रशान्त महासागरके द्वीपोंमें घूम-घामकर फिर यहीं आकर आश्रय लूँगा। उसके बाद जब तक आग न जलेगी मैं यहीं रहूँगा भारती।" फिर सहसा जरा हँसकर बोले, "अगर न लौट सका बहन, तो अखबार तो मिल ही जायगा।"

इस आदमीके शान्त स्वरकी सहज बातें कितनी साधारण हैं, परन्तु उनका भयंकर चेहरा भारतीकी आँखोंके आगे नाच उठा। कुछ देर सन्न रहकर वह बोली, "पैदल रास्तेसे चीन देश जाना कितना भयंकर है, सो मैं सुन चुकी

हूँ। पर तुम मन ही मन हँसना मत भइया, मैं तुम्हें डर नहीं दिखाती,—इतना मैं तुम्हें पहचानती हूँ। लेकिन, निकल ही अगर जाना चाहते हो तो फिर यहीं वापस क्यों आना चाहते हो? तुम्हारी अपनी जन्म-भूमिमें क्या जरूरत नहीं है?"

डाक्टरने कहा, "उसीके कामके कारण तो मैं इस देशको सहजमें छोड़ नहीं सकता। औरतें इस देशमें स्वाधीन हैं, स्वाधीनताका मर्म वे समझती हैं। उन लोगोंसे मेरा बड़ा काम है। अगर कभी इस देशमें आग जलती दिखाई दे, तो कहीं भी रहो भारती, मेरी बात उस समय याद कर लेना कि उस आगको तुम्हीं लोग जलाओगी।—मेरी यह बात याद रहेगी?"

इस इशारेको भारती समझ गई, बोली, "मगर मैं तो तुम्हारे पथकी पथिक नहीं हूँ भइया!"

डाक्टर हँस दिये, बोले, "सो मैं जानता हूँ। मगर पथ तुम्हारा कोई भी क्यों न हो, बड़े भाईकी बात याद करनेमें तो कोई दोष नहीं,—फिर भी तो भइयाकी बीच-बीचमें याद कर लिया करोगी!"

भारती खुद हँस दी, बोली, "बड़े भइयाकी याद रखनेकी मेरे पास बहुत-सी चीजें हैं। क्या तुम आदमीको इसी तरह विपत्तियोंमें खींच लाया करते हो भइया? लेकिन मुझे नहीं खींच सकते।" इतना कहकर वह सहसा उठ खड़ी हुई और घड़ी की हुई दरीको झाड़-बिछाकर कम्बल तकिया वगैरह लेकर अपने हाथसे बिस्तर करती हुई धीरेसे बोली, "अपूर्व बाबूके जहाजके चक्के आज मुझे जिस मार्गका सन्धान दे गये हैं, इस जीवनमें वही मेरा एक-मात्र मार्ग है। फिर, जिस दिन मुलाकात होगी, यह बात तुम भी स्वीकार करोगे।"

डाक्टर व्यग्र हो उठे, बोले, "अचानक यह तुमने क्या शुरू कर दिया भारती? इस फटे कम्बलको क्या मैं खुद बिछा नहीं सकता था? इसकी तो कोई जरूरत नहीं थी?"

भारतीने कहा, "तुम्हें नहीं थी, लेकिन मुझे थी। किसीके लिए और कभी बिस्तर क्यों न करूँ, तुम्हारा यह फटा कम्बल कभी नहीं भूलूँगी। स्त्रियोंके जीवनमें अगर इसकी भी जरूरत न हो, तो किसकी जरूरत है,—उनका कर्तव्य और क्या है, बतला सकते हो भइया?"

डाक्टर हँस दिये, बोले, "इसका जवाब मैं नहीं दे सका बहन, तुम्हारे

आगे मैं हार मानता हूँ। मगर इतनी बड़ी बात मुझे कभी किसी दिन किसी भी स्त्रीके आगे स्वीकार नहीं करनी पड़ी।"

भारतीने हँसते चेहरेसे पूछा, "सुमित्रा जीजीके आगे भी नहीं?"

डाक्टरने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

बिस्तर बिछ जानेपर डाक्टर अपने बकुचेका आसन छोड़कर बिछौनेपर आकर बैठ गये। भारती पास ही बिस्तरसे अलग बैठ गई और कुछ देर नीचेको निगाह किये मौन रहकर बोली, "जानेके पहले और एक बात तुमसे पूछूँ तो इस छोटी बहनका कुसूर माफ कर दोगे?"

"कर दूँगा।"

"तो बता दो, सुमित्रा जीजी कौन हैं? तुम्हें वे कहाँसे मिल गईं?"

उसका प्रश्न सुनकर डाक्टर बहुत देर तक चुप रहे, उसके बाद मुसकराते हुए बोले, "वह मेरी कौन है, इसका जवाब उसके खुद बगैर दिये जाननेका और कोई उपाय नहीं। परन्तु कहना चाहिए कि जिस दिन मैं उसे पहचानता भी न था, उस दिन मैंने खुद ही पुलिसके सामने अपनी स्त्रीके तौरपर उसका परिचय दे डाला था। 'सुमित्रा' नाम मेरा ही दिया हुआ है,—आज वही शायद उसके पास एक नज़ीर रह गई है।"

भारती गहरे कुतूहलके साथ डाक्टरकी तरफ एकटक देखती रही। डाक्टरने कहा, "सुना है, उसकी मा शायद यहूदिन थी और बाप थे बंगाली ब्राह्मण। पहले वे सर्कस-पार्टीके साथ जावा गये थे, और वहीं सुरबाया रेल्वे-स्टेशनमें नौकरी करने लगे थे। जितने दिन जीये सुमित्रा मिशनरियोंके स्कूलमें पढ़ती रही,—उनके मर जानेके बादका पाँच-छह सालका इतिहास तुम मत सुनो।"

भारतीने सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं भइया, सो नहीं होनेका, तुम्हें सब कुछ बतलाना पड़ेगा?"

डाक्टरने हँसकर कहा, "मैं भी सब नहीं जानता भारती, सिर्फ इतना जानता हूँ कि मा, लड़की, दो मामा, एक चीनी और दो मद्रासी मुसलमान मिलकर जावामें छिपी तौरसे अफीम-गाँजेकी आमद-रफ्तका काम करते थे। उस वक्त तक मैं जानता नहीं था कि ये लोग क्या करते हैं, सिर्फ इतना देखा करता था कि बटाविया और सुरबायाके बीच रेलके रास्ते बराबर सुमित्रा जाया आया करती हैं। बहुत ही सुन्दर होनेकी वजहसे बहुतोंकी तरह मेरी भी उसपर नजर

पड़ गई।—बस, यहीं तक। पर, सहसा एक दिन परिचय हो गया तेग स्टेश-नके वेटिंग रूममें। वह बंगालीकी लड़की है, इस बातका पता भी तभी चला।"

भारतीने कहा, "सुन्दरी होनेके कारण सुमित्रा जीजीको फिर आप भूल नहीं सके,—क्यों भइया?"

डाक्टर कहने लगे, "कुछ भी कहो, एक दिन जावा छोड़कर मैं और कहीं चला गया,—और शायद भूल भी गया,—पर एक सालके बाद फिर अकस्मात् सुमात्रासे बेंकुलेन शहरकी जेटीपर भेंट हो गई। एक पेटीमें अफीम थी, चारों तरफ पुलिस और बीचमें सुमित्रा खड़ी थी। मुझे देखते ही उसकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे। मुझे निश्चिय कर लेना पड़ा कि अब तो उसे बचना ही होगा। अफीमकी पेटीको बिलकुल नामंजूर करके मैंने उसका परिचय अपनी स्त्रीके रूपमें दे दिया। पर इतना उसने नहीं सोचा था, वह चौंक पड़ी। यह घटना सुमात्राकी होनेसे मैंने उसका नाम 'सुमित्रा' रख दिया, नहीं तो उसका पुराना नाम था 'रोज़ दाऊद।' उन दिनों बेंकुले-नके मामले-मुकद्दमे पाबाग शहरमें हुआ करते थे। वहाँ मेरे एक परम मित्र रहते थे पॉल क्रूगर। उन्हींके घर सुमित्राको ले जाकर रक्खा। मुकद्दमेमें मजिस्ट्रेटने तो सुमित्राको छुटकारा दे दिया, पर सुमित्राने मुझे नहीं दिया।"

भारतीने हँसकर कहा, "छुटकारा कभी मिलेगा भी नहीं भइया।"

डाक्टर कहने लगे, "क्रमशः उसके दलके लोग खबर पाकर ताक झाँक करने लगे, देखा कि मित्र क्रूगर भी उसके सौन्दर्यसे चंचल हो उठे हैं, लिहाजा उसे उन्हींके जुम्मे छोड़कर मैं एक दिन चुपके-से सुमात्रासे भाग खड़ा हुआ।"

भारतीने आश्चर्यके साथ कहा, "उन लोगोंके जिम्मे अकेली छोड़कर? उःफ्,—तुम कैसे निष्ठुर हो भइया!"

डाक्टरने कहा, "हाँ, लगभग अपूर्वकी तरह!—एक साल बीत गया। उन दिनों सेलिबिस द्वीपके मैकासर शहरके एक छोटे अप्रसिद्ध होटलमें रह रहा था। एक दिन शामको अपनी कोठरीमें घुसकर देखा: सुमित्रा बैठी है। हिन्दू स्त्रियोंकी तरह टसरकी साड़ी पहने थी, और उसी दिन उसने मुझे हिन्दू स्त्रीकी तरह झुककर पहले पहल प्रणाम किया। बोली, 'मैं सब-कुछ छोड़कर चली आई हूँ, बीता हुआ सब कुछ धो-पोंछकर साफ कर आई हूँ। मुझे अपने काममें भरती कर लो, मुझसे बढ़कर विश्वस्त अनुचरी तुम्हें और कोई नहीं मिलेगी।'"

भारतीने दम रोके हुए प्रश्न किया, " उसके बाद ? "

डाक्टर कहने लगे, " बादकी घटना सिर्फ इतनी ही कह सकता हूँ भारती कि सुमित्राके विरुद्ध शिकायत करनेका मुझे आज तक कोई कारण नहीं मिला। संसारमें ऐसा कोई काम नहीं जो वह न कर सकती हो। इक्कीस सालके तमाम संस्कारोंको जो एक दिनमें धो-पोंछकर साफ कर सकती है, उससे मैं डरता हूँ।—लेकिन, है बड़ी निष्ठुर।

भारती चुप बैठे रही। बार बार इच्छा होने लगी कि पूछे, निष्ठुर होने दो, पर उससे तुम्हारा प्रेम कितना है? परन्तु मारे शर्मके मुँहसे यह बात निकली नहीं। फिर भी, उस आश्चर्यजनक रमणीका बहुत-सा गुप्त इतिहास उसे मालूम हो गया। उसका निर्मल मौन और कठोर उदासीनता,—किसीका भी अर्थ समझना उसके लिए बाकी नहीं रहा।

सहसा असावधानीसे एक दीर्घ निःश्वास निकल जानेसे डाक्टर क्षण भरके लिए मारे शर्मके व्याकुल हो उठे पर एक ही क्षणके लिए,—उन्होंने सुदीर्घ साधनासे देह और मनके रोम-रोमपर असाधारण अधिकार व्यर्थ ही प्राप्त नहीं किया था। दूसरे ही क्षण उनका स्वर शान्त और चेहरा स्वाभाविक हँसीसे भर गया। बोले, " फिर सुमित्राके लेकर मुझे कैण्टन चले आना पड़ा।"

भारतीने हँसी छिपाकर भले-मानसकी तरह मुँह फेरकर कहा, " न चले आते भइया, किसने तुम्हें सरकी कसम दी थी बताओ? हम लोगोंने तो दी नहीं। "

डाक्टर हँसते हुए कुछ देर चुप रहकर बोले, "सरकी कसम बिलकुल थी ही नहीं, सो बात नहीं,—सोचा था कि वह बात किसीसे कहूँगा नहीं, लेकिन तुममें यह ऐब जो है कि आखिर तक बगैर सुने तुम्हारा कुतूहल मिटता ही नहीं। और नहीं कहूँगा तो ऐसी बातें अनुमान करती रहोगी जिनसे बल्कि कह देना अच्छा। "

भारतीने कहा, " मैं भी यही कहती हूँ भइया। इतना तुम कह ही डालो।"

डाक्टरने कहा, " बात यह हुई कि सुमित्राने मेरे उसी होटलमें दुमंज़िले-पर एक कमरा किरायेपर ले लिया। मैंने बहुत मना किया, पर किसी तरह वह मानी ही नहीं। मैंने जब कहा कि न मानोगी तो मुझे और कहीं चला जाना पड़ेगा, तो उसकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे। बोली, मुझे आप आश्रय दीजिए।

दूसरे ही दिन मामला समझमें आ गया। वही दाऊदका दल आ पहुँचा। आठ-दस आदमी थे, उनमें एक आधा अरब और आधा निग्रो था,—छोटा-मोटा हाथी समझो, वह अनायास ही सुमित्रापर स्त्रीका दावा कर बैठा।"

भारतीने हँसते हुए कहा, "और तुम्हारे ही सामने? तुम दोनोंमें शायद खूब झगड़ा हुआ होगा?"

डाक्टरने गर्दन हिलाकर कहा, "हाँ। सुमित्रा अस्वीकार करके बार बार कहने लगी कि सब झूठ है, साराका सारा षड्यंत्र रचा गया है।—अर्थात् वे उसे चोरी चोरी अफीम बेचनेके काममें वापस ले जाना चाहते थे। प्रशान्त महासागरके सब द्वीपोंमें उनके अड्डे हैं,—बड़ा-भारी दल है। ऐसा कोई काम नहीं जो ये न कर डालते हों।—समझ गया कि सुमित्रा क्यों मेरे पाससे अलग नहीं जाना चाहती, और उससे भी ज्यादा यह भी समझमें आ गया कि इस समस्याका हल आसानीसे नहीं होनेका। उन्हें बिलकुल सब्र नहीं था, तुर्त फैसला करके वे सुमित्राको खींच ले जाना चाहते थे। जब उन्हें रोका और पुलिस बुलाकर पकड़वा देनेका डर दिखाया तब कहीं वे गये; पर जाते वक्त खूब जोरसे धमकी देते गये कि उन लोगोंके हाथसे आज तक कोई बचा नहीं है।—और बात बिलकुल झूठी हो, सो बात भी नहीं।"

भारतीने आशंकामें डूबकर पूछा, "फिर?"

डाक्टरने कहा, "रात-भर होशियारीसे रहा: वे दल-बलसहित लौटकर हमला करेंगे, यह मुझे मालूम था।"

भारतीने व्यग्र होकर कहा, "उसी वक्त तुम लोग थानेमें क्यों नही चले गये? पुलिसको खबर क्यों नहीं दे दी? डच-सरकारके यहाँ क्या पुलिस वगैरह कुछ है ही नहीं?"

डाक्टरने कहा, "नहींमें ही शुमार समझो। इसके सिवा थाना-पुलिस जाना खुद मेरे भी लिए निरापद नहीं था।—खैर, रात तो बिना किसी बाधा-विघ्नके बीत गई। वहाँसे समुद्रके किनारे किनारे जानेवाली बहुत-सी व्यापार-धन्धेकी नावें चला करती हैं। दूसरे दिन सबेरे ही एकको तय कर आया, पर सुमित्राको बुखार आ गया,—उससे उठा ही नहीं गया। बहुत रात बीतें दरवाजा खुलनेकी आवाजसे आँख खुल गई, खिड़कीसे झाँककर देखा कि होटलवालेने दरवाजा खोल दिया है और दस-बारह जने होटलमें घुसे आ रहे हैं। उन्होंने मनसूबा

बाँध रक्खा था कि मेरे दरवाजेको किसी तरह बन्द कर बगलकी सीढ़ीसे वे ऊपर सुमित्राकी कोठरीमें जा पहुँचेंगे।"

भारतीने साँस रोके हुए ही पूछा, "फिर? तुम लोग भागे किधरसे?"

डाक्टरने कहा "भागनेका समय ही कहाँ मिला? उनके आनेके पहले ही मैंने अपने किवाड़ खोलकर ऊपर जानेकी सीढ़ी रोक ली।"

भारतीका चेहरा फक पड़ गया, पूछने लगी, "अकेले?—फिर?"

डाक्टरने कहा, "बादकी घटना अँधेरेमें घटती रही, उसका ठीक ठीक वर्णन नहीं किया जा सकता। पर अपनी मुझे मालूम है। एक गोली आकर बायें कंधेपर लगी और एक लगी ठीक घुटनेके नीचे। सबेरा होते ही पुलिस आ गई, पहरा बैठ गया, गाड़ी-डोली भी आई, छह-सात आदमियोंको पकड़के ले गई,—होटलवालेने इजहार दिया, डाकू आये थे। अँगरेजी राज्य होता तो कहाँ तक मामला पहुँचता, कहा नहीं जा सकता। मगर सेलिबिसके कानून-कायदे शायद अलग ही है,—लाशोंका निशान-इशान कुछ मिला-मिलाया नहीं, —उन्हें गाड़-गूड़ दिया।"

वर्णन सुनकर भय और विस्मयसे कुछ देर तो भारतीके मुँहसे बात ही नहीं निकली; उसके बाद सूखे सफेद-फक चेहरेसे अस्फुट स्वरमें बोली, "गाड़-गूड़ क्या दिया गया? क्या तुम्हारे ही हाथसे वे सबके सब मारे गये?"

डाक्टरने कहा, "मैं तो कारण-मात्र था। नहीं तो, वे अपने ही हाथसे मारे गये समझना चाहिए।"

भारती फिर कुछ नहीं बोली, सिर्फ एक गहरी साँस लेकर चुपचाप बैठी रही। डाक्टर खुद भी कुछ देर चुप रहे और फिर बोले, "कुछ नाव, कुछ घोड़ा-गाड़ी और कुछ स्टीमरकी सहायतासे हम दोनों मेनाडा शहर(Menada) जा पहुँचे; और वहाँसे नाम-धाम बदलकर एक चीनी जहाजपर चढ़के किसी तरह कैण्टन पहुँच गये।—पर आगे शायद तुम्हारी सुननेकी इच्छा नहीं है, ठीक है न भारती? तुम्हें ऐसा लग रहा होगा कि भइयाके हाथोंमें भी आदमीका खून लगा हुआ है?"

अन्यमनस्क भारतीने उनके मुँहकी ओर देखकर कहा, "मुझे घर नहीं पहुँचा दीजिएगा भइया?"

"अभी जाओगी?"

"हाँ, मुझे पहुँचा आओ।"

"तो चलो।" कहकर डाक्टरने अपने नीचेका तख्ता हटाकर कोई एक चीज चुपचाप निकालकर जेबमें रख ली। भारती समझ गई, पिस्तौल है। पिस्तौल उसके पास भी है और सुमित्राके उपदेशानुसार वह भी इसके पहले उसे लेकर रास्तेमें निकला करती थी; परन्तु, वह आदमी मारनेका यंत्र है, इस बातका होश मानो आज ही उसे हुआ। जिसे अभी अभी डाक्टरने अपनी जेबमें रक्खा है, वह न-जाने कितनी नर-हत्याएँ कर चुका होगा, इस बातका खयाल आते ही भारतीके तमाम रोंयें खड़े हो गये।

नावपर चढ़कर भारतीने धीरेसे कहा, "तुम कुछ भी क्यों न करते हो, पर तुम्हारे सिवा दुनियामें मेरे लिए और कोई आश्रय नहीं है। जितने दिन मेरा मन ठीक न हो जाय, तुम मुझे छोड़कर नहीं जा सकते भइया। बताओ नहीं जाओगे न?"

डाक्टरने मुस्कराते हुए कहा, "अच्छा, ऐसा ही होगा, मैं तुमसे छुट्टी लेकर जाऊँगा।"

२४

नदीके रास्तेमें नावपर बैठी हुई भारती न जाने क्या क्या सोचती रही। अधिकांश बातें गैर-सिलसिलेकी थीं,—बीच बीचमें जिसने उसके मनको सबसे ज्यादा धक्का दिया वह था सुमित्राके जीवनका इतिहास,—उसके प्रथम यौवनकी दुर्भाग्यमय विलक्षण कहानी। सुमित्राको मित्रके रूपमें समझ लेनेका दुःसाहस किसी भी स्त्रीके लिए सहज नहीं,—भारती भी उससे प्रेम नहीं कर सकी है। परन्तु, यह मानकर कि सब विषयोंमें वह असाधारण श्रेष्ठ है, उसने उसे अपने हृदयकी भक्ति अर्पित की थी: मगर, उस दिन अपूर्वका चाहे जितना बड़ा अपराध क्यों न हो, नारी होकर इतनी आसानीसे उसकी हत्या करनेका आदेश देनेसे उसकी भक्ति असीम भयमें परिणत हो गई थी,—बलिका पशु जैसे खून-सने खड्गके सामने डर जाता है; उसी तरह। अपूर्वको भारती कितना चाहती है सुमित्रासे यह छिपा नहीं था, और प्रेम क्या चीज है यह भी उससे अविदित नहीं, फिर भी एक दूसरी स्त्रीके प्राणाधिकको प्राणदण्डकी आज्ञा देनेमें,—नारी होते हुए भी उसे जरा भी दुविधा नहीं हुई! वेदनाकी आगसे छातीके भीतर जब इस तरहकी भकभक लौ उठ बैठती तब वह अपनेको यह कहकर

समझा लेती कि कर्तव्यके प्रति इस तरहकी निर्भय निष्ठा हुए बगैर उसे अधिकार-समितिकी सभानेत्री बनाता भी कौन? जिनके लिए अपने जीवनका मूल्य नहीं, राजद्वारमें कानूनन जिनके प्राण जब्त हो चुके हैं, वे इसपर कैसे निर्भर करते? उसके जन्म, उसकी शिक्षा, उसके कैशोर और यौवनका विचित्र इतिहास; उसकी अनासक्तिकी अनति-वर्तनीय दृढ संसक्ति, उसका कर्तव्य-ज्ञान उसका पाषाण-हृदय,—इन सबमें भारतीको मानो एक तरहकी संगति दिखाई देने लगी। नारीके लिहाजसे जो एक प्रचंड अभिमान भारतीके मनमें बैठ गया था, आज वह अपने आप ही मानो बाहुल्य मालूम होने लगा। अब उसे मालूम हुआ, स्नेह और करुणाके नाम सुमित्रासे कुछ चाहने और भीख माँगनेके समान मजाक दुनियामें और कुछ नहीं।

नावके घाटसे लगते ही एक आदमी ओटमेंसे निकलकर सामने आ खड़ा हुआ। डाक्टरका हाथ पकड़कर भारती नीचे सीढ़ीपर पैर रखना ही चाहती थी कि सामने एकाएक उस आदमीको देखकर उसने पाँव उठा लिया।

डाक्टरने मुलायम स्वरसे कहा, "वह अपना हीरासिंह है, तुम्हें पहुँचा देनेके लिए खड़ा है।—क्यों हीरासिंह, सब ठीक है?"

हीरासिंहने कहा, "हाँ, सब ठीक है।"

"मैं भी चल सकता हूँ?"

हीरासिंहने कहा, "आपके जानेको दुनियामें क्या कोई रोक सकता है?" और जरा हँस दिया।

समझमें आ गया कि पुलिसकी तरफसे भारतीके घरपर नजर रक्खी जाती है, डाक्टरका जाना खतरेसे खाली नहीं।

भारतीने हाथ नहीं छोड़ा, चुपकेसे कहा, "मैं नहीं जाऊँगी भइया।"

"मगर तुम्हें तो भागते फिरनेकी जरूरत नहीं भारती!"

भारतीने उसी तरह धीरे से कहा, "जरूरत होनेपर भी मैं भागी भागी नहीं फिर सकती। लेकिन इसके साथ नहीं जाऊँगी।"

डाक्टर आपत्तिका कारण समझ गये। अपूर्वके न्याय-विचारके दिन यह हीरासिंह ही उसे ले आया था। जरा सोच-विचार कर बोले, "पर तुम तो जानती हो भारती, मुहल्ला कितना खराब है, इतनी रातको अकेली तो तुम्हारा जाना ठीक नहीं। और मैं तो—"

भारती व्याकुल कंठसे बीचमें ही बोल उठी, " नहीं भइया, मुझे पहुँचा दो, मैं तो पागल नहीं हो गई जो—"

इतना कहकर वह बीचमें ही रुक गई। मगर इतनी रातको उस मुहल्लेमेंसे अकेले जाना असम्भव है, यह बात भी उससे ज्यादा कौन जानता है? हाथ छोड़कर नावसे उतरनेका कोई भी लक्षण न देखकर डाक्टरने स्नेहार्द्र स्वरमें धीरेसे कहा, " तुम्हें वहाँ वापस ले जानेमें मुझे खुद ही शर्म मालूम होती है। लेकिन एक दूसरी जगह जाओगी बहन? हमारे एक कवि हैं, उनके यहाँ। नदीके उस पार रहते हैं।—चलोगी?"

भारतीने पूछा, " कवि कौन भइया?"

डॉक्टरने कहा, " हमारे उस्तादजी, बेहाला बजानेवाले,—"

भारतीने खुश होकर कहा, " वे क्या घरपर मिलेंगे? कहीं शराब मिल गई होगी तो शायद बेहोश ही पड़े होंगे।"

डाक्टर हँस दिये, बोले, " आश्चर्य नहीं। पर मेरी आवाज सुनते ही उनका नशा उतर जाता है। इसके सिवा पास ही नवतारा रहती है,—हो सकता है कि तुम्हें कुछ खानेको भी दिलवा सकूँ।"

भारती चंचल हो उठी, बोली, " माफ करो भइया, मुझे इतनी रातको खिलानेकी कोशिश मत करना; लेकिन चलिए, वहीं चले चलें। सबेरा होते ही हम लोग लौट आयेंगे।"

डाक्टरने फिर नाव बढ़ा दी और हीरासिंह अन्धकारमें अदृश्य हो गया। भारतीने कुतूहलके साथ पूछा, " भइया, इस आदमीपर पुलिस अब भी शक नहीं करती?"

डाक्टरने कहा, " नहीं। यह टेलिग्राफ आफिसका पीओन है, लोगोंके जरूरी तार पहुँचाया करता है, लिहाजा इसका किसी भी वक्त किसी भी जगह जाना खटकता नहीं।"

अभी अभी ज्वार शुरू हुई है, खाड़ीसे निकलकर बड़ी नदीमें थोड़ी दूर स्रोतसे उलटा गये बगैर उस पार यथास्थान नाव लगाना मुश्किल है, इसलिए डाक्टर उसे किनारेसे सटाकर अत्यन्त सावधानीसे धीरे धीरे लग्गीसे ठेलते हुए ले जाने लगे। इस परिश्रमको देखकर भारती सहसा कह उठी, " जाने

दीजिए, जरूरत नहीं भइया, वहाँ जानेकी। इससे बल्कि चलो, अपने ही घर चले चलो। ज्वारका बहाव है, आध घंटा भी न लगेगा।"

डाक्टरने कहा, "सिर्फ यही काम नहीं है भारती, उससे मिलनेकी मुझे खास जरूरत है।"

उत्तरमें भारती उपहास-भरी हँसी हँस दी, बोली, "उनके साथ किसी आदमीको किसी कामसे मिलनेकी जरूरत पड़ सकती है, मुझे तो इस बातपर विश्वास नहीं होता भइया।"

डाक्टरने कुछ देर चुप रहकर कहा, "तुम लोग कोई उसे पहचानती नहीं भारती। उस जैसा वास्तविक गुणी आदमी सहसा कहीं ढूँढ़े नहीं मिल सकता। अपने टूटे बेहाला मात्रकी पूँजीसे ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ वह न गया हो। इसके सिवा बड़ा भारी विद्वान् है वह। कहाँ किस पुस्तकमें क्या लिखा है, उसके सिवा हम लोगोंमें और कोई आदमी ऐसा नहीं जो बता सकता हो। उसे मैं वास्तवमें चाहता हूँ।"

भारती मन ही मन लज्जित होकर बोली, "तो उनसे तुम शराब छुड़वानेकी कोशिश क्यों नहीं करते?"

डाक्टरने कहा, "मैं किसीसे कुछ छुड़वानेकी कोशिश नहीं करता।" फिर जरा चुप रहकर बोले, "इसके सिवा वे ठहरे कवि और गुणी आदमी, उन लोगोंकी जात ही अलग है। उनकी भलाई बुराई ठीक हम लोगोंसे नहीं मिलती। मगर इसके मानी यह नहीं कि दुनियाकी भलाई-बुराईके बँधे हुए कानून उन्हें माफी दे देते हों। उनके गुणोंका फल तो हम सब मिलकर भोगते हैं, पर दोषोंकी सजा वे अकेले ही भोगते हैं। इसीलिए जब कभी उस बेचारेको बहुत ज्यादा दुःख होता है, तब और एक आदमी है जो उसके दुःखको बाँट लेता है, और वह मैं हूँ।"

भारतीने कहा, "तुम सभीके लिए दुःख अनुभव करते हो भइया, तुम्हारा मन औरतोंसे भी कोमल है। पर उस गुणीपर तुम विश्वास कैसे करते हो?— वे मतवाले होकर सब कुछ प्रकट भी तो कर दे सकते हैं?"

डाक्टरने कहा, "इतना ज्ञान उसमें बच रहता है। और एक मजेकी बात यह है कि उसकी बातपर कोई विश्वास नहीं करता।"

भारतीने पूछा, "उनका नाम क्या है भइया?"

डाक्टरने कहा, " अतुल, सुरेद्र, धीरेन्द्र,—जब जो मनमें आ गया सो। असल नाम है शशिपद भौमिक। "

" मुझे मालूम होता है वे नवताराका कहना बहुत मानते हैं। "

डाक्टर मुसकरा दिये, बोले, " मुझे भी ऐसा ही लगता है। "

इतना कहकर उन्होंने उस पारकी ओर नाव मोड़ दी। स्रोत आर डाँड़के प्रबल आकर्षणसे छोटी-सी नाव बहुत तेजीसे चलने लगी और देखते देखते दूसरा किनारा आ लगा। चारों तरफ विलायती कम्पनियोंके बड़े बड़े लकड़ोंके ढेर ऊपर तक लगे हुए हैं, उनकी सेंधोंमेंसे ज्वारका पानी भीतर जा रहा है और दूर खड़े हुए जहाजोंके तीव्र प्रकाशसे चमक रहा है। उन्हींमेंसे एक सेंधमें नाव ठेलकर डाक्टरने भारतीको हाथ पकड़कर उतार लिया। कोई लगी हुई लकड़ियोंपर सावधानीसे पाँव दबादबाकर कुछ आगे बढ़नेके बाद एक पतली-सी सड़क पड़ी जिसके दोनों किनारे छोटे-बड़े गढ़े हैं और उनमें पानी भरा हुआ है। चारों तरफ पेड़-पौधोंका शुमार नहीं; उनमें होकर यह सड़क अँधेरे जंगलमें कहाँ चली गई है, कुछ पता नहीं।

भारतीने डरते हुए पूछा, " भइया, उस पारकी एक ऐसी ही भयानक जगहसे निकालकर फिर एक भयानक जगहमें ले आये! शेर-भालुओंकी तरह तुम लोग क्या ऐसी जगहको छोड़कर और कहीं रहना जानते ही नहीं? और किसी बातका डर न सही, पर साँप-बिच्छुओंका डर तो होना चाहिए?"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "साँप विलायतसे नहीं आये बहन, उनमें धर्म-ज्ञान है, बिला कुसूर किसीको नहीं काटते। "

पलक मारते ही भारतीको और एक दिनकी बात याद आ गई। उस दिन भी डाक्टरके इसी तरहके सहास्य कंठस्वरसे योरोपके विरुद्ध एक असीम घृणाकी ध्वनि निकली थी। उन्होंने फिर कहा, "और बाघ-भालुओंकी कहती हो बहन! मैं अक्सर सोचा करता हूँ कि इस भारतवर्षमें आदमी न रहकर अगर सिर्फ बाघ-भालू ही रहते होते, तो सम्भव है, ये लोग विलायतसे शिकार करने यहाँ आया करते, मगर दिन-रात रक्त-शोषणके लिए तो मुँह खँगाये न पड़े रहते!"

भारती चुप रही। सारी जातिके विरुद्ध किसीका भी इतना विद्वेष उसे अत्यन्त व्यथित कर देता था। खासकर इस आदमीके इतने बड़े विशाल हृदयसे जब गरल उछलने लगता तब उसकी दोनों आँखोंमें आँसू भर आते। अपने

मनमें जी-जानसे कहती रहती, यह हरगिज सच नहीं,—यह किसी भी तरह सच नहीं हो सकता। ऐसा हो ही नहीं सकता।

कुछ क्षणोंसे एक अपूर्व सुस्वर उसके कानोंमें आ रहा था, सहसा ठिठक-कर डाक्टरने कहा, "उस्तादजी हमारे जाग रहे हैं और होशमें हैं,—ऐसा बेहाला तुमने कभी सुना है भारती ?"

कुछ कदम और भी चलकर भारती स्तब्ध हो रही। न मालूम कहाँसे अंधकारकी छाती फाड़कर कितना रोना बहा चला आ रहा है! जिसका आदि नहीं, अन्त नहीं,—इस संसारमें जिसकी तुलना नहीं। दो मिनटके लिए भारतीका मानो होश जाता रहा। डाक्टरने उसका हाथ थामकर जरा दबाते हुए कहा, "चलो।"

भारतीने चौंककर कहा, "चलो। मैंने इसकी कभी कल्पना नहीं की थी,—ऐसा कभी नहीं सुना।"

डाक्टरने आहिस्तेसे कहा, "संसारमें मेरे लिए तो अगम्य कोई स्थान है नहीं, पर याद नहीं, इससे अच्छा मैंने भी कभी सुना हो।" फिर जरा हँसकर कहा, "लेकिन पागलके हाथ पड़कर उस बेहालेकी ऐसी दुर्दशा है कि जिसका ठीक नहीं। मैंने शायद उसका दस बारह दफे उद्धार किया होगा। अब भी सुना है कि अपूर्वके पास वह पाँच रुपयेमें गिरवी रक्खा हुआ है।"

भारतीने कहा, "हाँ। उनके नाम मैं पाँच रुपया भेज दूँगी।"

पेड़ोंकी ओटमें एक दुमंजिला लकड़ीका मकान है। नीचेकी मंजिलपर कीचड़, ज्वारके पानी और जंगली झाड़ियोंने दखल कर रक्खा है। सामने एक काठकी सीढ़ी है और उसके ऊपर एक तोरण-सा बना हुआ है जिसपर बहुत बड़ी एक रंगीन चीनी लालटेन लटक रही है। भीतरके प्रकाशसे साफ पढ़ा गया कि उसके ऊपर बड़े बड़े काले अँगरेजी हरूफोंमें लिखा हुआ है: 'शशि-तारा लॉज।'

भारतीने कहा, "घरका नाम रक्खा गया है 'शशि-तारा लॉज'। 'लॉज' तो समझ गई, पर 'शशि-तारा' के क्या मानी ?"

डाक्टर मुसकराये, बोले, "शायद शशिपदका 'शशि' और नवताराका 'तारा' मिलाकर 'शशि-तारा लॉज' नामकरण किया गया है।"

भारतीका चेहरा गम्भीर हो गया, उसने कहा, " यह बड़ा भारी अन्याय है। इन सब बातोंको तुम बरदाश्त कैसे कर लेते हो ? "

डाक्टर हँस पड़े, बोले, " अपने भइयाको क्या तुम सर्वशक्तिमान् समझती हो ? कोई अपने लॉजका नाम ' शशि-तारा ' रक्खे, कोई अपने पैलेसका नाम ' अपूर्व-भारती' रक्खे,—इसे मैं कैसे रोक सकता हूँ ? "

भारती गुस्सा हो गई, बोली, " नहीं भइया, इन सब गन्दी बातोंके लिए तुम मना कर दो। नहीं तो मैं उनके घर नहीं जाऊँगी। "

डाक्टरने कहा, " सुना है, दोनोंका जल्दी ब्याह होनेवाला है। "

भारती व्याकुल होकर उठी, " ब्याह कैसे होगा, उसके तो पति जीवित हैं ? "

डाक्टरने कहा, " भाग्य सीधा हो तो मरनेमें क्या देर लगती है बहन ? सुना है, मर गया वह, पन्द्रहेक दिन हुए। "

भारती अत्यन्त अप्रसन्न होती हुई भी हँस दी, बोली, " यह शायद झूठी बात होगी। इसके सिवा, कमसे कम साल-भर तो इन्हें रुकना चाहिए। नहीं तो बड़ा भद्दा दीखेगा। "

उसकी उत्कंठा देखकर डाक्टरने चेहरा गम्भीर करके कहा, " अच्छी बात है, कह देखूँगा। पर रुकनेसे भद्दा दीखेगा या हो जानेसे भद्दा दीखेगा, यह जरा सोचनेकी बात है। "

इस इशारेके बाद भारती मारे शर्मके चुप रह गई। सीढ़ीपर चढ़ते चढ़ते डाक्टरने दबी जबानसे कहा, " इस पागलके लिए मुझे बड़ा कष्ट होता है। सुना है, इस स्त्रीसे यह वास्तवमें प्रेम करता है ! अगर और किसीसे प्रेम करता ! "—सहसा एक गहरी साँस लेकर कहने लगे, " दुनियाकी भले-बुरेकी फरमाइश, मित्रोंकी अभिरुचि,—ये सब तुच्छ बातें हैं भारती, मैं सिर्फ यह कामना करता हूँ कि अगर इसके प्रेममें सत्य हो, तो वह सत्य ही इसका उद्धार कर दे। "

भारती चौंक पड़ी और उसी तरह दबी जबानसे सहसा पूछ बैठी, " संसारमें ऐसा क्यों होता है भइया ? "

डाक्टरने अँधेरेमें ही एक बार भारतीकी तरफ देखा। उसके बाद अकस्मात्

उच्छ्वसित दीर्घश्वासको जी-जानसे रोककर वे दबे-पाँव कविके बन्द दरवाजेके सामने जाकर खड़े हो गये।

पुकार सुनकर बेहाला रुक गया। थोड़ी देर बाद दरवाजा खोलकर शशिपद बाहर आकर खड़ा हो गया। डाक्टरको उसने सहजहीमें पहचान लिया, मगर भारतीको अँधेरेमें जरा गौरसे देखनेके बाद पहचाना। पहचानते ही एकाएक उछल पड़ा, बोला, "ऐं, आप? भारती? आइए आइए, मेरे कमरेमें आइए।" कहता हुआ वह हाथ पकड़कर उसे भीतर ले गया। उसके आनन्द-दीप्त चेहरेके निष्कपट स्वागतसे और उसके अकृत्रिम हार्दिक आदरसे भारतीका सारा क्रोध पानी पानी हो गया। शशिपदने बिस्तरके नीचेसे एक बड़ा लिफाफा निकालकर भारतीके हाथमें देते हुए कहा, "खोलकर पढ़िए। परसों दस हजार रुपयेका ड्राफ्ट आ रहा है,—नॉट ए पाई लेस! (=एक पाई भी कम नहीं)—कहते नहीं थे: मैं जुआचोर हूँ! मैं झूठा हूँ! मैं शराबी हूँ!—क्या हुआ तो?—दस हजार! नॉट ए पाई लेस!"

इन दस हजार रुपयोंका एक इतिहास है जिसका बता देना यहाँ आवश्यक है। शशिके बन्धु-बान्धव, शत्रु-मित्र, परिचित-अपरिचितोंमें ऐसा कोई बाकी नहीं था जिसने निकट भविष्यमें एक मोटी रकम मिलनेकी सम्भावना उसके मुँहसे न सुनी हो। पर इसपर कोई विश्वास नहीं करता था, बल्कि सब मजाक ही उड़ाया करते थे। और यही उस्तादजीका मूलधन था, इसीका उल्लेख करके वह चाहे जिससे बिना किसी संकोचके उधार माँगा करता था और जल्दी ही मय ब्याजके चुका देनेकी प्रतिज्ञा भी किया करता था। इस अत्यन्त अनिश्चित अर्थ-प्राप्तिपर उसकी कितनी ही आशा-आकांक्षाएँ निर्भर थीं। पाँच-सात साल पहले जब उसके धनवान् नाना मरे थे, तब वे उसे भी ममेरे भाइयोंके साथ सम्पत्तिका एक हिस्सा दे गये थे। इतने दिनोंसे उसे बेचनेकी बात चल रही थी, एक महीने पहले वह ठीक हो गई। लिफाफेमें कलकत्तेके एक बड़े अटर्नीकी चिट्ठी थी; उन्होंने लिखा है, 'रुपये दो ही एक दिनमें मिल जायँगे।'

भारतीके चिट्ठी पढ़ चुकनेपर डाक्टरने पूछा, "बीस हजार रुपयेकी बात थी न शशि?"

शशिने हाथ हिलाते हुए कहा, "अरे, दस हजार रुपये भी क्या कम हैं? आखिर हैं तो अपने ही ममेरे भाई,—सम्पत्ति रही तो घरकी घरमें ही न रही?

डाक्टर बाबू, और ठीक यही बात मझले भइयाने लिखी है। क्या लिखा है, जरा—" कहकर वह मझले भइयाकी चिट्ठी दिखानेके लिए उठना ही चाहता था कि डॉक्टरने रोकते हुए कहा, " रहने दो, रहने दो, भइयाकी चिट्ठीके लिए हमें कुतूहल नहीं है ! " फिर भारतीसे बोले, " ऐसा पागल ममेरा भाई अपना भी कोई होता ! " और हँसने लगे।

शशि खुश नहीं हुआ, वह जी-जानसे इस बातको साबित करनेकी कोशिश करने लगा कि एक तरहसे सम्पत्तिको बगैर बेचे ही इतना रुपया मिल रहा है, और वह भी इसलिए कि उसके मझले भइया जैसे आदर्श पुरुष संसारमें हैं।

भारतीने मुसकराते हुए कहा, " सो तो ठीक बात है अतुल बाबू, मझले भइयाको बगैर देखे ही हम लोगोंने उनके देव-चरित्रको हृदयंगम कर लिया है। इसे अब प्रमाणित करनेकी जरूरत नहीं। "

शशिने उसी वक्त कहा, " लेकिन कल मुझे दस रुपये और देने होंगे " हाँ, तो उस दिनके दस, कलके दस और अपूर्व बाबूके साढ़े-आठ,—पूरम्पूर तीस रुपये मैं परसों तरसों चुका दूँगा।—देने पड़ेंगे, नाहीं नहीं कर सकतीं !"

" भारती हँसने लगी। शशि कहने लगा, " ड्राफ्ट आते ही बैङ्कमें जमा कर दूँगा। शराबी, जुआचोर, स्पेण्डथ्रिफ्ट (=फ़िज़ूल-ख़र्च)—जो मनमें आया, लोगोंने कहा है; मगर अब देखूँगा कोई कैसे क्या कहता है ! असलमें हाथ नहीं डालनेका, सिर्फ ब्याज ही ब्याजमें घर-गृहस्थीका काम चलाऊँगा,-- बल्कि उसमेंसे भी बचा लिया करूँगा। पोस्ट आफिसमें भी एक एकाउण्ट खोलना होगा,—घरमें तो कुछ रखा नहीं जा सकता। हो सकता है कि पाँचेक वर्षमें एक मकान भी खरीद लूँ। और खरीदना तो पड़ेगा ही,—घर-गृहस्थी अब तो सरपर आ ही गई समझो! यह कोई आसान बात नहीं आजकलके जमानेमें ! "

भारतीके चेहरेकी तरफ देखकर डाक्टर कहकहा मारकर हँस पड़े, मगर वह मुँह गम्भीर बनाकर दूसरी तरफ देखती रही।

शशि बोला, " शराब छोड़ दी है, आपने सुना होगा ? "

डाक्टरने कहा, " नहीं तो ! "

शशिने कहा, " बिलकुल, हमेशाके लिए। नवताराने प्रतिज्ञा करा ली है।"

इस बातको लेकर दोनोंकी बातचीत लम्बा रूप धारण कर सकती थी, पर एकके सकौतुक प्रश्नों और दूसरेके उत्साह-भरे उत्तरोंकी धूमसे भारती आफतमें

पड़ गई,—वह किसी तरफ भी शामिल नहीं हो सकी। यह देखकर डाक्टरने दूसरा प्रसंग उठाते हुए असल बात छेड़ दी। बोले, "शशि, तुम तो मालूम होता है यहाँसे जल्दी नहीं हिलनेके ?"

शशिने कहा, "हिलना ? असम्भव है।"

डाक्टरने कहा, "अच्छी बात है, तो यहाँ एक स्थायी अड्डा रहा।"

शशिने उसी वक्त जवाब दिया, "सो कैसे हो सकता है ? अब मैं आप लोगोंके साथ सम्बन्ध नहीं रख सकता। लाइफको अब रिस्कमें (=जोखिममें) नहीं डाला जा सकता।"

डाक्टरने भारतीकी ओर लक्ष्य करके हँसते हुए कहा, "हमारे उस्ताद-जीमें और चाहे जो भो दोष हो; पर यह अपवाद इनपर बड़ेसे बड़ा शत्रु भी नहीं लगा सकता कि इनमें आँखोंका लिहाज है। सीख सको तो यह विद्या इनसे सीख लो भारती !"

उत्तरमें शशि कविका पक्ष लेते हुए भारतीने बहुत ही भले मानसकी तरह कहा, "पर झूठी आशा देनेकी अपेक्षा साफ कह देना ही अच्छा है। यह बात मुझसे नहीं होती। यदि अतुल बाबूसे यह विद्या सीख लेती तो आज मेरी छुट्टी ही न हो जाती भइया ?"

उसके स्वरका अन्तिम हिस्सा सहसा कुछ भारी-सा हो गया। शशिने ध्यान नहीं दिया,—देता तो भी शायद तात्पर्य नहीं समझ पाता। परन्तु, इसके भीतरी मानी जिन्हें समझना चाहिए था, उन्हें समझनेमें देर नहीं लगी।

करीब दो मिनटतक सब मौन रहे। फिर पहले डाक्टरहीने बात की, कहा, "शशि, दो दिनके भीतर मैं चला जा रहा हूँ। पैदल रास्तेसे चीन होकर पैसिफिकके सारे आईलैण्ड और एक बार घूम आना चाहता हूँ। शायद जापानसे अमेरिका भी जा सकता हूँ। कब लौटूँगा मालूम नहीं,—लौटूँगा या नहीं, सो भी नहीं मालूम। अगर अचानक किसी दिन लौटा तो तुम्हारे घर क्या मेरे लिए जगह नहीं होगी ?"

शशि क्षण-भर उनके मुँहकी तरफ एकटक देखता रहा, उसके बाद उसका चेहरा और स्वर आश्चर्यजनक रूपसे परिवर्तित हो गया। गर्दन हिलाकर बोला, "जगह होगी। मेरे घर आपके लिए सदा जगह रहेगी।"

डाक्टरने कुतूहल-भरे स्वरमें कहा, "क्या कह रहे हो शशि, मुझे जगह देनेसे बढ़कर बड़ी विपत्ति आदमीके लिए और क्या हो सकती है?"

शशिने जरा भी विचार किये बगैर कहा, "सो मैं जानता हूँ,मुझे जेल होगी सो होने दो।" यह कहकर वह चुप हो रहा। थोड़ी देर बाद भारतीको लक्ष्य करके धीरे धीरे कहने लगा, "ऐसा मित्र और कहीं नहीं मिलेगा। सन् १९११ में जापानके टोकियो शहरमें बम गिरानेके कुसूरपर जब कोटोकूके सारे दलको फासीका हुक्म हुआ था, डाक्टर तब उनके अखबारके सब-एडिटर थे। पुलिसने जब मकानका दरवाजा घेर लिया तो मैं रोने लगा। डाक्टरने कहा, रोनेसे काम नहीं चलेगा शशि, हम लोगोंको भागना होगा पीछेकी खिड़कीसे रस्सी लटकाकर मुझे उतार दिया और खुद भी उतर आये। डाक्टर बाबू, उःफ,—याद है आपको?" कहते कहते वह अतीत स्मृतिकी ताड़नासे रोमांचित हो गया।

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "याद क्यों नहीं होगा!"

शशि कहने लगा, "याद रखनेकी तो बात ही है। मगर आप मदद न करते तो उसी समय हम लोगोंकी जिन्दगी खतम हो गई थी डाक्टर बाबू। शंघाई-बोटमें फिर कदम नहीं पड़ सकता।—उःफ्, उन नाटे नालायकोंके जैसे बदमाश दुनियामें कहीं ढूँढ़े न मिलेंगे। सच पूछा जाय तो मैं आपके बमबाजोंमें नहीं था,—बासेमें रहता था और बेहला सिखाया करता था। मगर वहाँ मेरी बात कौन सुनता? शैतानोंके यहाँ न तो कोई कानून है, न अदालत। पकड़ लेते तो मुझे जरूर जिबह करके ही छोड़ते। आज जो ये बातें कह रहा हूँ, चल-फिर रहा हूँ, सो सिर्फ डाक्टरकी ही कृपासे।" इतना कहकर उसने डाक्टरकी तरफ इशारा किया। बोला, "ऐसा मित्र दुनियामें कोई नहीं है भारती, और इतनी दया-ममता भी किसीमें नहीं देखी मैंने।"

भारतीकी आँखें भर आईं, बोली, "अपनी सारी कहानी किसी दिन हम लोगोंको सुनाओ न भइया! भगवानने तुम्हें इतनी बुद्धि दी थी, तो अपने अमूल्य प्राणोंकी कीमत समझनेकी बुद्धि ही वे देना कैसे भूल गये? उन्हीं जापानियोंके देशमें तुम फिर जाना चाहते हो?"

शशिने कहा, "मैं भी यही बात कहता हूँ भारती। कहता हूँ, इतनी

जबर्दस्त स्वार्थी, लोभी, ओछी जातसे कुछ भी आशा मत करो। वे लोग कभी किसी दिन कोई मदद नहीं कर सकते।"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "कमरमें रस्सी बाँधे जानेकी बात भी शशि नहीं भूल सका, और जापानियोंको इस जीवनमें माफ भी नहीं कर सका। मगर इतना ही उनका सब कुछ नहीं है भारती, इतनी बड़ी अद्भुत जाति भी दुनियामें और कोई नहीं हैं। उसने अब पहचाना हो सो नहीं, बहुत पहले, पहली ही दृष्टिमें सफेद चमड़ीको पहचान लिया था। अढ़ाई सौ वर्ष पहले जो जाति यह कानून बना सकी थी कि चन्द्र-सूर्य जब तक मौजूद रहें ईसाई हमारे राज्यमें न घुसने पावें, और अगर घुसें तो चरम दण्ड भोगें। वह जाति कुछ भी क्यों न करे, हमारे लिए नमस्कार करने योग्य है।"

वक्ताकी दोनों आँखें लहमे-भरमें प्रदीप्त अग्नि-शिखाकी भाँति जल उठीं। उस वज्रमयी भयानक दृष्टिके सामने शशि मानो उद्भ्रान्त-सा हो उठा। वह मारे डरके सिर हिलाता हुआ कहने लगा, "सो बात ठीक है। ठीक है।"

भारतीके मुँहसे कोई बात नहीं निकली। उसका हृदय मानो अभूतपूर्व अव्यक्त आवेगसे थर थर काँप उठा और मालूम हुआ : आज इस गंभीर निशीथ रात्रिमें आसन्न बिदाईके पहले एक क्षणके लिए उसे इस आदमीका स्वरूप दिखाई दे गया।

डाक्टरने अपनी छातीकी ओर उँगली दिखाते हुए कहा, "क्या कह रही थीं भारती, इसकी कीमत समझने लायक बुद्धि भगवानने मुझे नहीं दी?— झूठी बात है। सुनोगी मेरा सारा इतिहास? कैण्टॉनकी एक गुप्त सभामें सनयातसेनने एक बार मुझसे कहा था—

भारती सहसा डरकर बोल उठी, "कोई सीढ़ीसे ऊपर आ रहा है—"

डाक्टरने कान खड़े करके सुना और जेबमेंसे धीरेसे पिस्तौल निकाल ली, बोले, "इस अँधेरेमें मुझे पकड़ सके ऐसा दुनियामें कोई है ही नहीं।" इतना, कहकर वे खड़े हो गये; किन्तु उनके चेहरेपर उद्वेगकी छाया-सी पड़ गई

सिर्फ विचलित नहीं हुआ कवि शशि। उसने हँसते हुए कहा, "आज नवतारा वगैरहके आनेकी बात थी, शायद—"

डाक्टर हँस दिये, बोले, "शायद क्यों, वे ही हैं। अत्यन्त हलके कदम हैं। मगर उनके साथ 'वगैरह' कौन हैं?"

शशिने कहा, " आपको मालूम नहीं ? हमारी प्रेसिडेण्ट साहब भी आ रही हैं। शायद—"

भारतीने अत्यन्त विस्मित होकर पूछा, " कौन प्रेसिडण्ट ? सुमित्रा जीजी ?"

शशिने सिर हिलाकर कहा, " हाँ " और वह जल्दीसे दरवाजा खोलनेके लिए आगे बढ़ा। भारती डाक्टरके मुँहकी ओर देखने लगी। इसके मानी हुए, अब वह यहाँ लानेका मतलब समझी है। आजकी रात व्यर्थ नहीं जायगी, आनेवाले बाधा-विघ्नोंके सामने अधिकार-समितिकी अन्तिम मीमांसा होना आज अनिवार्य है। सम्भव है अय्यर हो, तलवरकर भी हो, और क्या मालूम शायद निरापद जगह समझकर ब्रजेन्द्रने भी शहर छोड़कर इस जंगलमें आश्रय लिया हो। डाक्टरने अपनी आदतके अनुसार पिस्तौल छिपाई नहीं, वे उसे बायें हाथमें उसी तरह थामे रहे। उनके शान्त चेहरेपर भीतरकी तो कोई भी बात पढ़नेमें नहीं आई, पर भारतीका चेहरा बिलकुल सफेद-फक पड़ गया।

२५

एक एक करके जिन लोगोंने कमरेमें प्रवेश किया, वे सबके सब परिचित ही थे। डाक्टरने मुँह उठाकर कहा, "आओ।" परन्तु चेहरेके उस भावसे ही भारती समझ गई कि कमसे कम इस समय वे इसके लिए तैयार नहीं थे।

सुमित्राके आनेकी बात उन्हें मालूम थी; परन्तु इस बीचमें सभी कोई उनका पीछा करते हुए इस पार आ इकट्ठे हुए, हैं, यह वे नहीं जानते थे। किसी भी तरह यह कोई आकस्मिक घटना नहीं हो सकती, लिहाजा इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके अज्ञातमें कोई गूढ परामर्श हो चुका है। सबके सब आगन्तुक फर्शपर आकर चुपचाप बैठ गये, किसीके आचरणसे रंचमात्र विस्मय या चांचल्य प्रकट नहीं हुआ। साफ समझमें आ गया कि भारतीके सम्बन्धमें न सही, पर डाक्टरके विषयमें जैसे भी हो उन्हें मालूम हो गया है कि वे यहाँ आये हैं। अपूर्वके मामलेको लेकर दलमें एक विच्छेद हो जानेकी आशंका तो थी ही,—शायद आज ही उसका कोई फैसला हो जायगा, इस बातका खयाल करके भारतीके हृदयमें कम्पन-सा पैदा हो गया।

सुमित्राका मुँह सूखा और उदासथा। भारतीके साथ उसने बात नहीं की,—उसकी तरफ अच्छी तरह देखा तक नहीं। ब्रजेन्द्रने अपना गेरुआ रंगका साफा

सिरसे उतारकर अपने मोटे सोटेसे दाबकर पास ही रख दिया और अपने विशाल शरीरको तख्तेकी दीवारके सहारे आरामसे टिका दिया। उसकी गोल गोल आँखोंकी दृष्टि एक बार भारतीके और एक बार डाक्टरके चेहरेपर फिरने लगी। रामदास तलवरकर नीरव और स्थिर बैठा रहा, बैरिस्टर कृष्ण अय्यर सिगरेट सुलगाकर पीने लगा और नवतारा सबसे अलग दूर जाकर बैठ गई।—किसीके साथ मानो उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं, जैसे आज भारतीको वह पहचान भी नहीं सकी। किसीके चेहरेपर न हँसी थी न बात; सत्यानाशी आँधीके पूर्व क्षणोंकी तरह यह निशीथ-सम्मेलन कुछ देरके लिए बिलकुल स्तब्ध रहा।

उस दिनकी भयानक रात्रिकी तरह आज भी भारती उठकर डाक्टरके बहुत पास जाकर सटके बैठ गई। डाक्टरने हँसते हुए कहा, "तुम सबोंसे भारती डरने लगी है, सिर्फ मुझसे ही नहीं डरती।"

इस मन्तव्यकी कोई खास जरूरत नहीं थी, और भारतीके सिवा शायद कोई देख भी न सका कि सुमित्रा आँखके इशारेसे ब्रजेन्द्रको मना कर रही है। मगर कुछ नतीजा न निकला। या तो वह उसका अर्थ नहीं समझा, या फिर उसने उसकी कुछ परवाह नहीं की। वह अपने कर्कश फटे हुए स्वरमें सबको चौंकाता हुआ बोला, "आपके स्वेच्छाचारकी हम लोग निन्दा करते हैं और तीव्र प्रतिवाद करते हैं। अपूर्वको अगर मैं कभी पा गया तो—"

इस असमाप्त वाक्यको डाक्टरने स्वयं पूरा करके कहा, "उसकी जान ले लेंगे।" इतना कहकर उन्होंने खासकर सुमित्राकी तरफ देखते हुए कहा, "क्या तुम सभी लोग इस आदमीकी बातका समर्थन करते हो?" सुमित्रा मुँह नीचा किये रही, और किसीने भी इस प्रश्नका कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ देर स्थिर रहकर डाक्टरने कहा, "ढंगसे मालूम होता है कि तुम सब इसका समर्थन करते हो। और इसके पहले इस विषयमें तुम लोग आलोचना भी कर चुके हो—"

ब्रजेन्द्रने कहा, "हाँ, कर चुके हैं, और इसका प्रतिकार होना हम लोग आवश्यक समझते हैं।"

डाक्टरने उसकी तरफ देखकर कहा, "मैं भी ऐसा ही समझता हूँ। मगर उसके पहले एक जरूरी बात याद दिलाना चाहता हूँ जिसकी सम्भवतः क्रोधके कारण तुम लोगोंको याद नहीं रही है। अहमद दूरानी हम लोगोंके सारे उत्तर चीनका सेक्रेटरी था; वैसा निर्भीक कार्यदक्ष आदमी हममें और कोई नहीं था।

१९१० में जापानके द्वारा कोरिया राज्य हड़पे जानेके महीने-भर बाद ही वह मंचूरियाके एक रेल्वे स्टेशनपर पकड़ा गया और शंघाईमें उसे फाँसी हो गई।—सुमित्रा, दूरानीको शायद तुमने देखा था, न?"

सुमित्राने सिर हिलाकर जताया, "हाँ।"

डाक्टरने कहा, "मैं तब छितामें टूटे हुए दलके पुनर्गठनमें लगा हुआ था,—मुझे खबर तक नहीं मिली कि मेरा एक हाथ टूट गया। हालाँ कि जिस समय अदालतमें उसके विरुद्ध न्याय-विचारका तमाशा हो रहा था, उस समयउसकी रक्षा करना जरा भी कठिन नहीं था। हमारे अधिकांश साथी उस समय वहीं थे, फिर भी इतनी बड़ी दुर्घटना कैसे घट गई, जानते हो? फैजाबादका मथुरा दुबे उन दिनों अत्यन्त तुच्छ अविचार-कुविचारकी शिकायतें कर करके लोगोंके मनमें जहर फैला चुका था, इसलिए दूरानीकी मृत्युसे सबको मानो खुशी हुई। मेरे लौट आनेपर कैण्टॉनकी मीटिंगमें जब सब बातोंका भेद खुला, तब दूरानी संसारसे बिदा हो चुका था और मथुरा दुबे टायफॉइडसे मर चुका था। प्रतीकारके लिए कुछ बाकी ही नहीं बचा था, परन्तु भविष्यके डरसे उस रातकी गुप्त-सभाने दो अत्यन्त कठोर कानून पास किये थे।—कृष्ण अय्यर, तुम तो मौजूद थे वहाँ, तुम्हीं बताओ न?"

कृष्ण अय्यरका चेहरा सूख गया, वह बोला, "आप किसका इशारा कर रहे हैं, मेरी समझमें नहीं आया डाक्टर?"

डाक्टर रंचमात्र भी विचलित न होकर बोले, "ब्रजेन्द्रका।—एक कानून था कि मेरे पीछे मेरे कामकी आलोचना नहीं की जा सकती।"

ब्रजेन्द्र व्यंग-भरे स्वरमें बोला, "आलोचना भी नहीं की जा सकती?"

डाक्टरने उत्तर दिया, "नहीं, पीठ-पीछे नहीं की जा सकती। फिर भी की जाती है, इस बातको मैं जानता हूँ। इसका कारण यह है कि उस दिनकी कैण्टॉनकी सभामें जो लोग उपस्थित थे, दूरानीकी मौतसे वे जितने उद्विग्न हो उठे थे मैं उतना नहीं हुआ था; लिहाजा आलोचना चलती आ रही है, और मैं उपेक्षा करता आ रहा हूँ। मगर एक दूसरा बड़ा जबरदस्त अपराध भी है बिरजू!"

ब्रजेन्द्रने उसी तरह उपेक्षा-भरे स्वरमें कहा, "उसे भी साफ साफ सुना दीजिए।"

डाक्टरने कहा, "साफ साफ ही सुना रहा हूँ। मेरे विरुद्ध विद्रोह पैदा करना

बड़ा भयंकर अपराध है। दूरानीकी मृत्युके बाद इस विषयमें मुझे सावधान हो जाना चाहिए।"

ब्रजेन्द्र कठोर हो उठा, बोला, "सावधान होनेकी जरूरत दूसरेके लिए भी ठीक वैसी ही हो सकती है, जैसी आपको। संसारमें जरूरत सिर्फ आपके अकेलेके लिए ही नहीं है।" इतना कहकर उसने सबकी तरफ ताककर देखा; पर सबके सब मौन रहे, किसीने भी उसकी बातका जवाब नहीं दिया।

डाक्टर खुद भी कुछ देर चुप रहे, बादमें धीरेसे बोले, "इसका दण्ड है चरम दण्ड! सोचा था, जानेके पहले कुछ करूँगा नहीं, मगर ब्रजेन्द्र, तुम्हें खुद ही सब्र नहीं हुआ। दूसरेके प्राण लेनेको तो तुम सदा ही तैयार रहते हो, लेकिन अपने तई कैसा मालूम होता है?"

ब्रजेन्द्रका चेहरा स्याह पड़ गया। दूसरे ही क्षण उसने अपनेको सम्हालते हुए दम्भके साथ कहा, "मैं एनार्किस्ट हूँ, क्रान्तिकारी हूँ, प्राण मेरे लिए कुछ भी नहीं हैं,—ले भी सकता हूँ, और दे भी सकता हूँ।"

डाक्टरने शान्त स्वरमें कहा, "तो आज रातको ऐसा होने देना होगा,—मगर बेल्टसे उसे निकालनेका वक्त नहीं मिलेगा ब्रजेन्द्र, मेरे आँख है,—मैं तुम्हें पहचानता हूँ।" कहकर उन्होंने अपना पिस्तौलशुदा बायाँ हाथ उठा लिया। भारतीके व्याकुल होकर उस हाथको दबानेकी कोशिश करते ही उन्होंने दाहिने हाथसे उसे हटाते हुए कहा, "छिः!"

कमरेके अन्दर लहमे-भरमें जैसे एक बिजली-सी पड़ गई।

सुमित्राके ओठ काँपने लगे, बोली, "अपने ही भीतर यह सब क्या हो रहा है, बताइए तो!"

तलवरकर अब तक कुछ बोला नहीं था, अब धीरे धीरे कहने लगा, "आपके दलके सब नियम मुझे मालूम नहीं। आपसे मतभेद हो जानेकी सजा क्या मौत है? अपूर्व बाबू बच गये, इससे मन ही मन मैं खुश ही हुआ हूँ, मगर इतना सच कहनेके लिए मैं मजबूर हूँ कि इस विषयमें आपका अन्याय कम नहीं हुआ।"

कृष्ण अय्यरने सिर हिलाकर समर्थन किया। ब्रजेन्द्रके कंठमें अब उपहास या हिमाकत नहीं थी; उसने बहुतोंकी सहानुभूतिसे बल पाकर कहा, "एक

आदमीकी जान जब कि जानी चाहिए, तो फिर मेरी ही जाने दीजिए। मैं तैयार हूँ।"

सुमित्राने कहा, "ट्रेटरके (=देशद्रोहीके) बदले अगर एक ट्रायेड (=परीक्षित) कॉमरेडका खून ही तुम्हें चाहिए, तो मैं भी तो दे सकती हूँ डाक्टर।"

डाक्टर स्थिर होकर बैठ रहे, उन्होंने इस आवेग-पूर्ण बातका कुछ जवाब नहीं दिया। दो मिनट बाद अपने आप ही जरा मुसकराकर बोले, "उन बातको जमाना गुजर चुका। तब तुम लोग थे ही कहाँ? इस ट्रायेड कॉमरेडको मैं तभीसे जानता हूँ। खैर, जाने दो उस बातको।—टोकियोके एक होटलमें बैठकर सनयात सेनने एक दिन कहा था, 'निराशा सहनेकी शक्ति जिसमें जितनी कम हो, उसे इस रास्तेसे उतना ही दूर हट जाना चाहिए।' लिहाजा इसे मैं सह लूँगा।—मगर ब्रजेन्द्र, तुम्हें मैंने झूठमूठ ही डरानेकी कोशिश नहीं की है। मुझे दूसरी जगह जाना पड़ रहा है,—लेकिन डिसिप्लिन टूटनेसे तो मेरा काम नहीं चलेगा। सुमित्राको अगर तुम अपने ही गुटमें पा रहे हो, तो आई विश् यू गुडलक (=मेरी शुभाकांक्षा)।—लेकिन मेरा रास्ता तुम छोड़ दो। सुरबायामें एक बार ऐटेम्प्ट कर चुके हो, परसों फिर एक बार किया, मगर इसके बाद फिर इफ यू मीट मी—(=यदि तुम फिर मुझे मिले तो—)।"

सुमित्राने उद्वेगसे चौंककर पूछा, "इन सब बातोंके मानी? ऐटेम्प्ट करनेके क्या मानी?"

डाक्टरने उसके प्रश्नको सुना-अनसुना करके कहा, "कृष्ण अय्यर, आइ एम् सॉरी! (=मुझे खेद है कि—)"

अय्यरने मुँह नीचा कर लिया, जवाब नहीं दिया। डाक्टरने जेबमेंसे घड़ी निकालकर देखी, फिर भारतीका हाथ पकड़कर खींचते हुए कहा, "अब चलो, मैं तुम्हें घर पहुँचाकर चला जाऊँ। उठो।"

भारती स्वप्न-प्रभावितकी तरह उठ बैठी थी, इशारा पाते ही चुपकेसे खड़ी हो गई। डाक्टर उसे अपने आगे किये हुए कमरेसे बाहर चल दिये और दरवाजेके पास पहुँचकर एक बार मुड़कर सबके लिए कहते गये, "गुड् नाइट!"

इस विदाई-वाणीका किसीने उत्तर नहीं दिया, सभी स्वप्न-प्रभावितकी तरह दंग होकर रह गये। भारतीके नीचे उतर जानेके बाद जब डाक्टर ऊपरकी तरफ देखते हुए उतर रहे थे तब अकस्मात् शशि दरवाजा खोलकर मुँह

निकालके बोला, "लेकिन मुझे तो आपसे बड़ा जरूरी काम था डाक्टर !" और जल्दीसे उतरकर उनके पास आकर खड़ा हो गया, फिर साँस रोके हुए बोला, "मैं तो आदमियोंमें ही शुमार नहीं डाक्टर बाबू, किसी दिन आपके किसी काममें आने लायक शक्ति ही नहीं मुझमें, मगर आपका ऋण मैं हमेशा याद रक्खूँगा। उसे मैं नहीं भूलनेका।"

डाक्टरने स्नेहके साथ कहा, "कौन कहता है तुम आदमी नहीं हो शशि? तुम कवि हो, तुम गुणी हो, तुम सब आदमियोंमें बड़े हो। और मेरा ऋण अगर सचमुच ही कुछ हो, तो उसे न भूलना ही अच्छा है।"

शशिने कहा, "मैं नही भूलनेका। पर इस बातको आप भी न भूल जाइए कि जो कुछ मेरे पास है, सो सब आपका ही है,—आप चाहे जहाँ रहें।"

दोनों जब भारतीके पास पहुँच गये तो उसने उत्सुक होकर पूछा, "क्या है भइया?"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "बुरे दिनोंमें तो कविको कोई आफत नहीं थी, पर अचानक अच्छे दिन आ जानेसे बड़ी भारी चिन्ता हो गई है,—कहीं ऐसा न हो कि कृतज्ञताका ऋण याद न रहे। इसीसे दौड़कर कहने आये हैं कि इनके पास जो भी कुछ है, सब मेरा है।"

भारतीने कहा, "ऐसी बात है शशि बाबू?"

शशि चुप रहा। डाक्टरने कौतुकपूर्ण स्निग्ध स्वरमें कहा, "याद रहेगा जी शशि, याद रहेगा। यह चीज संसारमें इतनी सुलभ नहीं कि कोई सहजमें भूल जाय।"

शशिने कहा, "आप कब जायँगे? जानेके पहले क्या आपसे भेंट नहीं होगी?"

डाक्टरने कहा, समझ लो कि भेंट नहीं होगी। तुम मुझसे उम्रमें छोटे हो, इसलिए मैं आज ही आशीर्वाद दिये जाता हूँ कि तुम सुखी हो सको। नहीं हो सकोगे?"

भारतीने कहा, "अरे हाँ, शनिवारको इनका ब्याह है!"

डाक्टर मुसकरा दिये, कुछ बोले नहीं। सामने ही नदी है: लकड़ीके एक ढेरके पास छोटी-सी नाव भाटेके कीचड़में टेढ़ी हुई पड़ी थी, उसे सीधी करके और भारतीको बिठाकर खुद भी बैठ गये। शशिने कहा, "शनिवार तक आपको

रह जाना पड़ेगा। जिन्दगीमें बहुतेरी भीख दी है, इसे भी दीजिए। भारती, आपको भी उस दिन आना होगा।"

भारती मौन रही। डाक्टरने कहा, "यह नहीं आयेगी शशि, पर मैं अगर रुका रहा तो छिपे छिपे आकर आशीर्वाद दे जाऊँगा, वचन दिये जाता हूँ। और अगर न आया, तो निश्चय समझ लेना कि सव्यसाचीके लिए भी आना असम्भव था। मगर कहीं भी रहूँ, उस दिन तुम्हारे लिए प्रार्थना करूँगा कि तुम्हारे बाकी दिन सुखसे कटें।" इतना कहकर उन्होंने लग्गीसे लकड़ीके ढेरको जोरसे ठेल दिया और नाव कीचड़से सुलझकर नदीके पानीमें जा पड़ी।

ज्वार तो शुरू हुई नहीं थी, पर भाटेका खिंचाव ढीला पड़ रहा था। उस धीमे बहावमें ऊँची तीर-भूमिकी अँधेरी छायाके नीचेसे यह छोटी-सी नैया किनारे किनारे चलने लगी। उस पारकी तरफ ले जानेमें अभी देर थी, डाक्टर हाथके डाँड़ यथास्थान रखकर स्थिर होकर बैठ गये।

थकी हुई भारती उनकी गोदमें कुहनी रखकर बैठ गई, बोली, "आज अकेली होती तो इतना रोती कि नदीका पानी बढ़ जाता। भइया, भविष्यमें और सबको सुखी होनेका अधिकार है, सिर्फ नहीं है तो एक तुम्हींको। शशि बाबू इतना बड़ा भद्दा काम करने जा रहे हैं, उन्हें भी तुम जी खोलकर आशीर्वाद दे आये! सिर्फ तुम्हींको आशीर्वाद देनेवाला कोई नहीं है जो कहता कि सुखी रहो। तुम बड़े हो, चाहे जो हो, पर तुम्हें भी मैं ठीक यही कहकर आशीर्वाद दूँगी कि तुम भी भविष्यमें सुखी हो सको।"

डाक्टरने कहा, "छोटोंका आशीर्वाद लगता ही नहीं। बल्कि उलटा फल देता है।"

भारतीने कहा, "झूठी बात है। मैं सिर्फ छोटी ही नहीं हूँ, एक दूसरी तरहसे तुमसे बड़ी भी हूँ। जानेके पहले तुम सब तहस-नहस कर सुमित्रा जीजीके साथ चिर विच्छेद करके जाना चाहते हो। सो मैं नहीं होने दूँगी।" थोड़ी देर मौन रहकर वह कहने लगी, "तुम कहोगे कि मैं सुमित्राको प्रेम नहीं करता। न सही। तुम पुरुषोंके प्रेमका मूल्य ही कितना है भइया? जो आज है वह कल नहीं। अपूर्व बाबू भी तो मुझसे प्रेम नहीं कर सके, मगर मैं तो कर सकी हूँ। मेरा कर सकना ही सब कुछ है। यदि भ्रमरमें मधु-संचय करनेकी शक्ति नहीं, तो इसके लिए लड़ा किससे जाय? मैं तुमसे कहे देती हूँ भइया, इस

भारतीने डर कर पूछा, " चुकाने नहीं दिया क्या ! तुम क्या सचमुच ही व्रजेन्द्रको मार डालना चाहते थे ? "

डाक्टरने गर्दन हिलाकर कहा, " हाँ, सचमुच ही मार देना चाहता था और इस बीच पुलिसने अगर उसे जेल न भेज दिया तो वापस आकर किसी दिन यह काम मुझे सम्पन्न करना ही पड़ेगा। "

अब तक भारती डाक्टरकी गोदपर कुहनी टेके बैठी हुई थी, यह सुनकर वह सीधी उठकर बैठ गई और एकदम स्तब्ध हो रही। उसके हृदयपर एक कठोर आघात पहुँचा, डाक्टर इस बातको समझ गये; पर कुछ बात न कहके वे डाँड़ हाथमें लेकर उस पारकी तरफ नाव चलाने लगे।

बहुत देर बाद भारतीने आहिस्तेसे पूछा, " अच्छा भइया, मैं अगर तुम्हारी सुमित्रा होती तो क्या तुम मुझे भी इसी तरह छोड़कर चले जाते ? "

डाक्टर हँस दिये, बोले, " मगर तुम तो सुमित्रा नहीं हो, तुम भारती हो। इसलिए मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगा, कामके लिए रख जाऊँगा। "

भारतीने व्यग्र होकर कहा, " माफ करो भइया, तुम्हारे इन खून-खराबीके काममें मैं अब नहीं रहनेकी। तुम्हारी गुप्त समितिका काम अब मुझसे नहीं हो सकता। "

डाक्टरने कहा, " इसके मानी यह कि इन लोगोंकी तरह तुम भी मुझे त्याग जाना चाहती हो ? "

इस बातको सुनकर भारती क्षोभसे व्याकुल हो उठी, " बोली, यह कहकर तुम मेरे साथ भारी अन्याय कर रहे हो भइया। तुम जो खुशी आये कर सकते हो, पर मैं तुम्हें छोड़कर चली गई, इस बातका खयाल करके मैं एक दिन भी जीती रह सकती हूँ ? मैं तुम्हारा ही काम करती रहूँगी,—जब तक कि तुम अपनी इच्छासे मुझे छुट्टी न दे दो। " फिर जरा थमकर कहने लगी, " मगर मैं जानती हूँ कि आदमी मारते फिरना ही तुम्हारा असल काम नहीं है; तुम्हारा काम है आदमीको आदमीकी तरह जिलाना। तुम्हारे इसी काममें मैं लगी रहूँगी, और यही सोचकर ही तो एक दिन तुम लोगोंमें आई थी भइया ! "

डाक्टरने एक क्षणके लिए डाँड़ खेना बन्द करके पूछा, " कौन-सा काम है मेरा ? "

भारतीने कहा, " हम लोगोंकी अधिकार-समितिके लिए कोई जरूरत नहीं

थी गुप्त समितिके रूपमें परिवर्तित होनेकी। कारखानोंके मजदूर-मिस्त्रियोंकी हालत तो मैं अपनी आँखोंसे देख आई हूँ। उनका पाप, उनकी कु-शिक्षा, उनकी पशु जैसी अवस्था,—इनमेंसे किसीका भी रंच-मात्र प्रतिकार अगर जिन्दगी-भरमें कर सकी तो उससे बढ़कर सार्थकता और क्या हो सकती है? सच बताओ भइया, यह क्या तुम्हारा काम नहीं है?"

डाक्टरने कोई जवाब नहीं दिया। बहुत देर तक चुप रहकर वे न जाने क्या क्या सोचते रहे, फिर सहसा दोनों डाँड़ोंको पानीसे उठाकर धीरेसे बोले, "मगर तुम्हारा यह काम नहीं भारती, तुम्हारे लिए दूसरा कर्तव्य है। यह काम सुमित्राका है,—इसीलिए मैंने इसका सारा भार उसीपर छोड़ दिया है।"

नदीका भाटा खत्म होकर मुहानेमें ज्वार शुरू हो गई थी, परन्तु सागरके उफनते हुए पानीका जोर अब भी नहीं आ पाया था। उस स्तब्धप्राय नदीकी गोदमें उनकी छोटी-सी नैया मन्थर मन्द गतिसे बहने लगी। डाक्टरने उसी तरह शान्त मुलायम स्वरमें कहा, "तुमसे कह देना ही अच्छा है भारती, कुछ थोड़ेसे कुली मजदूरोंकी भलाई करनेके लिए मैंने इस अधिकार-समितिकी नीव नहीं डाली है। इससे बहुत बड़ा लक्ष्य है इसका। उस लक्ष्यके लिए हो सकता है कि किसी दिन इनको भेड़-बकरियोंकी तरह बलि तक दे देना पड़े,—उसमें तुम मत रहना बहन, तुमसे यह नहीं होगा।"

भारती चौंक पड़ी, बोली, "यह सब तुम क्या कह रहे हो भइया? आदमियोंको बलि दोगे?"

डाक्टरने उसी तरह शान्त स्वरमें कहा, "आदमी हैं कहाँ? सब जानवर ही तो हैं।"

भारती डर गई, बोली, "आदमीके विषयमें तुम हँसी-मजाकमें भी ऐसी बात जबानपर न लाना, कहे देती हूँ। हर समय तुम्हारी बातें समझमें नहीं आतीं,—शायद समझ भी नहीं सकती, लेकिन तुम्हारी मुँहकी बातसे मैं तुम्हें बहुत ज्यादा समझती हूँ भइया। मुझे झूठमूठको डरानेकी कोशिश मत किया करो।"

डाक्टरने कहा, "नहीं भारती, झूठ मूठ नहीं, तुमको सचमुच ही डरानेकी कोशिश की है जिससे मेरे चले जानेके बाद तुम फिर कुली-मजदूरोंकी भलाई करनेमें न रहो। इस तरहसे इनका भला नहीं किया जा सकता,—इनका भला किया जा सकता है सिर्फ क्रान्तिके मार्गसे और उसी क्रान्तिके मार्गपर

चलानेके लिए ही अधिकार-समितिकी सृष्टि हुई है। क्रान्ति शान्ति नहीं है। उसे हिंसामेंसे ही चलना पड़ता है,—यही उसका वर है और यही उसका अभिशाप। एक बार योरोपकी तरफ देखो। इंगेरीमें ऐसा ही हुआ है, रूसमें भी बार बार यही हुआ है। १७५९ के जूनके महीनेमें होनेवाली क्रान्ति फरासीसियोंके इतिहासमें आज भी अक्षय बनी हुई है। कुली-मजदूरोंके खूनसे उस दिन पेरिस शहरकी तमाम सड़कें रंगीन हो उठी थीं। जापान तो अभी उस दिनका है,—उस देशमें भी मजदूरोंके दुःखका इतिहास रंच-मात्र भी इससे भिन्न नहीं है। आदमीके चलनेका रास्ता आदमी बिना लड़े कभी नहीं छोड़ता भारती!"

भारती सिहर उठी, बोली, "सो मैं जानती हूँ, परन्तु वैसे भयानक उपद्रव क्या तुम इस देशमें भी खींच लाना चाहते हो भइया? जिनकी तिल-भर भलाई करनेके लिए हम दिन-रात परिश्रम कर रहे हैं, उन्हींके खूनसे रास्तोंमें खूनकी नदी बहाना चाहते हो?"

डाक्टरने सहज भावसे कहा, "जरूर चाहता हूँ। मानवकी रक्त-धारा महामानवके मुक्ति-समुद्रकी ओर तरंगित होकर दौड़ती जायगी, यही तो मेरा स्वप्न है। नहीं तो इतना ऊँचा पहाड़-सा पाप धुलेगा किस चीजसे? उस धोनेके काममें अगर तुम्हारे भइयाके भी दो बूँद खूनकी जरूरत पड़ेगी, तो उन्हें देनेमें उसे आपत्ति नहीं होगी।"

भारतीने कहा, "इतना तो मैं तुम्हें पहचानती हूँ भइया। पर देशमें ऐसी अशान्ति लानेके लिए ही क्या तुम इतना बड़ा जाल बिछाये बैठे हो? इससे बड़ा और कोई आदर्श तुम्हारे पास नहीं है?"

डाक्टरने कहा, "अब तक तो ढूँढ़े मिला नहीं बहन! बहुत घूमा हूँ, बहुत पढ़ा है, बहुत विचारा है। पर मैं तो तुमसे पहले भी कह चुका हूँ भारती, कि अशान्ति फैलानेके मानी अकल्याण फैलाना नहीं है। शान्ति, शान्ति, शान्ति,—सुनते सुनते कान बहरे हो गये। मगर इस असत्यका कौन लोग प्रचार करते हैं, जानती हो? इस मिथ्या मंत्रके ऋषि वही हैं जो दूसरोंकी शान्ति लूटकर बड़ी बड़ी अट्टालिकाएँ और प्रासाद बनाकर रास्ता रोके बैठे हैं; वंचित, पीड़ित और उपद्रवित नर-नारियोंके कानमें लगातार इस मंत्रको जप-जपकर उन्हें ऐसा कर दिया गया है कि वे भी अशान्तिके नामसे चौंक पड़ते हैं और सोचते

हैं कि शायद यह पाप है, शायद यह अमंगल है। बँधी हुई गायको भूखों मरते देखा है? वह खड़ी खड़ी मर जाती है, मगर उस पुरानी कमजोर रस्सीको तोड़कर मालिककी शान्ति नष्ट नहीं करती। यही तो हुआ है, इसीसे तो दीन दरिद्रोंके चलनेका रास्ता एकदम बन्द हो गया है। फिर भी उन्हींकी अट्टालिकाओं और प्रासादोंको तोड़नेके काममें अगर हम भी उन्हींके साथ स्वर मिलाकर अशान्ति अशान्ति कहके रोने लगें, तो रास्ता कहाँसे मिलेगा?—नहीं भारती, सो नहीं हो सकता। वह संस्था चाहे जितनी प्राचीन हो, चाहे जितनी पवित्र हो, चाहे जितनी भी सनातन हो,—मनुष्यसे बड़ी नहीं हो सकती। आज उसे हमें तोड़ ही डालना होगा। धूल तो उड़ेगी ही, बालू-चूना तो झरेगा ही, ईंट-पत्थर तो खिसक-खिसक कर आदमीके सरपर गिरेंगे ही भारती, यह तो स्वाभाविक बात है।"

भारतीने कहा, "अगर ऐसा ही हो भइया, तो शान्तिका रास्ता छोड़कर पहलेहीसे अशान्तिके रास्तेमें कदम क्यों बढ़ायें?"

डाक्टरने कहा, "इसलिए कि शान्तिका रास्ता उस सनातन, पवित्र और सुप्राचीन सभ्यताके संस्कारोंसे कसकर बन्द किया हुआ है। सिर्फ एक क्रान्तिका रास्ता ही खुला हुआ है।"

भारतीने पूछा, "हम लोग उस दिन कारखानेके मजदूरोंको संघबद्ध करके निरुपद्रव हड़ताल करानेकी जो तैयारी कर रहे थे, सो भी क्या उन लोगोंकी भलाईके लिए नहीं थी? तुम्हारे चले जानेके बाद अधिकार-समितिका काम भी क्या हम लोगोंको बन्द कर देना पड़ेगा?"

डाक्टरने कहा, 'नहीं, पर वह काम तुम्हारा नहीं, सुमित्राका है। तुम्हारा काम दूसरा है। भारती, 'हड़ताल' नामकी एक चीज है, पर 'निरुपद्रव हड़ताल' नामकी कोई चीज नहीं। संसारमें कोई भी हड़ताल कहीं सफल नहीं होती जब तक कि उसके पीछे बाहु-बल न हो। अन्तिम परीक्षा उन्हींको देनी पड़ती है।"

भारतीने आश्चर्यके साथ पूछा, "किन्हें देनी पड़ती है? मजदूरोंको?"

डाक्टरने कहा, "हाँ। तुम्हें मालूम नहीं, पर सुमित्रा अच्छी तरह जानती है कि धनिककी आर्थिक हानि और गरीबका अनशन एक चीज़ नहीं। गरीबके उपायहीन बेकार दिन उसे दिनपर दिन भुखमरेकी ओर ढकेलते ले जाते हैं। उसके बाल-बच्चे और स्त्री-परिवार सब भूखे रोते रहते हैं,—उनका

लगातारका क्रन्दन आखिर उसे एक दिन पागल बना देता है और तब उसे दूसरेका अन्न छीन खानेके सिवा जीवन-धारणका और कोई उपाय नहीं सूझता। धनिक उसी दिनकी प्रतीक्षा करके स्थिर बैठा रहता है। अर्थ-बल, सेना-बल, अस्त्र-बल,—सभी तो उसके हाथमें हैं,—वही तो राज-शक्ति है। उस दिन वह लापरवाही नहीं करता,—तुम्हारी उस सनातन शान्ति और पवित्र शृंखलाका जयजयकार हो, उस दिन निरस्त्र निरन्न गरीबोंके खूनसे नदी बहने लगती है।"

भारतीने साँस रोके हुए, "उसके बाद?"

"उसके बाद वे सब पीड़ित, पराजित, क्षुधातुर मजदूर फिर एक दिन उन्हीं हत्यारोंके द्वारपर हाथ फैलाकर खड़े हो जाते हैं, उन्हें भीख मिल जाती है।"

भारतीने कहा, "फिर?"

"फिर! फिर एक दिन वे पहलेके अत्याचारोंके प्रतीकारकी आशासे संघबद्ध होकर हड़ताल कर बैठते हैं, और तब उसी पुरानी कहानीका पुनः अभिनय होता है।"

भारतीका मन क्षण-भरके लिए निराशासे भर गया, उसने धीरेसे पूछा, "तो फिर ऐसी हड़तालोंसे फायदा क्या भइया?"

डाक्टरकी आँखें अँधेरेमें भी चमक उठीं, कहने लगे, "फायदा? यही तो बड़ा भारी फायदा है भारती, यही तो हमारी क्रान्तिका राजमार्ग है। वस्त्रहीन, अन्नहीन, ज्ञानहीन दरिद्रोंका पराजय तो सत्य हुआ और उनके सारे हृदयमें जो ज़हर भरकर चारों तरफ फैलने लगता है, वह सत्य नहीं होगा? वही तो हमारा मूल धन है। कहीं भी किसी देशमें सिर्फ क्रान्तिके लिए ही क्रान्ति नहीं मचाई जा सकती भारती, उसका कोई न कोई आधार अवश्य होना चाहिए। यही तो हमारा अवलम्बन है। जो मूर्ख इस बातको नहीं जानता,—सिर्फ मज़दूरीकी कमीबेशीके लिए हड़ताल कराना चाहता है, वह मजदूरोंका भी सर्वनाश करता है और देशका भी।"

भारती सहसा कह उठी, "नाव हमारी शायद कुछ पीछेको चली आई है भइया?"

डाक्टर हँस दिये, बोले, "उधर भी निगाह है बहन,—कहाँ जाना है सो भूला नहीं हूँ।"

भारतीने कहा, "अब मेरी समझमें आ गया कि क्यों तुम मुझे इसमेंसे

बिदा कर देना चाहते हो। मैं बहुत कमजोर हूँ,—शायद, उन्हीं जैसी कमजोर। मैं कुछ नहीं हूँ,—आज भी तुम्हारा सारा भरोसा सुमित्रा जीजीपर ही है। मगर यह बात मैं किसी तरह नहीं मानूँगी कि इसके सिवा और कोई रास्ता ही नहीं। आदमीकी सारीकी सारी खोज अभी खत्म नहीं हो गई है। एकके मंगलके लिए दूसरेका अमंगल करना ही होगा, इसे मैं किसी भी तरह चरम सत्य नहीं मान सकती,—तुम्हारे कहनेपर भी नहीं।"

"सो मैं जानता हूँ बहन।"

भारतीने कहा, "मगर तुम्हारा काम छोड़कर मैं जाऊँ भी तो कैसे? और रहूँ भी तो क्या लेकर? अगर वापस न आओगे, तो जीती रहूँगी कैसे?"

"सो भी मुझे मालूम है।"

भारतीने कहा, "मालूम तो तुम्हें सब कुछ है। तो फिर करूँ क्या?"

कुछ देर सन्नाटा रहा। उत्तर न पाकर भारतीने धीरेसे कहा, "क्रान्ति क्या है और क्यों उसकी इतनी जरूरत है, इस बातकी मैं धारणा ही नहीं कर सकती। फिर भी, तुम्हारे मुँहसे जब सुनती हूँ, तो मेरा हृदय रोने लगता है। मालूम होता है, आदमीके दुःखका इतिहास अपनी आँखोंसे तुमने न जाने कितना देखा है! नहीं तो इस तरह तुम्हें पागल किसने बनाया? अच्छा, जाते समय मुझे क्या तुम अपने साथ नहीं ले सकते?"

डाक्टरने हँसकर कहा, "तुम क्या पागल हो गई हो भारती?"

"पागल हो गई हूँ?—ऐसा ही होगा।" कुछ ठहरकर फिर बोली, "मालूम होता है, मानो मैं तुम्हारे काममें विघ्न हूँ। इसीसे तुम मुझे कहीं हटा देना चाहते हो। पर मैं क्या देशके किसी भी अच्छे काम नहीं आ सकती? मेरे लिए क्या कहीं भी कोई मौका नहीं है?"

डाक्टरने कहा, "देशमें अच्छे काम करनेको बेशुमार हैं भारती, पर मौका खुद बना लेना पड़ता है।""

भारतीने दुलारके स्वरमें कहा, "मुझसे नहीं होता भइया, तुम बनाके दे जाओ।"

डाक्टर क्षण-भर चुप रहे। उनका प्रसन्न चेहरा सहसा गम्भीर हो उठा जो अँधेरेमें भारतीको दिखाई नहीं दिया। डाक्टरने कहा, "देशमें छोटी-बड़ी ऐसी बहुत-सी संस्थाएँ हैं जो देशके लिए बहुत-से अच्छे काम करती हैं जैसे पीड़ितोंकी

सेवा करना, नर-नारियोंको पुण्य-संचयमें प्रवृत्त करना, आदमीकी हारी-बीमारीमें दवा देना, तीमारदारी करना, बाढ़-पीड़ितोंको सहायता और सान्त्वना देना। वे ही तुम्हें मार्ग दिखा देंगी भारती!—लेकिन मैं तो क्रान्तिकारी हूँ, मुझमें दया नहीं, माया नहीं, स्नेह नहीं,—पाप-पुण्य मेरे लिए दोनों ही मिथ्या परिहास हैं। ये सब अच्छे काम मेरी दृष्टिमें लड़कोंके खेल हैं। भारतकी स्वाधीनता ही मेरा एक मात्र लक्ष्य है,—मेरी एकमात्र साधना है। मेरे लिए यही अच्छा है, मेरे लिए यही बुरा है,—इसके सिवा इस जीवनमें मेरे लिए और कहीं कुछ नहीं है।—भारती, अब मुझे तुम अपनी ओर मत खींचो।"

भारती अँधेरेमें एकटक उनकी तरफ देखती रही, रोकी हुई साँस छोड़कर स्तब्ध होकर बैठी रही।

२६

आज शनिवार है : शशि और नवताराके विवाहका दिन। शशिकी हाथ जोड़कर प्रार्थना थी कि रातके अँधेरेमें किसी भी समय फुरसत निकालकर डाक्टर भारतीको साथ लेकर पधारें और उन दोनोंको आशीर्वाद दे जायें। पचमीका खण्ड-चन्द्र अभी अभी पेड़ोंकी ओटमें छिपा है। भारती एक काला रैपर ओढ़े दबे पाँव अपने उसी जनशून्य घाटके एक किनारे आकर खड़ी हो गई। डाक्टर नावमें बैठे प्रतीक्षा कर रहे थे। भारती नावपर सवार होकर बोली, " न-जाने क्या क्या सोचती हुई आ रही थी। मैं जानती थी कि मुझसे बगैर कहे तुम हरगिज नहीं जाओगे, फिर भी तो डर नहीं जाता। के दिन हुए हैं अभी, पर मालूम होने लगा मानो युगोंसे तुम्हें नहीं देखा।—मैं कहे देती हूँ, तुम्हारे साथ चीन देश जरूर चलूँगी।"

डाक्टरने हँसकर कहा, " मैं भी कहे देता हूँ कि तुम ऐसा करनेकी कतई कोशिश न करना।" और उन्होंने भाटेके स्रोतमें नाव छोड़ दी। फिर कहने लगे, " इतना तो आसानीसे पार कर जायेंगे, पर बड़ी नदीसे उलटे बहावमें जाते जाते आज हम लोगोंको बहुत देरी हो जायगी।"

भारतीने कहा, " हो जाने दो। ऐसे कौनसे बड़े शुभ कार्यमें शामिल होने जा रहे हो जो समय निकल जानेसे नुकसान हो जायगा? मेरी तो जानेका

इच्छा ही नहीं थी; सिर्फ तुम जा रहे हो, इसीसे चल रही हूँ। कैसा भद्दा गन्दा काम है, यह !"

डाक्टर क्षण-भर मौन रहकर बोले, "शशिके साथ नवताराका ब्याह बहुतोंके संस्कारमें खटकता है और देशके कानूनके भी खिलाफ है, पर यह दोष तो शशिका नहीं है; कानून बनाने न बनानेकी जिम्मेदारी जिनपर है, उनका है। मुझे सिर्फ इतना ही क्षोभ है कि शशिने और किसीसे प्रेम क्यों न किया भारती !"

भारती हँस दी, "माना कि शशि और किसीसे प्रेम करता, पर जिसे वह करता वही क्यों उसपर प्रेम करती ? उस जैसे आदमीको स्त्री होशहवासमें प्यार कर सकती है, इस बातकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकती।—अच्छा, तुम्हीं बताओ भइया, कर सकती है ?"

डाक्टर मुसकरा दिये, बोले, "उससे प्यार करना कठिन है, इसीलिए तो मैं उसे आशीर्वाद देनेके लिए रह गया हूँ। मनमें आया कि सचमुचकी शुभ कामनामें अगर कोई शक्ति हो, तो शशिको उसका फल जरूर मिले।"

उनके स्वरमें आकस्मिक गम्भीरता आ जानेसे भारती बहुत देर तक चुप बनी रही, फिर बोली, "शशि बाबूको तुम वास्तवमें स्नेह करते हो भइया ?"

डाक्टरने कहा, "हाँ।"

"क्यों ?"

"तुम्हींको क्यों इतना प्यार करता हूँ,—इसीका क्या कारण बता सकता हूँ ? शायद ऐसी ही कुछ बात होगी।"

भारतीने दुलारके स्वरमें पूछा, "अच्छा भइया, तुम्हारे निकट क्या हम दोनों एकहीसे हैं ?" फिर दूसरे ही क्षण हँसती हुई बोली, "खैर, अपनी कीमत इतने दिनों बाद ही सही, मालूम तो हो गई। चलो, मैं भी तुम्हारे साथ जाकर अब खुशी खुशी उन्हें आशीर्वाद,—नहीं नहीं, प्रणाम कर आऊँ।"

डाक्टर भी हँस दिये, बोले, "चलो।"

ज्वारकी आशामें इस पार कहीं भी ज्यादा देरतक रहना खतरेसे खाली नहीं, इसलिए भाटेके विरुद्ध स्रोतमें ही चलना पड़ा। खाड़ीके पास एक जापानी जहाज कुछ दिनोंसे बँधा हुआ था। जब उस जगहको चुपचाप पार कर लिया तब भारतीने बात की। बोली, "इधर कई दिनोंसे रह-रहकर ऐसा मालूम होता है

भइया, जैसे समुद्रकी थाह नहीं, वैसे ही तुम्हारी भी कोई थाह नहीं। स्नेह कहो, प्रेम कहो, कोई भी तुम्हारे सहारे ठीक तौरसे खड़ा नहीं रह सकता। सब न जाने कहाँ समा जाता है!"

डाक्टरने कहा, "पहले तो समुद्रकी थाह है, लिहाजा तुम्हारी बात इस संबंधमें ठीक नहीं बैठती।"

भारतीने कहा, "इस बारेमें मैं शायद सौ बार कह चुकी हूँ कि मेरा तुम्हारे सिवा दुनियामें और कोई अपना नहीं,—तुम्हारे चले जानेपर मैं रहूगी कहाँ? मगर यह बात तुम्हारे कान तक पहुँचती ही नहीं। और पहुँचती भी कैसे भइया, तुम्हारे हृदय तो है ही नहीं। मुझे ठीक मालूम है, एक बार आँखोंसे ओझल होते ही तुम मुझे जरूर भूल जाओगे।"

डाक्टरने कहा, "नहीं। तुम्हारी जरूर याद रहेगी।"

भारतीने पूछा, "किसका सहारा लेकर मैं दुनियामें रहूँगी?"

डाक्टरने कहा, "सौभाग्यवती जिसके सहारे रहती है उसीके सहारे। पति, पुत्र, धन, सम्पत्ति, घर-द्वार—"

भारतीने नाराज होकर कहा, "मैं अपूर्व बाबूको हृदयसे प्रेम कर चुकी हूँ, और यह सत्य आपसे भी मैंने छिपाया नहीं। वे मिल जाते तो एक दिन मेरा सम्पूर्ण जीवन धन्य हो जाता, इस बातको भी तुम जानते हो,—तुमसे कुछ छिपाया नहीं जा सकता,—पर इसके मानी क्या यह हुए कि तुम मेरा जब चाहे तब अपमान किया करो?"

डाक्टरने आश्चर्यके साथ कहा, "अपमान! अपमान तो मैंने तुम्हारा किया जरा भी नहीं, भारती!"

सहसा भारतीका गला भारी हो आया, बोली, "किया कैसे नहीं! तुम जानते हो, हमारे मार्गमें सैकड़ों हजारों बाधाएँ हैं, तुम जानते हो वे मुझे किसी तरह अंगीकार नहीं कर सकते,—फिर भी तुम ऐसी बातें करते हो!"

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, "यही तो स्त्रियोंमें दोष है। वे खुद किसी दिन अपने आप जो बात कह देती हैं, दूसरे दिन उसीको अगर और कोई कह दे तो झपटकर मारने दौड़ती हैं। उन दिन सुमित्राकी बातपर तुमने कहा था, वह किसीको लाकर एकदिन पैरोंके पास ला गेरेगी, और आज मैंने उसीको दुहरा दिया तो रुलाईके मारे तुम्हारा गला रुक आया!"

भारतीने कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ देर चुप रहकर डाक्टर फिर बात करने लगे। अबकी बार न जाने कहाँसे उनके स्वरमें उन्हींके जैसा स्वर आ मिला, बोले, "उस रातको जब तुम सुमित्राकी बात कह रही थीं तब मैं जवाब नहीं दे सका था। इस पथका पथिक मैं नहीं हूँ, फिर भी तुम्हारे मुँहसे सुमित्राकी कहानी सुनकर मेरे रोयें खड़े हो गये थे। दुनिया घूमकर मैंने बहुतेरी चीजोंकी थाह पाई है, पर नहीं पाई यदि किसीकी तो इस नर-नारीके प्रेमकी। बहन, 'असम्भव' शब्द शायद इन्हींके कोशमें नहीं लिखा।"

इस बातमें भारतीने लेशमात्र उत्सुकता नहीं प्रकट की। उदास निस्पृह स्वरमें कहा, "तुम्हारी बात सच हो भइया, वह शब्द तुम लोगोंके कोशसे भी मिट जाय। सुमित्रा जीजीका भाग्य किसी दिन प्रसन्न हो।" जरा ठहरकर फिर कहा, "अपूर्व बाबूको मैं वास्तवमें चाहती हूँ। अच्छे हों चाहे बुरे हों, उन्हें मैं कभी भूल नहीं सकती। मगर इसका मतलब यह नहीं कि उनकी स्त्री होकर घर-गृहस्थी न कर पाऊँ तो मेरा जीवन ही व्यर्थ हो जाय! मेरे लिए यह शोककी बात नहीं है भइया, तुमसे मैं बिना किसी कपटके कहती हूँ, तुम मुझे शान्त मनसे आशीर्वाद देकर रास्ता दिखाते जाओ,—तुम्हारी तरह मैं भी दूसरोंके लिए अपना जीवन देकर अपना जन्म सार्थक कर डालूँगी।—भइया, अपनी निराश्रय बहनको अपना साथी बना लो न।"

डाक्टर चुपचाप नाव चलाने लगे, उन्होंने इतने बड़े निहोरे-भरे अनुनयका जवाब नहीं दिया। भारती अँधेरेमें उनका चेहरा देख नहीं सकी और इस नीरवतासे आशान्वित हो उठी। अबकी बार उसके स्वरमें स्नेह-भरे अनुनयकी निबिड़ वेदना मानो ऊपर तक भर गई, बोली, "ले चलो भइया, साथ। तुम्हारे सिवा इस अँधेरेमें रत्ती-भर भी कहीं उजाला नहीं दीखता।"

डाक्टरने धीरे धीरे सिर हिलाकर कहा, "असम्भव है भारती। तुम्हारी बातोंसे आज मुझे जोआकी याद आ रही है; तुम्हारी ही तरह उसका जीवन अकारण नष्ट हो गया है। भारतकी स्वाधीनताके सिवा मेरा अपना और कोई लक्ष्य नहीं है, फिर भी मानव-जीवनमें इससे बढ़कर कामना संसारमें और कोई है ही नहीं, ऐसा समझनेकी भूल भी मैंने कभी नहीं की। स्वाधीनता ही स्वाधीनताका अन्त नहीं है। धर्म, शान्ति, काव्य-आनन्द और भी बड़े हैं। इनके चरम विकासके लिए ही स्वाधीनता चाहिए, नहीं तो उसका मूल्य ही क्या

है ? इसके लिए मैं तुम्हारी हत्या नहीं कर सकता बहन, तुम्हारे अन्दर जो हृदय स्नेह, प्रेम, करुणा, माधुर्यसे ऐसा भरपूर हो उठा है, वह मेरी आवश्यकताको पार करके बहुत ऊपर पहुँच चुका है,—वहाँ तक मेरा हाथ नहीं पहुँचता। ”

भारतीका सर्वाङ्ग पुलकित हो उठा। सव्यसाचीके गंभीर अन्तरंगका उसे आज सहसा एक अपूर्व रूप दिखाई दे गया। भक्ति और आनन्दसे विगलित होकर उसने कहा, “ मैं भी तो यही सोचती रहती हूँ भइया, तुम्हारा न जाना हुआ संसारमें है ही क्या? और अगर यही बात है, तो तुम किस लिए इस षड्यंत्रमें लिपटे पड़े हो ? किस लिए तुम देश-विदेशमें गुप्त-समितियोंकी सृष्टि करते फिरते हो ? मानवका चरम कल्याण तो कभी इसके द्वारा हो नहीं सकता। ”

डाक्टरने कहा, “ बात सही है। परन्तु चरम कल्याणका भार विधाताके ही हाथमें छोड़कर हम लोग क्षुद्र मानवके लिए जो कुछ साध्य है उसी कल्याणके काममें नियुक्त हैं। अपने देशमें स्वाधीन भावसे बात करने, स्वाधीन-भावसे चलने-फिरनेका हमारा अत्यन्त तुच्छ दावा है,—इससे ज्यादा फिलहाल हम लोग और कुछ भी नहीं चाहते भारती ! ”

भारतीने कहा, “ सो तो सभी चाहते हैं भइया ! मगर इसके लिए नर-हत्याका षड्यंत्र क्यों, बताओ तो ? क्या जरूरत है उसकी ? ” परन्तु यह बात मुँहसे निकल जानेके बाद ही भारती अत्यन्त लज्जित हो उठी। कारण, यह अभियोग सिर्फ अप्रिय ही नहीं, असत्य भी है।

उसी वक्त उसने अनुतप्त चित्तसे कहा, “ मुझे माफ करो भइया, मैंने सिर्फ गुस्सेमें ही यह झूठ कह डाला है। मुझे छोड़कर तुम चले जाओगे, यह मैं सोच ही नहीं सकती। ”

डाक्टरने हँसकर कहा, “ सो मुझे मालूम है। ”

इसके बाद बहुत देरतक कोई कुछ नहीं बोला।

उस समय कुछ दिनोंसे भारत-भरमें स्वदेशी-आन्दोलन चल रहा था। भक्ति-भाजन नेतागण देशोद्धारके उद्देश्यसे कानून बचाकर जो ज्वालामय भाषण दे रहे थे, कभी कभी अखबारोंमें उनका सारांश पढ़कर भारती उनके प्रति श्रद्धापूर्ण विस्मयसे झुक जाती थी। पिछली रातको ऐसी ही कोई एक रोमांचकारी रचना पढ़नेके बादसे मनमें उत्तेजनाकी तप्त हवा बह रही थी। उसीकी याद करके वह बोली, “ मैं जानती हूँ, अँग्रेजोंके राज्यमें तुम्हारे लिए स्थान नहीं

है। पर सारी दुनिया तो उनकी नहीं है। वहाँ जाकर तो तुम लोग सरल और प्रकट रूपसे अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिए कोशिशें कर सकते हो ?" प्रश्न करके भारती उसके उत्तरकी आशासे कुछ देर ठहर कर बोली, "अँधेरेमें तुम्हारा मुँह नहीं दिखाई दे रहा है, पर समझ रही हूँ कि तुम मन ही मन हँस रहे हो। केवल तुम और तुम्हारे विभिन्न दल ही नहीं, और भी तो ऐसे लोग देशका काम कर रहे हैं जो प्रवीण, विज्ञ, राजनीतिज्ञ हैं,—अच्छा भइया, कलका अखबार तुमने—"

उसकी बात खत्म भी न होने पाई थी कि डाक्टर हँस दिये, बोले, "माफ करो भारती, हम लोगोंसे तुलना करके उन पूजनीयोंका अपमान मत करो।"

भारतीने कहा, "मैं नहीं, बल्कि तुम्हीं उनपर व्यंग कस रहे हो।"

डाक्टरने जोरसे सिर हिलाते हुए कहा, "कतई नहीं। उनकी मैं भक्ति करता हूँ, और उनके देशोद्धारके लिए दिये गये भाषणोंका रस हम लोगोंसे ज्यादा संसारमें और कोई नहीं लेता।"

भारतीने दुःखित होकर कहा, "रास्ता तुम लोगोंका एक नहीं सही, पर उद्देश्य तो एक ही है ?"

डाक्टरने कुछ देर चुप रहकर कहा, "अब तक तो हँस ही रहा था, पर अब नाराज हो जाऊँगा भारती। रास्ता हम लोगोंका एक नहीं, यह जानी हुई बात है; पर लक्ष्य भी हम लोगोंका उनसे भिन्न है, क्या यह बात भी अब तक तुम्हारी समझमें नहीं आई ? संसारकी बहुत-सी जातियाँ स्वाधीन हैं,—इससे बढ़कर गौरव मानव-जातिके लिए और कुछ नहीं हो सकता। पर उस स्वाधीनताका दावा करना या उसके लिए कोशिश करना तो बहुत दूरकी बात है, उसकी कामना करना और कल्पना करना भी अँग्रेजी कानूनमें राजद्रोह समझा जाता है। मैं उसी अपराधका अपराधी हूँ। चिरकाल तक पराधीन बने रहना ही इस देशका कानून है। इसलिए ये सब प्रवीण पूज्य व्यक्ति कानूनके बाहर किसी दिन कोई दावा नहीं करते। चीन देशके मंचू राजाओंकी तरह इस देशमें भी अगर अँग्रेज कानून बना देते कि सबको अढ़ाई हाथकी चोटी रखनी पड़ेगी, तो ये लोग उसके विरुद्ध भी किसी तरहकी गैर-कानूनी प्रार्थना नहीं करते। ये लोग यह कहकर आन्दोलन करते कि अढ़ाई हाथकी चोटी रखनेका कानून बनाकर देशके प्रति बड़ा अन्याय किया गया है, इसे घटाकर सवा-दो हाथकी

रखनेका कानून बना दिया जाय !" इतना कहकर वे स्वयं अपने मज़ाकपर खुश होकर इतने जोरसे कहकहा मारकर हँस पड़े कि नदीकी अन्धकारमय नीरवता विक्षुब्ध हो उठी। हँसना रुकनेपर भारतीने कहा, "तुम चाहे जो कहो भइया, पर इस बातको मैं हरगिज नहीं मान सकती कि वे इस देशके लिए प्रणम्य नहीं। मैं सभीकी बात नहीं कह रही हूँ पर सचमुच ही जो राजनीतिज्ञ हैं, वास्तवमें जो देशके शुभाकांक्षी हैं, उनका सारा परिश्रम ही व्यर्थ है, यह बात निःसंकोच स्वीकार कर लेना कठिन है। मत और मार्ग अलग होनेसे किसीपर व्यंग कसना शोभा नहीं देता।"

उसके स्वरमें गाम्भीर्यका आभास पाकर डाक्टर चुप हो गये। पीछेसे एक स्टीम लञ्च आवाज़ करता हुआ उनकी छोटी-सी नावको बाकायदा डावाँडोल करके निकल गया। उसके निकल जानेके बाद सव्यसाचीने धीरेसे कहा, "भारती, मेरा अभिप्राय तुम्हें व्यथा पहुँचानेका नहीं, और न तुम्हारे पूजनीयोंका मैं मज़ाक़ ही उड़ाना चाहता हूँ। उनकी राजनीति-विद्याके पाण्डित्यपर भी मेरी भक्ति कुछ कम नहीं, मगर बात क्या है सो मैं तुम्हें बतलाता हूँ,—जो गृहस्थ गायको रस्सी छोटी करके बाँधता है, मैं सिर्फ इतना ही समझता हूँ कि उसकी उस छोटी रस्सीमें सिर्फ एक ही नीति रहती है। गायकी पहुँचके बिलकुल बाहर जो सानीसे भरी नाँद है, उसकी तरफ उसका जी-जानसे मुँह बढ़ाने और जीभ निकालकर उसको चाहनेकी कोशिश करनेमें अवैधता बिलकुल नहीं है,—यहाँ तक कानूनन भी ठीक है।—उत्साह देने लायक हृदय हो तो उत्साह भी दे सकते हो, राजाकी तरफसे कोई मनाही नहीं।—मगर गायके इस प्रबल उद्यमको यदि कोई बाहरसे देखता है, तो उसके लिए अपनी हँसी रोकना मुश्किल हो जाता है।"

भारती हँस दी, बोली, "तुम बड़े शैतान हो भइया," और तुरन्त ही अपनेको संयत करके कहने लगी, "पर एक बात मेरी समझमें नहीं आती कि जिसके प्राण दिन-रात एक कच्चे धागेपर लटक रहे हों, वह दूसरोंको लेकर हँसी-मज़ाक़ कैसे किया करता है?"

डाक्टरने स्वाभाविक स्वरमें कहा, "इसकी वजह यह कि उसकी इस समस्याका समाधान पहले ही हो चुका है। भारती, जिस दिन इस काममें पैर रक्खा है उसी दिन सब तय हो चुका है। अब मुझे न कुछ सोचना है,

न किसीसे कुछ शिकायत ही करनी है। मैं जानता हूँ, हाथमें पाकर भी जो राजशक्ति मुझे छोड़ती है वह या तो पागल है या फिर उसके पास फाँसी देनेके लिए रस्सी तक नहीं।"

भारतीने कहा, "इसीसे तो मैं तुम्हारे साथ रहना चाहती हूँ भइया। संसारमें ऐसा कोई नहीं है जो मेरे मौजूद रहते हुए तुम्हारे प्राण ले सके। यह मैं हरगिज नहीं होने दूँगी।" कहते कहते उसका गला और आँखें भर आईं।

डाक्टरको मालूम हो गया। वे चुपचाप एक साँस भरकर बोले, "ज्वार आ गई भारती, अब जल्दी पहुँच जायँगे।"

उत्तरमें भारतीने कहा, "उँहूँ, जाने दो। मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है।" थोड़ी देर बाद फिर बोली, "इतनी बड़ी राजशक्तिको अपने शारीरिक बलसे गिरा सकोगे, इस बातपर क्या तुम सचमुच ही विश्वास करते हो भइया?"

बिना किसी दुबिधाके उत्तर मिला, "करता हूँ, और सम्पूर्ण हृदयसे करता हूँ। इतना जबर्दस्त विश्वास न होता तो मेरा यह व्रत कभीका भंग हो गया होता।"

भारतीने कहा, "इसीसे शायद अपने काममेंसे मुझे धीरे धीरे निकाल देना चाहते हो,—ठीक है न भइया?"

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, "नहीं, सो बात नहीं भारती। मगर, विश्वास ही तो शक्ति है, विश्वास बगैर हुए संशयके कारण तुम्हारा कर्तव्य बोझ-सा हो उठेगा। संसारमें तुम्हारे लिए और भी काम हैं बहन, जो कल्याणकारी हैं, शान्तिमय हैं। जिसपर तुम्हारा हार्दिक विश्वास है उसी कामको तुम करो।"

असीम स्नेहके कारण ही यह सहृदय मानव उसे अत्यन्त विपत्ति-भरे क्रान्ति-मार्गसे दूर हटा देना चाहता है, इस बातका निःसन्देह अनुभव करके भारतीकी आँखोंमें आँसू भर आये। अँधेरेमें निगाह बचाकर उसने आँसू पोंछ डाले और कहा, "भइया, मेरी बातपर लेकिन गुस्सा मत होना,—तुमसे एक बात पूछती हूँ। इतनी बड़ी राजशक्ति, इतना सैन्य-बल, इतने उपकरण, युद्धके इतने चित्र-विचित्र आयोजन,—उनके सामने तुम्हारा क्रान्तिकारी दल है कितना-सा? समुद्रके सामने गोष्पदसे भी तुम लोग छोटे हो। उसके साथ तुम लोग शक्तिकी परीक्षा किस लिए करना चाहते हो? प्राण देना चाहते हो तो दे सकते हो,—पर इतना बड़ा पागलपन तो मुझे दुनियामें और कोई दिखाई नहीं देता।

तुम कहोगे; तो क्या देशका उद्धार नहीं होगा ? प्राणोंके डरसे क्या अलग खड़े रहें ?—परन्तु मैं तो यह नहीं कह रही हूँ। तुम्हारे पास रहकर, तुम्हारे चरित्रसे इस बातको मैं जान गई हूँ कि जननी जन्मभूमि क्या चीज है। तुम्हें देखकर अगर यह बात भी नहीं सीख सकी होऊँ कि जन्म-भूमिके चरणोंके आगे सर्वस्व दे सकनेसे बढ़कर सार्थकता मनुष्यके लिए और कुछ नहीं हो सकती, तो मुझसे बढ़कर अधम नारी और कौन होगी ? पर सिर्फ आत्म-हत्या करके ही कब कौन-सा देश स्वाधीन हुआ है ? तुम्हारी भारती जीते-जी इतनी बड़ी ग़लती कर सकती है, ऐसी ग़लत धारणा मत रखना भइया !"

डाक्टरने साँस छोड़ते हुए कहा, "अच्छा !"

"'अच्छा' क्या ?"

"तुम्हारे सम्बन्धमें ग़लती ही हुई है।" कहकर डाक्टर कुछ देर चुप रहे, फिर बोले, "क्रान्तिके मानी ही खून-खराबी और मार-काट नहीं भारती, क्रान्तिके मानी हैं अत्यन्त शीघ्रतासे आमूल परिवर्तन,—एकाएक महान् परिवर्तन। सैन्य-बल, विराट् युद्ध-सामग्री,—सब कुछ मुझे मालूम है। मगर शक्ति-परीक्षा हमारा लक्ष्य नहीं है,—आज जो शत्रु हैं, कल वे ही मित्र भी हो सकते हैं। नीलकान्त शक्ति-परीक्षा करने नहीं गया था, मित्र बनाने गया था और उसने प्राण दे दिये। हाय रे नीलकान्त ! कौन जानता है तेरा नाम !"

अन्धकारमें भी भारती स्पष्ट समझ गई कि जिस युवकने देशके बाहर, देशके काममें सबकी आँखोंकी ओझल चुपचाप प्राण दिये हैं, उसकी याद करके इस निर्विकार परम संयमी आदमीका भी गंभीर हृदय क्षण-भरके लिए आलोड़ित हो उठा है।

अकस्मात् डाक्टर सीधे होकर बैठ गये, कहने लगे, "क्या कह रही थीं भारती, गोष्पद ? ऐसा ही हो शायद। परन्तु जो चिनगारी शहर-भरको जलाकर भस्म कर देती है वह आकारमें कितनी बड़ी होती है जानती हो ? शहर जब जलता है तब वह अपना ईंधन आप ही इकट्ठा करके भस्म होता रहता है।—उसके भस्म होनेकी सामग्री उसीमें संचित रहती है। विश्व-विधानके इस नियमका कोई भी राजशक्ति किसी भी दिन व्यतिक्रम नहीं कर सकती।"

भारतीने कहा, "भइया, तुम्हारी बातें सुननेसे बदन काँप उठता है। जिस राजशक्तिको तुम भस्म कर देना चाहते हो उसका ईंधन भी तो हमारे ही देशवासी हैं। इतने बड़े लंका-कांडकी कल्पना करते हुए क्या तुम्हें करुणा नहीं आती ?"

उत्तरमें रंच-मात्र भी दुविधा नहीं थी, डाक्टरने फौरन ही कहा, "नहीं। 'प्रायश्चित्त' शब्द क्या सिर्फ मुँहसे ही कहनेका है? हमारे पहलेके पुरखोंका संचित किया हुआ पापोंका विशाल स्तूप फिर नष्ट कैसे होगा? करुणाकी अपेक्षा न्याय-धर्म बहुत बड़ी चीज़ है भारती!"

भारती व्यथित होकर बोली, "यह तुम्हारी वही पुरानी बात है भइया! भारतकी स्वाधीनताके खातिर तुम कितने ज्यादा निष्ठुर हो सकते हो, मैं सोच ही नहीं सकती। रक्त-पातके सिवा तुम्हारे मनमें और कोई बात उठ ही नहीं सकती। रक्तपातका जवाब अगर रक्तपात ही हो, तो उसका भी जवाब तो रक्तपात ही होगा? और फिर उसके जवाबमें भी उसके सिवा और कुछ नहीं मिलता। यह प्रश्नोत्तर तो आदिम कालसे होता आ रहा है। क्या मानव-सभ्यता इससे बड़ा उत्तर कभी दे ही नहीं सकती? देश चला गया है, पर उससे भी जो बड़ा है वह मनुष्य तो आज भी मौजूद है। मनुष्य मनुष्य क्या आपसमें बगैर लड़े-झगड़े किसी तरह पास पास रह ही नहीं सकते?"

डाक्टरने कहा, "अँग्रेजोंके एक बड़े कविने कहा है, पश्चिम और पूर्व कभी मिल-जुल नहीं सकते।"

भारती रूठकर बोली, "पत्थर कवि है वह! कहने दो उसे। तुम परम ज्ञानी हो, तुमसे बहुत बार पूछा है और आज भी पूछ रही हूँ,—होने दो उन्हें पश्चिमका, होने दो उन्हें योरोपका, पर हैं तो वे भी आदमी ही? मनुष्यके साथ मनुष्य क्या किसी भी तरह मित्रता नहीं कर सकता? भइया, मैं क्रिश्चियन हूँ, अँग्रेजोंके अनेक ऋणोंसे ऋणी हूँ, उनके अनेक सद्गुण मैंने अपनी आँखों देखे हैं। उन्हें इतना बुरा सोचते हुए मेरे हृदयको चोट पहुँचती है। पर मुझे तुम ग़लत मत समझना भइया, मैं हिन्दुस्तानकी ही लड़की हूँ,—तुम्हारी ही बहन। भारतकी भूमि और भारतके आदमियोंसे मेरा प्राणाधिक प्रेम है। जिस प्रकारका जीवन तुमने चुन लिया है, उसे देखते हुए कौन कह सकता है कि आजकी मुलाकात ही हम लोगोंकी अंतिम भेंट न हो। आज तुम शान्त मनसे इसका जवाब देते जाओ जिससे मैं उसकी तरफ दृष्टि रखकर आजीवन सिर उठाकर सीधी चल सकूँ।" कहते कहते उसका स्वर रुआईसे भर आया।

डाक्टर चुपचाप नाव चलाते रहे। देर करते देख भारतीको ऐसा लगा कि डाक्टर इसका जवाब नहीं देना चाहते। उसने हाथ डालकर नदीके पानीसे आँख-मुँह धो डाला और उसे आँचलसे बार बार अच्छी तरह पोंछकर फिर

कोई प्रश्न करना चाहा। इतनेमें डाक्टर बोल उठे। स्निग्ध मुलायम स्वर था, कहीं भी रत्ती-भर उत्तेजना या विद्वेषका आभास नहीं,—ऐसा शान्त और स्वाभाविक मानो किसीकी बात कोई और ही कह रहा हो। भारतीको उस प्रथम परिचयके दिनके स्कूलके निरीह निर्बोध मास्टर साहबकी याद आ गई: अशुद्ध अँग्रेजी उच्चारण, व्याकरण भी वैसा ही।—भारती बड़ी मुश्किलसे हँसी रोककर बात कर सकी थी। बादमें उसी बातको लेकर गुस्सा होकर उसने डाक्टरका बहुत दिन बहुत तिरस्कार किया है। वैसे ही निरुत्सुक निःस्पृह कण्ठसे डाक्टरने आज फिर कहा, "एक तरहका साँप होता है भारती, जो साँप खाकर ही जीता है। देखा है?"

भारतीने कहा, "नहीं, देखा नहीं, सुना है।"

डाक्टरने कहा, "पशु-शालामें है। एक बार कलकत्ते जाकर अपूर्वको हुक्म देना, वह दिखा लायेगा।"

"बार बार हँसी मत करो भइया, अच्छा नहीं होगा, कहे देती हूँ!"

"नहीं, मैं भी यही बात कहता हूँ कि अच्छा नहीं होगा। उनका पास पास रहना ठीक नहीं बनता, पर उससे भी अधिक घनिष्ठतासे एकके पेटमें दूसरेंको बिना किसी बाधाके जगह मिल जाती है। विश्वास न हो, तो 'ज़ू' के अध्यक्षसे पूछ देखना।"

भारती चुप बनी रही।

डाक्टर कहने लगे, "तुम उन लोगोंकी समधर्मावलम्बिनी हो, उनके अनेक ऋणोंसे ऋणी हो, उनके बहुतसे सद्गुण आँखोंसे देखे हैं तुमने, पर कभी उनकी विश्वग्रासी विराट् भूखका परिमाण भी देखा है? इस देशके मालिक हैं वे,—मालिकानेकी तारीख तो याद है न?—आज ब्रिटिश सम्पत्तिकी तुलना नहीं हो सकती। कितने जहाज, कितने कल-कारखाने, कितनी हजारों लाखों इमारतें!—आदमी मारनेके उपकरणों और आयोजनोंका अन्त नहीं। अपने समस्त अभाव और सब तरहकी आवश्यकताओंको मिटाकर भी अँग्रेजोंने सन् १८१० से १८८० तक सत्तर वर्षके भीतर बाहरवालोंको ऋण दिया था तीन हजार करोड़ रुपये! जानती हो यह विराट् ऐश्वर्य कहाँसे गया था? अपनेको तुम हिन्दुस्तानकी लड़की बता रही थीं न? भारतकी भूमि, भारतके जल-वायु और भारतके आदमियोंसे तुम्हारा प्राणाधिक प्रेम है न? इस हिन्दुस्तानके लाखों नरनारी हर साल मैलेरियामें मर जाते हैं। एक एक जंगी जहाजकी कीमत कितनी होती है जानती हो? उनमेंसे सिर्फ एकके ही

खर्चसे भारतकी लाखों माताओंकी आँखोंके आँसू पोंछे जा सकते हैं। सोची है यह बात ? देखी है कभी हृदयमें माकी मूर्ति ? शिल्प गया, वाणिज्य गया, धर्म गया, ज्ञान गया,—नदियोंकी छाती सूखकर मरुभूमि हुई जा रही है, किसानको भर-पेट खाना नहीं मिलता है, शिल्पकार विदेशियोंके द्वारपर मजदूरी करता है,—देशमें पानी नहीं, अन्न नहीं, गृहस्थकी सर्वोत्तम सम्पदा गोधन थी, सो भी नहीं,—दूधके अभावसे बच्चोंको सूख-सूखके मरते देखा है भारती ?"

भारतीने चिल्लाकर उन्हें रोकना चाहा, पर उसके गलेसे सिर्फ एक अस्फुट शब्द-मात्र निकल कर रह गया।

सव्यसाचीका वह धीर संयत कंठस्वर कभीका गायब हो चुका था, वे कहने लगे, "तुम क्रिश्चियन हो। याद है, एक दिन कुतूहलवश योरोपकी क्रिश्चियन सभ्यताका स्वरूप जानना चाहा था तुमने ? उस दिन व्यथा पहुँचनेके डरसे नहीं बताया था, पर आज बतलाऊँगा। तुम लोगोंकी किताबोंमें क्या है, नहीं कह सकता। सुना है, अच्छी अच्छी बातें ही लिखी हैं; मगर, बहुत दिन एक साथ रहते रहते उसका वास्तविक स्वरूप मुझसे छिपा नहीं है। लज्जाहीन नग्न स्वार्थ और पशु-शक्तिका अत्यधिक प्राधान्य ही उसका मूल मंत्र है। सभ्यताके नामसे कमज़ोर और असमर्थोंके विरुद्ध इतने बड़े घातक मूसलका मनुष्यकी बुद्धिने पहले कभी आविष्कार नहीं किया। पृथ्वीके नकशेकी तरफ आँख उठाकर देखो, योरोपकी विश्वग्रासी भूखसे कोई भी कमजोर जाति अपनी रक्षा नहीं कर सकी है। देशकी भूमि और देशकी ही सम्पदासे देशकी सन्तान किस अपराधसे वंचित हुई है, जानती हो भारती ? एकमात्र शक्तिहीनताके अपराधसे। और मज़ा यह कि न्याय-धर्म ही सबसे बड़ा धर्म है, और विजित जातिके अशेष कल्याणके लिए ही यह अधीनताकी जंजीर उसके पैरोंमें पहनाकर उस पंगुकी सब तरहकी जिम्मेदारी उठाना योरोपीय सभ्यताका चरम कर्तव्य है : इस परम असत्यका प्रचार लेखों, भाषणों और मिशनरियोंके धर्म-प्रचारमें ही नहीं, यहाँ तक कि लड़कोंकी पाठ्य पुस्तकोंमें भी किया जाता है। और यही तुम्हारी क्रिश्चियन सभ्यताकी राज-नीति है।"

भारती मिशनरियोंके हाथसे बनी हुई नारी है, अनेक महान् चरित्र उसने वास्तवमें अपनी आँखोंसे देखे हैं,—अपने धार्मिक विश्वासपर ऐसे अकारण आक्रमणसे वह व्यथित हो उठी और बोली, "भइया, किसी भी कारणसे हो, तुम्हारी शान्त बुद्धि आज विक्षिप्त हो गई है। ईसाई-धर्म-प्रचारके लिए जो

लोग इस देशमें आये हैं, उनके विषयमें मैं तुमसे बहुत ज्यादा जानती हूँ। तुमसे आज उनके प्रति निरपेक्ष सुविचार करते नहीं बन रहा है। योरोपकी सभ्यताने क्या तुम लोगोंकी कोई भी भलाई नहीं की? सती-दाह, गंगा-सागरमें सन्तान-बलि—"

डाक्टर बीचमें ही कह उठे, "चड़कके समय पीठ छेदना, संन्यासियोंका तलवारपर नाचना, डकैती, ठगी, लूट-खसोट, गोंड़ और खसियोंकी आषाढ़में नर-बलि,—और तो याद नहीं आ रहा है, यही न भारती?"

भारती कुछ बोली नहीं।

डाक्टरने कहा, "ठहरो, और भी दो बातें याद आ गईं,—बादशाही जमानेमें गृहस्थ अपनी बहू बेटियोंको घरमें नहीं रख सकते थे, नवाब लोग औरतोंका पेट चीरकर बच्चा देखा करते थे!—हायरे हाय, विदेशियोंके लिखे हुए इतिहासोंने इसी तरह मामूली और तुच्छ बातोंको विराट् विशाल बनाकर देशके प्रति देशवासियोंके चित्तको विमुख कर दिया है! याद आता है, बचपनमें अपनी एक स्कूली किताबमें मैंने पढ़ा था कि विलायतमें बैठे बैठे हमारे कल्याणकी बात सोचते सोचते राज-मंत्रीकी नींद हराम हो गई है, उन्हें अन्न नहीं रुचता। यह असत्य बच्चोंको कंठस्थ करना पड़ता है, और पेट भरनेकी गरजसे शिक्षकोंको कंठस्थ कराना पड़ता है! सभ्य राज्य-तंत्रकी यही तो राजनीति है भारती! अपूर्वको दोष देना व्यर्थ है।"

अपूर्वके लाञ्छनसे भारती मन-ही-मनलज्जित हुई और रूठ गई। बोली, "तुम जो कह रहे हो सो सत्य हो सकता है; सम्भव है कहीं किसी अतिभक्त राज-कर्मचारीने ऐसा ही किया हो, मगर इतने बड़े साम्राज्यकी मूल नीति कभी केवल असत्य ही नहीं हो सकती। इस बुनियादपर भीत खड़ी करके इतनी बड़ी विशाल संस्था एक दिनके लिए भी स्थिर नहीं रह सकती। तुम कहोगे कि कालके अनन्त स्रोतमें ये हैं ही कितने दिन? ऐसे साम्राज्य तो इसके पहले भी थे। वे क्या चिरस्थायी हुए हैं? तुम्हारी बात अगर ठीक हो, तो यह भी चिरस्थायी नहीं होगा। परन्तु, यह शृंखलाबद्ध और सुनियंत्रित राज्य है,—तुम कितनी भी निन्दा क्यों न करो, पर, क्या इसकी एकता और शान्तिसे कोई भी शुभ लाभ नहीं हुआ? प्रतीच्यकी सभ्यताके प्रति कृतज्ञ होनेका क्या कोई भी कारण नहीं मिला तुम्हें?—स्वाधीनता तो हमारी बहुत दिनोंसे चली गई है। इस बीचमें सिर्फ राज-शक्तियोंका ही परिवर्तन हुआ है,

तुम लोगोंके भाग्यका तो कोई परिवर्तन नहीं हुआ। क्रिश्चियन होनेकी वजहसे तुम मुझे ग़लत मत समझ लेना भइया, मगर अपना साराका अपराध विदेशियोंके सर मढ़कर ग्लानि करना ही अगर तुम्हारे देश-प्रेमका आदर्श हो, तो वह आदर्श तुम्हारे हाथसे मैं नहीं ले सकूँगी। हृदयमें इतना विद्वेष भर कर तुम अँग्रजोंका नुकसान शायद कर भी सको, पर उससे भारतवासियोंका कल्याण नहीं होगा, यह निश्चय समझ लेना।"

उसका सहसा उच्छ्वसित तीक्ष्ण स्वर निस्तब्ध नदीसे आहत होकर सव्यसाचीके कानोंमें पहुँचा और उसने उन्हें चौंका दिया। भारतीका यह रूप अपरिचित था, यह मनोभाव अप्रत्याशित था। फिर भी जिस धर्म-विश्वास और सभ्यताके घनिष्ठ प्रभावमें वह छोटेसे इतनी बड़ी हुई है, उसीपर आघात होनेसे वह चंचल और असहिष्णु होकर जो ऐसा निर्भीक प्रतिवाद कर बैठी, वह चाहे जितना कठोर और प्रतिकूल क्यों न हो, उसने सव्यसाचीकी दृष्टिमें उसे और भी ऊँचा चढ़ा दिया।

डाक्टरको निरुतर देखकर भारतीने कहा, "क्यों, जवाब क्यों नहीं देते भइया? हृदयमें इतनी बड़ी ईर्ष्याकी आग जलाकर तुम और चाहे जो करो, पर देशकी भलाई न कर सकोगे।"

डाक्टरने कहा, "तुम्हें तो कितनी ही बार कह चुका हूँ कि जो देशकी भलाई करेंगे वे चन्दा उगाकर चारों तरफ अनाथाश्रम, ब्रह्मचर्याश्रम, वेदान्ताश्रम, दरिद्र-भाण्डार आदि नाना लोक-हितकर काम कर रहे हैं; महान् पुरुष है वे, मैं उनपर भक्ति रखता हूँ,—लेकिन, मैंने देशकी भलाई करनेका भार नहीं लिया, मैंने तो उसे स्वाधीन करनेका भार लिया है।" फिर जरा ठहरकर कहा, "मेरे हृदयकी आग दो बातोंसे बुझ सकती है, या तो अपनी चिता-भस्मसे या फिर किसी दिन यह सुन लेनेसे कि योरोपका धर्म, सभ्यता और नीति समुद्रके अथाह पानीमें डूब गई है।"

भारती सन्न रह गई। वे कहने लगे, "इस विषकुम्भ-पयोमुख मालको लिये समुद्र पार होकर योरोप जब पहले-पहल रोजगार करने आया, तब उसे पहचान सका सिर्फ जापान। इसीसे आज उसका इतना सौभाग्य है, इसीसे आज वह योरोपका समकक्ष सम्मान्य मित्र है। मगर उसे पहचान नहीं सका भारत और पहचान नहीं सका चीन। उन दिनों स्पेनका राज्य सर्वत्र फैला हुआ था। छोटेसे जापानने स्पेनके एक नाविकसे पूछा, 'इतना बड़ा राज्य

तुम लोगोंने कैसे प्राप्त कर लिया ?' नाविकने कहा, "बड़ी असानीसे,—हम जिस देशको हड़प करना चाहते हैं वहाँ पहले ले जाते हैं बेचनेके लिए माल, फिर हाथ-पाँव पड़कर रोजगारके लिए उस देशके राजासे माँग लेते हैं थोड़ी-सी जमीन। उसके बाद बुलाते हैं मिशनरियोंको; वे क्रिश्चियन तो अधिक नहीं बना सकते, पर उस देशके धर्मकी निन्दा बेहद करते हैं। तब लोग बिगड़ उठते हैं और दो एकको मार डालते हैं। बस, तत्काल ही आ जाती हैं हम लोगोंकी तोपें, बन्दूकें और सेना सामन्त। तब हमारे सभ्य देशकी आदमी-मारू मशीनें असभ्य देशोंके हथियारोंकी अपेक्षा कितनी श्रेष्ठ हैं, इस बातको वे शीघ्र ही प्रमाणित कर दिखलाते हैं।' यह सुनकर जापानने कहा, 'तो प्रभु, आप लोग अब यहाँसे बोरिया-बसना उठाइए, हम लोगोंको आपके रोज़गारकी ज़रूरत नहीं।' यह कहकर उन्हें बिदा करके जापानने अपने देशमें कानून जारी कर दिया कि जब तक चन्द्र सूर्य उदित होंगे, तब तक क्रिश्चियन हमारे देशमें कदम न रखने पावेंगे। यदि रक्खेंगे तो उन्हें प्राण-दण्ड दिया जायगा।"

अपने धर्म और धर्म-प्रचारकोंके प्रति किये गये इस तीक्ष्ण कटाक्षसे भारती दुःखित होकर बोली; "यह बात तुम्हारे मुँहसे पहले भी सुनी है, मगर जिन जापानियोंकी तुम भक्ति करते हो वे कैसे हैं ?"

डाक्टरने कहा, "भक्ति करता हूँ ? झूठी बात है। उनसे मैं घृणा करता हूँ। कोरियनोंको बार-बार वचन और अभय देकर भी जब बिना किसी दोषके झूठे बहानेसे ही उन लोगोंको कैद करके १९१० में कोरिया राज्य हड़प लिया गया, तब मैं शंघाईमें था। उस दिनके उन अमानुषिक अत्याचारोंको भूला नहीं जा सकता, भारती। और अभय क्या सिर्फ एक जापानहीने दिया था ? योरोपने भी दिया था। पर शक्तिशालीके विरुद्ध अँग्रेजोंने जबान तक नहीं हिलाई, कह दिया 'ऐंग्लो-जापानी सन्धि-सूत्रमें हम लोग बँधे हुए हैं।' और यही बात अमेरिकाके युक्तराष्ट्रके सभापतिने भी अत्यन्त स्पष्ट भाषामें व्यक्त करके कह दी, 'वचनसे क्या होता है ? जो असमर्थ और शक्तिहीन जाति स्वयं आत्म-रक्षा नहीं कर सकती, उसका राज्य नहीं जायगा तो और किसका जायगा ? जो हुआ ठीक ही हुआ। अब हम लोग जायँगे उसका उद्धार करने ?—असम्भव है, पागलपन है !'" इतना कहकर सव्यसाची क्षण-भर चुप रहे, फिर बोले, "मैं भी कहता हूँ भारती,—असम्भव है, पागलपन है। प्रबल दुर्बलकी सम्पदा क्यों नहीं छीनेगा, इस बातको तो सभ्य योरोपकी नैतिक बुद्धि सोच ही नहीं सकती !"

भारती चुप रही। वे कहने लगे, "अठारहवीं शताब्दीके अन्तिम भागमें ब्रिटिश दूत लॉर्ड मैकार्टनी चीनी दरबारमें पहुँचे रोजगारकी जरा सहूलियत पानेके लिए। मंचू-नरेश शियनलुंग चीनके सम्राट् थे बहुत ही दयालु। दूतकी विनीत प्रार्थनासे खुश होकर उन्होंने आशीर्वाद दिया, 'देखो भई, हमारे स्वर्गीय साम्राज्यमें किसी भी बातकी कमी नहीं है, पर तुम बहुत दूरसे आये हो अनेक कष्ट सहकर,—अच्छा जाओ, कैण्टॉन शहरमें रोजगार करो। जगह दी जाती है, तुम लोगोंका भला होगा।' राजाका आशीर्वाद निष्फल नहीं हुआ, भला ही हुआ। पचास वर्ष भी नहीं बीत पाये और चीनके साथ ब्रिटेनकी लड़ाई ठन गई।"

भारतीने आश्चर्यसे पूछा, "क्यों भइया?"

डाक्टरने कहा, "चीनका दोष था। बेअदब सहसा कह बैठा, अफीम खाते खाते हमारी आँखें मिची जा रही हैं, बुद्धि बिगड़ रही है, कृपा करके इस चीज़की आमद बन्द कर दो।"

"उसके बाद?"

"बादका इतिहास बहुत थोड़ा-सा है। दो साल बाद चीन फिर अफीम खानेको राजी हो गया, उसे और भी पाँच बन्दरोंमें पाँच फी सदी टैक्सपर वाणिज्य करने देनेकी मंजूरी देनी पड़ी और अन्तमें हांगकांग बन्दर दक्षिणामें देकर सन् अठारह सौ बियालीसमें यज्ञ पूरा करना पड़ा। ठीक ही हुआ, जो मूर्ख इतनी सस्ती अफीम पाकर भी लेनेमें उज्र करता है, उसके लिए यह प्रायश्चित्त उचित ही तो था!"

भारतीने कहा, "यह सब तुम्हारा बनाया हुआ किस्सा है।"

डाक्टरने कहा, "सो होने दो, मगर सुननेमें तो अच्छा है!—और यह देखकर फरासीसी सभ्यताने कहा, "मेरे पास अफीम तो नहीं है, पर आदमी मारनेकी मशीनें बहुत बढ़िया हैं। लिहाजा युद्धं देहि। युद्ध हुआ: फरासीसियोंने चीन-साम्राज्यका अनाम प्रान्त छीन लिया और युद्धका खर्च, ज्यादासे ज्यादा वाणिज्यकी सुविधाएँ, ट्रीटीपोर्ट आदि ऊपरसे—पर ये सब तुच्छ कहानियाँ हैं, रहने दो।"

भारतीने कहा, "मगर भइया, ताली क्या एक ही हाथसे बजती है? चीनका क्या कुछ भी अन्याय नहीं था?"

डाक्टरने कहा, "हो सकता है। पर तमाशा यह है कि योरोपीय सभ्यताका

अन्याय-बोध दूसरोंके घरपर चढ़ाई करनेके लिए ही जाग्रत होता है, और वह अन्याय वहाँ ही दीखता है अपने देशमें नहीं दीखता।"

"फिर क्या हुआ?"

"बताता हूँ। जर्मन सभ्यताने देखा कि वाह जी वाह, यह तो बड़ा मज़ा है! हम तो यों ही रहे जाते हैं! उन लोगोंने भी एक जहाजमें मिशनरियोंको भरकर उनके पीछे लगा दिया। सत्तानवेकी सालमें जब वे तुम्हारे ईसा-मसीहकी महिमा, शान्ति और न्याय-धर्मका प्रचार कर रहे थे, तब कुछ मूर्ख चीनी खफा हो उठे और दो परम धार्मिक प्रचारकोंका सिर काटकर अलग कर बैठे! अन्याय हुआ! चीनका ही अन्याय था; लिहाजा, शानटुंग प्रान्त जर्मनीके पेटमें पहुँच गया। उसके बाद बक्सरके विद्रोहकी पारी आई। योरोपकी सारी सभ्यताओंने एक होकर उसका जो बदला लिया, संसारमें शायद उसकी कहीं तुलना नहीं मिल सकती। उसके हर्जानेका अनन्त कर्ज चीनी लोग कबतक चुकाते रहेंगे सो ईसा मसीह ही जानें। इतनेमें ब्रिटेनके सिंह, जारके भालू, जापानके सूर्यदेव,—पर अब रहने दो बहन, मेरा गला सूखा आ रहा है। दुःखकी तुलना करनेके लिए एक हम लोगोंके सिवा शायद उन लोगोंका और कोई साथी नहीं।—सम्राट् शियनलुंगको निर्वाण प्राप्त हो, उनके आशीर्वादका बड़ा ज़ोर है!"

भारती एक गहरी साँस लेकर चुप बैठी रही।

"भारती?"

"क्यों भइया?"

"ऐसे चुपचाप कैसे?"

"तुम्हारे किस्सेकी बात ही सोच रही हूँ। अच्छा भइया, इसीलिए क्या चीनमें तुमने अपना कार्यक्षेत्र चुन लिया है? जो लोग सैकड़ों अत्याचारोंसे जर्जरित हो रहे हैं उन्हें उत्तेजित कर देना तो कठिन नहीं; पर क्या तुमने कभी यह भी विचार किया है कि इन सब निरीह अज्ञानी किसान मजदूरोंको यों ही बहुत दुख है, उसपर अगर तुम मार-काट खून-खराबी शुरू करा दोगे, तो उनके दुःखोंकी सीमा ही न रहेगी!"

डाक्टरने कहा, "निरीह किसान-मजदूरोंके दुःखोंके लिए तुम्हें दुश्चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है भारती, किसी भी देशमें वे स्वाधीनताके काममें शामिल नहीं होते बल्कि बाधा ही डालते हैं। उन लोगोंको उत्तेजित करनेका व्यर्थ परिश्रम करनेके लिए मेरे पास समय ही कहाँ है? मेरा कारबार शिक्षित,

मध्यवित्त और शरीफ घरोंसे ही चलता है। अगर किसी दिन तुम मेरे कामसें शामिल होना चाहो भारती, तो इस बातको मत भूलना। आइडियाके लिए,—आदर्शके लिए प्राण देने लायक प्राणोंकी आशा शान्तिप्रिय निर्विरोध निरीह किसानोंसे करना वृथा है। वे स्वाधीनता नहीं चाहते, वे चाहते हैं शान्ति,—जो शान्ति असमर्थ और अशक्तोंकी है,—वह पंगु जड़त्व ही उनकी अधिक कामनाकी वस्तु है।"

भारती व्याकुल हो उठी, बोली, "मैं भी यही चाहती हूँ भइया। मुझे तो तुम उसी जड़त्वके ही काममें लगा जाओ, तुम्हारी अधिकार-समितिके षड्यंत्रकी भाफमें तो मेरा दम घुटने लगता है।"

सव्यसाचीने हँसकर कहा, "अच्छा।"

भारती रुक नहीं सकी, उसी तरह व्यग्र आवेशसे कहने लगी, "एक 'अच्छा' कह देनेके अलावा और क्या तुम्हारे पास कुछ कहनेको है ही नहीं भइया?"

"लेकिन हम लोग तो आ पहुँचे भारती, जरा होशियारीसे बैठना, चोट न लग जाय कहीं।" कहकर डाक्टरने हाथके डाँड़से एक जोरका धक्का देकर नावको घुमाकर किनारेसे लगा दिया। फिर झटपट उठके भारतीको हाथ पकड़कर उतारते हुए कहा, "पानी-कीचड़ नहीं है बहन, तख्ता बिछा हुआ है, उतर आओ।"

अँधेरेमें अनजान जमीनपर सहसा पैर रखते हुए भारतीको दुबिधा-सी होने लगी, पर पैर रखकर उसने तृप्तिकी साँस लेते हुए कहा, "भइया, तुम्हारे हाथ आत्म-समर्पण करनेके बराबर निर्विघ्नशान्ति और कहीं नहीं—"

पर दूसरे पक्षसे इस मन्तव्यका कोई उत्तर नहीं आया। अँधेरेमें कुछ दूर आगे जानेपर डाक्टरने कहा, "लेकिन बात क्या है समझमें नहीं आती! यह क्या कोई ब्याहके लक्षण हैं? न रोशनीका इन्तजाम है, न कोई शोर-गुल, —बेहालाका सुर भी नहीं,—और कहीं चले गये क्या ये लोग?"

और भी कुछ दूर आगे चलनेपर सीढ़ीके ऊपरकी वह चित्र-विचित्र कागजकी लालटेन दिखाई दी। भारतीने कुछ तसल्लीके साथ कहा, "वह रही चीनी लालटेन। अभीसे शशि बाबूकी यह किफ़ायतशारी देखने लायक है भइया।" यह कहकर वह हँसने लगी।

दोनों दबे-पाँव सीढ़ीसे ऊपर पहुँचे, सामने ही खुले दरवाजेसे दिखाई दिया: शशि बड़े गौरसे कोई चिट्ठी-सी पढ़ रहा है। भारती आनन्दसे शोर मचाती हुई

बोली, "शशि बाबू, हम लोग आ गये,—खिलाने-पिलानेका इन्तजाम कीजिए, नवतारा कहाँ है?—नवतारा! नवतारा!"

शशिने मुँह उठाकर देखा और कहा, "आइए। नवतारा यहाँ नहीं है।"

डाक्टरने मुसकराते हुए कहा, 'गृहिणी-शून्य गृह कैसे कवि? बुलाओ उसे, हम लोगोंको स्वागतके साथ ले जाय जिमानेको, नहींतो यहीं खड़े रहेंगे—जीमेंगे जूठेंगे भी नहीं!"

शशिने उदास चेहरेसे कहा, "नवतारा यहाँ नहीं है डाक्टर, वे लोग सब घूमने गये हैं।"

सहसा उसका चेहरा देखकर भारतीने डरते हुए पूछा, "कहाँ घूमने चली गई? आजके दिन भी? बड़ी विचित्र सूझ है!"

शशिने कहा, "ब्याहके बाद दोनोंके दोनों रंगून सैर करने गये हैं।—नहीं नहीं, मेरे साथ ब्याह नहीं हुआ,—वह एक अहमद है न,—गोरा-गोरा-सा—खूबसूरत-सा छोकरा,—कूट साहबकी मिलमें टाइम-कीपरका काम करता है,—देखा नहीं आपने उसे? आज दोपहरको उसीके साथ नवताराका ब्याह हो गया है। सब कुछ पहलेसे ठीक था।"

दोनों आगन्तुक मारे आश्चर्यके आँखें फाड़कर देखते रह गये, "तुम कहते क्या हो शशि?"

शशि उठकर कमरेकी एक छिपी हुई जगहसे कपड़ेकी थैली उठा लाया और उसे डाक्टरके पैरोंके पास रखता हुआ बोला, "रुपये मिल गये डाक्टर, नवताराको पाँच हजार देनेके लिए कहा था सो दे दिये। बाकी बचे हैं साढ़े-चार हज़ार, उनमेंसे पाँच सौ रुपये मैंने ले लिए हैं लेकिन—"

ड़ाक्टरने कहा, "ये रुपये क्या मुझे दे रहे हो?"

शशिने कहा, "हाँ। मुझे अब क्या जरूरत है इनकी? आप ले लीजिए, काम आ जायँगे।"

भारतीने पूछा, "लेकिन उसे रुपये कब दे दिये?"

शशिने कहा, "कल रुपये पाते ही उसे दे आया।"

"ले लिए?"

शशिने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, अहमद तो कुल तीस रुपये महीने ही जो पाता है। नवतारा एक मकान खरीदेगी।"

"जरूर खरीदेंगी! कहकर डाक्टरने भारतीकी तरफ मुड़कर देखा: आँखोंपर आँचल रक्खे वह बरमदेके एक तरफ हटी जा रही है।

शशिने कहा, "प्रेसिडेण्टने आपसे एक बार मिलनेको कहा है। वे सुराबाया जा रही हैं।"

डाक्टरने फिर भी आश्चर्य प्रकट नहीं किया, पूछा, "कब जायँगीं?"

शशिने कहा, "कहती तो हैं जल्दी ही जायँगीं। उन्हें कोई आदमी लिवाने आया है।"

बात भारतीके कानमें पड़ गई, उसने आकर पूछा, "सुमित्रा जीजी क्या सचमुच ही चली जानेको कहती थीं शशि बाबू?"

शशिने कहा, "हाँ, उनकी माके चाचाके पास बहुत रुपया था, हालमें ही वे मरे हैं,—इनके सिवा और कोई उत्तराधिकारी नहीं है। बगैर गये नहीं सरेगा।"

डाक्टरने कहा, "बगैर गये जब सरेगा ही नहीं, तब जायँगी जरूर ही।"

शशि भारतीके मुँहकी ओर देखकर बोला, "बहुत-सा सामान रक्खा हुआ है, खाइएगा कुछ?"

पर भारतीके इतस्ततः करनेके पहले ही डाक्टर आग्रहके साथ कह उठे, "जरूर जरूर,—चलो, क्या क्या है देखूँ?" कहते हुए वे शशिका हाथ पकड़कर एक तरह जबर्दस्ती ही उसे खींचकर रसोई-घरकी ओर ले गये।

जाते जाते शशिने धीरेसे कहा "एक और खबर है डाक्टर, अपूर्व बाबू लौट आये हैं।

डाक्टरने मारे आश्चर्यके ठिठककर कहा, "क्या कहते हो तुम, किसने कहा तुमसे?"

शशिने कहा, "कल उनसे बेङ्गाल बैङ्कमें एकदम सामना हो गया। उनकी मा बहुत बीमार हैं। चलिए, बताता हूँ सब।"

२७

शशिने अतिशयोक्ति नहीं की थी। भीतर जाकर देखा गया कि भोज्य-सामग्रीके अत्यन्त आधिक्यसे रसोई-घरका एक हिस्सा एकदम ठसाठस भरा हुआ है। छोटी-बड़ी डेगचियाँ, प्लेट, कागजके ठोंगे, मिट्टीके बर्तन,—सब खानेकी चीजोंसे भरे पड़े हैं। तरह तरहकी चीजें बनाकर दुकानदार और

होटलवालोंने अपनी रुचि और मर्जीके माफिक उस पारसे इस-पार भेज भेजकर ढेर लगा दिया है,—कोई बातकी त्रुटि या कमी नहीं,—सिर्फ कमी है तो एक खानेवालोंकी! डाक्टर कुछ देर तक देख-भालकर एकाएक मारे खुशीके चिल्ला उठे, "वाह वाह! तोहफा! क्या बात है! शशि कैसा इन्तजामी आदमी है, देखा भारती? कौन क्या खायेगा, क्या न खायेगा, सब सोच-समझकर इन्तजाम किया है! बहुत अच्छे रहे, वाह!"

भारती दूसरी तरफ देखती रही और शशिने जरा हँसनेकी व्यर्थ कोशिश-मात्र की। किसी तरफसे कोई जवाब न पाकर डाक्टरका उल्लास अकस्मात् अट्टहास्यमें फट पड़ा, "हः हः हः हः। गृहस्थका जयजयकार हो!—शशि कवि! हः हः हः हः!"

भारतीसे अब सहा नहीं गया, वह मुँह फेरकर सजल दृष्टिसे देखती हुई बोली, "तुम्हारे मनमें क्या जरा भी दया-ममता नहीं भइया? क्या कर रहे हो, बताओ तो?"

"वाह! जिनकी कृपासे आज बढ़िया बढ़िया चीजें पेट भरके खाऊँगा,—"

भारती गुस्सा होकर बरामदेमें चली गई। दो-एक मिनट बाद शशि जाकर उसे लिवा लाया। भारतीने एक प्लेटमें भोजन सजाकर डाक्टरके आगे रखते हुए कृत्रिम कुपित कण्ठसे कहा, "लो, अब दस दस हाथ निकालकर खाओ राक्षसकी तरह। हँसी तो बन्द हो, मुहल्लेके लोगोंकी नींद उचट गई होगी!"

डाक्टरने एक साँस लेकर कहा, "अहा! कैसा उपादेय भोजन है! इसका तो स्वाद-गन्ध तक भूल गया था।"

बात भारतीके हृदयमें चुभ गई। उसे उस दिन रातकी बात याद आ गई: सूखा भात और जली हुई तरकारी!

डाक्टर आहारमें जुटकर बोले, "कविको नहीं परोसा भारती?"

"परोस रही हूँ।" कहकर उसने दूसरी प्लेट सजाकर शशिके आगे रख दी, और वह खुद डाक्टरके सामने बैठ गई। बोली, "लेकिन सब खा लेना पड़ेगा भइया, बिगाड़ नहीं सकते।"

"नहीं जी,—लेकिन तुम नहीं खाओगी?"

"मैं? कोई भी स्त्री ये सब चीजें खा सकती है भइया, तुम्हीं बताओ?"

"पर बनी तो ऐसी हैं जैसे अमृत!"

भारतीने कहा, "मैं इससे अच्छा अमृत बना-बनाकर तुम्हें हर रोज खिला सकती हूँ भइया।"

डाक्टरने अपना बायाँ हाथ माथेसे छुआते हुए कहा, "क्या किया जाय बहन, तकदीरकी बात है। जिसको खिलाना चाहिए वह यह सब खाता नहीं, और जो खायगा उसे एक दिनसे ज्यादा दो दिन खिलानेकी कोशिश करते ही तुम्हारी नामवरीसे देश भर जायगा! भगवानका ऐसा ही उलटा न्याय है! —क्यों कवि, ठीक है न? हः हः हः हः!"

अबकी भारती खुद भी हँस दी; परन्तु उसी वक्त अपनेको सम्हाल कर लज्जित होकर बोली, "तुम्हारी शरारतके मारे हँसी आ ही जाती है; लेकिन यह तुम्हारा बड़ा अन्याय है। खूब पेट भरकर खा-पीकर क्या इसके बाद रुपयोंकी थैली भी ले जाओगे?"

डाक्टर मुँहका कौर लीलते हुए बोले, "जरूर जरूर,—आधे तो चले गये नवताराके मकान-खाते, बाकीके क्या अहमद-अब्दुल्ला साहबकी साड़ी-जोड़ीके लिए छोड़ जाऊँगा? तमाशेको सर्वाङ्ग-सुन्दर बनानेके लिए सलाह तो कोई बुरी नहीं दे रही हो भारती, क्यों शशि? हः हः हः हः—"

भारतीने कहा, "भइया, तुम्हें हँसी-मज़ाक़ करते पहले भी देखा है मैंने, पर ऐसा सनकियों जैसा मज़ाक़ करते कभी नहीं देखा।"

डाक्टर जवाब देने जा रहे थे, पर भारतीके चेहरेकी तरफ देखकर सहसा उनसे कुछ कहा नहीं गया। भारतीने फिर कहा, "नर-नारीका प्रेम क्या तुम्हारे समान सभीके लिए मज़ाक़का विषय है भइया, जो ताशकी हार-जीतके समान इसकी हार-जीतमें भी अट्टाहास्य करनेके सिवा तुम्हें और कुछ नहीं सूझता? स्वाधीनता-पराधीनताके सिवा आदमीके लिए दुनियामें और भी कोई बात व्यथित होनेकी है, इस बातको क्या तुम कभी सोचोगे ही नहीं? देखो तो जरा शशि बाबूके चेहरेकी तरफ आँख उठाकर। एक ही छाकमें उनका क्या, हाल हो गया है! अपूर्व बाबू जिस दिन चले गये थे, उस दिन भी शायद तुम इसी तरह हँसे होगे!"

"नहीं नहीं, वह ठहरा—"

भारती बीचमें ही बोल उठी, "नहीं नहीं क्यों कर रहे हो भइया? शशि बाबू तुम्हारे स्नेहके पात्र हैं, तुम यही सोचकर खुश हो उठे हो कि नवतारा

इन्हें भला-मानस पाकर अपने फन्देमें फँसाकर बहुत दुःख देती, भविष्यके लिए उस दुःखसे ये बच गये। मगर भविष्य ही क्या आदमीके लिए सब कुछ है भइया ? और आजका यह एक ही दिन जो व्यथाके भारसे इनके समस्त भविष्यको लाँघ गया कुछ नहीं ?—पर, इस बातको तुम कैसे समझोगे, तुमने कभी किसीसे प्यार ही नहीं किया जो !"

शशि बहुत ही झेंप-सा गया। उसने किसी कदर कहना चाहा कि इसमें मेरा ही दोष है, मेरी ही गलती है, सांसारिक साधारण बुद्धि न होनेसे ही—

भारती व्यग्र कंठसे कह उठी, "शर्मानेकी क्या बात है शशि बाबू ? ऐसी ग़लती क्या संसारमें अकेले आपने ही की है ? आपसे सौ गुनी गलती क्या मैंने नहीं की ? और उससे भी हजार गुनी गलती करनेके कारण जो अभागिन चुपचाप इस देशको हमेशाके लिए छोड़ जानेको तैयार है, उसे क्या डाक्टर नहीं पहचानते ?—नवताराने धोखा दिया है, देने दो। फिर भी हम लोगोंकी वंचनाका गीत गाकर ही तो संसारके आधे काव्य अमर हो गये हैं !"

डाक्टरने आश्चर्यकी दृष्टिसे उसकी तरफ देखा, परन्तु भारतीने उसकी परवाह नहीं की। कहने लगी, "शशि बाबू, सांसारिक बुद्धि आपमें कम है, मगर मेरे तो कम नहीं थी ? और सुमित्रा जीजीकी बुद्धिकी तो तुलना ही नहीं हो सकती, फिर भी वह किसीके कुछ काम नहीं आई। वह तो सिर्फ पराजित ही हुई भइया, तुम्हारी बुद्धिके आगे। जो चिरकालसे अजेय है,—जिसके मार्गको कभी कोई बाधा ही नहीं मिली वह भी तुम्हारे पाषाण-द्वारपर बार बार पछाड़ खा-खाकर टुकड़े टुकड़े हो गई,—प्रवेश करनेका उसे भी जरासा रास्ता नहीं मिला।"

डाक्टरने इस अभियोगका जवाब नहीं दिया, सिर्फ उसके मुँहकी तरफ देखकर जरा हँस दिया। भारतीने कहा, "शशि बाबू, मैंने आपके प्रति बड़ा अपराध किया है, आज उसके लिए क्षमा चाहती हूँ।"

शशि कुछ समझ न सका, पर संकुचित हो गया। भारती क्षण-भर चुप रहकर कहने लगी, "एक दिन भइयासे मैंने कहा था, कोई भी स्त्री किसी दिन आपसे प्रेम नहीं कर सकती। उस दिन आपको मैंने पहचाना नहीं था। आज मालूम हो रहा है कि अपूर्व बाबूसे जिसने प्रेम किया है वह आपको पाती तो धन्य हो जाती। और सभी आपकी उपेक्षा करते आये हैं, सिर्फ एक आदमीने नहीं की, वे हैं डाक्टर।"

डाक्टर नीचेको मुँह किये मांसके टुकड़ेमेंसे हड्डी अलग करनेमें लगे हुए थे, मुँह उठानेकी उन्हें फुरसत ही नहीं मिली। भारतीने उन्हें सम्बोधित करके कहा, "भइया, आदमीको पहचाननेमें तुम्हारी ग़लती नहीं होती, इसीसे उस दिन तुमने दुःखित होकर मुझसे कहा था, 'शशि अगर और किसीसे प्रेम करता!' पर इसी तरह क्या कभी मुझे भी चेताकर नहीं कह सकते थे कि भारती, इतनी बड़ी गलती मत करो!—पुरुषके दो आदर्श तुम दोनों जनें मेरे सामने बैठे हो,—आज मेरी विरक्तिकी सीमा नहीं!"

डाक्टरने मांसके टुकड़ेको मुँहमें डालकर पूछा, "अपूर्वने फिर क्या कहा शशि?"

जवाब दिया भारतीने, बोली, "मा बीमार है। इलाज कराना है, इसलिए रुपये चाहिए। लौटकर छिपे छिपे गुलामी करनेसे कोई जान नहीं पायेगा। डर तलवरकरका है, डर ब्रजेन्द्रका है। मगर काका पुलिस-कर्मचारी है, इसलिए उसका इन्तजाम जरूर कर ही लिया होगा। तुम्हें-हमें भी शायद साने बिना न छोड़ा होगा।—क्षुद्र! लोभी! संकीर्ण-हृदय! डरपोक! छिः!"

डाक्टर मुसकरा दिये, धीरेसे बोले, "यथार्थ प्रेम हुए बगैर कोई किसीका इस तरह जी खोलकर यश नहीं गा सकता।—कवि, अब तुम्हारी पारी है। वाग्देवीका स्मरण करके तुम भी अब नवताराका गुण-कीर्तन करना शुरू कर दो, हमें भी तो मालूम हो जाय!"

भारतीने चौंककर कहा, "भइया, तुमने मेरा तिरस्कार किया है!"

डाक्टरने सिर हिलाकर कहा, "ऐसा ही होगा।"

अभिमान, व्यथा और क्रोधसे भारतीका चेहरा सुर्ख पड़ गया, बोली, "तुम मुझसे ऐसा हरगिज नहीं कह सकते। सोचा होगा, सभी शशि बाबूकी तरह मुँह बन्द करके सह सकते हैं। तुम्हें क्या मालूम है कैसी बीतती है आदमीके जीपर!" आवेशपूर्ण वेदनासे उसका गला रुक आया, बोली, "वे लौट आये हैं, अब यहाँसे मुझे और कहीं ले जाओ भइया,—मैं किस अभागेके चरणोंमें अपना सर्वस्व विसर्जन किये बैठी हूँ!" कहते कहते वह जमीनपर सिर लुढ़काकर बच्चोंकी तरह रोने लगी।

डाक्टर मुसकराते हुए चुपचाप भोजन करते रहे। उनका निर्विकार भाव देखकर मालूम नहीं हो सका कि इन सब प्रणय-उच्छ्वासोंने उन्हें रंचमात्र भी विचलित किया हो। पाँच सात मिनट बाद भारती उठकर बगलकी कोठरीमें

जाकर आँखें और मुँह-हाथ अच्छी तरह धो-पोंछकर यथास्थान आके बैठ गई। उसने पूछा, " भइया, और कुछ दूँ तुम लोगोंको ? "

डाक्टरने जेबमेंसे रूमाल निकालकर कहा, " ब्राह्मण ठहरा, कुछ छन्नी तो बाँध दो जिससे दो दिन निश्चिन्त रह सकूँ ! "

मैला रूमाल लौटाते हुए भारतीने ढूँढ़कर एक धुली हुई तौलिया निकाली और तरह तरहकी चीजें उसमें बाँधकर डाक्टरके सामने रखते हुए कहा, " यह लो ब्राह्मणकी छन्नी। और यह रुपयोंकी थैली ? "

डाक्टरने हँसकर कहा, " यह ब्राह्मणकी दक्षिणा है। "

भारतीने कहा, " अर्थात्, तुच्छ विवाह-संस्कारके सिवा असल जरूरी काम सब निर्विघ्न सम्पन्न हो गये ! "

अकस्मात् ठहाका मारकर हँसते हँसते डाक्टरने चटसे अपना मुँह दबाकर हँसी रोक दी, और गम्भीर होकर कहा, " भगवानका कैसा अभिशाप है भारती, जब हँसना चाहता हूँ तो मेरे मुँहसे अट्ट-हास्यके सिवा और कुछ निकलना ही नहीं चाहता। अट्ट-रोना रोनेके लिए तुम्हें साथ न लाया होता, तो आज मुँह दिखाना मुश्किल हो जाता। "

" भइया, फिर परेशान कर रहे हो ? "

" परेशान कर रहा हूँ ? मैं तो कृतज्ञता प्रकट करनेकी कोशिश कर रहा हूँ! "

भारतीने नाराज होकर दूसरी ओर मुँह फेर लिया, जवाब नहीं दिया।

शशि शुरूसे चुप ही बैठा था, अब उसने मुँह खोला। अकस्मात् अत्यन्त गम्भीरताके साथ कहने लगा, " आप अगर नाराज न हों तो एक बात कहूँ। कोई कोई बड़ा सन्देह करते हैं कि आपके साथ किसी दिन भारतीका ब्याह हो जायगा। "

डाक्टर क्षणमें चौंक-से गये, फिर तुरंत ही अपनेको सम्हालकर उल्लासके साथ कहने लगे, " तुम कहते क्या हो शशि, तुम्हारी वाणीपर फूल-चन्दन पड़ें, ऐसा सुदिन क्या कभी इस अभागेके भाग्यमें आयेगा ? यह तो स्वप्नके भी बाहरकी बात है, कवि ! "

शशिने कहा, " मगर बहुत-से ऐसा ही सोचते हैं। "

डाक्टरने कहा, " हाय, हाय, बहुत-से न सोचकर अगर एक व्यक्ति ही क्षण-भरके लिए ऐसा सोचती ! "

भारती हँस दी। डाक्टरके मुँहकी ओर देखकर बोली, "अभागेका भाग्य तो एक ही क्षणमें बदल सकता है भइया। तुम हुक्मकी तौरपर अगर कहो कि भारती, कल ही तुम्हें ब्याह करना होगा, तो कसम खाकर कहती हूँ, यह नहीं कहूँगी कि एक दिन ठहर जाओ।"

डाक्टरने कहा, "लेकिन अपूर्व बेचारा जो प्राणोंकी माया छोड़कर लौट आया है, उसका क्या होगा?"

भारतीने कहा, "उनकी ब्याहली देशमें मौजूद है, उनके लिए तुम्हें दुश्चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। वे छाती फाड़कर मर नहीं जायँगे।"

डाक्टरने गम्भीर होकर कहा, "पर मुझसे ब्याह करनेको राजी हो गईं, तुम्हारी हिम्मत तो कम नहीं है भारती!"

भारतीने कहा, "तुम्हारे हाथ पड़ूँगी, इसमें डर किस बातका?"

डाक्टरने शशिकी तरफ देखकर कहा, "सुन लो कवि, भविष्यमें अगर इनकार करे, तो तुम्हें गवाही देनी होगी।"

भारतीने कहा, "किसीको गवाही नहीं देनी पड़ेगी भइया, मैं तुम्हारे नामसे इतनी बड़ी शपथ करके कभी इनकार नहीं कर सकती। सिर्फ तुम्हें मंजूर होना चाहिए।"

डाक्टरने कहा, "अच्छा देख लूँगा तब!"

"देख लेना," कहकर भारती हँस दी, बोली, "भइया, क्या मैं और क्या सुमित्रा,—स्वर्गके इन्द्रदेव भी अगर उर्वशी-मेनका-रम्भाको बुलाकर कहते कि उस जमानेके मुनि-ऋषियोंके बदले तुम्हें इस जमानेके सव्यसाचीकी तपस्या भंग करनी होगी, तो मैं निश्चयसे कहती हूँ भइया, कि उन्हें मुँहपर स्याही पोतकर वापस चले जाना पड़ता। रक्त-मांसका हृदय जीता जा सकता है, पर पत्थरके साथ कहीं लड़ाई चल सकती है? पराधीनताकी आगसे जल-जलकर सारा हृदय तुम्हारा एकदम पत्थर जो हो गया है!"

डाक्टर मुसकरा दिये। भारतीकी दोनों आँखें श्रद्धा और स्नेहसे भर आईं, बोली, "इतना विश्वास न होता तो क्या भइया, इस तरह तुम्हें आत्म-समर्पण कर सकती थी? मैं तो नवतारा हूँ नहीं। मैं जानती हूँ, मुझसे बड़ी भारी ग़लती हो गई है,—पर इस जीवनमें उसके सुधारका कोई रास्ता ही नहीं। एक दिनके लिए भी जिसे मनमें—"

भारतीकी आँखोंसे आँसू ढल पड़े। जल्दीसे उन्हें पोंछकर हँसनेकी कोशिश करती हुई बोली, "भइया, वापस चलनेका क्या अभी वक्त नहीं हुआ? भाटा होनेमें अब कितनी देर है?"

डाक्टरने दीवारकी घड़ीकी ओर देखकर कहा, "अभी देर है बहन।" उसके बाद धीरेसे दाहिना हाथ बढ़ाकर भारतीके माथेपर रखते हुए कहा, "आश्चर्य है, इतनी दुर्दशामें भी भारतका यह अमूल्य रत्न अब तक नष्ट नहीं हुआ! जाने दो नवताराको, हमारी भारती तो है। शशि, सारी पृथ्वीमें इसकी जोड़ी नहीं मिलेगी। यहाँ हजारों सव्यसाचियोंकी भी मजाल नहीं कि तुच्छ अपूर्वको ओट करके खड़े हो जायँ!—अच्छी बात है शशि, तुम्हारी शराबकी बोतल कहाँ है?"

प्रश्न सुनकर शशि मानो कुछ लज्जित-सा हो गया, बोला, "खरीदी नहीं, डाक्टर। अब मैं नहीं पीऊँगा।"

भारतीने कहा, "तुम्हें याद नहीं भइया, नवताराने इनसे शराब न पीनेकी प्रतिज्ञा करा ली है?"

शशिने उसकी बातका समर्थन करते हुए कहा, "सचमुच नवताराके आगे मैंने प्रतिज्ञा कर ली थी कि अब शराब नहीं पीऊँगा। उस प्रतिज्ञाको अब मैं नहीं तोड़ूँगा डाक्टर।"

डाक्टर हँसकर बोले, "मगर फिर जीओगे कैसे शशि? शराब गई, नवतारा गई, सर्वस्व बेचकर जो रुपये मिले थे वे भी गये,—एक साथ इतना सहा कैसे जायगा?"

शशिके मुँहकी तरफ देखकर भारतीको चोट पहुँची, उसने कहा, "मज़ाक़ करना आसान है भइया, मगर सचमुच जरा विचारकर देखो तो सही।"

डाक्टरने कहा, "विचार कर ही तो कह रहा हूँ भारती, इन रुपयोंपर कितनी आशा-आकाक्षाएँ थीं इसकी, सो मुझसे ज्यादा और कोई नहीं जानता। शशिके परिचितोंमेंसे ऐसा कोई नहीं, जिसने उनका वर्णन न सुना हो। उसके बाद आई नवतारा। छह-सात महीनेसे वही इसके लिए ध्यान-ज्ञान हो रही थी। और शराब? वह तो शशिके सुखदुःखकी एकमात्र साथिन है। कल सब कुछ था; और आज, उसके जीवनका जो कुछ आनन्द था,—जो कुछ सान्त्वना थी, सब एक दिनमें एक साथ षड्यन्त्र करके उसे छोड़कर चली

गई। फिर भी किसीके विरुद्ध शशिका विद्वेष नहीं, किसी तरहकी शिकायत तक नहीं,—यहाँ तक कि आकाशकी तरफ देखकर एक बार आँसू-भरी आँखोंसे इतना भी न कह सका कि हे भगवन्! मैंने किसीका बुरा नहीं चीता, परन्तु तुम अगर सचमुच कहीं हो, तो उनका भला करना!"

भारतीके मुँहसे दीर्घ निःश्वास निकल पड़ी, बोली, "इसीसे तो तुम्हारा इतना स्नेह है इनपर?"

डाक्टरने कहा, "सिर्फ स्नेह नहीं, श्रद्धा भी है। शशि साधु आदमी है। इसका सारा हृदय गंगाजल-सा शुद्ध है, निर्मल है। मेरे चले जानेके बाद बहन, इसे जरा देखती-भालती रहना। तुम्हारे ही हाथ शशिको छोड़े जाता हूँ,—यह खुद दुःख उठायेगा, पर कभी किसीको दुःख देगा नहीं।"

शशि मारे शर्म और संकोचके सुर्ख हो उठा। इसके बाद कुछ देर तक, शायद बातके अभावसे ही, तीनों जनें चुप रहे।

डाक्टरने पूछा, "लेकिन यहाँ रहकर अब क्या करोगे शशि? तुम्हारे पास बाकी तो सिर्फ बेहला ही बच रहा है। पहलेकी तरह फिर देश-देशमें बजाते फिरोगे?"

अबकी बार शशिने हँसते हुए कहा, "अब तो आप मुझे अपने काममें भरती कर लीजिए,—सच कहता हूँ, अब मैं शराब नहीं पीऊँगा।"

उसकी बात और बात कहनेका ढंग देखकर भारती हँस पड़ी। डाक्टर खुद भी हँस दिये और स्नेहसे भीगे स्वरमें बोले, "नहीं नहीं कवि, इसमें भरती होनेकी जरूरत नहीं। तुम मेरी बहनके पास रहना, इसीसे मेरा बहुत काम हो जायगा।"

शशिने सिर हिलाकर सम्मति प्रकट की, फिर क्षण-भर मौन रहकर संकोचके साथ कहा, "पहले मैं कविता लिखता था डाक्टर, अब भी शायद लिख सकता हूँ।"

डाक्टरने खुश होकर कहा, "हाँ, बात तो ठीक है। इससे भी मेरा बड़ा भारी काम निकलेगा।"

शशिने कहा, "तो मैं फिर शुरू कर दूँगा। अब सिर्फ किसान-मजदूरोंके लिए ही लिखा करूँगा।"

"मगर उन्हें तो पढ़ना नहीं आता कवि?"

शशिने कहा, "मत आने दो, फिर भी उन्हींके लिए लिखूँगा।"

डाक्टरने हँसकर कहा, "यह अस्वाभाविक होगा, और अस्वभाविक चीज टिकती नहीं। अशिक्षितोंके लिए अन्न-सत्र खोला जा सकता है, पर साहित्य नहीं रचा जा सकता। उनके सुख-दुःखोंका वर्णन करनेका नाम ही साहित्य नहीं। किसी दिन अगर सम्भव हुआ तो अपना साहित्य वे खुद ही रचेंगे। तुम्हारे गलेसे निकला हलका गीत हलधरोंके लिए गीति-काव्य नहीं हो सकता। यह असम्भव प्रयास तुम मत करना कवि।"

शशि ठीकसे समझ नहीं सका, उसने सन्दिग्ध स्वरमें पूछा, "तो क्या करूँगा मैं?"

डाक्टरने कहा, "तुम क्रान्तिके गीत गाना। जहाँ पैदा हुए हो, जहाँ आदमी हुए हो, सिर्फ वहींका गाना गाना,—सिर्फ शिक्षित मध्यवित्त जातिके लिए।"

भारती विस्मित और व्यथित होकर बोली, "भइया, तुम 'जाति' मानते हो? तुम्हारा लक्ष्य भी सिर्फ उसी मध्यवित्त जातिकी ओर है?"

डाक्टरने कहा, "मैंने तो वर्णाश्रमकी बात नहीं की भारती, उस जबर्दस्ती लादे गये जाति-भेदका जिक्र मैं नहीं कर रहा हूँ। वैसा वैषम्य मुझमें नहीं है,—पर शिक्षित-अशिक्षितके जाति-भेदको बगैर माने तो मैं नहीं रह सकता। यही तो वास्तविक जाति है,—यही तो भगवानकी अपने हाथकी बनाई हुई सृष्टि है। क्रिश्चियन होनेकी वजहसे क्या तुम्हें उससे अलग रख सका हूँ बहन? तुम्हारे समान मेरे अपना कहनेको और कौन है?"

भारतीने श्रद्धा-पूर्ण दृष्टिसे उनकी ओर देखते हुए कहा, "मगर तुम्हारी क्रान्तिका गीत तो शशि बाबूके मुँहसे अच्छा नहीं लगेगा भइया। तुम्हारी क्रान्तिका गीत, तुम्हारी गुप्त समितिका—"

डाक्टरने बाधा देते हुए कहा, "नहीं, मेरी गुप्त समितिका भार मेरे ही ऊपर रहने दो बहन,—उसका बोझ ढोने लायक जोर,—नहीं नहीं, रहने दो उसे,—वह सिर्फ मेरे ही लिए है।" कहकर क्षणमें उन्होंने अपनेको सम्हाल लिया। फिर बोले, तुमसे तो मैं कह चुका हूँ भारती, क्रान्तिके मानी सिर्फ खून-खराबी ही नहीं है,—क्रान्तिके मानी है अत्यन्त शीघ्रतासे आमूल परिवर्तन,—राजनीतिक क्रान्ति नहीं,—वह मेरी है। कवि, तुम जी खोलकर सिर्फ सामाजिक क्रान्तिके गीत गाना शुरू कर दो। जो कुछ सनातन है, जो कुछ प्राचीन,

जीर्ण और पुराना है,—धर्म, समाज, संस्कार—सब टूट-फूटके ध्वंस हो जाय। और कुछ न बन सके शशि, तो सिर्फ इस महासत्यका ही प्रचार कर दो कि इस प्राचीनताके मोहसे बढ़कर बड़ा शत्रु भारतका और कुछ नहीं हो सकता। उसके बाद, देशकी स्वाधीनताका बोझ मेरे ही सिरपर रहने दो!—कौन है?"

शशिने कान खड़े करके कहा, "सीढ़ियोंपर किसीके आनेकी आहट-सी—"

डाक्टर पलक मारते ही जेबमें हाथ डालकर जल्दीसे दबे पाँव अँधेरे बरामदेमें चले गये, परन्तु दूसरे ही क्षण वापस आकर बोले, "भारती, सुमित्रा आ रही है।"

२८

इस निशीथ रात्रिमें सुमित्राका आगमन-संवाद जैसा अप्रत्याशित था वैसा ही अप्रीतिकर। भारती संकुचित और त्रस्त हो उठी। क्षण-भर बाद सुमित्राके प्रवेश करनेपर डाक्टरने स्वाभाविक स्वरमें अभ्यर्थना करते हुए कहा, "बैठो। क्या अकेली ही आई हो?"

सुमित्राने कहा, "हाँ।" फिर भारतीकी तरफ देखकर पूछा, "अच्छी तरह हो भारती?"

इस एक ही मिनटके अन्दर भारती न जाने क्या क्या सोचती रही। वह निश्चित जानती थी कि उस दिनकी तरह आज भी सुमित्रा उसकी परवाह नहीं करेगी। परन्तु सुमित्राने जब सिर्फ कुशल-क्षेम ही नहीं पूछा, बल्कि अपने स्वरमें स्निग्ध कोमलताका आभास भी दिया, तो उसने जैसे चाँद हाथमें पा लिया। अकारण कृतज्ञतासे उसका हृदय भर गया, बोली, "अच्छी हूँ जीजी। आप अच्छी हैं?" आज उसकी सुमित्रासे 'तुम' कहनेकी हिम्मत नहीं पड़ी।

"हाँ, अच्छी हूँ।" कहकर सुमित्रा एक तरफ बैठ गई। ज्यादा बात-चीत करनेकी उसकी प्रकृति ही नहीं। एक स्वाभाविक और शान्त गाम्भीर्यके साथ वह हमेशा सबसे व्यवधान रखकर चलती है, आज भी उस रीतिका व्यतिक्रम नहीं हुआ। यह जानते हुए भी कि यह छिपे हुए क्रोध या विरक्तिका परिचायक नहीं, भारती अपने आप दूसरी बात नहीं कह सकी।

डाक्टरने बात की। बोले, "शशिसे सुना कि तुम बहुत बड़ी जायदादकी उत्तराधिकारिणी होकर जावा चली जा रही हो?"

सुमित्राने कहा, "हाँ, मुझे ले जानेके लिए आदमी आये हैं।"

"कब जाओगी ?"

"पहले ही स्टीमरसे शनिवारको।"

डाक्टरने जरा हँसते हुए कहा, "खैर, अब तो तुम धनाढ्य हो गई।"

सुमित्राने गर्दन हिलाकर इसका समर्थन किया, कहा, "हाँ, सब मिल गया तो हो ही जाऊँगी।"

डाक्टरने कहा, "मिल जायगा। अटर्नीकी सलाह लिये बिना कोई काम मत करना और, जरा सावधानीसे रहना। जो लोग तुम्हें ले जानेके लिए आये हैं, वे परिचित आदमी तो हैं ?"

सुमित्राने कहा, "हाँ, वे विश्वासी आदमी हैं, मैं उन सबको जानती हूँ।"

"तब तो फिर बात ही क्या है !" कहकर डाक्टर मुँह फेरकर भारतीके प्रति लक्ष्य करके कुछ कहना चाहते थे, इतनेमें सहसा शशि बोल उठा। बोला, "यह अच्छा रहा डाक्टर, आपने जिन तीन महिलाओंको चुनकर लिया था उनमेंसे नवतारा चली ही गई, स्वयं प्रेसिडेण्ट जानेको तैयार हैं, अब सिर्फ भारती—"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "तुम्हें दुश्चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं कवि, यह एक तरहसे तय ही समझो कि भारती भी महा-जनोंका पन्थ अनुसरण करेगी।"

उत्तरमें भारतीने सिर्फ क्रुद्ध कटाक्ष किया, पर जवाब नहीं दिया।

डाक्टरके परिहासमें व्यथा भरी है, इस बातका अनुमान करके शशिने कहा, "आपको भी जल्दी ही चला जाना पड़ेगा। तब तो आपकी अधिकार-समितिकी ऐक्टिविटी कमसे कम बर्मामें तो खत्म ही हो गई। इसे अब कौन चलायेगा ?" कहकर शशिने एक गहरी साँस ले ली। उसका यह दीर्घ निःश्वास अकृत्रिम और वास्तवमें वेदनापूर्ण था, मगर आश्चर्य है कि डाक्टरके चेहरेपर इसका रत्ती-भर भी प्रभाव नहीं पड़ा। वे उसी तरह हँसते हुए बोले, "कह क्या रहे हो कवि ? इतने दिनोंसे इतना सब देखते-भालते हुए भी तुम्हारे मुँहसे आज सव्यसाचीके लिए यह सर्टिफिकेट ! तीन महिलाएँ चली जायँगी तो अधिकार-समिति ही खत्म हो जायगी ? शराब छोड़कर क्या यही उन्नति की है ? इससे तो अच्छा यह है कि तुम फिरसे पीना शुरू कर दो।"

बात मज़ाक-सी सुनाई देनेपर भी असलमें मज़ाक नहीं, यह समझकर भी भारती ठीक ठीक नहीं समझ सकी। उसने कनखियोंसे सुमित्राकी ओर देखा कि वह नीचेको निगाह किये चुपचाप बैठी है। तब उसने मुँह उठाकर डाक्टरकी

नहीं हो सकता। मैं जानती हूँ नहीं हो सकता, क्योंकि आदमी सिर्फ पानीका स्रोत नहीं है, और तुम तो किसी तरह नहीं हो।"

क्षण-भर मौन रहकर उसने फिर कहा, "सिर्फ इसी बातको जाननेके लिए मैं तुम्हें परेशान नहीं करती। पर जो नहीं है, जिसे तुम खुद सत्य नहीं समझते, उसीसे मुझे क्यों बहलाना चाहते हो?"

डाक्टर सहसा कोई उत्तर नहीं दे सके, और उत्तरके लिए भारतीने प्रतीक्षा भी नहीं की। वह बोली, "इस देशमें अब तुम्हारा रहना नहीं हो सकता,—तुम जानेके लिए कदम उठाये बैठे भी हो। और तुम्हें वापस पाना कितना अनिश्चित है, इस बातको सोचते हुए भी पीड़ा होती है। इसीसे मैं उसका सोच नहीं करती; फिर भी सत्यको प्रतिक्षण हृदयंगम किये बिना नहीं रहा जाता। इस व्यथाकी सीमा नहीं, मगर इससे भी बढ़कर मेरी व्यथा यह है कि तुम्हें पाकर भी नहीं पा सकी। आज मुझे कितने ही दिनोंके कितने ही प्रश्न याद आ रहे हैं भइया, उन्हें जब कभी मैंने किया है तभी तुमने सत्य कहा है, झूठ कहा है और सच-झूठ मिलाकर कहा है,—पर किसी भी तरह सत्य नहीं जानने दिया। तुम्हारी अधिकार-समितिकी सेक्रेटरी हूँ मैं, फिर भी यह बात मैंने एक दिन भी नहीं छिपाई कि तुम्हारी कार्य-पद्धतिपर मेरी जरा भी श्रद्धा नहीं। तुम नाराज नहीं हुए, अविश्वास भी नहीं किया,—हँसते हुए सिर्फ बार बार टाल देना ही चाहा है।—अपूर्व बाबूके जीवन-दानकी बात मैं भूली नहीं हूँ। मालूम होता है, मेरे छोटे-से जीवनका कल्याण सिर्फ तुम्हीं बता सकते हो। दुहाई है भइया, जाते समय अब अपनेको छिपाकर मत जाओ,—तुम्हारा, मेरा, सभीका जो परम सत्य है, उसे साफ साफ ही प्रकट करते जाओ।"

इस अद्भुत अनुनयका अर्थ समझमें न आनेसे शशि और सुमित्रा दोनोंके दोनों आश्चर्यसे देखते रह गये; और उनकी उत्सुक आँखोंकी तरफ देखकर भारती अपनी व्याकुलतासे अकस्मात् स्वयं ही लज्जित हो उठी। यह लज्जा डाक्टरकी दृष्टिसे छिपी न रही। उन्होंने हँसकर कहा, "सच, झूठ और सच-झूठ मिलाकर तो सभी कोई कहते हैं भारती, इसमें मेरा विशेष दोष क्या है? इसके सिवा लज्जित अगर किसीको होना चाहिए, तो मुझे होना चाहिए था; तुम क्यों लज्जित हुई भारती?"

भारती सिर झुकाये चुपचाप बैठी रही। सुमित्राने इसका जवाब देते हुए

कहा, "लज्जा अगर तुम्हारे हो ही नहीं डाक्टर तो ? और स्त्रियाँ तो सच बात भी मुँहपर कहते हुए लजा जाती हैं। कोई कोई तो कह ही नहीं सकतीं।"

यह बात किसके लिए और क्यों कही गई, सो किसीसे छिपा नहीं रहा; परन्तु जिस श्रद्धा और सम्मानके वे अधिकारी थे, उसीने सबको निरुत्तर कर रक्खा। दो-तीन मिनट इसी तरह सन्नाटेमें बीत गये। डाक्टरने भारतीको लक्ष्य करके कहा, "भारती, सुमित्राने कहा है कि मेरे लज्जा नहीं है, और तुमने दोष लगाया कि मैं सुविधानुसार सच और झूठ दोनों कहा करता हूँ। आज भी वैसी ही कोई बात कहकर मैं इस प्रसंगको खत्म कर सकता था अगर इसके साथ मेरी अधिकार-समितिका सम्बन्ध होता। इसकी भलाई-बुराईसे ही मेरा सच-झूठ निर्धारित होता है। यही मेरा नीति-शास्त्र है, और यही मेरी अकपट मूर्ति है।"

भारती दंग रह गई, बोली, "कहते क्या हो भइया, यही तुम्हारी नीति है, यही तुम्हारी अकपट मूर्ति है?"

सुमित्रा कहने लगी, "हाँ, ठीक यही है। यही इनका यथार्थ स्वरूप है। दया नहीं, ममता नहीं, धर्म नहीं,—इस पाषाण-मूर्तिको मैं पहचानती हूँ भारती!"

उनकी बातपर भारतीने विश्वास न किया हो, सो बात नहीं; पर वह सुनकर दंग रह गई।

डाक्टरने कहा, "तुम लोग कहा करती हो चरम सत्य, परम सत्य,—और ये अर्थहीन निष्फल शब्द तुम लोगोंके लिए महा मूल्यवान् हैं। मूर्खोंको बहकानेके लिए इतना बड़ा जादू-मंत्र दूसरा नहीं। तुम लोग सोचती हो कि मिथ्याको ही बनाना पड़ता है; सत्य शाश्वत, सनातन, अपौरुषेय है। पर यह बात झूठी है। मिथ्याकी तरह सत्यको भी मानव-जाति दिन-रात बनाया करती है। शाश्वत सनातन नहीं है यह,—जन्म और मृत्यु दोनों हैं इसके। मैं झूठ नहीं कहता, मैं सत्यकी ही सृष्टि करता हूँ।"

यह मज़ाक़ नहीं है,—सव्यसाचीके हृदयकी बात है। भारती फक पड़ गई। उसने अस्फुट स्वरमें पूछा, "भइया, क्या यही तुम्हारी अधिकार समितिकी नीति है?"

डाक्टरने जवाब दिया, "भारती, अधिकार-समिति मेरे तर्कशास्त्रकी पाठशाला नहीं है,—वह मेरा राह चलनेके अधिकारका जोर है। न जाने कौन, कब, किस अनजान आवश्यकताके लिए नीति-वाक्य रचे गये हैं। अधिकार-समितिके लिए वे तो हो जायेंगे सत्य, और जिसकी गर्दन फाँसीकी रस्सीसे

बँधी है, उसके हृदयका वाक्य हो जायगा झूठ ? तुम्हारा परम सत्य क्या है, मैं नहीं जानता परन्तु परम मिथ्या अगर कुछ हो तो वह यही है ! ”

उत्तेजनासे सुमित्राकी दृष्टि प्रखर हो उठी; परन्तु इस भयानक बातको सुनकर भारती आशंका और संशयसे एकदम अभिभूत हो गई ।

“ कवि ! ”

“ जी ? ”

“ शशिकी भक्ति देखी ? ” कहकर डाक्टर हँस दिये, पर उस हँसीमें और कोई शामिल नहीं हुआ । डाक्टरने दीवारकी घड़ीकी ओर देखकर कहा, “ ज्वार खत्म होनेमें अब देर नहीं है, मेरे जानेका समय हो गया । तुम्हारे तारा-हीन शशि-तारा-लॉजमें आनेका अब मुझे समय नहीं मिलेगा । ”

शशिने कहा, “ कल ही मैं इस घरको छोड़ दूँगा ? ”

“ कहाँ जाओगे ? ”

शशिने कहा, “ आपके आदेशानुसार भारतीके पास जाकर रहूँगा । ”

डाक्टरने हँसते हुए कहा, “ देखा भारती, शशि मेरा आदेश अमान्य नहीं करता । उस मकानका नाम क्या रक्खोगे शशि ?—शशि-भारती लॉज ? तीन बार धोखा खाते तो मैंने ही देखा है, पर अबकी बार शायद सफलता मिल जाय । भारती बहुत भली मानस है । इसमें दया-ममता भी है । ”

इतने दुःखमें भी भारती हँस दी । सुमित्राने मुसकराते हुए सिर झुका लिया ।

डाक्टरने कहा, “ लेकिन, तुम्हारी रुपयोंकी थैली मैं साथ लिये जाता हूँ । भारतीके पास छोड़ जाऊँगा, वह भी एक मकान खरीदेगी । ”

भारतीने कहा, “ भइया, यह कटेपर नमक छिड़कना क्या तुम्हारा बन्द नहीं होगा ? ”

शशिने कहा, “ रुपये आप ले लीजिए डाक्टर, मैंने आपको दे दिये । मेरे देशके घर-द्वार सर्वस्व बेचकर आये हुए रुपये देशहीके काममें लगने दीजिए । ”

डाक्टर हँस दिये, पर उनकी आँखोंमें आँसू भर आये । बोले, “ रुपये मेरे पास हैं शशि, उनकी अभी मुझे जरूरत नहीं । इसके अलावा अब शायद रुपयोंकी कमी भी न रहेगी । ” इतना कहकर वे सुमित्राकी तरफ देखने लगे ।

सुमित्राकी दोनों आँखोंसे कृतज्ञता मानो उच्छ्वसित हो उठी । मुँहसे उसने कुछ भी नहीं कहा, परन्तु उसके सर्वाङ्गसे मानो यही बात फूटकर निकलने लगी कि सब कुछ तुम्हारा ही तो है, पर उसे क्या तुम छुओगे ?

डाक्टर उधरसे दृष्टि हटाकर कुछ देर स्तब्ध रहनेके बाद बोले, " कवि ! "

" कहिए ? "

" ब्राह्मण-भोजन जरा पेशगी ही कर लिया, इसके लिए तुम दुःखित मत होना शशि, कारण शुभ लग्न जब सचमुच ही आ पहुँचेगा तब दुबारा शायद मुझे फुरसत नहीं मिलेगी। पर वह दिन आयेगा जरूर। नाना प्रकारके स्वादिष्ट भोजन करनेके बाद मैं तुम्हें वर देता हूँ : तुम सुखी होओ। तुम कवि हो, तुम देशके एक महान् कलाकार हो,—और इस बातको कभी भूलना मत कि राजनीतिसे तुम बड़े हो। "

शशिने दुःखित होकर कहा, " जिसमें आप हैं उसमें मेरे रहनेसे दोष होगा !—तो मैं क्या आपसे भी बड़ा हूँ ? "

डाक्टरने कहा, " बड़े तो हो ही। तुम्हारा परिचय ही तो जातिका सच्चा परिचय है। तुम लोगोंको छोड़ देनेसे उसका वजन किस चीज़से किया जायगा ? आखिर किसी न किसी दिन इस देशकी स्वाधीनता-पराधीनताकी समस्याका समाधान तो हो ही जायगा,—इस देशकी दुःख-दारिद्र्यकी कहानीको उस दिन एक जनश्रुतिसे अधिक मूल्य नहीं मिलेगा। परन्तु तुम्हारे कामका मूल्य कौन आँक सकेगा ? तुम्ही तो देशकी समस्त विच्छिन्न विक्षिप्त धारा-ओंको एक सूत्रकी तरह एकत्र गूँथ जाओगे। "

सुमित्रा मुसकराती हुई बोली, " कब गूँथेंगे सो ये ही जानें; पर तुम बातें गूँथ-गूँथकर अभीसे जो इनका मूल्य बढ़ाये दे रहे हो, उसे भारती सम्हालेगी कैसे ? "

सुनकर सब हँस दिये। डाक्टरने कहा, " शशि होगा हम लोगोंका राष्ट्रीय कवि। न हिन्दुओंका, न मुसलमानोंका, न ईसाइयोंका,—सिर्फ हमारे भारतका कवि होगा। सहस्र-नद-नदी-प्रवाहित हमारा भारतवर्ष, हमारी सुजला, सुफला, शस्यश्यामल खेतोंसे हरी-भरी मातृभूमि, जिसमें झूठे रोगोंका दुःख नहीं, झूठे दुर्भिक्षकी भूख नहीं, विदेशी शासनके दुःसह अपमानकी ज्वाला नहीं, मनुष्यत्वकी हीनताका लांछन नहीं,—तुम होगे शशि, उसी देशके चारण कवि। नहीं हो सकोगे भाई ? "

भारतीका सारा शरीर रोमांचित हो उठा। शशि भ्रातृ-सम्बोधनके माधुर्यसे विगलित होकर कहने लगा, " डाक्टर, कोशिश करूँ तो मैं अँग्रेजीमें भी कविता लिख सकता हूँ। यहाँ तक कि—"

डाक्टरने रोकते हुए कहा, "नहीं नहीं, अँग्रेजीमें नहीं, अँग्रेजीमें नहीं,—भारतकी अपनी भाषामें, अपनी मातृभाषामें। शशि, संसारकी सभी भाषाएँ मेरी जानी हुई हैं, परन्तु सहस्र दलोंमें विकसित ऐसी मधुसे भरी भाषा और कोई नहीं। मैं अकसर सोचा करता हूँ भारती, ऐसा अमृत इस देशमें कब कौन लाया था?"

भारतीकी आँखोंमें आँसू भर आये, उसने कहा, "और मैं सोचा करती हूँ भइया, देशसे इतना प्रेम करना तुम्हें किसने सिखाया था। मानो, कहीं भी उसकी कोई सीमा ही नहीं!"

इसीकी प्रतिध्वनि उठाकर शशि उच्छ्वसित स्वरमें कहने लगा, "उस विगत गौरवका गान ही मेरा गान होगा, और यह प्रेमका स्वर ही मेरा स्वर होगा। अबसे मैं यही शिक्षा देता फिरूँगा कि अपने देशको,—अपनी जन्म-भूमिको फिरसे लोग उसी तरह चाहने लगें।"

डाक्टरने आश्चर्यभरी दृष्टिसे क्षण-भर शशिकी तरफ देखा, फिर सुमित्राकी तरफ देखा, और अन्तमें दोनो हँस दिये। पर इस हँसीका मर्म और दो जन न समझ सके और इस कारण दोनोंके दोनों कुछ झेंप-से गये। डाक्टरने कहा, "फिर उसी तरह क्या चाहने लगेंगे? तुमने जिस प्रेमका इशारा किया है शशि, वैसा प्रेम भारतीयोंने अपने देशसे कभी नहीं किया। उस प्रेमका जरा भी अंश होता, तो क्या हमारे भारतीय भाई विदेशियोंके साथ षड्यंत्र रचकर अपने तेतीस करोड़ भाई-बहनोंको हँसते-खेलते दूसरोंके हाथ सौंप देते? 'जननी जन्मभूमि' सिर्फ कहने-भरकी बात है। मुसलमान बादशाहके पैरों तले अंजलि देनेके लिए हिन्दू मानसिंह हिन्दू प्रतापादित्यको जानवरकी तरह बाँधके ले गया था और उसे रसद जुटाकर यहाँ तक रास्ता दिखाते हुए ले आये थे बंगाली। जब मराठोंकी फौजें देश लूटने आतीं, तो हम लोग युद्ध न करके सिरपर हँड़िया रखकर पानीमें छिप जाते थे। मुसलमान डाकू मन्दिर ध्वंस करके देवताओंके नाक-कान काट ले जाते थे और यहाँवाले भागकर जान बचाते फिरते थे,—धर्मके लिए भी गर्दन नहीं देते थे। वे भारतीय हमारे कोई नहीं होते कवि, गौरव करने लायक उनमें कुछ भी नहीं था। हम लोग उनकी बिलकुल उपेक्षा करते हुए चलेंगे,—उनका धर्म, उनका अनुशासन, उनकी भीरुता, उनकी देशद्रोहिता, उनकी सामाजिक रीति-नीति,—उनका जो भी कुछ है, सब उपेक्षणीय है। वही तो होगा तुम्हारा क्रान्तिका गीत, वही तो होगा तुम्हारा सच्चा देश-प्रेम।"

शशि विमूढ़की भाँति देखता रहा, इन बातोंका मर्म ग्रहण नहीं कर सका।

डाक्टर कहने लगे, " उनकी कापुरुषतासे हम लोग संसारकी दृष्टिमें हेय हो रहे हैं, उनकी स्वार्थपरताके भारसे दवे हुए संकटमें पड़े हैं,—पंगु हो रहे हैं।—सिर्फ क्या देशकी ही बात है ? जिस धर्मको वे स्वयं नहीं मानते थे, जिन देवताओंपर उनकी निजकी श्रद्धा नहीं थी, उन्हींकी दुहाई देकर वे समस्त जातिको आपाद-मस्तक युक्ति-हीन विधि-निषेधोंके हजारों बंधन डालकर क्या नहीं बाँध गये हैं ! यह अधीनता अनेक दुःखोंकी जड़ है। "

शशिने धीरे-से कहा, " यह सब आप क्या कह रहे हैं ? "

भारतीके क्षोभकी सीमा न रही, बोली, " भइया, यद्यपि मैं क्रिश्चियन हूँ, फिर भी वे मेरे भी पूर्व पुरुष हैं। उनमें और चाहे जो भी दोष रहा हो, पर उनके धर्म-विश्वासमें भी प्रवंचना थी, ऐसी कड़ुई बात तुम मत कहो। "

सुमित्रा चुपचाप बैठी सुन रही थी, अब बोल उठी। उसने भारतीकी तरफ देखकर कहा "किसीके भी विषयमें कड़ुई बात कहना अन्याय है, पर अश्रद्धेयपर श्रद्धा रखना भी अन्याय है,—भले ही वे पूर्वपुरुष क्यों न हों। इसमें मिठास हो सकती है, पर युक्ति नहीं हो सकती। भारती, जो कुसंस्कार हैं, उन्हें छोड़ना सीखो। "

भारती चुप रही। डाक्टरने शशिको लक्ष्य करके कहा, " कोई भी चीज सिर्फ प्राचीनताके कारण ही सत्य नहीं हो सकती कवि, पुरानेका गुण-गान कर सकना ही कोई बड़ा गुण नहीं। इसके सिवा हम लोग क्रान्तिकारी हैं, पुरानेका मोह हम लोगोंमें नहीं है। हमारी दृष्टि, हमारी गति, हमारा लक्ष्य सिर्फ सामनेकी तरफ है। पुरानेको ध्वंस करके ही तो हमें रास्ता बनाना पड़ता है। जीर्ण और मृत ही अगर रास्ता रोके रहेंगे, तो हमारे अधिकारके दावेको रास्ता कैसे मिलेगा ? "

भारतीने कहा, " मैं सिर्फ बहसके लिए ही बहस नहीं कर रही भइया, मैं वास्तवमें तुम्हारे पाससे अपने जीवनका रास्ता जान लेना चाहती हूँ। कोई एक संस्कार या रीति-नीति सिर्फ प्राचीन होनेके कारण ही क्या निष्फल, वृथा और त्याज्य हो जाती है ? तो मनुष्य बिना किसी संशयके दृढ़ताके साथ खड़ा काहेपर रहेगा भइया ? "

डाक्टरने कहा, " इतना भार सहनेवाली चीज़ दुनियामें कौन-सी है, नहीं मालूम। पर हाँ, इतना जानता हूँ भारती, कि उम्रके साथ साथ एक दिन सभी चीजें प्राचीन, जीर्ण और नाकाम हो जायँगीं; और तब वे त्याज्य ही ठहरेंगीं।

प्रति दिन मनुष्य तो बढ़ता जाय पर उसके पूर्वपुरुषोंकी प्रतिष्ठित हजारों वर्षकी पुरानी रीत-नीतियाँ जैसीकी तैसी एक ही जगह अचल होकर पड़ी रहें,—ऐसा हो तो अच्छा ही हो, मगर ऐसा होता नहीं। मुश्किल तो यह है कि सिर्फ वर्षोंकी संख्यासे ही किसी एक संस्कारकी प्राचीनता निरूपित नहीं की जा सकती। नहीं तो तुम भी आज हमारे साथ स्वर मिलाकर कहतीं कि "भइया, जो कुछ पुराना है, जो कुछ जीर्ण है,—सबको बिना किसी विचारके ध्वंस कर डालो। फिर नये आदमी, नये जगतकी प्रतिष्ठा होने दो।"

भारतीने पूछा, "भइया, यह सब क्या स्वयं तुम कर सकते हो?"

"क्या कर सकता हूँ बहन?"

"जो कुछ प्राचीन है,—जो कुछ पवित्र है, उस सबको निर्मम चित्तसे ध्वंस कर सकते हो?"

डाक्टरने कहा, "कर सकता हूँ। यही तो हम लोगोंका मत है। 'पुराने' के मानी ही पवित्र नहीं है भारती, आदमी सत्तर वर्षका पुराना हो जाय तो वह दस सालके बच्चेकी अपेक्षा पवित्र नहीं हो जाता। तुम अपनी ही तरफ गौर करके देखो। आदमीके लगातार चलनेके रास्तेमें भारतका वर्णाश्रम-धर्म सब तरहसे असत्य हो गया है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र,—कोई भी तो अब उस आश्रमको अवलम्बन किये हुए नहीं। और यदि कोई करे तो उसे मरना होगा। उस युगका वह बन्धन अब छिन्न-भिन्न हो गया है, फिर भी उसीको पवित्र समझ रहा है कौन, जानती हो? ब्राह्मण। मौरूसी पट्टेकी तरह अत्यन्त पवित्र समझकर कौन उसे जकड़े रहना चाहता है, जानती हो? जमीनदार। इसका स्वरूप समझना तो कठिन नहीं है बहन! जिस संस्कारके मोहसे अपूर्व आज तुम सरीखी नारीको भी छोड़कर जा सकता है, उससे बढ़कर असत्य और क्या है? और क्या हो सकता है? और ऐसा सिर्फ अपूर्वका वर्णाश्रम-धर्म ही थोड़े है, तुम्हारा ईसाई धर्म भी वैसा ही असत्य हो गया है भारती, उसकी भी प्राचीनताका मोह तुम्हें त्याग देना पड़ेगा।"

भारती डर गई, बोली, "जिस धर्मसे प्रेम है, जिसपर विश्वास है, तुम उसको भी छोड़ देनेके लिए कह रहे हो भइया?"

डाक्टरने कहा, "हाँ, कहता हूँ। कारण, सभी धर्म असत्य हैं,—आदिम दिनोंके कुसंस्कार हैं। विश्व-मानवताके इतने बड़े शत्रु और कोई नहीं।"

भारती उदास फक चेहरा लिये बैठी रही। बहुत देर बाद धीरेसे बोली, "भइया, तुम कहीं भी रहो, तुमको हमेशा याद रक्खूँगी, स्नेह करूँगी; पर

अगर तुम्हारा यथार्थ मत यही है, तो आजसे तुम्हारा और मेरा मार्ग बिलकुल अलग है। यह एक दिनके लिए भी मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम्हारी अधिकार-समितिका मार्ग इतना बड़ा पापका मार्ग है!"

डाक्टर, जरा मुसकरा दिये।

भारतीने कहा, "मैं निश्चय जानती हूँ, तुम्हारे इस दयाहीन निष्ठुर ध्वंसके मार्गसे कल्याण हरगिज नहीं हो सकता। मेरा जो स्नेहका मार्ग है, मेरा जो करुणाका मार्ग है, मेरा जो धर्म-विश्वासका मार्ग है,—वही मार्ग मेरे लिए श्रेय है, वही मार्ग मेरे लिए सत्य है।"

"इसीसे तो मैं तुम्हें इधर खींचना नहीं चाहता भारती, तुम्हारे विषयमें गल्ती की थी सुमित्राने, पर मुझसे यह गल्ती एक भी दिन नहीं हुई। तुम अपने मार्गपर ही चलो। स्नेहकी आयोजनाएँ,—करुणाकी संस्थाएँ दुनियामें बहुत मिल जायँगीं। मिलेगी नहीं सिर्फ एक अधिकार-समिति, मिलेगी नहीं सिर्फ—" कहते कहते उनकी आखोंकी दृष्टि क्षणमें जलकर फिर बुझ-सी गई। कंठ-स्वर स्थिर गम्भीर था। भारती और सुमित्रा दोनों ही समझ गईं कि सव्यसाचीकी यह शान्त मुखश्री, यह संयत अचंचल भाषा ही सबसे ज्यादा भीषण है। उन्होंने मुँह उठाकर कहा, "तुमसे तो कई बार कह चुका हूँ भारती कि कल्याण मेरी कामनाकी चीज नहीं है, मैं चाहता हूँ स्वाधीनता। राणा प्रतापने जब चित्तौड़को जनहीन अरण्यमें परिणत कर दिया था तब सारे राजपूतानेमें उससे बढ़कर अकल्याण-मूर्ति और कोई प्रदेश न था,—उसे आज कितनी शताब्दियाँ हो गईं, फिर भी वह अकल्याण ही आज तक सहस्र कल्याणोंसे बड़ा बना हुआ है। रहने दो इन व्यर्थके तर्कोंको।—जो मेरा व्रत है, उसके आगे, कोई भी बात मेरे लिए असत्य नहीं,—कुछ भी अकल्याण नहीं।"

भारती चुप बैठी रही। बहस और मत-भेद तो पहले भी बहुत बार हो चुका है, पर इस तरहका नहीं हुआ। आज उसका मन विषादसे भर गया, जैसे ऊपर कोई बोझ-सा लद गया हो।

डाक्टरने पहले घड़ीकी तरफ देखा, फिर भारतीके चेहरेकी तरफ देखा, उसके बाद अपनी स्वाभाविक स्निग्ध हँसी हँसते हुए कहा, "उधर नदीमें फिर ज्वार आनेका वक्त हो आया भारती, चलो उठो।"

भारती उठके खड़ी हो गई, बोली, "चलो।"

डाक्टर खानेकी पोटली हाथमें लेकर उठ खड़े हुए, बोले, "सुमित्रा, ब्रजेन्द्र कहाँ है?"

सुमित्राने कोई जवाब नहीं दिया, वह नीचेको निगाह किये चुपचाप बैठी रही।

"तुम्हें क्या पहुँचा जाऊँ?"

सुमित्राने गर्दन हिलाकर कहा, "नहीं।"

डाक्टर फिर कुछ कहना चाहते थे, पर अपनेको रोककर सिर्फ इतना ही बोले, "अच्छा" और फिर भारतीसे बोले, "अब देर मत करो बहन, चलो।" इतना कहते हुए वे बाहर चल दिये।

सुमित्रा उसी तरह नीचेको निगाह किये बैठी रही। भारती उसे चुपके-से नमस्कार करके डाक्टरके पीछे पीछे चल दी।

२९

स्वप्न-चालितकी तरह भारती नावपर आकर बैठ गई और रास्ते-भर चुपचाप स्तब्ध ही बैठी रही। रात काफी हो चुकी थी, शायद तीसरा पहर होगा; आकाशके असंख्य नक्षत्रोंके प्रकाशसे पृथिवीका अन्धकार स्वच्छ हुआ आ रहा था। नाव उस पार घाटके आगे जा लगी। डाक्टरने हाथ पकड़कर भारतीको उतारकर स्वयं भी उतरना चाहा, पर भारतीने उन्हें रोकते हुए कहा, "मुझे पहुँचानेकी जरूरत नहीं भइया, मैं खुद ही चली जाऊँगी।"

"अकेले डर नहीं लगेगा?"

"लगेगा। पर इसके लिए तुम्हें चलनेकी जरूरत नहीं।"

सव्यसाचीने कहा, "पास ही तो है, चलो न, तुम्हें झटसे पहुँचा आऊँ बहन।" इतना कहकर उन्होंने नीचे सीढ़ीपर पैर बढ़ाया ही था कि भारतीने हाथ जोड़कर कहा, "माफ करो भइया, साथ चलकर तुम मेरे डरको हजार गुना मत बढ़ाओ, घर जाओ।"

वास्तवमें उनका साथमें जाना बहुत ही खतरनाक था, इसमें कोई सन्देह नहीं। इसलिए उन्होंने भी जिद नहीं की; पर भारतीके चले जानेपर बहुत देर तक वे उसी ओर खड़े खड़े ताकते रहे।

घर जाकर भारतीने दरवाजेका ताला खोलकर भीतर प्रवेश किया, बत्ती जलाकर चारों तरफ अच्छी तरह देखा-भाला और किसी तरह बिछौने बिछाकर पड़ रही। शरीर बिलकुल थक गया था, मन अवसन्न था और आँखें मिची

आ रही थीं, मगर फिर भी नींद नहीं आई। घूम-फिरकर सव्यसाचीकी वही बात बार बार उसके दिमागमें चक्कर काटने लगी कि इस क्षणिक परिवर्तन-शील संसारमें सत्योपलब्धि नामकी कोई नित्य वस्तु है ही नहीं। उसके जन्म है, मरण है,—युग युगमें मनुष्यकी आवश्यकताके अनुसार सत्यको नया रूप धारण करके आना पड़ता है। यह विश्वास भ्रान्त है,—यह धारणा कुसंस्कार है कि अतीतमें जो सत्य था उसको वर्तमानमें भी सत्य स्वीकार करना ही पड़ेगा।

भारती मन ही मन कहने लगी : मानवकी आवश्यकतापर, अर्थात् भारतकी स्वाधीनताकी आवश्यकतापर नये सत्यकी सृष्टि करना ही भारतीयोंके लिए सबसे बड़ा सत्य है। इसके माने यह, कि इसके आगे कोई भी पन्थ असत्य नहीं, कोई उपाय या कोई भी अभिसन्धि हेय नहीं। यह जो कार-खानेके कदाचारी कुली-मजदूरोंको अच्छे रास्तेपर लानेका उद्यम है, यह जो उनकी सन्तानको शिक्षा देनेका आयोजन है, यह जो उनके लिए रात्रि-पाठ-शालाएँ हैं,—इस बातको स्वीकार कर लेनेमें सव्यसाचीको कोई दुविधा,—कोई लज्जा नहीं हुई कि इन सबका लक्ष्य और ही कुछ है।—पराधीन देशकी मुक्ति-यात्रामें रास्तेका परहेज कैसा ? एक दिन सव्यसाचीने कहा था, पराधीन देशके शासकों और शासितोंकी नैतिक बुद्धि जब एक-सी हो जाती है तो उससे बढ़कर देशका दुर्भाग्य और कुछ नहीं होता। उस दिन इस बातका मतलब वह नहीं समझ सकी थी, आज उसके आगे वह साफ हो गया।

घड़ीमें तीन बज गये। उसके बाद कब उसकी चेतना नींदसे आच्छन्न हो गई, उसे याद नहीं। पर मालूम हुआ, मानो वह निद्रामें भी बार बार इस बातको दुहराने लगी : भइया, तुम अति-मानव हो, तुमपर मेरी भक्ति, श्रद्धा और स्नेह हमेशा ही अचल बना रहेगा; पर, तुम्हारे इस विचारको मैं हरगिज ग्रहण नहीं कर सकती। भगवान करें, तुम्हारे ही हाथसे वे देशको मुक्ति दें, पर अन्यायको कभी न्यायकी मूर्ति बनाकर खड़ा मत करना। तुम परम पंडित हो, तुम्हारी बुद्धिकी सीमा नहीं, बहसमें तुम्हें जीता नहीं जा सकता,—तुम सब कुछ कर सकते हो। विदेशियोंके हाथसे पराधीनोंको कितना लांछित होना पड़ता है, इस दुःखके समुद्रमें हमारी कितनी आवश्यकताएँ हैं,—देशकी लड़की होकर क्या मैं यह समझती नहीं भइया ? परन्तु सिर्फ इसीलिए आवश्यकताको ही अगर सबसे ऊँचा स्थान देकर दुर्बल-चित्त मानवके सामने अधर्मको ही धर्म

बना डाला जायगा,—कहा जायगा कि जो आवश्यक है वह असत्य भी सत्य है, अधर्म भी धर्म है,—तो फिर तुम्हें दुःखोंका कभी अन्त ही नहीं मिलेगा।

दूसरे दिन भारतीकी जब आँख खुली तब काफी दिन चढ़ गया था। लड़के बाहर दरवाजेपर खड़े खड़े पुकार रहे थे। वह झटपट उठ बैठी और जल्दीसे हाथ मुँह धोकर नीचे जा पहुँची। दरवाजा खोलते ही लड़के-लड़कियाँ अपनी अपनी किताबें और स्लेटें लिये हुए भीतर दाखिल हुए। उन्हें बैठनेके लिए कहकर भारती कपड़े बदलने ऊपर जा रही थी कि होटलके मालिक महाराजजी आ पहुँचे। बोले, "अपूर्व बाबू तुम्हें कल रातसे ही ढूढ़ रहे हैं बहनजी।"

भारती मुँड़कर खड़ी हो गई, पूछा, "रातको आये थे?"

महाराजने कहा, "हाँ। आज भी सवेरेसे बैठे हैं। भेज दूँ जाकर?"

भारतीका चेहरा दूसरे ही क्षण सूख-सा गया। बोली, "मुझसे उन्हें जरूरत क्या है?"

ब्राह्मणने कहा, "सो तो मैं नहीं जानता बहनजी। शायद उनकी मा बीमार हैं, उसी बारेमें कुछ कहने आये हैं।"

भारती सहसा रुष्ट हो गई, बोली, "उनकी माको बीमारी हुई है, तो उसमें मैं क्या करूँगी?"

ब्राह्मणको आश्चर्य हुआ। अपूर्व बाबूको वह अच्छी तरह जानता था कि वे एक इज्जतदार आदमी हैं; पहले उनकी इसी घरमें कितनी खातिरदारी और आव-भगत होती थी, सो भी उसे मालूम है,—समय और असमयमें उनके लिए अच्छेसे अच्छा भोजन उसीको बनाकर भेजना पड़ता था। आज अकस्मात् इस नाराजीका मतलब वह नहीं समझ सका। बोला, "मैं तो कुछ जानता नहीं बहनजी, जाकर उन्हें भेजे देता हूँ।" यह कहकर वह जाने लगा तो भारतीने कहा, "सबेरे मुझे बहुत काम है, लड़के-लड़कियोंको पढ़ाना है,—तुम कह दो जाकर कि अभी भेंट करनेको फुरसत नहीं मिलेगी।"

ब्राह्मणने कहा, "तो दोपहरको या शामको आनेके लिए कह दूँ?"

भारतीने कहा, "नहीं, मेरे पास समय नहीं है।" इतना कहकर इस प्रस्तावको वहीं बन्द करके वह जल्दीसे ऊपर चली गई।

नहा-धोकर तैयार होकर जब वह घंटे-भर बाद नीचे आई तब लड़के-लड़कियोंसे कमरा भर गया था और विद्या-अर्जनके एकाग्र उद्यमसे साराका सारा मुहल्ला चंचल हो उठा था। पहले दोनों वक्त पाठशाला खुला करती थी, अब

शिक्षकोंके अभावसे नैश विद्यालय बन्द हो गया है। सुमित्रा है नहीं, डाक्टरका पता नहीं, नवतारा अन्यत्र चली गई है,—सिर्फ अपना घर होनेसे सबेरेका काम भारती अकेली ही चला लिया करती है। नियमानुसार आज भी वह पढ़ाने बैठी, पर किसी भी तरह उसका मन नहीं लगा। नया पाठ देनेमें और पिछला पाठ सुननेमें आज उसे निष्फलता ही नहीं बल्कि आत्म-वंचना भी मालूम होने लगी। फिर किसी तरह दो घंटे बीत जानेके बाद जब सब पढ़नेवाले अपने अपने घर चले गये, तब कहीं वह समझ सकी कि आजका दिन कैसे कटेगा। और सभी चिन्ताओंके बीच-बीचमें आ आकर बाधा पहुँचाने लगी अपूर्वकी चिन्ता। इस विषयमें भारतीको कोई सन्देह नहीं था कि उसके इस तरह वापस करनेमें अशोभनता चाहे जितनी हो, पर उसे प्रश्रय देना बहुत बुरा है।—किसी भी बहानेसे मुलाकात करके वह पहलेके अस्वाभाविक सम्बन्धको और भी विकृत कर देना चाहता है; अन्यथा अगर मा बीमार है, तो वह यहाँ बैठा बैठा कर क्या रहा है? मा उसकी है, मेरी नहीं। माकी खतरनाक बीमारीका समाचार पाकर पुत्रको उसके पास फौरन चला जाना चाहिए, यह बात क्या दूसरे किसीसे सलाह करके तै करनी होती है? फिर उसे याद आया कि रोगसे अपूर्व बहुत ज्यादा डरता है। उसका कोमल चित्त व्यथासे व्याकुल होकर चाहे जितना क्यों न फड़फड़ाता रहे, पर रोगी-सेवा करनेकी न तो उसमें शक्ति है और न कोई अनुभव। यह भार उसपर छोड़नेके समान सर्वनाश और नहीं हो सकता। यह सब कुछ भारतीको मालूम था और वह यह भी जानती थी कि अपूर्वका माके प्रति हद दर्जेका मोह है। संसारमें ऐसा कोई काम नहीं जिसे वह माके लिए न कर सके। माके पास न जा सकनेका दुःख अपूर्वके लिए कितना बड़ा है, इस बातका खयाल करके भारतीको करुणा आने लगी जब कि दूसरी ओर इस असह्य भीरुतासे मारे क्रोधके उसका बदन भी जलने लगा। भारतीने मन ही मन कहा: सेवा नहीं कर सकता तो बस इसीलिए क्या बीमार माके पास जाकर बैठनेमें भी कोई लाभ नहीं? मुझसे क्या अपूर्व इसी उपदेशकी आशा करता है?

इस तरह, इसी दिशामें भारतीकी चिन्ता-धारा बराबर बहती रही। माकी बीमारीके विषयमें अपूर्व और भी कुछ पूछ सकता है, इसके सिवा और भी कोई बात हो सकती है जिसने उसके वापस आनेका द्वार बन्द कर दिया हो,—इन बातोंका आभास तक उसके दिमागमें नहीं आया।

भूख जरा भी नहीं थी, इसलिए भारतीने आज रसोई नहीं बनाई। तीसरे पहर एक घोड़ा-गाड़ी आकर उसके दरवाजेपर खड़ी हो गई। भारतीने ऊपरके जंगलेसे झाँककर देखा तो आश्चर्य और आशंकासे उसका दिल धड़क उठा। अपना कुल सामान लादे हुए और खुद गाड़ीकी छतपर लदे हुए कवि शशि आ पहुँचे हैं! कल रातके हँसी-मज़ाक़को दुनियामें कोई भी आदमी इस तरह वास्तवमें परिणत कर सकता है, भारती शायद इसकी कल्पना भी नहीं कर सकती थी। पर शशिके लिए असम्भव कुछ भी नहीं। मज़ाक़ एकबारगी मूर्तिमान् सत्य बनकर सशरीर दरवाजेपर आ पहुँचा है!

भारती जल्दीसे नीचे उतर आई, बोली, "यह क्या शशि बाबू?"

शशिने मन्द मुसकानके साथ जवाब दिया, "घर छोड़ दिया मैंने" और उसी वक्त गाड़ीवानको हुक्म दिया कि "सामान सब ऊपर पहुँचा दो।"

भारतीने गुस्सेको दबाकर कहा, "ऊपर जगह कहाँ है शशि बाबू?"

शशिने कहा, "अच्छी बात है, तो नीचे ही रख देने दो।"

भारतीने कहा, "नीचे पाठशाला है, वहाँ भी मुश्किल है।"

शशि चिन्तित हो उठा। भारतीने उसे भरोसा देकर कहा, "एक काम किया जाय शशि बाबू। होटलमें डाक्टरकी कोठरी खाली है, आप वहीं ठीकसे रह सकेंगे। खाने-पीनेकी भी तकलीफ न होगी,—चलिए।"

"लेकिन कोठरीका किराया तो देना पड़ेगा?"

भारती हँस दी, बोली, "नहीं, सो नहीं देना पड़ेगा। डाक्टर छह महीनेका किराया दे गये हैं।"

शशि खुश न होकर भी इस व्यवस्थासे राजी हो गया। तमाम सामानके साथ महाराजजीके होटलमें कविको प्रतिष्ठित करके भारती जब वापस घर आई तब रात हो चुकी थी। आज सभी तरफसे उसकी थकावट और चिन्ताकी सीमा नहीं थी। कहीं शशि या और कोई आकर उसकी निःसंग निस्तब्धतामें विघ्न न डाल दे, इस आशंकासे वह नीचे और ऊपरके सारे दरवाजे-जंगले बन्द करके अपने कमरेमें जा लेटी।

आदतके अनुसार दूसरे दिन सबेरे जब उसकी आँख खुली, तब न खानेकी कमजोरीसे उसका सारा शरीर ऐसा थका हुआ था कि उसे बिस्तरसे उठनेमें भी कष्ट मालूम हुआ। मारे प्यासके छाती सूखकर मरु-भूमि हो गई थी, लिहाजा

इस बातको वह समझ गई कि शरीर धारण करनेके लिए इस दिशामें आलस करनेसे काम नहीं चलेगा।

यह कहना भारतीके प्रति अन्याय करना है कि ईसाई होकर भी भारती खाने-पीनेके सम्बन्धमें सचमुच बहुत परहेज रखती है, फिर भी, मालूम होता है कि वह अपने मनसे सम्पूर्ण संस्कारोंको निकाल भी नहीं सकी है। जिस व्यक्तिसे उसकी माने पुनर्विवाह किया था वह अत्यन्त अनाचारी था। उसके साथ एकत्र बैठकर ही भारतीको भोजन करना पड़ता था; मगर फिर भी, कोई बासी चीज उसने कभी नहीं खाई। छूआछूतकी विडम्बना उसमें नहीं थी, पर जहाँ तहाँ बैठकर चाहे जिसके हाथका खानेमें भी उसे घृणा मालूम होती थी। माकी मृत्युके बाद वह खर्चकी दुहाई देकर बराबर अपने हाथसे बनाती खाती आ रही है। सिर्फ बीमार पड़नेपर या कामकी भीड़में अत्यन्त थक जाने या बिलकुल समय ही न मिलनेपर कभी कभी महाराजकी होटलसे वह सागू बार्ली या रोटी मँगा लिया करती है। बिस्तरसे उठकर हाथ-मुँह धोकर रोजकी तरह वह रसोई बनानेके लिए तैयार हुई, पर बदनमें ताकत और इच्छा न होनेसे उसने होटलमें महाराजको रोटी और कुछ तरकारी बनाकर दे जानेके लिए खबर भिजवा दी। सोमवारको पाठशाला बन्द रहती है, आज यह परिश्रम उसे नहीं करना था।

बहुत अबेरमें महरी थाली हाथमें लिये आ पहुँची, और अत्यन्त लज्जित होकर बोली, "बड़ी अबेर हो गई बहनजी—"

भारतीने अपनी थाली और कटोरी लाकर टेबिलपर रख दी। हिन्दू होटलकी शुद्धिको बचाते हुए महरीने उसकी थालीमें रोटी और तरकारी तथा कटोरीमें दाल उड़ेलते हुए कहा, "लो बैठो, जितना बने खा-पी लो।"

भारतीने एक बार उसके मुँहकी ओर देखा, पर कुछ कहा नहीं। महरीका वक्तव्य अभी खत्म नहीं हुआ था, वह कहने लगी, "वहाँसे लौटी तो सुना कि तुम्हारी तबीयत खराब है। अकेली ही हूँ, तबसे भड़भड़ा रही हूँ—ऐसा भी कोई नहीं जो दो रोटी बेल दे। अब देर मत करो, बहिन, जाओ।"

भारतीने मुलायम स्वरमें कहा, "तुम जाओ, मैं बैठी जाती हूँ।"

महरीने कहा, "जाती हूँ। नौकर तो साथ गया नहीं था,—अकेले सबका सब धोना-माँजना—खैर, लौटकर बीस रुपये मेरे हाथमें देकर बाबू रो दिये, बोले 'महरी, आखिरी वक्त तुमने जितना किया उतना माकी लड़की भी पास होती तो न कर सकती।' वे जितने रोने लगे मैं भी उतना ही रोने लगी, बहन!

—हाय हाय, कैसी कैसी तकलीफें उठाईं ! परदेसभूम ठहरी, कोई अपना आदमी तो है ही नहीं यहाँ.—समुन्दरका रास्ता, तार देते ही तो बहू-बेटे उड़के आ नहीं सकते,—उन लोगोंका दोष भी क्या है ? ”

भारतीका हृदय उद्वेग और अनजान आशंकासे बर्फ-सा ठंडा पड़ गया, पर मुँहसे वह कोई बात पूछ नहीं सकी । चुपचाप स्थिर होकर उसके चेहरेकी तरफ देखती रह गई ।

महरी कहने लगी, “महाराजजीने बुलाकर कहा, “बाबूकी मा बहुत बीमार हैं, तुम्हें जाना होगा वहाँ । मैं ‘ ना ’ नहीं कर सकी । एक तो निमोनिया जैसी बीमारी, उसपर धरमशालाकी भीड़, जंगले-किवाड़ सब टूटे हुए,—एक भी बन्द नहीं होता था,—कैसी मुसीबत थी ! प्राण निकले शामके पाँच बजे, पर मेसके बाबुओंको खबर भेजते-भाजते बुलाते-करते अरथी उठी रातके दो-अढ़ाई बजे । लौटते लौटते काफी दिन चढ़ गया,—अकेली मुझहीको सब धोना-पोंछना—”

अब उसकी समझमें सब कुछ आ गया । उसने धीरेसे पूछा, “ अपूर्व बाबूकी मा मर गई क्या ? ”

महरीने गहरीने गरदन हिलाकर कहा, “ हाँ बहनजी, जैसे उनकी बर्मामें पहलेसे जमीन ली हुई हो । एक कहावत है न, जिसकी जहाँ,—सो ठीक ही है । इधरसे अपूर्व बाबू रवाना हुए, और उधरसे लड़कोंसे लड़कर मा जहाजप बैठ गईं, साथमें सिर्फ एक नौकर था । जहाजमें ही बुखार आने लगा, धरमशालामें उतरते उतरते बेहोशी आ गई । घरपर पहुँचते ही बाबू वापसी जहाजसे फिर यहाँके लिए चल दिये । यहाँ आकर देखा कि माके चलताऊ डेरे हैं । आखिर चली ही गई,—पर अब खड़े खड़े बात करनेकी फुरसत नहीं है बहनजी, अभी सब निकलनेवाले हैं । फिर आऊँगी शामके वक्त—”

इतना कहकर वह किस्सा सुनानेके प्रलोभनको दमन करके जल्दीसे चलती बनी ।

रोटीकी थाली ज्योंकी त्यों पड़ी रही । पहले तो उसकी दोनों आँखें धुँधली-सी हो आईं, फिर बड़ी बड़ी आँसूकी बूँदें गालोंपरसे लुढ़क लुढ़क कर नीचे गिरने लगीं । अपूर्वकी माको उसने कभी देखा नहीं था, और इसके सिवा कि पति-पुत्रको लेकर इस जीवनमें उन्होंने अनेक दुःख उठाये हैं, उनके विषयमें और विशेष कुछ उसे मालूम भी नहीं था; परन्तु मालूम नहीं कितनी रातोंमें उसने एकान्तमें बैठकर इस बड़ी बूढ़ी विधवा स्त्रीके बारेमें कितनी तरहकी कल्पनाएँ की हैं । सुखके समयमें नहीं, कभी दुःखके समयमें भी

अगर उनसे भेंट हो,—जब उसके सिवा और कोई उनके पास न हो, तब क्रिश्चियन होनेकी वजहसे ही कैसे वे उसे दूर हटा दे सकती हैं, यह बात जाननेकी उसे बड़ी साध थी। बड़ी साध थी कि दुर्दिनकी उस अग्नि-परीक्षामें अपने-परायेकी समस्याका वह अन्तिम समाधान कर लेगी। धर्म-मतभेद ही इस जगतमें मनुष्यका चरम विच्छेद है या नहीं, इसको सत्यकी कसौटीपर कस देखनेके लिए ही यह चरम दुःसमय उसके भाग्यसे आया था, परन्तु वह इसे ग्रहण नहीं कर सकी और यह रहस्य इस जीवनमें अमीमांसित ही रह गया।

और अपूर्व,—वह आज कितना अधिक निःसहाय है, कितना ज्यादा अकेला है!—भारतीसे बढ़कर इस बातको कौन जानेगा? हो सकता है कि माताका एकाग्र मनका आशीर्वाद ही अब तक उसकी कवचकी तरह रक्षा करता आ रहा हो।—आज वह भी चला गया। भारती मन ही मन कहने लगी: ये सब मेरे आकाश-कुसुम हैं, मेरे निगूढ़ हृदयकी स्वप्न-रचनाके सिवा और कुछ नहीं। फिर भी उसके सिवा इस बातको और जानता ही कौन है कि वह स्वप्न उसके निर्देश-हीन भविष्यको कितना स्निग्ध-श्याम-शोभामय कर रखता था, उससे ज्यादा कौन जानता है कि घर और बाहर अपूर्व आज कितना बड़ा निःसहाय है, कितना ज्यादा अकेला है!

इस विदेशमें शायद अपूर्वके कोई काम-धन्धा न हो,—शायद आत्मीय स्वजनोंने उसे त्याग दिया हो। भीरु, लोभी, नीचाशय कहकर अवश्य ही मित्रमण्डली उसकी निन्दा करती होगी,—और सब दुःखोंसे बढ़कर यह कि आज उसकी वह मा भी नहीं है। भारतीको मालूम होने लगा, किसी परिचितके पास न जा सकनेके कारण अपूर्व सारी लज्जा-शरमको तिलांजलि देकर उसके पास दौड़ा आया था। उद्यमकी पटुता, व्यवस्थाकी शृंखला, कार्यकी तत्परता-आदि कुछ भी नहीं,—ऐसी परिस्थितिमें जब धर्मशालामें असह्य जनता और कोलाहल तथा सब तरहके अभावों और असुविधाओंमें उसकी माकी मृत्यु आसन्न हो रही होगी, उस समय अकेले कैसे उसके क्षण कटे होंगे, इस बातकी कल्पना करते ही उसकी आँखें भर आईं। आँखें पोंछते हुए जो बात उसे बहुत बार याद आई है वही बात फिर याद आ गई: मानो सभी दुःखोंका सूत्रपात उसका और अपूर्वका परिचय होनेके साथ साथ ही हुआ हो। नहीं तो, पिता और बड़े भाइयोंकी उच्छृंखलताके प्रतिकूल जब उसने माताका पक्ष लेकर सैकड़ों दुःख सहे थे, तब स्वार्थ-बुद्धिने उसे सत्य-मार्गसे भ्रष्ट क्यों नहीं किया था? दुर्बलता

तब कहाँ थी ? अपने धर्ममें आस्था और दृढ़ निष्ठा,—वह क्या ऐसा क्षुद्र है कि सब कुछ माका मुँह देखकर ही करता हो,—उसकी पूजा-अर्चना, उसका गंगास्नान, उसका चोटी रखना,—उसके सब काम और सब अनुष्ठान,—चाहे वे भ्रान्त ही क्यों न हों, मिथ्या ही क्यों न हों,—वह उनपर, मज़ाक़ और आक्रमणोंकी जरा भी परवाह न करके जो अटल था, सो क्या अपूर्वके अस्थिर-चित्तका ही निदर्शन हो सकता है ? तो फिर आज वह बर्मामें आकर ऐसा कैसे हो गया ? और इतने दिनोंसे इतनी कमजोरी उसमें छिपी कहाँ थी ? सव्यसाचीसे इसका उत्तर पानेके लिए उसने कितनी ही बार पूछना चाहा है, पर वह मुँह खोलकर उनसे पूछ नहीं सकी है । सिर्फ कुतूहलके वश ही नहीं, बल्कि हृदयकी व्यथामेंसे उसने कितनी ही बार सोचा है,—इस संसारमें जो कुछ जाना जा सकता है, भइया सो सब कुछ जानते हैं, फिर इस समस्याका भी समाधान वे क्यों न कर देंगे ? परन्तु सिर्फ संकोच और लज्जाके मारे ही वह उनसे इस विषयमें कुछ पूछ नहीं सकी है ।

सोचते सोचते सहसा एक नया प्रश्न उसके मनमें उठ खड़ा हुआ । कर्मोंके दोषसे जब कि सभी अपूर्वके विरुद्ध हो गये तब भी एक आदमीकी सहानुभूतिसे वह वंचित नहीं हुआ,—वह है सव्यसाची । मगर किस लिए ? सिर्फ बहनकी समवेदनाके ही कारण ? स्वयं अपूर्वमें क्या उनकी सहानुभूति पाने योग्य कुछ भी नहीं है ? सचमुच क्या भारतीने इतने क्षुद्र व्यक्तिसे इतना बड़ा प्रेम कर डाला है ? उस समय सावधान कर देने लायक क्या उनके हृदयमें कोई बात नहीं थी ? उनका हृदय क्या ऐसा देवालिया हो गया था ?

इसी तरह बैठे बैठे दो घंटे बीत गये और महरी फिर आ पहुँची । उस समय तो होटलके जरूरी कामोंसे उसे इतनी फुरसत नहीं थी कि सब बातें कहती । अब जरा छुट्टी मिली है । अपूर्व और भारतीके बीच एक रहस्यमय मधुर सम्बन्ध है, यह बात आभास और रंग-ढंगसे सभी जान गये थे, लिहाजा महरीसे भी वह छिपा नहीं था । तो फिर, सहसा ऐसी कौन-सी बात हो गई जिससे अपूर्वके इतने बड़े संकटके समयमें भी भारती वहाँ अपनी परछाई तक नहीं ले गई ? इतनी बड़ी बात स्त्री होते हुए भी महरीको नहीं मालूम हो सकी, इससे उसे कुछ अच्छा नहीं लगने लगा । इसीसे वह किसी बहानेसे भारतीके पास आई और उसे देखकर दंग रह गई, बोली, "कुछ भी तो छुआ नहीं, देखती हूँ !"

भारती मारे शर्मके झटपट उठ खड़ी हुई, बोली, "नहीं भाया ।"

महरीने सिर हिलाते हुए करुण कंठसे कहा, " मुँहमें जाता ही नहीं बहनजी, मैं तो अपनी आँखोंसे देख आई हूँ। विश्वास न हो, चलके देख आओ, थाली ज्योंकी त्यों पड़ी है,—एक गस्सा भी जो खाया गया हो। "

उसकी अवांछित समवेदनासे भारतीके संकोचकी सीमा नहीं रही। जबर्दस्ती जरा हँसनेकी कोशिश करके बोली, " किसीसे एक गाड़ी बुलवा दो महरी। "

" जाओगी क्या ? "

" हाँ, एक बार जाकर देखूँ तो क्या हुआ ? "

महरीने कहा, " आज सबेरे आकर महाराजसे कितना कितना कहने लगे। मैंने सुनकर कहा, इसमें क्या बात है! आदमीकी आफत-विपदमें न करूँगी तो कब करूँगी ? हाथका काम ज्योंका त्यों छोड़कर, जैसी खड़ी थी वैसी ही चल दी उनके साथ। अच्छा हुआ जो—"

उन्हीं बातोंके दुहराये जानेकी आशंकासे भारती चंचल हो उठी। वह बीचमें ही बोल उठी, " ऐसे वक्तमें जो कुछ किया, उसकी तुलना नहीं हो सकती। पर अब देर मत करो, जल्दीसे जाकर एक गाड़ी मँगवा दो। मुझे जाना है तो जरा जल्दी ही जाना ठीक है। घरका काम-काज तब तक किये लेती हूँ। "

महरी वैसे भली मानस है। वह गाड़ी लाने चली गई और दुःसमयमें सहायता पहुँचानेकी खातिर यह भी कहती गई कि घरका काम-काज चाहे आज तुम यों ही छोड़ जाओ, मैं आकर खुद ही कर जाऊँगी। बादमें कपड़े बदलकर सिरपर गंगाजल छिड़क लेनेसे काम चल जायगा। परदेसमें ऐसा ही हुआ करता है, इत्यादि इत्यादि।

पन्द्रह मिनटके बाद गाड़ी आ पहुँची। भारती साथमें कुछ रुपये लेकर कमरेके दरवाजेमें ताला लगाकर गाड़ीमें बैठ गई।

धरमशालामें जब वह पहुँची तब दिन था। दुमंजिलेकी उत्तरकी ओरकी एक कोठरी दिखाते हुए दरवानने कहा कि बंगाली बाबू भीतर ही हैं; और साथ साथ यह भी जता दिया कि धरमशालामें तीन दिनसे ज्यादा ठहरनेका रूल नहीं है, मगर छह दिन बीत गये हैं, कहीं मैनजर साहबका नोटिस आ गया तो मेरी नौकरीपर आ बीतेगी।

भारतीने इसके मानी समझ कर आँचलसे दो रुपये खोलकर उसके हाथपर धर दिये और उसके निर्देशानुसार ऊपरकी कोठरीमें गई। जाकर देखा कि वहाँ चारों तरफ पानी ही पानी छपछपा रहा है, चीजें-बस्तें इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं,

और उन्हींके एक तरफ एक कम्बलपर अपूर्व औंधा पड़ा है। मुँहपर उसके नया उत्तरीय है,—सो रहा है या जाग रहा है, कुछ मालूम नहीं हुआ। भारतीने सुना था, साथमें नौकर आया है, पर आस-पास वह कहीं दिखाई नहीं दिया; होता तो अपरिचितको कोठरीमें घुसते देख टोकता जरूर। पाँच-छह मिनट तक इसी तरह खड़े रहनेके बाद भारतीने धीरेसे पुकारा, "अपूर्व बाबू!"

अपूर्व उठकर बैठ गया, और उसकी तरफ एक बार देखकर अपने दोनों घुटनोंमें मुँह छिपाकर क्षण-भर चुपचाप स्थिर रहा, फिर मुँह उठाकर सीधा हो गया। सद्य-मातृ वियोगकी सीमाहीन वेदना उसके चेहरेपर जमी बैठी थी, पर आवेगका चांचल्य जरा भी नहीं था,—शोकाच्छन्न गम्भीर दृष्टिके सामने इस संसारका सब कुछ मानो उसे बिलकुल झूठा दिखाई दे रहा था। भारतीने अपने अंचलकी छाया-तले रहनेवाले जिस अपूर्वको एक दिन जाना था, यह वह नहीं है। आज उसे आमने-सामने देखकर भारती मारे आश्चर्यके दंग रह गई। क्या कहे, क्या कहके बुलावे, कुछ भी उसकी समझमें नहीं आया। परन्तु इसकी मीमांसा कर दी स्वयं अपूर्वने। उसने कहा, "यहाँ बैठनेके लिए कुछ है नहीं भारती, सब भीजा हुआ है, तुम उस ट्रंकपर बैठ जाओ।"

भारतीने कुछ जवाब नहीं दिया, किवाड़की चौखट पकड़के जैसी खड़ी थी वैसे ही स्थिर खड़ी रही। उसके बाद बहुत देर तक दोनोंसे ही कुछ बोला नहीं गया।

नौकर तेल लानेके लिए बाजार गया था, वह भीतर घुसते ही कुछ विस्मित हुआ, फिर हरीकेन लालटेन उठाकर बाहर चला गया।

अपूर्वने कहा, "भारती, बैठो।"

भारतीने कहा, "अब दिन नहीं है, बैठनेसे रात हो जायगी।"

"अभी तुरत ही चली जाओगी? जरा बैठ नहीं सकोगी?"

भारती धीरेसे उसी ट्रंकपर बैठ गई, कुछ देर और चुप रहकर बोली, "मा यहाँ आ गई थीं, यह मुझे नहीं मालूम था। उन्हें मैंने देखा नहीं, पर मेरी छातीके भीतर आग-सी जल रही है। इस विषयमें अब तुम मुझे कुछ कहना नहीं।—" कहते-कहते उसकी आँखोंसे आँसू ढलक पड़े।

अपूर्व स्तब्ध हुआ बैठा रहा। भारतीने आँचलसे आँसू पोछते हुए कहा, "समय हो चुका था, मा स्वर्ग पहुँच गईं। पहले सोचा था, इस जन्ममें अब तुम्हें अपना मुँह नहीं दिखाऊँगी, लेकिन तुम्हें इस तरह छोड़कर मैं रह भी

कैसे सकती हूँ, बताओ? साथमें गाड़ी लाई हूँ, उठो, मेरे साथ चले चलो।"—फिर उसकी आँखोंसे आँसुओंकी धार बहने लगी।

भारतीको डर था कि शायद अपूर्व एक साथ शोकातुर होकर रो न पड़े। पर उसकी सूखी आँखोंमें आँसूका आभास तक नहीं दिखाई दिया, उसने शान्त स्वरमें कहा, "अशौचका बहुत झमेला होता है भारती, वहाँ ठीक नहीं रहेगा। दूसरे, इसी शनिवारको जहाजसे मुझे वापस जाना है।"

भारतीने कहा, "शनिवारको तो अभी चार दिन हैं। माकी मृत्युके बाद जो थोड़ा बहुत झमेला रहता है सो मुझे मालूम है; पर उसे मैं क्या नहीं बरदाश्त कर सकूँगी और बरदाश्त कर सकेंगे ये धरमशालाके लोग?—चलो।"

अपूर्वने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

भारतीने कहा, "'नहीं' कहनेसे ही अगर इस अवस्थामें तुम्हें छोड़ जा सकती होती, तो मैं आती ही नहीं, अपूर्व बाबू।" इतना कहकर वह क्षणभर चुप रही फिर बोली, "इतने दिन बाद अब तुमसे छिपाकर और शर्माकर चलनेको मेरे पास कुछ नहीं है। माका अन्तिम क्रिया-कर्म बाकी है,—शनिवारके जहाजसे तुम्हें घर जाना ही होगा, और उसके बाद क्या होगा, सो भी मैं जानती हूँ। तुम्हारी किसी भी व्यवस्थामें मैं बाधा नहीं डालूँगी;—मगर ऐसे समयमें भी अगर तुम्हें मैं अपनी आँखोंके सामने न रख सकी तो तुम्हारी ही सौगन्द खाकर करती हूँ, मैं घर जाकर आज ही जहर खाकर मर जाऊँगी। और तब माका शोक उससे बढ़ ही जायगा, घटेगा नहीं अपूर्व बाबू!"

"अपूर्व नीचेको निगाह किये कुछ देर तक चुप बैठा रहा, फिर उठके खड़ा हो गया; बोला, "तो बुलाओ नौकरको, चीज-वस्त सब बाँध ले।"

सामान बहुत थोड़ा ही था, बाँध-बूँधकर गाड़ीमें लादनेमें आध घंटेसे ज्यादा समय नहीं लगा।

रास्तेमें भारतीने पूछा, "आपके भइया नहीं आ सके?"

अपूर्वने कहा, "नहीं, उन्हें छुट्टी नहीं मिली।"

"यहाँकी नौकरी क्या छोड़ दी?"

"हाँ, एक तरहसे छोड़ ही दी समझो।"

"माका क्रियाकर्म हो जानेके बाद क्या घर ही रहोगे?"

अपूर्वने कहा, "नहीं। मा नहीं रहीं, जरूरतसे ज्यादा एक दिन भी अब मैं उस घरमें नहीं रह सकता।"

सुनकर भारतीके मुँहसे सिर्फ एक दीर्घ निःश्वास निकलकर रह गई।

३०

बीहड़ जंगलके बीचके जिस छोड़े हुए खंडहरमें एक दिन अपूर्वके अपराधका विचार हुआ था, आज फिर उसी मकानमें अधिकार-समितिकी बैठक बैठी है। उस दिन वहाँ जो दुर्जय क्रोध और निर्मम प्रति-हिंसाकी आग लपटें ले-लेकर जली थी, आज उसकी एक चिनगारी तक नहीं। आज न तो वह वादी है और न वह प्रतिवादी; किसीके विरुद्ध किसीकी कोई शिकायत नहीं,—आज आशंका और निराशाकी दुस्सह वेदनासे सारी सभा निष्प्रभ, उदास और मरी-सी हो रही है। भारतीकी आँखोंमें आँसू चमक रहे हैं, सुमित्रा नीचेको मुँह किये चुपचाप स्थिर बैठी है। तलवरकर पकड़ा गया है,—खूनसे लथपथ और क्षत-विक्षत अवस्थामें आज वह अस्पतालमें साँसें ले रहा है, अभी तक पूरा होश भी नहीं आया है। उसकी स्त्री अपनी लड़कीको लिये इधर-उधर मारी मारी फिरती रही और अन्तमें बड़ी मुश्किलसे कल शामको उसे एक दक्षिणी ब्राह्मणके घर शरण मिली। सुमित्राने पता लगाकर उसके मायकेवालोंको तार दिया है, पर उनका अबतक कोई जवाब नहीं आया।

भारतीने अहिस्तेसे पूछा, "तलवरकरजीको क्या होगा भइया?"

डाक्टरने कहा, "अस्पतालसे अगर जिन्दा लौट आया तो जेल होगी।"

भारती मन ही मन काँप उठी, बोली, "न भी बचें?"

डाक्टरने कहा, "कमसे कम असम्भव तो नहीं। और बच भी गया तो लम्बी सजा होगी।"

भारती कुछ देर चुप रही, फिर बोली, "उनकी स्त्री, उनकी नन्ही-सी लड़की,—उनका क्या होगा?"

सुमित्राने जवाब दिया, "शायद देशसे उनके पिता आकर अपने घर ले जायँगे।"

भारतीने कहा, "शायद?—मान लीजिए, अगर कोई न आया? अगर कोई न हुआ घरमें?"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "कोई आश्चर्य नहीं। उस दशामें अकस्मात् किसीके मर जानेसे उसकी अनाथ विधवाकी जो दशा होती है, वही इसकी भी होगी।" फिर जरा ठहरकर बोले, "मैं सद्गृहस्थ नहीं हूँ और न मेरे पास

धन-सम्पदा ही है, विदेशियोंके कानूनके अनुसार अपनी जन्मभूमिमें भी हमारे लिए कोई जगह नहीं,—जंगली पशुओंकी तरह हम लोग जंगलमें छिपे छिपे फिरते हैं,—गृहस्थोंके दुःख दूर करनेकी शक्ति हम लोगोंमें नहीं है भारती!"

भारतीने व्यथित होकर कहा, "तुम लोगोंमें न सही, पर जिन लोगोंमें है वे,—हमारे देशके लोग क्या इनका दुःख दूर नहीं कर सकते भइया?"

डाक्टरने मुसकराते हुए जवाब दिया, "मगर वे करने क्यों लगे भारती? उन लोगोंने तो ऐसा काम करनेको हम लोगोंसे कहा नहीं। बल्कि उलटे हम लोग उनकी शान्तिमें बाधक हैं,—उनके आराममें खलल डाला करते हैं। हम लोगोंको वे सोनेकी आँखों नहीं देखते। अँग्रेज लोग जब दंभके साथ प्रचार करते हैं कि भारतवासी स्वाधीनता नहीं चाहते हैं, तब वे बिलकुल झूठ नहीं कहते। और, युग-युगान्तरके अन्धकारमें रहते रहते जिनकी दोनों आँखें अन्धी हो चुकी हैं, उनके विरुद्ध हाय-तोबा करनेमें भी क्या धरा है भारती!"

थोड़ी देर चुप रहकर फिर कहने लगे, "विदेशी राजाकी जेलमें आज अगर तलवरकरको मरना ही पड़े, तो परलोकमेंसे अपनी स्त्री-कन्याको दर दर भीख माँगते देखकर उसकी आँखोंसे आँसू तो गिरेंगे ही; पर इतना निश्चित समझना कि देशवासियोंके विरुद्ध भगवानसे वह कोई भी शिकायत न करेगा। मैं उसे पहचानता हूँ,—मारे शर्मके उसके मुँहसे बात भी नहीं निकलेगी।"

भारती अस्फुट स्वरमें बोली, "उःफ्!"

कृष्ण अय्यर इनकी बोली नहीं बोल सकता, पर बीच-बीचमें थोड़ा बहुत समझ लेता है। उसने गर्दन हिलाकर कहा, "इयेस ट्रू!"

डाक्टरने कहा, "हाँ, यह सच है।—यही तो क्रान्तिकरियोंकी चरम शिक्षा है। रोना किसके लिए? शिकायत किससे करना? अपने भइयाकी फाँसी होनेका समाचार जब कभी सुनो, तो समझ लेना कि विदेशियोंके हुक्मसे वह फाँसी अपने ही देशके किसी आदमीने उसके गलेमें पहनाई है। पहनायेगा ही। कसाईखानेसे गऊका मांस गऊ ही तो ढोकर लाती है। फिर उसकी शिकायत कैसी बहन?"

भारतीने एक गहरी साँस लेकर कहा, "भइया,—यही क्या तुम लोगोंके कामोंका नतीजा है?"

डाक्टरकी आँखें जल उठीं, बोले, "यह क्या मामूली नतीजा है भारती? मैं जानता हूँ, देशके लोग इसकी कीमत नहीं समझेंगे, हो सकता है कि मज़ाक भी

उड़ायें, परन्तु जिसे किसी न किसी दिन इसका ऋण पाई पाई चुकाना ही पड़ेगा, उसके मुँहपर आसानीसे हँसी नहीं आयेगी।" कहते कहते वे अपने आप ही हँस पड़े, बोले, "भारती, खुद ईसाई होकर अपने धर्मकी मूल बात ही भूल गई? ईसा मसीहका रक्तपात क्या तुम समझती हो संसारमें व्यर्थ ही गया?"

सबके सब स्तब्ध होकर बैठे रहे, डाक्टर कहने लगे, "तुम लोग तो जानते हो, व्यर्थ नर-हत्याका मैं कभी पक्षपाती नहीं रहा, उससे मैं सर्वान्तः-करणसे घृणा करता हूँ। अपने हाथसे मैं एक चींटी तक नहीं मार सकता। मगर जरूरत पड़नेपर,—क्यों सुमित्रा, है कि नहीं?"

—सुमित्राने अनुमोदन करते हुए कहा, "सो मुझे मालूम है, अपनी आँखों दो बार देख चुकी हूँ।"

डाक्टरने कहा, "दूरसे आकर जिन लोगोंने हमारी जन्मभूमिपर कब्जा कर रक्खा है,—हमारी मनुष्यता, हमारी मान-मर्यादा, हमारी भूखका अन्न और प्यासका पानी,—सब कुछ जिन लोगोंने छीन लिया है उनको तो हमारी हत्या करनेका अधिकार है और हमको नहीं?—यह धर्म-बुद्धि तुम्हें कहाँसे मिली भारती? छिः।"

परन्तु आज भारती प्रभावित नहीं हुई, उसने जोरोंसे सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं भइया, तुम मुझे हरगिज शर्मिन्दा नहीं कर सकते। ये सब पुरानी बातें हैं,—प्रतिहिंसाके मार्गमें प्रवृत्ति देनेवाले ही ऐसी बातें करते हैं। पर यह अन्तिम बात नहीं है,—संसारमें इससे भी बड़ी, और बहुत बड़ी बात मौजूद है।"

डाक्टरने कहा, "सुनाओ तो सही क्या?"

भारतीने आवेशके साथ कहा, "मैं नहीं जानती, पर तुम जरूर जानते हो। जिस विद्वेषने तुम्हारी सत्य बुद्धिको इस तरह एकदम ढक दिया है उसे हटाकर एक बार तुम शान्तिके मार्गमें लौट आओ,—ऐसी कोई समस्या इस संसारमें नहीं जो तुम्हारे ज्ञान और प्रतिभाके आगे पराजय स्वीकार न करे। जोरके बदले जोर, हिंसाके बदले हिंसा, अत्याचारके बदले अत्याचार,—यह तो बर्बरताके जमानेसे ही चल रहा है। इससे महान् क्या कोई बात हो ही नहीं सकती?"

"कौन बतायेगा कि क्या हो सकती है?"

भारतीने बिना किसी संकोचके कहा, "तुम बताओगे।"

"इसके लिए मुझे माफ करना होगा बहन। साहबके बूटोंके नीचे चित पड़े रहकर शान्तिकी वाणी मेरे मुँहसे ठीक नहीं निकलेगी,—हिचक जाऊँगा।

—बल्कि यह भार शशिपर छोड़ दो, तुम्हारी खातिर शायद वह ऐसा कर सके।" इतना कहकर डाक्टर हँसने लगे।

भारतीने उदास होकर कहा, "तुमने बात मज़ाक़में उड़ा दी, पर जिनके प्रति तुम्हारा इतना विद्वेष है, उन अँग्रेज मिशनरियोंसे मैंने इस बारेमें बहुत बार कह देखा है,—वे सचमुच ही बहुत आनन्दित होते हैं।"

डाक्टरने स्वीकार करते हुए कहा, "यह अत्यन्त स्वाभाविक है भारती! सुन्दर-वनमें निरस्त्र खड़े होकर यदि शान्तिकी वाणी सुनाई जाय, तो शेर-भालुओंको खुश होना ही चाहिए। वे साधु आदमी जो ठहरे।"

भारतीने इस व्यंगपर ध्यान नहीं दिया, वह कहने लगी, "आज भारतका चाहे जितना बड़ा दुर्भाग्य हो, पर हमेशासे ऐसा नहीं था। किसी दिन भारत सभ्यताके उच्च शिखरपर आरूढ़ था। उस दिन भारतने हिंसा-विद्वेषका नहीं बल्कि धर्म और शान्तिका मंत्र ही चारों ओर प्रचारित किया। मेरा विश्वास है कि वह दिन फिर हम लोगोंके आगे आयेगा!"

बहुत देरसे भारतीकी बातें सुन सुन कर शशिका कवि-चित्त श्रद्धा और अनुरागसे विगलित हो रहा था, वह गद्गद कंठसे बोल उठा, "भारतीकी बातोंका मैं पूर्णतः अनुमोदन करता हूँ डाक्टर। मेरा भी यही विश्वास है कि भारतकी वह सभ्यता फिर वापस आयेगी ही आयेगी!"

डाक्टरने दोनोंके मुँहकी तरफ देखते हुए कहा, "तुम लोग भारतके किस युगकी बात कह रहे हो, मुझे नहीं मालूम; पर सभ्यताकी एक सीमा जरूर है। यदि धर्म, अहिंसा और शान्तिका नशा उसपर हमला कर बैठे तो फिर मौत ही सामने आती है। कोई भी देवता फिर उसकी रक्षा नहीं कर सकता। भारतने हूणोंके आगे कब पराजय स्वीकार किया था जानते हो? जब उन लोगोंने भारतके बच्चोंको मशालकी तरह जलाना शुरू किया था और नारियोंकी पीठकी खालसे लड़ाईके बाजे बनाना शुरू किया था, तब। उस कल्पनातीत नृशंसताका जवाब देना, भारतीयोंने नहीं सीखा था। उसका फल क्या हुआ? देश गया, राज्य गया, देव-मन्दिर ध्वंस हो गये,—उस असमर्थताकी सजा अब तक हम लोगोंकी पूरी नहीं हुई।"

फिर भारतीको लक्ष्य करके कहने लगे, "तुम कविकी कविता सुनाया

करती हो, देश गया तो दुःख क्या है, तुम लोग फिर आदमी बनो*। पर देशको वापस लेने लायक आदमी होना कहते किसे हैं, सो तो बताओ? सोचा होगा, आदमी होनेका रास्ता बिलकुल खुला हुआ साफ पड़ा है; सोचा होगा, देशके दरिद्रनारायणोंकी सेवा करने और मैलेरियामें कुनैन बाँटते फिरनेको ही आदमी बनना कहते हैं?—सो नहीं। वास्तवमें मनुष्य होकर पैदा होनेके सम्मान-ज्ञानको ही आदमी होना कहते हैं,—मृत्युके भयसे मुक्त होनेको ही आदमी होना कहते हैं।"

थोड़ी देर चुप रहकर फिर कहने लगे, "तुम्हारा कोई खास कुसूर नहीं भारती। उन्हींकी आबोहवामें पलकर तुम इतनी बड़ी हुई हो, इसीसे तुम्हारे मनमें यह बात बैठ गई है कि क्रिश्चियन सभ्यतासे बढ़कर और कोई सभ्यता नहीं। और मजा यह कि इससे बढ़कर झूठी बात भी और कोई नहीं। सभ्यताके मानी क्या सिर्फ आदमी मारनेकी मशीन बनाना ही है? दुरात्माओंके लिए छलोंकी कमी नहीं,—इसलिए आत्म-रक्षाके छलसे इन लोगोंकी नित्य नई सृष्टिका भी अन्त नहीं। यदि सभ्यताके कुछ भी मानी हों, तो वह यही हैं कि असमर्थ और कमजोरोंके न्यायोचित दावे जबर्दस्तोंके बाहुबलसे परास्त न हों। कहीं भी देखी है इनकी ऐसी नीति? कहीं भी देखा है इन्हें इस न्यायको गौरव देते? एक दिन तुमसे मैंने कहा था कि संसारके मान-चित्रको जरा आँख उठाकर देखो। याद है वह बात? याद है मेरे मुँहसे सुनी हुई चीनदेशके बक्सर-विद्रोहकी कहानी? सुसभ्य योरोपियन शक्तिशालियोंने उनके घरपर चढ़ाई करके उनसे जो बदला लिया, उसके आगे चंगेज खाँ और नादिरशाहकी नृशंस कहानी क्या चीज़ है! सूर्यके सामने दीएकी तरह वह तो बिलकुल ही नाचीज़ है। हेतु कितना ही तुच्छ और अन्याय-युक्त क्यों न हो, लड़ाईका बहाना मिलते ही इन्हें फिर कोई हिचक नहीं रहती। बूढ़ा, बच्चा, स्त्री,—कोई भी क्यों न हो, न संकोच है न दुबिधा। जिस पापकी सीमा नहीं हो सकती भारती, उस विषैली गैससे नर-हत्या करनेमें भी इनकी नैतिक बुद्धि बाधा नहीं देती। उद्देश्य-सिद्धिके लिए ये लोग किसी भी उपाय और किसी भी रास्तेको पवित्र समझते हैं। नीतिकी बाधाएँ और धर्मकी रुकावटें क्या सिर्फ हम निर्वासित और पददलितोंके लिए ही हैं? इनके लिए नहीं?"

---

* स्व० कवि द्विजेन्द्रलाल रायके 'मेवाड़-पतन' नाटकका गीत— गियाछे देश दुःख कि आवार तोरा मानुस हो!

भारतीसे कुछ उत्तर देते नहीं बना, चुपचाप बैठी रही। इन सब अभियोगोंका प्रतिवाद करना वह क्या जाने? जो निर्मम है, अत्यन्त दृढ़-चित्त और शंकाहीन है, जो क्षमाहीन क्रान्तिकारी है, ज्ञानी है,—बुद्धि और पांडित्यमें जिसका जोड़ नहीं, पराधीनताकी न बुझनेवाली आग जिसके समस्त शरीर और मनमें दिन-रात दीप-शिखाकी तरह जल रही है, उसे युक्तियोंसे परास्त करनेका सामान उसे कहाँ मिलता? उसके पास इसका कोई जवाब नहीं, उसकी भाषा गूँगी हो गई; परन्तु उसका कलुष-हीन नारी-हृदय अन्धी करुणासे चुपचाप सिर धुनने लगा।

सुमित्राने बहुत दिनोंसे इस तरहकी बहसोंमें भाग लेना बन्द कर दिया था, आज भी वह नीचेको निगाह किये चुपचाप बैठी रही; मगर असहिष्णु हो उठा कृष्ण अय्यर। इस अलोचनाकी अधिकांश बातें उसकी समझमें नहीं आ रही थीं,—इस नीरवताके बीचमें उसने पूछा, "हमारी सभाका काम शुरू होनेमें और कितनी देर है?"

डाक्टरने कहा, "कोई देर नहीं। सुमित्रा, तुम्हारा जावा जाना ही तय रहा क्या?"

"हाँ।"

"कब?"

"शायद बुधवारको। पिछले शनीचरको नहीं जा सकी।"

"अधिकार-समितिको तुमने बिलकुल छोड़ दिया?"

सुमित्राने सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

इसके उत्तरमें डाक्टर सिर्फ जरा हँस दिये। फिर जेबमेंसे कई टेलिग्राम निकालकर सुमित्राके हाथमें देते हुए बोले, "इन्हें पढ़ देखो। हीरासिंग कल रातको दे गया है।"

अय्यर उनपर झुक पड़ा, भारतीने जलती मोमबत्ती उठा ली। लम्बा टेलिग्राम है, अँगरेजी भाषा है, अर्थ भी स्पष्ट है;—सुमित्राका चेहरा गम्भीर हो उठा। दो-तीन मिनट बाद उसने मुँह उठाकर कहा, "कोडके सब शब्द मुझे याद नहीं। हम लोगोंकी शंघाईकी जैमेका क्लब और क्रूगरने तार भेजा है, इसके सिवा और कुछ समझ नहीं पड़ा।"

डाक्टरने कहा, "क्रूगरने तार दिया है कैण्टॉनसे। शंघाईकी जैमेका क्लबको पौ फटनेके पहले ही पुलिसने घेर लिया था,—तीन आदमी पुलिसके और एक अपना विनोद, मारे गये हैं। दोनों भाई महताब और सूर्यसिंह

एक साथ गिरफ्तार हो गये हैं। अयोध्या हांगकांगमें है, दुर्गा और सुरेश पेनांगमें हैं, सिंगापुरकी जैमेका क्लबके लिए पुलिस सारे शहरको छाने डाल रही है।—कुल समाचार इतना-सा है।"

खबर सुनकर कृष्ण अय्यरका चेहरा फक पड़ गया। उसके मुँहसे सिर्फ एक शब्द निकला, "डन्!" (=सर्वनाश हो गया!)

डाक्टरने कहा, "ये दोनों भाई रेजिमेण्ट छोड़कर कब और क्यों शंघाई पहुँचे, मालूम नहीं। सुमित्रा, व्रजेन्द्र सचमुच कहाँ है, जानती हो?"

प्रश्न सुनकर सुमित्रा पत्थर-सी हो गई।

"जानती हो?"

पहले तो उसके गलेमेंसे किसी तरह आवाज ही नहीं निकली, फिर गर्दन हिलाकर बोली, "नहीं।"

कृष्ण अय्यरने कहा, "वह ऐसा काम कर सकता है, मुझे तो विश्वास नहीं होता।"

डाक्टर 'हाँ' या 'ना' कुछ भी कहे बिना चुपचाप बैठे रहे।

शशिने कहा, "व्रजेन्द्रको मालूम है कि आप पैदल रास्तेसे बर्मासे बाहर चल दिये हैं।"

डाक्टर इस बातका भी कोई जवाब न देकर जैसेके तैसे स्थिर बैठ रहे।

किसीके मुँहसे कोई बात नहीं निकली; सबके सब मूर्तिकी तरह नीरव बैठे हैं। सामने टेलिग्राफके कागज पड़े हैं। मोमबत्ती जलकर खत्म हो रही थी, शशिने दूसरी जलाकर जमीनपर जमा दी। दसेक मिनट इसी तरह सन्नाटा रहा, फिर अय्यरकी देहमें कुछ चेतना-सी दिखाई दी। उसने जेबमेंसे सिगरेट निकाली और उसे बत्तीसे सुलगाकर धुएँके साथ साथ एक दीर्घनिःश्वास छोड़ते हुए कहा, "नाउ फिनिश्ड!" (=अब सब समाप्त!)

डाक्टरने उसके चेहरेकी तरफ देखा। उत्तरमें उसने सिगरेटका फिर एक कश लेकर सिर्फ धुआँ छोड़ दिया। शशि शराब तो पीता था, पर तमाखूका धुआँ उससे बरदाश्त नहीं होता था। अब उसने ख्वामख्वाह एक चुरट सुलगाकर घर-भरमें धुआँ भर दिया।

अय्यरने कहा, "वर्स्ट लक्! वी मस्ट स्टॉप्!" (=अत्यन्त दुर्भाग्य! अब हमें रोकना ही होगा!)

शशि बोला, "मैं पहलेहीसे जानता था; कुछ होना-जाना नहीं है, सिर्फ—"

डाक्टर सहसा पूछ उठे, "तुमने कब जानेको कहा? बुधवारको?"

सुमित्राने आँख उठाकर देखा नहीं, सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

शशि फिर कहने लगा, "इतनी बड़ी दुनिया-भरमें फैली हुई शक्तिशाली राज-शक्तिके विरुद्ध क्रान्तिकी कोशिश करना सिर्फ व्यर्थ ही नहीं, पागलपन भी है। मैं तो शुरूसे ही कहता आ रहा हूँ डाक्टर, अन्त तक कोई भी नहीं रहेगा।"

अय्यर क्या समझा सो वही जाने; मुँहसे बेशुमार धुआँ निकालता हुआ बोला, "ट्रू!" (=सच है!)

डाक्टर सहसा उठके खड़े हो गये, बोले, "हम लोगोंकी आजकी सभा यहीं खत्म होती है।"

साथ साथ सभी उठ खड़े हुए, सभीने अपनी अपनी राय जाहिर की, सिर्फ नहीं की एक भारतीने। वह चुपकेसे डाक्टरके पास आकर खड़ी हो गई और उनका दाहिना हाथ अपनी मुट्ठीमें लेकर बहुत ही आहिस्तेसे बोली "भइया, मुझसे वगैर कहे कहीं चले तो नहीं जाओगे, बताओ?"

डाक्टरने मुँहसे कुछ नहीं कहा, सिर्फ अपने वज्र-कठोर हाथसे जिस कोमल हाथको पकड़ रक्खा था, उसे ही जरा-सा दबाकर वे वहाँसे चल दिये।

३१

दूसरे दिन सबेरेसे ही आकाशमें धीरे धीरे बादल इकट्ठे हो रहे थे; रातको कुछ बूँदें पड़ी थीं, और आज दोपहरसे जोरकी वर्षा और आँधी शुरू हो गई थी। कल भारतीने सुमित्राको जाने नहीं दिया था, तय हो गया था कि आज खा-पीकर वह घर जायगी। परन्तु ऐसा आँधी-मेह शुरू हुआ कि नदी पार होना तो दूरकी बात, बाहर पैर रखना भी कठिन हो गया। विराम नहीं, विश्राम नहीं,—शाम होते होते आँधी और मेह भी बढ़ गया। शशि हिन्दू होटलमें रहता है; दोपहरको भारतीके घर घूमने आया था, अब तक लौट ही न सका। कब दिन खत्म हुआ और कब शाम बीत गई, कुछ मालूम ही नहीं हुआ। भारतीके ऊपरके कमरेकी खिड़कियाँ सब बन्द थीं, बत्ती जलाकर सब बैठे गप-शप कर रहे थे। सुमित्रा नीचेसे ऊपर तक ओढ़कर आराम-कुरसीपर लेटी हुई है, शशि खाटपर तकिया टेके बैठा है, अपूर्व नीचे कम्बल बिछाये पड़ा है और उसके जल-पानके लिए भारती हँसियासे फल बना रही है। पास ही एक किनारे स्टोवपर मूँगकी दालकी खिचड़ी बन रही है।

अपूर्व कह रहा था कि संसारसे उसका चित्त उदास हो गया है, अब उसके लिए संन्यास ही एक-मात्र रास्ता है। शशि इस प्रस्तावका अनुमोदन नहीं कर सका, वह युक्तियाँ दे-देकर खंडन करता हुआ समझा रहा था कि यह कुविचार अच्छा नहीं है, कारण संन्यासमें अब कुछ मजा नहीं रहा; बल्कि बरीसाल कालेजमें प्रोफेसरीके लिए जो अर्जी दी है वह मंजूर हो जाय तो उसे स्वीकार कर लेना ज्यादा अच्छा है।

अपूर्व इससे दुःखित हुआ, पर कुछ बोला नहीं। भारतीको सब कुछ मालूम था, इसलिए उसने इसका जवाब देते हुए कहा, "जीवनमें मौज करते फिरनेके सिवा क्या मनुष्यके लिए और कोई बड़ा उद्देश्य हो ही नहीं सकता, शशि बाबू? संसारमें सभीकी दृष्टि एक-सी नहीं होती।"

उसके बात कहनेके ढंगसे शशि लज्जित हो गया। भारतीने फिर कहा, "अभी अपूर्व बाबूके मनकी अवस्था अच्छी नहीं है, इस समय उनके भविष्यके विषयमें आलोचना करना सिर्फ निष्फल ही नहीं, बल्कि हमें अपनी—"

"मुझे खयाल नहीं था भारती।"

खयाल नहीं रहना शशिके लिए कोई आश्चर्यकी बात नहीं। इस बीचमें अपूर्वको और एक चोट पहुँची है जिसे भारतीके सिवा और कोई नहीं जानता। सांसारिक दृष्टिसे उसका फल और परिणाम मातृ-वियोगसे कुछ कम नहीं। जननीकी मृत्युका समाचार पाकर अपूर्वके भाई विनोद बाबूने दुःखित होकर तार भेजा है जिसमें दुःख प्रकट करनेके सिवा और कुछ नहीं लिखा। इस बातका खयाल करके कि मा गुस्सा और सम्भवतः अत्यन्त अपमानित होकर ही अन्तमें गंगाहीन म्लेच्छ देश बर्मामें आई थीं, अपूर्व दुःख और क्षोभसे पागल-सा हो रहा था। कलकत्ता पहुँचकर जब उसने माके बर्मा चले जानेका समाचार सुना तो दो दिन बिना खाये-पीये और सोये ही बिता दिये थे, और चलते समय वह काफी कलह करके आया था। फिर भी, उसे निःसन्देह ऐसा भरोसा था कि सबसे छोटा होनेके कारण, इतनी बड़ी भयंकर दुर्घटनामें, घरसे कोई न कोई उसे ले जानेके लिए जरूर आयेगा। तिवारी घरपर मौजूद रहता तो क्या होता, नहीं कहा जा सकता; पर वह था नहीं, छुट्टी लेकर देश चला गया था।

देशी ब्राह्मण पुरोहित यहाँ भी मौजूद है। आज ही सबेरे अपूर्वने भारतीसे कहा था, "मैं कलकत्ता नहीं जाऊँगा, जैसे बनेगा वैसे यहीं मैं अपनी माका श्राद्ध सम्पन्न करूँगा।"

माताके अकस्मात् बर्मा रवाना होनेका कारण लड़कोंके प्रति उनका दुर्जय मान-अभिमान था, यह बात अपूर्वको कलकत्तेमें मालूम हो गई थी; पर उसमें क्रिश्चियन लड़की भारतीकी कहानीका कितना अंश शामिल था, यह उसे नहीं मालूम हुआ। कठिन रोगसे पीड़ित बेहोश मा कुछ कह नहीं सकीं, और विनोद बाबूने गुस्सेमें कुछ कहा नहीं।

सुमित्रा सहसा मुँह उघाड़कर उठ बैठी, बोली "कोई नीचेका दरवाजा खोलकर घुस रहा है, भारती।"

आँधी और मेहके लगातार झर-झर शब्दमें और कुछ सुनाई देना मुश्किल था। आशंकासे सब चौंक पड़े, भारतीने क्षण-भर कान खड़े करके गौरसे सुना, फिर कहा, "नहीं, कोई नहीं है। अपूर्व बाबूका नौकर नीचे बैठा है।"

परन्तु दूसरे ही क्षण जीनेमें परिचित पैरोंकी आवाज सुनकर वह मारे खुशीके चिल्ला उठी, "अरे, ये तो भइया आ रहे हैं! एक हजार, दस हजार, बीस हजार, एक लाख वेलकम्!" हाथके फल और हँसिया छोड़कर वह जीनेकी तरफ दौड़ी गई और बोली, "एक करोड़, दस करोड़, बीस करोड़, हजार हजार करोड़ गुड इवनिंग् भइया, चले आओ, जल्दी आओ!"

सव्यसाचीने कमरेमें आकर अपनी पीठका बड़ा भारी बकुचा उतारते हुए हँसते हँसते कहा, "गुड् इवनिंग! गुड् इवनिंग! गुड् इवनिंग!"

भारतीने उनके दोनों हाथ अपनी तरफ खींचते हुए कहा, "वह देखो भइया, तुम्हारे लिए खिचड़ी बना रही हूँ। पहले इस ओवर कोटको तो खोलो। उफ़,—जूते-ऊते सब भीज गये हैं, ठहरो, पहले मैं इन सबको खोल दूँ।" कहकर, वह पहले कोट खोले या झुककर जूतेके फीते खोले, कुछ तय नहीं कर पाई। अन्तमें उन्हें पकड़कर कुरसीपर बिठाती हुई बोली, "पहले मैं जूते खोल दूँ।—अच्छा, ऐसे आँधी-मेहमें गाड़ीपर क्यों नहीं आये?—अच्छा भइया, सबेरे क्या खाया था? पेट भर गया था?—और सुनो, महाराजके होटलमें आज मांस बना है, ले आऊँ दौड़कर एक कटोरेमें? खाओगे? सच बताओ?"

डाक्टरने हँसते चेहरेसे कहा, "अरे, यह आज मुझे पागल कर देगी क्या?"

भारतीने जूते खोल दिये और उठके उनके सिरपर हाथ रखकर कहा, "लो, जो सोची थी वही बात हुई न! ठीक जैसे नहाकर आ रहे हो!" कहकर वह अलगनीसे झटपट तौलिया उठा लाई।

मिनट-भरके अन्दर उसने ऐसा लड़कपन दिखलाया कि शशि हँस दिया। बोला, "आपको जैसे भारतीने दस-पाँच साल बाद देखा हो!"

डाक्टरने कहा, "उससे भी ज्यादा।" कहते हुए उन्होंने भारतीके हाथसे तौलिया ले ली, और कहा, "इसके लाड़के मारे मेरा दम निकला जा रहा है।"

"दम निकला जा रहा है? तो बैठे रहो।" कहकर भारती कृत्रिम अभिमान दिखाती हुई हँसिया लेकर फल बनाने बैठ गई। ऐसे मौकेपर और बिना किसी भरोसेके अपने इस बन्धु, सखा और सहोदरसे भी अधिक आत्मीयके आगमनसे भारतीका हृदय स्नेह, श्रद्धा, गर्व और स्वार्थहीन निष्पाप प्रेमसे ऐसा भर आया कि वह अपनेको सम्हाल नहीं सकी। उसके बरतावमें अगर कुछ ज्यादती हुई हो तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? सुमित्रा जो चुपचाप बैठी देख रही थी अब भी चुप रही। परन्तु अब तक उसकी आँखोंके सामने जो घृणा और निगूढ़ ईर्ष्याकी दुर्भेद्य यवनिका पड़ी हुई थी वह अकस्मात् हट गई, और फिर उसे जहाँ तक दिखाई दिया, इन दोनों नर-नारीके बीचमें निर्मल सौहार्दकी स्वच्छ स्रोतस्वतीकी धाराके सिवा और कुछ दिखाई ही नहीं दिया। क्षण-भरके लिए भी कभी वहाँ कलुषका स्पर्श हुआ होगा, ऐसी कल्पना करते हुए भी उसका सिर झुक गया। छिपाने और शरमाने लायक भारतीमें कुछ था ही नहीं, इसीलिए वह सव्यसाचीकी इतनी अपनी हो गई थी,—सुमित्रा इस बातको आज अच्छी तरह समझ गई।

अब तक भारती भइयाको लेकर व्यस्त थी। अब उसका ध्यान बकुचेपर गया। उद्विग्न आशंकासे त्रस्त होकर उसने पूछा, "अच्छा भइया, ऐसे आँधी-मेहमें अपने इस सहचरको साथ क्यों लाये हो? कहीं चले तो नहीं जा रहे हो? झूठ कहकर धोखा नहीं दे सकते, पहलेसे कहे देती हूँ, हाँ!"

डाक्टरने हँसनेकी कोशिश की, पर उनके चेहरेपर हँसी आई नहीं; फिर भी उन्होंने हँसीके ढँगपर बातको जरा हलकी करते हुए कहा, "जाऊँ नहीं तो क्या रामदासकी तरह गिरफ्तार हो जाऊँ?"

शशिने सिर हिलाते हुए कहा, "बात तो बिलकुल ठीक है।"

भारतीने गुस्सेसे कहा, "बिलकुल ठीक है! आप क्या जानते हैं शशिबाबू, जो अपनी राय दे रहे हैं?"

"वाह, जानता कैसे नहीं?"

"कुछ नहीं जानते।"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, लड़ने-भिड़नेसे खिचड़ीका स्वाद जाता रहेगा।—अच्छा अपूर्व बाबू, कलसे जहाजसे गये बिना क्या आप ठीक वक्तपर नहीं पहुँच सकेंगे?"

अपूर्वने गम्भीरताके साथ कहा, "माका श्राद्ध अब मैं यही करना चाहता हूँ डाक्टर!"

"यहाँ? इसकी वजह?"

अपूर्व मौन रहा, भारतीने भी कुछ जवाब नहीं दिया।

डाक्टर मन ही मन समझ गये कि कोई बात हो गई है जो कहनेकी नहीं है। वे बोले, "अच्छी बात है, ठीक है, तो फिर वहाँ वापस जानेकी भी क्या जरूरत है? नौकरी आपकी बनी हुई है न?"

अपूर्वने इसका भी कोई उत्तर नहीं दिया।

शशिने कहा, "अपूर्व बाबू संन्यास लेंगे।"

डाक्टर हँस पड़े, बोले, "संन्यास? ऐसी क्या बात हो गई, भई!"

उनकी हँसीसे अपूर्व क्षुब्ध हो गया। बोला, "संसारमें जिसकी रुचि नहीं रही है, जीवन जिसका बेस्वाद हो गया है, उसके लिए और चारा ही क्या है डाक्टर?"

डाक्टरने कहा, "ये सब बड़ी बड़ी आध्यात्मिक बातें हैं अपूर्व बाबू, इस विषयमें अनधिकार-चर्चा करनेके लिए मुझे मत लुभाइए। बल्कि इस विषयमें शशि बाबूकी राय ही ली जाय तो ठीक है। वे समझते हैं। स्कूलमें परीक्षा-फेल हो जानेपर एक बार साल-भर तक किसी साधुकी चेलागीरी भी कर चुके हैं।"

शशिने कहा, "साल-भर नहीं, डेढ़ सालसे ऊपर।"

सुमित्रा और भारती हँसने लगीं। परन्तु इससे अपूर्वका गाम्भीर्य विचलित नहीं हुआ, उसने कहा, "माकी मृत्युके लिए मैं अपनेको ही अपराधी समझता हूँ डाक्टर, उस दिनसे मैं निरन्तर यही बात सोच रहा हूँ। वास्तवमें घर-गृहस्थीकी मुझे जरूरत नहीं, वह मेरे लिए कड़ुई हो गई है।"

डाक्टरने क्षण-भर उसके मुँहकी ओर देखकर मानो उसकी सच्ची व्यथाका पता लगा लिया और स्नेह-भरे कोमल स्वरमें कहा, "मुझे आदमीकी इस दिशामें विचार करनेका कभी मौका नहीं मिला अपूर्व बाबू, न कभी जरूरत ही पड़ी, पर सहज-बुद्धिसे मालूम होता है कि शायद यह ग़लत होगा। कड़ुआहटके कारण संसार छोड़कर सिर्फ भाग्यहीन जीवन ही बिताया जा सकता है,

वैराग्य-साधन नहीं किया जा सकता। करुणा और आनन्दके बीचमेंसे चले बगैर क्या,—लेकिन, मैं तो ठीक जानता नहीं—"

भारतीको अकस्मात् मानो एक नया ज्ञान मिल गया। व्यग्र कंठसे बोल उठी, "तुम ठीक जानते हो भइया, तुम्हारे मुँहसे कभी ग़लत बात नहीं निकलती,—और कुछ हो ही नहीं सकता। यही सत्य है।"

डाक्टरने कहा, "मालूम तो यही होता है। मा मर गई। वे क्यों आई थीं, क्यों आप यहाँसे जाना नहीं चाहते,—कुछ भी मैं नहीं जानता और जाननेका कुतूहल भी नहीं है;—परन्तु किसीके आचरणसे अगर कड़ुआहट आपको मिली हो तो क्या सारे जीवनमें केवल वही एक सत्य हो रहेगी, और अमृत अगर कहींसे मिला हो, तो जीवनमें उसकी क्या कोई कीमत ही नहीं रहने देंगे?"

अपूर्वने कहना चाहा, "घरमें भइया अगर—"

डाक्टर बीचमें ही कहने लगे, "संसारमें क्या अपूर्वके भइया विनोद बाबू ही हैं, भारतीके भइया सव्यसाची नहीं हैं? उस घरमें अगर आपके लिए स्थान न हो, तो क्या कलकत्तेका वह छोटा-सा मकान ही वामनके विश्वव्यापी पैरके नीचेकी पृथिवी है? संसारमें और कहीं क्या आपके लिए जगह नहीं है? अपूर्व बाबू, हृदयावेग दुर्मूल्य वस्तु है; परन्तु उससे यदि चेतनाको ही ढक दिया जाय तो वह आदमीके लिए सबसे बड़ा शत्रु हो जाता है।"

अपूर्व बहुत देर तक चुप रहनेके बाद बोला, "परन्तु धर्म-साधन या अपनी आत्माकी मुक्ति चाहनेके लिए तो मैं संसार नहीं छोड़ना चाहता डाक्टर,—अगर छोड़ूँगा तो दूसरोंके लिए ही छोड़ूँगा। आप लोगोंके लिए अब मुझपर विश्वास करना कठिन है। न करें तो मैं दोष भी नहीं दे सकता। परन्तु इतना सच है कि जिस अपूर्वको आप लोग जानते हैं, वह अपूर्व अब नहीं रहा।"

डाक्टर उठकर उसके पास आ गये और उसकी पीठपर हाथ रखकर बोले, "तुम्हारी यह बात सच हो अपूर्व बाबू!"

अपूर्वने गद्गद कंठसे कहा, "अबसे मैं अपना जीवन देशकी सेवा, मनुष्यकी सेवा,—दीन अनाथोंकी सेवामें लगा दूँगा।" इतना कहकर वह कुछ देर चुप रहा, फिर कहने लगा, "कलकत्तेमें मेरा घर है, शहरमें ही मैं इतना बड़ा हुआ हूँ, पर शहरके साथ अब मेरा रंच-मात्र भी सम्बन्ध नहीं रहा। अबसे ग्राम-सेवा ही मेरा एकमात्र व्रत होगा। किसी जमानेमें इस कृषि-प्रधान भारतके गाँव ही प्राण थे, गाँव ही सब-कुछ थे। आज वे ध्वंसोन्मुख हैं

मध्यवित्त भद्र जाति उन्हें छोड़कर शहरोंमें चली आई है, और शहरोंमें ही रहकर उनपर दिन-रात शासन करती है,—शोषण करती है। इसके सिवा इन लोगोंने गाँवोंसे और कोई सम्बन्ध या बन्धन रक्खा ही नहीं। न रक्खें, पर हमेशासे जो इनके पेटके लिए अन्न और शरीरके लिए वस्त्र देते आ रहे हैं, वे किसान आज निरन्न निरक्षर और निरुपाय होकर मौतकी ओर तेजीसे बढ़े जा रहे हैं। अब मैं उन्हींकी सेवामें अपना जीवन लगा दूँगा। और भारतीने भी मुझे जी जानसे सहायता पहुँचानेका वचन दिया है। गाँव-गाँवमें पाठशालाएँ खोलकर और जरूरत आ पड़नेपर हर झोपड़ीमें जाकर उनके बच्चोंको शिक्षित बनानेका भार लेनेको भारती तैयार है। मेरा संन्यास देशके लिए होगा डाक्टर, अपने लिए नहीं।"

डाक्टरने कहा, "अच्छा प्रस्ताव है।"

उनके मुँहसे सिर्फ ये दो ही शब्द निकलेंगे, इसकी आशा किसीको न थी। भारतीने उदास होकर कहा, "और एक तरहसे देखा जाय, तो यह तुम्हारा ही काम है भइया। इस कृषि-प्रधान देशमें किसान जब तक उन्नति नहीं करते, तब तक क्रान्ति वगैरह कुछ हो भी नहीं सकती।"

डाक्टरने कहा, "मैंने तो प्रतिवाद नहीं किया भारती!"

"पर तुमने उत्साह भी तो नहीं दिया भइया!"

डाक्टरने सिर हिलाकर कहा, "गरीब किसानोंका भला करना चाहते हो करो, मैं तुम लोगोंको आशीर्वाद देता हूँ। मगर वह करके ऐसा समझनेकी जरूरत नहीं कि तुम मेरे काममें सहायता कर रहे हो।—किसान राजा हो जायँ, उन्हें धन, धान्य पुत्र-पौत्रादि प्राप्त हों,—पर उनसे मैं सहायताकी आशा नहीं करता।"

अपूर्वकी तरफ देखकर कहा, "किसीका भला करनेके लिए दूसरे किसीपर कीचड़ उछालना ही होगा, इसके कोई मानी नहीं होते अपूर्व बाबू! किसान मजदूरोंके दुःख-दारिद्र्यकी जड़में शिक्षित मध्यवित्त जाति नहीं है, उसकी जड़ ढूँढ़नेके लिए तुम्हें दूसरी जगह खोदकर देखना होगा।"

अपूर्व संकुचित हो उठा। बोला, "पर, सभी क्या ऐसा नहीं कह रहे हैं?"

"कहने दो। जो ग़लत है, वह तेतीस करोड़ आदमी मिलकर कहें तो भी ग़लत ही है। बल्कि देखा जाय, तो इस शिक्षित भद्रजातिसे बढ़कर लांछित, अपमानित और दुर्दशाग्रस्त समाज भारतमें शायद ही कोई हो। ऊपरसे तुम

उनपर झूठे कलंकका बोझ और लादकर उनको डगमगाती हुई नावको मँझधारमें क्यों डुबोना चाहते हो? क्या तुम समझते हो कि दूसरे देशोंकी सभी युक्तियाँ और सभी समस्याएँ हमारे देशके लिए लागू हो सकती हैं? बाहरका अनाचार जब कि क्षण-क्षणमें सर्वनाश लाता चला आ रहा है, तब भीतर तुम अन्तर्विद्रोहकी सृष्टि क्यों करना चाहते हो? असन्तोषसे देश मुँह तक भर गया है,—स्नेह और श्रद्धाका बन्धन छिन्न-भिन्न क्यों होता जा रहा है, जानते हो?—तुम्हीं दस-पाँच जनोंके दोषसे,—शिक्षितोंके विरुद्ध शिक्षितोंके युद्धसे। शशि, एक दिन तुम्हें भी इस कामके लिए मना किया था, याद है? अपने विरुद्ध अपनी बुराई घोषित करनेमें एक तरहकी निरपेक्ष स्पष्टवादिताका दम्भ है,—एक तरहकी सस्ती ख्याति भी उससे फैल जाती है; परन्तु यह सिर्फ गलती ही नहीं, झूठ भी है। उन लोगोंका हित तुम लोग कर सकते हो, करो, पर दूसरोंपर कलंक मढ़कर या एकके विरुद्ध दूसरेको उत्तेजित करके मत करो,—दुनियाके सामने उन्हें हास्यास्पद करके मत करो। सुदूर भविष्यमें सम्भव है वैसा समय भी आ जाय, मगर अभी उसमें देर है।"

सब चुप रहे, सिर्फ भारतीने धीरेसे कहा, "कुछ खयाल मत करना भइया मैं बराबर ही देखती आ रही हूँ कि गाँवोंके प्रति तुम्हारी सहानुभूति कम है। तुम्हारी दृष्टि सिर्फ शहरोंके प्रति ही है। किसानोंपर तुम सदय नहीं हो, तुम्हारी दोनों आँखें सिर्फ कारखानोंके कुली-मजदूर-कारीगरोंकी ओर ही देखा करती हैं। इसीसे तुमने अपनी अधिकार-समिति इन्हींके बीच खोली थी और हृदय नामकी कोई बला अगर तुम्हारे अन्दर हो भी, तो उसपर सिर्फ मध्यम श्रेणी और शिक्षित भद्र-जाति ही छाई हुई है। उन्हींपर तुम्हारी आशा है, उन्हें ही तुम अपना समझते हो। तुम्हीं बताओ, यह बात झूठ है?"

डाक्टरने कहा, "झूठ नहीं बहन, बिलकुल सच है। कितनी ही बार मैं तुमसे कह चुका हूँ कि अधिकार-समिति किसान-हितकारिणी संस्था नहीं है, यह मेरा स्वाधीनता प्राप्त करनेका अस्त्र है। मजदूर और किसान एक नहीं भारती, इसीसे, तुम मुझे कुली-मजदूर-कारीगरोंके कारखाने के बैरकमें तो पाओगी, पर गाँवमें किसानोंकी झोंपड़ीमें मैं ढूँढ़े नहीं मिल सकता। लेकिन, बातों ही बातोंमें अपना श्रेष्ठ कर्तव्य मत भूल जाना बहन!" इतना कहकर स्टोवकी तरफ उसका ध्यान आकर्षित करते हुए बोले, "देशोद्धार दो दिन बाद भी हो जाय तो सह लूँगा, लेकिन तैयार खिचड़ी जल गई तो यह मुझसे नहीं सहा जायगा।"

भारती चटसे दौड़ी गई और बटलोईका ढक्कन उठाकर हँसती हुई बोली, "डरनेकी कोई बात नहीं भाई, तुम्हारा बदलीके दिनका खिचड़ी-भोग मारा नहीं जायगा।"

"लेकिन देर कितनी है?"

भारतीने कहा, "पन्द्रह-बीस मिनट समझो। पर इतनी जल्दी काहेकी है?"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "आज जो मैं तुमसे विदा लेने आया हूँ।"

बात कैसी ही क्यों न हो, पर उनके हँसते हुए चेहरेको देखकर किसीको विश्वास नहीं हुआ। बाहर आँधी-मेहका ठिकाना नहीं था, भारतीने क्षण-भरके लिए खिड़की खोलकर बाहरका हाल देखकर कहा, "बाप रे बाप! दुनिया आज उलट-पुलट हो जायगी! यह क्या कोई विदा लेनेका वक्त है, भइया?" कहते कहते तुरत ही उसे दूसरी बात याद आ गई, बोली, "आज लेकिन तुम्हें उस छोटी कोठरीमें सोना पड़ेगा। अपने हाथसे मैं बहुत अच्छी तरह बिछौने बिछा दूँगी, ठीक है न?" इतना कहकर वह अपने हृदयके निगूढ़ आनन्दसे परिपूर्ण होकर रसोईके काममें लग गई। डाक्टरने उसकी बातका कोई जवाब ही नहीं दिया, इस बातपर उसने कुछ ध्यान ही नहीं दिया।"

यथासमय भोजन तैयार होनेपर डाक्टरने सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं नहीं, सो नहीं होनेका। परोसनेके बहाने तुम पीछेके लिए रह जाओ, यह नहीं हो सकता। आज हम लोग सब एक साथ जीमने बैठेंगे।"

भारतीने सहमत होकर कहा, "सो ही होगा भइया, हम चारों जनें गोल होकर खाने बैठेंगे।"

डाक्टरने कहा, "गोल होकर मैं खा सकता हूँ, लेकिन बुभुक्षु अपूर्व बाबू नजर लगाकर कहीं हम लोगोंके हाजमेंमें गड़बड़ी न कर दें, इतना उनसे कह दो।"

अपूर्व हँस दिया, भारतीके मुँहपर भी हँसी आ गई, बोली, "इस बातका डर हम लोगोंको हो सकता है, पर तुम्हारे हाजमेंमें गड़बड़ी कौन कर सकता है भइया! उस आगमें तो पहाड़-पर्वत भी पीसकर डाल दिये जायँ तो सब जलकर भस्म हो जायँगे। इसी तरह मैंने खाते देखा है तुम्हें!" कहते कहते भारती उस दिनके खानेकी याद करके मन ही मन सिहर उठी।

अब भोजन-पर्व आरम्भ हुआ। अन्न-व्यंजनकी प्रशंसा और हँसी मज़ाकसे क्षण-भरमें घरकी आब-हवा ही बदल गई। जब कि सब लोग खूब मजेमें खा रहे थे, सहसा अपूर्वने रंगमें भंग डाल दी। उसने कहा, "दो दिन पहले

अखबारमें एक सुसंवाद पढ़ा था, डाक्टर साहब, अगर वह सच हो, तो आपका क्रान्तिका उद्योग बिलकुल निरर्थक हो जायगा। भारत-सरकारने अपने शासन-तंत्रमें आमूल सुधार करनेका वचन दिया है।"

शशिने उसी वक्त अपनी राय जाहिर की, "झूठी बात है, धोखेबाजी है।"

भारतीको ठीक विश्वास हुआ हो, सो बात नहीं, परन्तु वह अकृत्रिम उद्वेगके साथ बोल उठी, "ऐसा भी तो हो सकता है शशि बाबू, कि धोखेबाजी न भी हो? जो लोग नेता हैं, जो लगभग आधी शताब्दीसे,—नहीं भइया, तुम हँस नहीं सकते, कहे देती हूँ!—उनके जी-जानसे किये गये आन्दोलनका क्या कोई फल ही नहीं होगा? विदेशी शासक होनेपर भी आखिर हैं तो वे आदमी ही,—धर्म-विवेक और नैतिक बुद्धि उनमें आ जाय तो कोई असम्भव बात नहीं।"

शशिने पूर्ववत् बिना किसी संकोचके कहा, "असम्भव है! झूठी बातें हैं! धोखेबाज़ी है!"

अपूर्वने कहा, "बहुत-से लोग इसी तरहका सन्देह करते हैं, यह सच बात है।"

भारतीने कहा, "उनका सन्देह करना झूठा है। भगवान क्या हैं नहीं?" और दूसरे ही क्षण असीम आग्रहके साथ कहने लगी, "शासन-पद्धतिका परिवर्तन और अत्याचारों अनाचारोंका सुधार,—यह सब अगर सचमुच हो जाय तो क्रान्तिकी आयोजना और विद्रोहकी सृष्टि,—फिर तो सब कुछ बिलकुल निरर्थक हो जायगा भइया।"

शशिने कहा, "जरूर।"

अपूर्वने कहा, "इसमें कोई सन्देह नहीं।"

भारतीने डाक्टरके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, "भइया, तब तो तुम इस भयंकर मूर्तिको छोड़कर शान्त मुद्रा धारण करोगे न, बताओ?"

डाक्टर दीवारकी घड़ीकी ओर देखकर मन ही मन हिसाब लगाकर स्वयं ही अपने आप बोले: अब ज्यादः देर नहीं है। फिर भारतीको लक्ष्य करके अकस्मात् अत्यन्त स्निग्धभाव धारण करके बोले, "भारती, मैं खुद ही नहीं जानता कि यह मेरी भयंकर मूर्ति है या शान्त मूर्ति, सिर्फ इतना जानता हूँ कि इस जीवनमें मुझमें कोई परिवर्तन नहीं होनेका। और तुम्हारे प्रणम्य नेताओंको,—डरो मत बहन, आज उनका मज़ाक़ उड़ाकर जी बहलानेका न तो मेरे पास

बातको समझ जाते। लेकिन आज वह इस बातको मुँह खोलकर कह नहीं सकी।

भोजन कर चुकनेके बाद डाक्टर मुँह-हाथ धोकर कुरसीपर बैठ गये। किसीने भी उनकी तरफ लक्ष्य नहीं किया कि उनकी उत्कंठित दृष्टि किसकी प्रतीक्षामें धीरे धीरे विक्षुब्ध हुई जा रही थी। और उनका एक कान बहुत देरसे नीचेके दरवाजेकी ओर लगा हुआ है, यह बात भी किसीको नहीं मालूम हुई। सड़कपर किसी चीज़की आवाज़ सुनाई दी, उसपर किसीने ध्यान नहीं दिया, परन्तु डाक्टर चौंककर उठ खड़े हुए और बोले, "नीचे अपूर्व बाबूका नौकर है न? जाग रहा है? अरे ओ हनुमन्त, जरा दरवाजा तो खोल दे।"

भारती सुमित्रासे पूछ रही थी कि कहाँ किसके लिए कैसे बिस्तर लगेंगे। आश्चर्यके साथ उसने मुड़कर पूछा, "किसके लिए भइया? कौन आ रहे हैं।"

डाक्टरने कहा, "हीरासिंह। उसीके आनेकी बाट देख रहा हूँ, तबसे। —क्यों जी कवि, कुछ कुछ काव्य-सा सुनाई दिया या नहीं?" यह कहकर वे हँसने लगे।

भारतीने कहा, "ऐसे आँधी-पानीमें अकेले तुम्हारे ही काव्यसे हम लोग बेचैन हो रहे हैं, उसपर यह भग्नदूत कहाँसे आ धमका?"

शशिने कहा, "भग्नदूतको तुच्छ मत समझो भारती, उसके बिना मेघनाद-वध काव्यकी रचना ही नहीं होती।"

"देखूँ, ये किस काव्यकी रचना करते हैं।" कहकर भारतीने झाँककर देखा कि अपूर्वके नौकरके दरवाजा खोल देनेपर जिस व्यक्तिने प्रवेश किया वह सचमुच ही हीरासिंह है। क्षण-भर बाद आगन्तुकने ऊपर आकर सबको अभिवादन किया और डाक्टरको हाथ जोड़कर प्रणाम किया। पहनावा उसका वही था,—सरकारी चपरास, सरकारी साफा, और कमरसे लटकता हुआ चमड़ेका बेग—सब कुछ भींजकर भारी हो गया था। बड़ी बड़ी दाढ़ी-मूछोंसे पानी टपक रहा था,—बायें हाथसे सबको निचोड़ता हुआ शायद वह हलका होनेकी कोशिश करने लगा और इसी मौकेसे अस्फुट स्वरमें बोला, 'रेडी?'

डाक्टर उछल पड़े, बोले, "थैङ्क यू! थैङ्क यू! थैङ्क यू सरदारजी!—कब?"

'नाउ,' कहकर वह फिरसे सबको अभिवादन करके जाना ही चाहता था कि सब एक साथ पूछ उठे, "क्या हुआ सरदारजी? 'नाउ' क्या?"

हालाँ कि सब जानते थे कि इस आदमीके गलेमें छुरा भोंकनेसे खून

भले ही निकले, पर बगैर हुक्मके एक शब्द भी नहीं निकल सकता। लिहाजा, उत्तरके पहले जब उसकी घनी काली दाढ़ी-मूँछोंमेंसे सिर्फ कुछ दाँत ही चमककर रह गये, तो किसीको कुछ आश्चर्य नहीं हुआ। सभी जानते थे कि इस आदमीपर निन्दा-प्रशंसा, मान-अपमान, शत्रु-मित्रका कुछ भी असर नहीं;—देशके काममें सव्यसाचीको सरदार मानकर इस आदमीने अपने जीवनकी सारी भलाई बुराई और समस्त सुख-दुखको तिलांजलि देकर अपनेको कठोर सैनिक वृत्तिमें लगा दिया है। न तो उसे कुछ बहस करना है, न आलोचना करनी है, समय-असमयका भी उसके लिए कोई हिसाब नहीं, —किसी भी कठिन कार्यका भार उसपर सौंपा गया और उस कर्तव्यको पूरा करके वह वहाँसे चल दिया। सबके कुतूहलको मिटानेके लिए डाक्टरने जो कुछ कहा उसका सारांश इस प्रकार है—

हानि और अनिष्ट कितना हुआ है, दूरसे इस बातका निर्णय करना कठिन है। सम्भवतः काफी हुआ है। मगर कितना ही क्यों न हो, दो काम उन्हें करने ही पड़ेंगे। उनके जैमेका क्लबका जो अंश सिंगापुरमें बाकी बचा है उसकी रक्षा करनी पड़ेगी, और जहाँ कहीं भी हो और जैसे भी हो व्रजेन्द्रको ढूँढ़ निकालना होगा। नदीके दक्षिणमें सीरियमके पास एक चीनी जहाज माल लादकर चीन जा रहा है,—कल तड़के ही वह छूटनेवाला है, उसमें किसी तरह उनके जानेकी व्यवस्था हो गई। हीरासिंह यही समाचार लाया है।

सुनकर सुमित्राका चेहरा फक पड़ गया। जहाँ तक सम्भव है व्रजेन्द्र अभी सिंगापुरमें है, और जो व्यक्ति उसकी खोजमें जा रहा है उसकी दृष्टिसे, स्वर्ग-लोक मर्त्य-लोक कहींपर भी वह क्यों न हो, बच नहीं सकता। फिर विश्वासघातके अन्तिम विचारका समय आयेगा। उसका क्या दण्ड है, इस बातसे भी कोई नावाकिफ नहीं;—सुमित्रा भी जानती है। व्रजेन्द्र उसका कोई भी नहीं; और अपराध अगर उसने किया है तो दण्ड उसे मिलना ही चाहिए; परंतु सुमित्रा जिस कारण ऐसी हो गई वह कारण व्रजेन्द्रके दण्डका खयाल आ जाना नहीं, बल्कि यह है कि व्रजेन्द्र पतिंगा नहीं है,—वह भी आत्म-रक्षा करना जानता है। उसकी जेबमें सिर्फ गुप्त पिस्तौल ही रहती हो सो नहीं; उससे बढ़कर धूर्त, चालाक और सदा चौकन्ने आदमी भी दुनियामें बहुत कम हैं। उससे सबसे बड़ी गलती एक यह हो गई है कि जाते वक्त वह यह निश्चित धारणा लेकर गया है कि डाक्टर बर्मासे पैदल रास्ते चल दिये हैं। अब अगर किसी तरह उसे डाक्टरका पता

लग गया, तो हत्या करनेके जितने भी अस्त्र उसके पास होंगे उन सबका प्रयोग करनेमें वह जरा भी नहीं हिचकेगा। वास्तवमें, जीवन-मरणकी समस्या उपस्थित होनेपर दूसरेके लिए कहनेको और है ही क्या!

कुछ भी नहीं। सिर्फ हीरासिंहके शान्त मृदु दो शब्द : 'नाउ' और 'रेडी' सबके कानोंमें हजार-गुने भीषण होकर हजारों तरफसे आघात-प्रतिघात करने लगे। भारतीको उस दिनकी बात याद आ गई जिस दिन उसके मौलमिनके मकानमें जन्म-दिवसके उत्सवके परिपूर्ण आनन्दके बीच उसके घरके अतिथि और सर्वोत्तम मित्र रेवरेण्ड लॉरेन्स साहब टेबिल-पर खाते खाते हार्ट-फेल होकर मर गये थे। आज भी ठीक वैसे ही हीरासिंहने मृत्यु-दूतकी तरह आकर एक क्षणमें सब नष्ट-भ्रष्ट कर दिया।

सहसा शशिका मुँह खुला। वह फुसकारके साथ एक गहरी साँस छोड़कर बोल उठा, "सब कुछ जैसे फीका और खाली हुआ जा रहा है डाक्टर!"

बात बिलकुल मामूली और बहुत ही मोटी थी, परन्तु सबकी छातीपर उसने मानो मुद्गर-सा दे मारा।

डाक्टर हँस दिये। शशिने कहा, "हँसिए या चाहे जो भी कीजिए, बात सच्ची है। आप पास नहीं रहते तो मालूम होता है सब ब्लैङ्क हो गया,—फीका, खोखला, धुँधला। लेकिन मैं आपका हरएक हुक्म मानकर चलूँगा।'

"जैसे?"

"जैसे, शराब नहीं पीऊँगा, पॉलिटिक्समें नहीं पड़ूँगा, भारतीके पास रहूँगा और कविता लिखा करूँगा।"

डाक्टरने भारतीके चेहरेकी तरफ एक बार देखा, पर वह दिखाई नहीं दिया। तब फिर मज़ाक़के तौरपर शशिसे पूछा, "किसानोंकी कविता नहीं लिखोगे कवि?"

शशिने कहा, "नहीं। उनकी कविता वे खुद लिख सकें तो लिखें, मैं नहीं लिख सकता। आपकी उस बातपर मैंने बहुत विचार किया है, और आपके इस उपदेशको भी कभी नहीं भूलूँगा कि अपने आदर्शके लिए अगर कोई अपना सर्वस्व निछावर कर सकता है तो सिर्फ शिक्षित मध्यवित्त-समुदाय ही कर सकता है; अशिक्षित किसान कुछ नहीं कर सकते। मैं उन्हीं मध्यवित्तोंका कवि बनूँगा डाक्टर।"

डाक्टरने कहा, "वही बनना। पर यही अन्तिम बात नहीं है कवि, मानवकी गति यहींपर निश्चल नहीं बनी रहेगी। किसानोंका जमाना भी किसी

रोज़ आयेगा, तब देशके कल्याण-अकल्याणका भार उन्हींके हाथों सौंप देना पड़ेगा। ”

कविने कहा, “आवे वह जमाना। तब, स्वच्छंद शान्त चित्तसे सब जिम्मेदारी उन्हींके हाथ सौंपकर हम लोग छुट्टी ले लेंगे। लेकिन इस समय आत्म-बलिदानका गुरु भार वे नहीं सह सकते।”

डाक्टर उठके उसके पास पहुँच गये और कंधेपर हाथ रखकर चुपचाप खड़े रहे,—कुछ बोले नहीं।

अपूर्व अबतक सब बातें चुपचाप स्थिर बैठा हुआ सुन रहा था,—कुछ बोला नहीं था। परन्तु शशिके अन्तिम शब्द उसे बहुत बुरे मालूम हुए। जिन किसानोंके हितके लिए उसने अपना जीवन लगा देनेका संकल्प किया था उनके विरुद्ध इन सब अभिमतोंको सुनकर वह क्षुब्ध और असन्तुष्ट होकर कह उठा, “शराब पीना खराब है,—ठीक है, उसे ये छोड़ दें; काव्य-चर्चा अच्छी है, उसे ये करें; परन्तु कृषि-प्रधान भारतवर्षका कृषक-समाज क्या इतना तुच्छ और इतनी उपेक्षाकी वस्तु है? और, ये ही लोग अगर खड़े न हो सके, तो आपकी क्रान्ति करेंगे कौन? और क्यों करेंगे? और रही पॉलिटिक्सकी बात, सो अगर मैं किसानोंके कल्याणका संन्यास-व्रत न लेता डाक्टर, तो आज मेरे जीवनका एक-मात्र कर्तव्य स्वदेशकी राजनीति ही होता।”

डाक्टर कुछ देरतक उसके मुँहकी ओर देखते रहे। सहसा प्रसन्न स्निग्धोज्ज्वल हास्यसे उनका चेहरा प्रदीप्त हो उठा। बोले, “मैं मन-वचन-कायसे प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारा सदुद्देश्य सफल हो। राजनीतिका क्षेत्र भी उपेक्षाकी चीज नहीं है। अगर देश और देशवासियोंके लिए ही वैराग्य ग्रहण किया है, तो तुम्हारा विरोध किसीसे नहीं होगा। मेरा तो सिर्फ इतना ही कहना है अपूर्व बाबू, कि हरएक आदमी हरएक कामके योग्य नहीं होता।”

अपूर्वने इस बातको मंजूर करते हुए कहा, “इस बातकी शिक्षा मुझसे ज्यादा और किसको मिली होगी डाक्टर! आपकी दया न होती तो बहुत दिन पहले ही मेरे इस भ्रमका दण्ड मुझे मिल गया होता।” कहते हुए पूर्व-स्मृतिके आघातसे अपूर्वके रोंगटे खड़े हो गये।

शशिको यह घटना मालूम नहीं थी, और मालूम करानेकी किसीने आवश्यकता भी नहीं समझी थी। अपूर्वकी बातको उसने प्रचलित विनय

और श्रद्धा-भक्तिके सिवा और कुछ नहीं समझा। बोला, "भ्रम तो बहुतेरे किया करते हैं, पर उसका दण्ड भोगा करती है सिर्फ जन्म-भूमि। मैं सोचा करता हूँ, डाक्टर, कि आपसे अधिक योग्य व्यक्ति और कौन होगा?—किसमें इतना ज्ञान है? जाति और देश किसी भी विषयको ले लीजिए, राष्ट्र-तंत्रका अनुभव इतना है किसमें?—किसको इतना दर्द है? फिर भी यह किसी काम नहीं आया। चायनाका आयोजन नष्ट हो गया, पिनांगका जाता ही रहा, बर्मामें कुछ रह ही नहीं गया, सिंगापुरका भी चला जायगा, निश्चित है,—असलमें, आपका इतने दिनोंका उद्योग मिट्टीमें मिलने जा रहा है। सिर्फ जान बाकी है, सो भी डर है कि किसी दिन चली न जाय।"

डाक्टर जरा मुसकरा दिये। शशिने कहा, "हँसिए, चाहे जो कीजिए, मैं दिव्य चक्षुओंसे देख रहा हूँ!"

डाक्टरने उसी तरह मुसकराते हुए पूछा, "दिव्य चक्षुओंसे क्या और कुछ नहीं दिखाई देता कवि?"

शशिने कहा, "हाँ, देता है। इसीसे तो आपको देखते ही खयाल आ जाता है कि निरुपद्रव, शान्तिमय मार्गमें अगर हम लोगोंके जीवन-रथका दावा कहीं सूच्यग्र मात्र भी खुला रहता!"

अपूर्व बोल उठा, "वाह! एक ही साथ दो परस्पर उलटी बातें?"

सुमित्राने हँसी छुपानेके लिए मुँह फेर लिया, डाक्टर भी हँस दिये, बोले, "इसका कारण यह कि इनमें दो दो पृथक्-पृथक् सत्ताएँ हैं अपूर्व बाबू, एक शशिकी और दूसरी कविकी। इसीलिए एकके मुँहकी बात दूसरेकी मनकी बातको धक्का देकर ऐसा बेसुरा आलाप पैदा कर देती है।" फिर जरा ठहरकर बोले, "बहुतसे मनुष्योंमें इस तरहकी पृथक् सत्ता एकान्तमें वास किया करती है। उसे आसानीसे पकड़ा नहीं जा सकता इसीलिए, आदमीकी बात और काममें सामंजस्य न पाकर तुरंत ही उसका फैसला कर डालनेसे उसमें अन्यायकी ही अधिक सम्भावना रहती है। अपूर्व बाबू, मैं तुम्हें पहचान गया था, पर सुमित्रा नहीं पहचान सकी थी। भारती, अगर जीवनमें तुम्हें कभी ऐसी चोट पहुँचे बहन, तो इस स्वर्गीय भाईकी यह बात कभी न भूलना।—लेकिन, अब मैं जाऊँगा। घाटपर नाव बँधी हुई है, भाटेमें फिर बहुत ज्यादा डाँड़ चलाये बगैर पौ फटते फटते जहाज पकड़ना मुश्किल हो जायगा।"

भारती आशंकासे व्याकुल हो उठी, बोली, "इस वक्त ? ऐसी भयंकर नदीमें ? ऐसी भयंकर तूफानी रातमें ?"

उसके व्याकुल कंठ-स्वरसे सुमित्राके आत्म-संयमका कठिन बाँध टूट गया। उसने सफेद फक चेहरेसे पूछा, "सचमुच ही क्या तुम सिंगापुर जा रहे हो ? ऐसा काम तुम हरगिज मत करना, वहाँकी पुलिस तुम्हें खूब अच्छी तरह पहचानती है। अबकी बार उसके हाथसे तुम हरगिज—"

बात खत्म भी न हो पाई कि डाक्टरने कहा, "यहाँकी पुलिस क्या मुझे पहचानती नहीं है सुमित्रा ?"

परन्तु इस विषयपर बहस करनेसे कोई लाभ नहीं और न युक्तियाँ दिखानेका यह मौका ही है,—अथवा सुमित्राने उनकी बात सुनी ही न हो इसलिए, उसने कुछ जवाब नहीं दिया। सुमित्राके हृदयकी जो बात बाहर निकलनेकी व्याकुलतासे अब तक सिर धुन-धुनकर मर रही थी, वही बात अन्ध आवेगसे उसके मुँहसे निकल गई, "सिर्फ एक बार डाक्टर, सिर्फ एक बार तुम मुझपर भरोसा करके देखो, तुम्हें मैं सुरबाया ले जा सकती हूँ या नहीं ! और फिर रुपयेसे क्या नहीं होता ?"

डाक्टर झुके हुए जूतेका फीता कस रहे थे, बाँध चुकनेपर सिर उठाकर बोले, "रुपयोंसे बहुत काम निकलते हैं सुमित्रा, इसलिए उनका अपव्यय नहीं करना चाहिए।"

सब कोई समझ गये कि यह आलोचना व्यर्थ है। उपाय-हीन वेदनासे भरा हुआ हृदय लेकर सुमित्रा डबडबाती हुई आँखोंसे दूसरी तरफ देखने लगी। भारतीने कहा, "मुझे अथाह समुद्रमें बहाकर तुम चल दिये। भइया, तुम बार बार कहा करते थे कि सिर्फ मुझपर ही नहीं,—मुझ जैसी लड़कियाँ जहाँ जहाँ हैं उन सबपर तुम्हारा बड़ा लोभ है, सभीको तुम बहुत ज्यादा प्यार करते हो, सो क्या ऐसे ही ?"

डाक्टरने अनुमोदन करते हुए कहा, "सचमुच ही प्यार करता हूँ भारती, लड़कियोंपर मेरा कितना लोभ है, कितना भरोसा है, यह बात अपने मुँहसे जतानेका मुझे मौका ही नहीं मिला; मगर यदि तुम जता सको तो मेरी तरफसे उन्हें अवश्य जता देना बहन !"

भारती सहसा रो दी, बोली, "जता दूँगी कि तुम हम लोगोंकी सिर्फ बलि-भर देना चाहते हो।"

डाक्टरने क्षण-भर उसके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, "अच्छा, यही कह देना। भारतकी एक भी लड़की अगर इसका अर्थ समझ जाय, तो मैं अपनेको धन्य समझूँगा।" कहते हुए उन्होंने अपना बड़ा भारी बकुचा कंधेपर रख लिया।

उनके पीछे पीछे सब कोई नीचे उतर आये। भारतीने अन्तिम कोशिश करते हुए कहा, "जिसकी देशकी आयोजना नष्ट हो गई हो, विदेशकी आयोजनासे उसको क्या लाभ होगा भइया? जो लोग अन्तरंग मित्र थे, वे तो सब एक एक करके चले गये, अब तो बिलकुल निःसंग हो गये हो,—बिलकुल अकेले रह गये हो।"

डाक्टरने हँसते हुए कहा, "शुरू भी तो अकेले ही किया था भारती!—और विदेश? सो भगवानकी इतनी कृपा है कि उसने आदमीको उसकी मर्जीके माफ़िक छोटी बड़ी दीवारें खड़ी करके अपनी दुनियाको हजारों कारा-कक्षोंमें पृथक् कर डालनेका मौका नहीं दिया है। उत्तरसे दक्षिण और पूरबसे पश्चिम तक,—जहाँ तक दृष्टि जाती है विधाताका राजमार्ग बिलकुल खुला दिखाई देता है। उसे रोक रखनेका षड्यंत्र करना आदमीके बूतेके बाहरकी बात है। अब एक छोरका अग्निकाण्ड दूसरे छोर तक चिनगारियाँ उड़ा ही ले जायगा भारती, यह रुक नहीं सकता। यह ऐसा ताण्डव है जो देश-विदेशकी चहारदीवारीको नहीं माननेका।"

परन्तु, इधर जो कमरेके बाहर रुद्रका सचमुचका ताण्डव,—आँधी-मेह और बिजलीका कड़कना,—चल रहा था, उसका किसीको खयाल ही न था। मूसलधार वर्षा, रह-रहकर बिजलीकी चमक,—तूफानी हवा मानो पृथिवीपर प्रलय-काण्ड करना चाहती हो; मानो आज सब कुछ झाड़ पोंछकर साफ कर देगी। डाक्टरने हुड़का खोला ही था कि यकायक एक जोरकी बौछार भीतर आ घँसी,—सबके कपड़े भीग गये, बत्ती बुझ गई,—और ऐसा घोर अन्धकार हो गया कि अपना हाथ दिखाई देना भी दुस्वार हो गया।

डाक्टरने पुकारा, "सरदारजी!"

बाहरसे आवाज आई, "इयस डाक्टर, रेडी!"

सब चौंक पड़े। ऐसे दुःसह तूफानमें जब कि सरपर मूसलधार पानी बरस

रहा हो, रह रहकर बिजली कड़क रही हो, हवाके एक एक झोंकेमें पेड़ोंकी डालियाँ टूट टूटकर जमीनपर आ रही हों,—ऐसे घोर अन्धकारमें कोई अकेला बाहर खड़ा हुआ पहरेपर तैनात रह सकता है, इस बातकी सहसा कोई कल्पना ही न कर सकता था।

डाक्टरने कहा, "तो अब चलता हूँ।"

यह कहकर डाक्टरने पैर बढ़ाया ही था कि अपूर्व यकायक व्यग्र-व्याकुल कंठसे कह उठा, "एक दिन आपने मुझे प्राण-दान दिया था, यह मैं जिन्दगीभर याद रक्खूँगा डाक्टर!"

अन्धकारमेंसे जवाब आया, "उस मामूली-सी घटनाको ही बड़ा-सा रूप देकर देख रहे हो अपूर्व बाबू। पर वास्तवमें जिसने प्राण बचाये, उसे याद ही नहीं रक्खा?"

अपूर्वने चिल्लाकर कहा, "याद नहीं रक्खा? इस जीवनमें उसे भी मैं कभी नहीं भूल सकता, डाक्टर। इस ऋणको मैं मरते दम तक—"

दूरसे, अँधेरेमेंसे, उत्तर आया, "ऐसा ही हो,—भगवानसे प्रार्थना करूँगा कि तुम अपने सच्चे प्राण-दाताको पहचान सको। अपूर्व बाबू, उस दिन इस सव्यसाचीका ऋण—"

सव्यसाचीकी बातका अन्तिम अंश सुनाई नहीं दिया, आँधीका एक झोंका उसे अस्फुट ध्वनिके साथ उड़ा ले गया।

इसके बाद थोड़ी देरके लिए मानो किसीको भी कुछ होश न रहा। अचेतन जड मूर्तिकी तरह कुछ क्षण निश्चल रहकर भारती अकस्मात् चीत्कार कर उठी, और जल्दी जल्दी ऊपर चली आई। उसके पीछे पीछे और सब लोग भी चले आये।

ऊपर आकर भारतीने खिड़की खोल दी, और उसके सामने खड़ी होकर जितनी दूर तक दृष्टि जा सकती थी, एकाग्र दृष्टिसे उसी ओर उतनी दूर अँधेरेमें चुपचाप देखती रही। इस तरह बहुत देर बीत गई। सहसा भीषण शब्दके साथ पास ही कहीं बिजली गिरी, एकाएक उसके सुतीव्र प्रकाशसे पृथिवीसे लेकर आकाश तक उद्भासित हो उठा, और उसी क्षणिक प्रकाशने क्षण-भरके लिए सबको सव्यसाचीके अन्तिम दर्शन करा दिये।

यद्यपि ऐसा पागलपन शायद किसी भी खुफिया-पुलिसमें न था कि ऐसे भयंकर प्रलयकारी तूफानके समय इन लोगोंका पीछा करे, मगर फिर भी वे दोनों आम सड़कको छोड़कर मैदानके दाहिनी तरफसे चलने लगे। बीच-बीचमें झाड़-झंखाड़, कीच-कद्दड़, रपटन, और उसपर घनघोर अन्धकार,—उसी मार्ग-हीन मार्गसे एक पथिक अपने कंधेपर भारी बोझ लादे अत्यन्त सावधानीसे कदम रखता हुआ चला जा रहा है और दूसरा अपने भारी-भरकम साफेपर आँधी-मेहको झेलता हुआ उसका अनुसरण कर रहा है।

क्षणभर। क्षण-भर बाद ही सब कुछ मिट-मिटाकर सिर्फ एक घोर अन्धकार ही बच रहा, और कुछ नहीं।

सहसा एक गहरी साँस लेकर शशि बोल उठा, "बुरे दिनोंके साथी हे मित्र, तुम्हें नमस्कार!"

अपूर्वने अपने दोनों हाथोंको माथेसे लगाकर सरदार हीरासिंहके लिए चुपकेसे नमस्कार किया, और एक ठंडी साँस ले ली। उसके हृदयसे मानो एक भार-सा उतर गया।

भारती उसी तरह पाषाण-प्रतिमाकी तरह अँधेरेमें खड़ी रही। शशिकी बात न तो उसे सुनाई ही दी और न वह यही जान सकी कि ठीक उसीकी तरह एक दूसरी नारीकी भी आँखोंसे आँसुओंकी धार बह रही है।

समाप्त